



## प्रकाश का निवेदन.

प्रिय स्वधर्मी भाइयों।

इस सालमें यहाँपर परमपूज्य श्री १००८ श्री रेखराजजी महाराजकी सांप्रदायके श्वे० स्था० जैन धर्मोपदेष्टा-श्रीमन्महा मुनि-श्री १०८ श्री परमानन्दजी महाराज का चातुर्मास हुआ महाराज साहबके विराजनेसे यहाँ बहुतही धर्मवृद्धि हुई और चौमासा बहुतही आनन्द उत्साह के साथ पूरा हुआ। इस मौकेपर मेरी इच्छा एक पुस्तक प्रकाशित करनेकी हुई। तदनुसार यह "जैनधर्मप्रवेशिका" नामक पुस्तक उक्त मुनि महाराजसे-लिखवा-संग्रह करवा, छपाकर आप सज्जनों की सेवामें समर्पण करताहूँ। कृपया आप इसे पढ़े और धार्मिक फायदा उठावे। पुस्तकको हिफाजत से रक्खें। और इसमें वैमूल्य समझकर कहीं रद्दी में डाल न दें। इसमें थोडा २ सभी विषय लिया गया है। जैन धर्मका पहिला ही-कक्का सीखानेवालोंके लिए तो यह बहुत ही उपयोगी चीज है। मेरा विचार इसमें ४०-५० थोकडे ज्यादाह दर्ज करवानेका था, लेकिन दूसरे २ विषयोंसे स्थान रुकजानेसे ऐसा न हो सका। इसके लिए भी कभी वीर परमात्माने मौका दिया तो वहभी सेवा आपलोगोंकी मैं करूँगा।

जिस भाइको यह पुस्तक मंगाना हो वह ३ आनेके टिकट डाक खर्चके लिये भेजकर मुझसे मंगवा लें।

मेरा पत्ता यह है —

आपलोगोंका एक स्वधर्मी वंधु

सहसमल जीवराज देवडा,

चौक बाजार, औरंगाबाद सिटी ] दक्षिण ]



# प्रास्ताविक वक्तव्य ।

इसे एकवार पढ़लीजिए ।

धर्म करत संसार सुख, धर्म करत निर्वाण ॥

धर्म पंथ साधे बिना, नर तिर्यञ्च समान ॥

संसार के प्रायः सभी धर्म वाले सभी मनुष्य पूछनेपर इस बातको स्वीकार करते हैं, कि-नरजन्म स्त्री, पुत्र, धन, दौलत, राज्य, भण्डार, ऐश आराम, अनेक प्रकारके अच्छे (अच्छे खान पान, भोगोपभोग, आदि २ सब पदार्थ हमें एक धर्मसे ही प्राप्त हुए हैं । धर्म ही हमारा सच्चा मित्र और इसलोक परलोकका साथी है । इससे यह साबित हुआ कि-सबसे प्रथम मनुष्यको धर्महीका आराधन करना चाहिए । परन्तु आजकल यह बड़ा अश्चर्य है-कि-इम बातको जानते हुए ( धर्मके प्रतापको ) भी प्रायः सब लोग धर्मसे विमुख रहते हैं ! यह दुःख की बात है ।

\*

\*

\*

आज-प्रत्येक जाति, समाज की-एवं भारत वर्षभरकी जो अवन्नति-दृष्टिगोचर हो रही है इस का भी कारण यही है कि-लोगोंकी धर्म पर सच्ची श्रद्धा न रही । अगर लोगोंकी धर्मपर सच्ची श्रद्धा होती तो, ये दिन ( दुःखी, दारिद्री होनेके ) कभी नहीं आते । तथास्तु,

\*

\*

\*



अब यह देखना है कि-धर्म परसे लोगोंकी अज्ञान कबसे कम होती जाती है? तो इसका उत्तर हमें, जैपन, अङ्ग्लैण्ड ही यह मिल जाता है कि-लोगोंको धार्मिक शिक्षा-जिस ढंग में मिलनी चाहिए वसी नहीं मिलती है। माँ योंही यह कहें ता भी यह चल सकेगा कि-धार्मिक संस्कार उनको उनकी वात्स्यावस्थामें-उनके मस्तिष्कमें पहुँचावही नहीं जाते हैं। अगर पहुँचाये जाते ता-वे कमी धर्महीन-मगंवाइ मक्तिहीन-दुराधारी दुर्भ्यसनी आदि नहीं बनते। यह दोष [ धार्मिक संस्कार नहीं पहुँचाने का ] किस का है उनका या उनके माता पिताओंका? तो यह कहना पड़ेगा कि यह दोष उनके नहीं, बल्के उनके माता पिताओं का है।

हम देख रहे है कि-हमार समाज क बच्चोंकी शिक्षणी-प्रायः खेलेखुलमें-दुर्गिच्छाएँ प्राप्त करनम या बच पनसेही इगि जीरा, मिर्ष, आदि तोलने में उनके माता पिताओंकी असा बधानी से मोही फिजूल व्यतीत होती है। वे, उनको न, तो बराबर धार्मिक शिक्षा देते, बिलाते है-आर ज-व्यवहारिक शिक्षाही। इस से समाज का जो अधःपतन हो रहा है, यह कोई, कम दुःखकी बात नहीं है।

समाज में-समाज की आवश्यकतानुसार न तो बगहबगह धार्मिक पाठशालाएँ हैं। और न कहीं धार्मिक शिक्षा पानेका उचित प्रबंध है। प्रबंध हो कैसे? समाज के धनीय लोगोंका और साथही साथ-प्राय उनको उपदेश देने वाले धर्म गुरुओंका इस आर दुर्लभ है।



परका क्या हित कर सकते हैं? यह बात विचारशीलों को ही विचारना चाहिए।

समाज का अपना पुराना ढंग बदलना चाहिए—रूपान्तर करना चाहिए। पुरानी शिक्षा पथति को पलटना चाहिए। शिक्षा इस ढंगसे दनी चाहिए कि—सर्व साधारण के समक्ष में वह बात झट आजाये। मैंने इस पुस्तकमें इसी बात पर कुछ कुछ ध्यान दिया है। कहना है कि समाज के लाग इस से कुछ लाभ उठाये।

मेरी इच्छा इस पुस्तकको दूसरेही ढंगसे लिखन की थी परन्तु—इसके प्रकाशक धर्म प्रेमी और उत्साही, उदार चिन्त, भवसोपासक श्रीमान् सहस्रमन्त्री श्रीपराशरजी दबडा की इच्छा भेरी न देखी, तब यह लेखनशैली स्वीकार करना पडी। तामी मैंने बोलचालादिके लिखनेमें अपनी इच्छानुसार लेखनी चलवाई है। परन्तु मेरी इच्छा अभी पूर्ण न हुई है। क्यों कि—पुस्तक के बहुतसे पृष्ठ-प्रतिक्रमण, सामायिक स्वयं नादिस एक जानेसे—बोल चाल थोकद आदि बहुतसे में, उद्धृत न कर सका। अभी कमसे कम ५० थोकदे शब्द हिन्दी भाषामें मेरे लिखे हुए रहगये हैं। अवसर मिलता था—उन्हें फिर कमी—“जैन शास्त्र प्रशिक्षा” के नामसे समाजक आग रफ्तूगा। अभी तो समाजको इसीसे कुछ सन्तोष कर लेना चाहिए।

‘मारवाड देशमें—जापानियों को सिगान की रीति प्रचलित

है—वह, छोटे २ बालकों के लिए—या जैन—धर्म का प्राथमिक ज्ञान पाने वालों के लिये—उपयुक्त—नहीं है—प्रथम तो थोकडों की परिभाषा [ शब्दावली ] इतनी अशुद्ध सिखाई जाती है—कि—उसका शब्दानुसार कुछ—भी अर्थ जल्दी समझ में नहीं आता । दूसरी उनकी विषय शृंखला भी ठीक नहीं है । यह त्रुटि—हमारे समाजके शिक्षकों को दूर कर देना चाहिए—

\* - \* \* \*

इस जगह यह भी हम स्पष्ट कह देना चाहते हैं कि—हमारी समाज में भाषाशुद्धि का प्रायः विलकुल अभाव है । कभी कभी ऐसी आत्माओं से हमें जब मिलने का प्रसंग पड़ता है तो वे झट कह बैठते हैं कि—“ हमें भाषा फासा से क्या काम है ” हमें, तो “ आणूं ताणूं कुछ नहीं जाणूं सेठ वचन परमाणूं ” इसी से मतलब है । परन्तु उन्हें यह याद रखना चाहिए कि—

“ व्याकरणात् पदशुद्धिः पदशुद्ध्यर्थं निर्णयो भवति ॥  
अर्थात् शुद्ध ज्ञानं, शुद्ध ज्ञानात् भवेत् मुक्तिः ॥ १ ॥

तथा—

“ वयणतिय लिंग तियं, काल तियं, तह परोक्ख पच्चक्खं ॥  
उवयण वयण चउक्कं, अजत्थं चैव सोलसम ॥ ”

शब्द शुद्धि से अर्थका ठीक २ निर्णय हो जाता है । और अर्थका बराबर निर्णय होनेसे सभी बातें पूरी समझमें आजाती है । लौकिक दृष्टिसेभी भाषा शुद्धि मुखकी शोभा है—और वह भाषा सबको प्रिय भी मालूम होती है । इसलिए सबसे

प्रथम समाज के प्रत्येक माई, माईनको छुड़ छन्दोबारख  
तर्फ विशय ध्यान रखना चाहिए ।

\* \* \* \*

मेरा इरादा इस पुस्तकके साथमें-एक 'समाज सुधार लक्ष  
मासा' भी देने का था परन्तु, वह भी स्थानामात्रम न हो सका ।  
इनके लिए भी फिर कमी प्रयत्न करूंगा ।

+ + + +

मेरा विश्वास है कि दूसरी पुस्तकों की तरह ता, नहीं परन्तु  
-इस पुस्तकमें भी साधारण-कहीं २ अशुद्धियाँ अशुद्ध गयी  
होंगी उसके कारण, पाठक-मुझे न समझकर कार्यकी शीघ्रता  
और कुछ २ प्रेसकर्मचारियोंकी असावधानता का समझे ।

दूसरी आवृत्ति में ये भी सब निकल जायगी ।

आरंगमाद छावनी,  
माघ शुद्ध ५<sup>म</sup>  
संवत् १९७२ विक्रम,

प्राची मायका हितैषी,  
मुनि परमानन्द जैन  
( बर्फ-इर्षचन्द्र जन )

हिन्दी जैन सस्ता साहित्यवर्द्धक कार्यालय,

अथवा

हिन्दी सस्ता साहित्यवर्द्धक कार्यालयकी  
स्थापना ।

ऐसा भी शुभ समय कभी हम देख सकेंगे ।  
जब हिन्दी साहित्य समृद्धत लेख सकेंगे ।  
आओ, इसके लिए करें हम यत्न हृदयसे;  
डरे न हरगिज कभी कोटि विघ्नोंके भयसे ॥

\* \* \*

हिन्दीका हिन्दुस्थानमें, घर घर पुण्य प्रचार हो ।  
इस आर्यावर्त्त पुनीतका शुभमय जय २ कार हो ।

ऐसा कौन मनुष्य है जो इस समय हिंदी साहित्यकी आवश्यकताको स्वीकार न करेगा ? । देशोन्नतिके लिए घर घर हिन्दी प्रचार करनेकी आवश्यकता है । जिस समय, विज्ञान, समाज, नीति, धर्म शिक्षा, उपन्यास, नाटक, गल्प, इतिहास जीवनचरित्र, काव्य, शिल्प, राजनीति, आदि २ सम्पूर्ण विषयोंके ग्रंथ हमें हिन्दीमें पढनेके लिए मिलेंगे, और सारी शिक्षाही हमें हिन्दीमेंही दी जाने लगेगी उस समय देशोन्नति हुई ही समझिए । हमें चाहिए कि हम सम्पूर्ण भारतवासी मिलकर हिन्दी साहित्य-हिन्दी प्रचारके लिए एक स्वरसे चारों ओरसे प्रबल आन्दोलन उठावें । और निरन्तर इसके

प्रथम समाज के प्रत्येक भाई, भाइनको शुद्ध धर्मोच्चारण  
सफ विशुद्ध ध्यान रखना चाहिए ।



मेरा इरादा इस पुस्तकके साथमें-एक 'ममाख्य सुधार लक्ष्य  
मासिका' भी देने का था, परन्तु वह भी स्थानामावस न हा सका ।  
इनके लिये भी फिर कमी प्रयत्न करूंगा ।



मेरा विश्वास है कि दूसरी पुस्तकों की तरह तो नहीं परन्तु  
-इस पुस्तकमें भी माघारण-कही २ अशुद्धियाँ, अशुद्ध गद्दी  
होंगी उसका कारण, पाठक-सूत्रे न समझकर कायकी शीघ्रता  
और कुछ २ प्रेसकर्मचारियोंकी असावधानता को समझें ।

दूसरी आहृति में ये भी सब निकल आयेगी ।

आरंगाबाद छापनी,  
माघ शुद्ध ५-  
संवत् १९७२ विक्रम,

प्राची मात्रका द्विवैपी,  
मुनि परमानन्द जैन  
( उर्फ - हर्षचन्द्र जैन )

अवश्य है। अब जरा श्वेताम्बर जैन समाजकी तरफ भी देखना चाहिए कि वहाँ भी कुछ हुआ है या नहीं। चारों ओरसे देख लेने बाद अवश्य यह कहना पड़ेगा कि श्वेताम्बर जैन समाजने राष्ट्रीय भाषा हिन्दी-भारतकी मुख्य भाषा हिन्दीकी कुछ भी सेवा न की है। कहीं दो चार इने गिने ग्रन्थ इसके अवश्य मिलते हैं परन्तु वे संसारके विचारशील विज्ञान पंडितोंके लिए तो क्या परन्तु साधारण जन समाजके लिए भी पर्याप्त नहीं है। ऐसा, क्यों है? उत्तर है कि-श्वेताम्बर जैन समाजके साधुओं तथा इसके अग्रणीत धनाढ्योंका लक्ष्य इस ओर नहीं गया है। यदि जाता तो कभी इसकी कुछ न कुछ सेवा अवश्य ही हो जाती। जब हमें कभी कभी अन्य समाजोंके पंडित मिलते हैं तथा उनके उपदेशकों या धर्म तत्त्वशोधकोंसे भेट होती है तब वे हमसे कहते हैं, हमें आप कोई ऐसा ग्रन्थ बतलाइए जिसके पढ़नेसे हमें जैन धर्मके सामान्य और विशेष मूल सिद्धांतोंका, जैन शास्त्रोंकी परिभाषाका शीघ्र बोध हो जाय। जैन धर्मके उत्तमोत्तम तत्वोंका थोड़ेमें ज्ञान हो जाय।” तब हमें नीचा शिर करना पड़ता है चुप होना पड़ता है और यह कहना पड़ता है कि ऐसा ग्रंथ तो अभी तक हमारी ओरसे हिन्दी या संस्कृत आदिमें कोई भी प्रकाशित नहीं हुआ। जो कुछ है वे सब हस्त लिखित मण्डारोंमें बन्द है। तब वे हताश हांकर चले जाते हैं। इसमें मारा क्या नुकसान होता है? वह यह है कि वे लोग जैन धर्म असली सिद्धांतोंसे परिचित नहीं होने पाते। वे दूसरे असद्रुम ग्रन्थ पढ़कर जैन धर्मके संबंधमें बुरे विचार



लिए तब मन, धनसे प्रयत्न करें। प्ररन्दु शोकके साथ कहना पड़ता है कि अभी देशमें जिस प्रकार चाहिए—उस प्रकार हिन्दीके लिए हमारी आरम्भे कुछ भी प्रयत्न न हुआ है। हाँ, यह सत्य है कि आज तक हिन्दीकी अनेक-अन्यमालाएँ तथा हिन्दीके अनेक सामाजिक पत्र-अवश्य निकल चुके और निकल रहे हैं। किन्तु वे भी अभी काफी सख्यामें नहीं हैं। और न अभी तक उनका उन अन्यमालाओं तथा सामाजिक पत्रोंका प्रायः पर २ प्रचार ही हुआ है। इससे भी सिद्ध होता है कि हमारे माइनोंका हिन्दीसे प्रेम कम होनेके कारण से हिन्दी प्रचारकोंका यथोचित सहायता न मिली। और हिन्दीका साहित्य भण्डार पूर्णरूपसे समृद्ध न हो सका। अतः हमारे माइनोंको चाहिए कि वे हिन्दी प्रचारकोंका यथाशक्ति तब मन, धनसे मदद करनेमें कमी प्रीति न रहें। क्योंकि दशोचितका एक मात्र सुगम उपाय है।



अब हम जैन समाजकी तरफ़ भी घिसकर कि सम्बन्ध इस देश ( भारत वर्ष ) में ही है। एक अलग घटि चालते हैं। और देखना चाहते हैं कि जैन समाजमें हिन्दीका प्रचार कितना और कैसा है। प्रथम हमारे दिग्गजर जैन माइनोंको लिखिए। उनमें हिन्दीका प्रचार कुछ कुछ हुआ है। कई हिन्दीक कार्यालय स्थापित होकर उनकी ओरसे हिन्दीके ग्रंथ और पत्र निकल रहे हैं। हमारी सब आवश्यकताएँ उनसे पूरी हो बसा ता अभी कर न सका है किन्तु हाँ, कुछ किया

यादि आप जैन धर्म परसे नास्तिक, बौद्ध, मलीनता आदिके कलंकोंको दूर करना चाहते हैं, यदि आप ज्ञानावरणीय कर्म-को तोड़ना चाहते हैं तो इस कार्यालयकी सहायता कीजिए । अपनी लक्ष्मीका यहाँ सदुपयोग कीजिए ।

( २ ) प्यारे जैन समाजके सुलेखको ।

आप अपनी लेखनीमे इस कार्यालयको यथोचित सहायता पहुँचाइए । उत्तमोत्तम ग्रंथोंको लिख, इस कार्यालयके द्वारा प्रकाशित करवाकर, अपने नामको चिर स्मरणीय बनाइए ।

इस कार्यालयसे थोड़ेही समयमें एक ग्रंथमाला शीघ्रही प्रकाशित होगी जो भाई अभी अपना ग्राहक श्रेणीमे नाम लिखायेंगे उनको उस ग्रंथमालाकी तमाम पुस्तके पौनी कीमतमें ( याने एक रुपयेका माला बारह आनेमें ) दी जायगी । जिन २ भाइयोंको अपना जीवन सुधारना हो, अच्छे २ ग्रंथोंको पठना हो, सर्व प्रकारकी शिक्षाएँ प्राप्त करना हो; अपने धर्मके तन्त्र जानना हो तो शीघ्रही इस ग्रंथमालाके ग्राहक बने ।

पंडित भागीरथ ओझा,

मैनेजर-हिन्दी सस्ता साहित्य वर्द्धक कार्यालय

परभणी ( निजामस्टेट )

सङ्कुचित विचार रखने लग जाते हैं। और फिर वे कहीं कहीं इतनी घटा २ भूलें कर बैठते हैं कि औंन सिद्धांतोंसे बिखल सबध नहीं रखती हैं।

प्रिय विचारशील माइयों! हमने इन्हीं कारखोंसे औंन हिन्दी साहित्यक अभावके दु खसे दु खित होकर आप, लों गोंकि मरोसे पर यह कार्य उठाया है। हिन्दी औंन सस्ता साहित्य बढक कार्यालय तथा, हिन्दी सस्ता साहित्य बढक कार्यालय म्थापित किया है। इसका उद्देश्य यह है, कि " औंन नियोंमे तथा देशभरमें हिन्दी साहित्यका प्रचार करना। हिन्दीमें विविध विषयोंके छपे हुए उच्चमोचम ग्रन्थ अल्प मूल्यमें सम्पूर्ण मासवाचिओंके घरोंमें पहुँचाना।" आगा और इठ विश्वास है कि आप लोग हमारे इस सकल्पकी पूर्तिमें अबरय नहायक होंगे। और अपने २ धर्मकी, देशकी उन्नति होती हुई दख आनन्द-भग्न बनाने।



सदा ध्यानमें रखने योग्य प्रार्थना।

इस समय हमारे पास इस कार्यके चलानेके लिए किसी प्रकारका फंड या पूंजी नहीं है। इस लिए हम अवन सम्पूर्ण औंन माइयोंमे प्रार्थना करते हैं कि-यदि आप अपने पवित्र धर्मकी सेवा करना चाहते हैं, यदि आप अपने धर्मकी जय-पताका सम्पूर्ण अर्थात् पत्तमें फहराना चाहते हैं; यदि आप म-यात मदारीरकी पवित्र आज्ञा पर पर पहुँचाना चाहते हैं, यदि आप औंन धर्मका एक राष्ट्रीय धर्म बनाना चाहते हैं,

जगा दे शीघ्र हे जिनवर ! ॥ ५ ॥  
 करें हम कार्य हिलमिल कर,  
 जाति-सेवा सुचिन्तनका ।  
 देश और धर्मका उद्धार,  
 श्री महावीर हे जिनवर ! ॥ ६ ॥  
 तजे हम भाव भिन्नत्वं,  
 गढ़ें जातिय जीवनको ।  
 मैत्री जाति-जीवनमें,  
 बढ़ा दे खूब हे जिनवर ! ॥ ७ ॥

—मृनि परमानन्द जैन.



## ईश विनय ।

[ गजलं रेखता । ]

हुआ है खोर अंधेरा,  
 नहीं विद्या नहीं ख्याती ।  
 भटकते नाथ ! गफलतमें,  
 पत्तादे राह—हे जिनवर ! ॥ १ ॥  
 कसा दे ज्ञान हमको तू,  
 सुधि अपनी समाले हम ।  
 बना दे धीर हमको तू,  
 निज कर्त्तव्यमें जिनवर ! ॥ २ ॥  
 भूल कर आपने पनको,  
 गिरे हैं नामसे निज हम ।  
 बड़ा तू आत्मबल हमरा,  
 बनादे शूर हे जिनवर ! ॥ ३ ॥  
 परस्पर द्वेष-अभिसे,  
 हो रहे ख्यार हैं हम अब ।  
 स्वार्थी लीम भायाको,  
 मिट्टा दे साफ हे जिनवर ! ॥ ४ ॥  
 बैठकर गोद अविद्याके,  
 हो रहे झालसी हम अब ।  
 गौरव नातिदा हममें,

जगा दे शीघ्र हे जिनवर ! ॥ ५ ॥  
 करें हम कार्य हिलमिल कर,  
 जाति-सेवा सुचिन्तनका ।  
 देश और धर्मका उद्धार,  
 श्री महावीर हे जिनवर ! ॥ ६ ॥  
 तजे हम भाव भिन्नत्वं,  
 गढ़ें जातिय जीवनको ।  
 मैत्री जाति-जीवनमें,  
 बड़ा दे खूब हे जिनवर ! ॥ ७ ॥

—मुनि परमानन्द जैन.





## ॥ अथ नमस्कार मंत्र ॥

णमो अरिहंताणं ( १ ) णमो सिद्धाणं ( २ ) णमो आयरियाणं  
( ३ ) णमो उवज्झायाणं ( ४ ) णमो लोये सव्वसाहूणं ( ५ )  
एसो पंच णमुक्कारो ( ६ ) सव्वपावप्पणासणो ( ७ ) मंगलाणं  
च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ( ८ ) ॥

इति नमस्कार मंत्र समाप्त ॥

### अथ तिक्खुत्तोका पाठ ॥

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं, वंदामि, णमंसामि, सक्कारेमि,  
संमाणेमि, कल्लाण मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण  
वंदामि ॥

इति तिक्खुत्तोका पाठ समाप्त ॥

### अथ इरियावहियाएका पाठ ॥

इच्छाकारेण संदिसह भग्गवन् इरियावहियं पडिकमामि इच्छं.

इच्छामि, पडिकमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए ( १ )  
गमणागमणे ( २ ) पाणकमणे ( ३ ) वीयकमणे, हरियकणे  
( ३ ) ओसाउत्तिगपणगदगमड्डीमक्कडासंताणासंक्रमणे ( ४ )  
जे मे जीवा विराहिया ( ५ ) एगिंदिया, वेइंदिया, ते इंदिया,  
चउगिंदिया, पंचिंदिया ( ६ ) अभिहया, वत्तिया, लेगिया,



मघाह्या, सभट्टिया, परियात्रिया, किलामिया, उद्विया ठाणाउ  
ठाणं सकामिया, जीषियाउ वधरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कं (७)॥

इति इरियावहियाएक्कापाठ समाप्त ॥

अथ तस्स उत्तरीका पाठ ॥

अस्म उत्तरीकरणेण पामच्छित्तकरमेणं, विसोहीकरणेण,  
विसोहीकरणेण, पावाण कम्मार्थं निग्घापणहाए, ठामि क्खउ  
म्मग्ग ( ८ ) ॥

अमत्थ उस्ससिएण, नीमसिएण, खासिएणं, स्त्रीएणं, अभा  
इएणं, उद्वएणं, भायनिसग्गम ममलिए, पित्तमुच्छाए ( १ )  
सुद्धुमेहिं अगसंघालोहिं सुद्धुमेहिं खेउसंघालोहिं, सुद्धुमेहिं दिट्ठिम  
चालोहिं ( २ ) एवमाइएहिं आगारहिं, अमग्गो, अबिगाट्टिआ  
हुत्त मे क्खउस्सग्गो ( ३ ) आव, अरिहंवार्यं भगवतार्यं, नम  
कारेण, न पारेमि ( ४ ) छाष, क्खय, ठाषणं, माषेणं, साषणं,  
अप्पाय, वासिरान्ति ॥ ५ ॥

इति अस्म उत्तरीका पाठ समाप्त ॥

३ अथ लोगस्सका पाठ ॥

अनुष्टुप् पृष्ठ ॥

लोगस्स उक्कायगर, घम्मवित्तियगर म्मिणे । अरिहंवे कित्तइस्स,  
अउवीमपि कयली ॥ १ ॥ [ आयापुत्त, ] उमम १ मज्जिय २ च  
घट ममव ३ माभिन ४ च सुमइ ५ च । पठमप्पइ ६ सुपाम  
७ जिण च पदप्पइ ८ चद ॥ २ ॥ सुपिहिं च पुप्फट्ठ ०,

सीअल १० सिजंस ११ वासुपुजं १२ च । विगल १३ मणंतं  
 १४ च जिण, धम्मं १५ संति १६ च वंदामि ॥ ३ ॥ कुंधुं  
 १७ अरं १८ च मल्लि १९, वंदे मुणिसुच्चयं २० नमिजिणं २१  
 च । वंदामि रिठ्ठनेमिं २२, पासं २३ तह वद्धमाणं २४ च ॥ ४ ॥  
 एवं मए अभिथुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा । चउवीसंपि  
 निणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ५ ॥ कित्थिय वंदिय महिया.  
 जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा । आरुग्ग वोहिलासं, समाहिवर  
 मुत्तमं दिंतु ॥ ६ ॥ चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पया-  
 मयरा । सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥

इति चतुर्विंशति स्तवनामक लोगस्सका पाठ समाप्त ॥

### ४ अथ सामायिक लेनेका पाठ ॥

करेमि भंते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव नियमं  
 पज्जुवासामि दुविहं<sup>१</sup> तिविहेण, न करेमि, नकारवेमि, मणसा,  
 वयसा, कायसा, तस्स भंते, पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि,  
 अप्पाणं वोसिरामि ॥

इति सामायिक लेनेका पाठ समाप्त ॥

### ५ अथ शक्रस्तवनामक नमुत्थुणंका पाठ ॥

त्तमोत्थुणं, अरिहंताण भगवंताण ( १ ) आइगराणं, तित्थ-  
 गराणं, सयं संजुद्धाणं ( २ ) पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरि-  
 मवरपुंडरीयाण, पुरिसवरगंधहत्थीण ( ३ ) लोगुत्तमाणं, लोगना-  
 हाण, लोगहियाणं, लोगपईवाण, लोगयज्जोयगराण ( ४ ) अ-  
 यदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सग्गदयाणं, ( जीवदयाणं )

सोहित्यार्ण ( ५ ) धम्मदयाण, धम्मदेसियाण, धम्मनायगाण,  
 धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंतवक्खवद्दीणं ( ६ ) दीघोताण सर  
 पगइपइहा ) अप्पाडिहयवरनायदंसणघराण, विअडुळुउमाण,  
 ( ७ ) जिगाण जावमाण, तिमाणं तारयाणं, पुद्धान्णोहयाणं,  
 सुधार्णं मायगाण ( ८ ) सुव्वसूण सुव्वदरिसीणं, सिव मयल  
 मरुअ मणत मक्खम मक्खावाइ मपुषराविधि सिद्धिगइ नामभेये  
 टार्णं संपसाण, नमा जिणाणं जिअमयाण ( ९ ) ॥

इति द्धकस्तवका पाठ समाप्त ॥

### ५ अथ सामायिक पाढनेका पाठ ॥

नममा सामायिक यतरे विपं जे फेइ अतिचार अगो हाय  
 ता आळाउं ॥ मन, बचन, कायारा जोग पाइवे प्यान प्रवर्तिया  
 होय ३ सामायिकमे संमालना नहिं फीधी होय ४ अणपूरी  
 पाडी होय ५ तस्त मिच्छामि दुक्कइ ॥ वस मनरा, दस बचनरा,  
 चार कायारा, षठीस दोषोमायलां फोइ दोष लागो हाय ता  
 तम्म मिच्छामि दुक्कइ ॥ सामायिकमे खी कया, मक्त कया,  
 दशकया, राबकया, ए चार कया सांबली काई विकया फीधी  
 होय ता तस्म मिच्छामि दुक्कइ ॥

इति सामायिक पाढने का पाठ समाप्त ॥

### सामायिक पाढनेकेवाट यह पाठ कहना ॥

सामायिक समक्याण्णं, फमिय, पालियं, साइियं, तीरियं, कियेय  
 जागदियं, आणाण अणुपाठियं, न मवइ तम्म मिच्छामि दुक्कइ ॥

इति सामायिकक छह पाठ समाप्त हुए ॥

## अथ सामायिक लेनेकी विधि ॥

प्रथम आसन छोड़, दोनों हाथ जोड़कर श्री गुरुदेवजी महाराजकी आज्ञा मांगे । पश्चात् इरियावहियाए का पाठ “ जीवियाओ ववरोविया तस्समिच्छामि दुक्कइं ” पर्यंत कहे । बादमें ‘ तस्सुत्तरी ’ का पाठ कहकर काउस्सग्ग करें । काउस्सग्गमें इरियावहियाए का पाठ “ जीवियाओ ववरोविया तक्क मनमे क्ह कर, नमो अरिहंताणं, इतनाबोलकर काउस्सग्ग पूराकरें । तत्पश्चात् लोगस्सका पाठ कहें । बादमें करेमिभंते का पाठ ‘ जाव नियम ’ तक कहकर जितने मुहूर्त्त डालने हो डालकर, पीछे पज्जुवासामिसे लेकर अप्पाणं बोसिरामि तक पाठ बढें । फिर बायां घुटना खडाकर उसपर दोनों हाथ जोड़, नमुत्थुणं का पाठ दो बार कहें । दूसरे नमुत्थुणं के अन्तमें “ ठाणं संपाविड कामस्सगं णमो जिणाण जियभयाणं ” ऐसा कहें । पश्चात् आसनपर बैठ, सामायिकका, काला पूरा न हो वहाँ तक नमस्कार भत्र, तथा अन्य बोल चाल थोकडादि याद करता रहे । धर्मध्यान में समय व्यतीत करें ॥

## अथ सामायिक पाड़नेकी विधि ॥

सामायिक पाड़नेके समयमें इहियावहियाए का पाठ, और तस्सुत्तरीका पाठ कहकर काउस्सग्ग करना चाहिए । काउस्सग्गमें लोगस्सका पाठ मनमें क्ह कर, “ नमो अरिहंताणं ” इस प्रकार बोल, काउस्सग्गको पूरा करें । फिर जाहिरमें

सागरस्यका पाठ मुखसे बाले । दा नमुत्पुण मी टें । अनन्तर  
 मामाधिक 'पादनकापाठ' नमवइ तस्मामिच्छामि दृक्ते' तक  
 कइ, मीनधार नभकार मत्र बोलकर उठजावें ।

इति माँयाधिक उने और पादनकी विधि मसाह ॥



वन्दोजिनवरम् ॥

अथ प्रतिक्रमण प्रारंभे ॥

अथ इच्छामिणं भंतं का पाठ ॥ १ ॥

इच्छामिणं भंतं तुभ्येहि अभयुणायसमाणे देवसियं पडिकमणं  
ठाएमि, देवसियंणाण दंसण चरित्ताचरित्त तप अतिचार चितद-  
णार्थं करोमि काउस्सगं ॥

अथ इच्छामि ठामि का पाठ ॥ २ ॥

इच्छामि ठामि काउस्सगं जो मे देवसिओ अइयारो कओ,  
काइओ, वाइओ, माणासिओ, उस्सुत्तो उमग्गो अकप्पो अकण-  
णिज्जो दुब्झाओ दुविचित्तिओ अणाचारो आणिच्छियव्वो, अमावग  
पाउग्गो नाणे तह दंसणं चरित्ताचरित्ते सुय सामाडए तिन्ह  
गुत्तीणं, चउन्हं कसायाणं, पंचन्हमणुव्वयाणं, तिन्हं गुणव्वयाण,  
चउन्हं सिक्खावयाणं, वारसविहस्सं सावगधम्मस्सं जं खंडियं  
जं विराहियं तस्सं मिच्छामि दुक्कं ॥

अथ आगमे तिविहे का पाठ ॥ ३ ॥

आगमे तिविहे पणत्ते तंजहाँ, सुत्तागमे अत्थागमे तदुभयागमे:  
एहवा श्री ज्ञान के विषे जे कोई अतिचार लागो होय ते आलोउं:

जं वाहदं ( १ ) षष्ठीमेलियं ( २ ) हीषकखर ( ३ ) अचकखर  
 ( ४ ) पयहीषं ( ५ ) विणयहीष ( ६ ) जोगहीषं ( ७ )  
 घामहीष ( ८ ) सुदुदिभं ( ९ ) दुदुपडिच्छियं ( १० ) अकाल  
 कओ सज्जाओ ( ११ ) फाले न कओ सज्जाओ ( १२ ) अस  
 ज्जाए मन्साइयं ( १३ ) सज्जाए न सज्जाइयं ( १४ ) मणतौ  
 गुणतौ चितवतौ न विचारतौ ज्ञान अने ज्ञानवतको आधातना  
 किधी होय ता तस्स मिच्छामि दुक्कइं ॥<sup>१</sup>

अथ दत्तण श्रीसमकित का पाठ ॥ ४ ॥

अरिहंता महदवा, जाबळीबे सुसाहुभो गुरुजो ।  
 जिणपणस तस, ए सम्मसं मए गहियं ॥ १ ॥  
 परमत्य सयबो धा, सुदिहपरमत्यसेवणा वावि ।  
 वावम कुदसणवज्जणा य सम्मत्तसइइणा ॥ २ ॥ -

एवा श्री समाकित के बिपै अ काई अतिचार लागो हुवे ता  
 आलोउं जिन यचनमें श्रका आणी हाय ( १ ) परदशनरी वांछ  
 किधी हाय ( २ ) फलप्रति सिदिह आप्या हाय ( ३ ) पर पाख  
 हीरा प्रक्षमा किधा हाय ( ४ ) पर पाखहीरा सत्तव परिचय  
 किये हाय ( ५ ) तो भूरा ममाकित रुप रत्नर बिपै मिष्पात्य  
 म्प रत्र मउ खइ लागो हाय ता तस्स मिच्छामि दुक्कइ ॥

अथ यारे घत और उनके अतिचार ॥ २४ ॥

( १ ) पहिठा अशुयत-धूनाआ पाणाइ पायाआ विरमण  
 शन जीर, शंदिम, तंदिम, अउरिदिम, पंचेदिम, विन अपराध

जाणी प्रीछी आकुगी संकल्पी हणवारी बुद्धि करीने हणवा हणावणका पचक्खाण जावजीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा ॥

[ एवा पहिला थूल प्राणातिपात विरमण व्रतके विपेजे कोई अतिचार लागो होवे तो आलोउं ॥

रीस वशे गाढा बंधण बांध्या होय ( १ ) गाढा घाव घाल्या होय ( २ ) चामना छेद कीधा होय ( ३ ) अति भार घाल्या होय ( ४ ) भात पाणीना विच्छेद कीधा होय तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ १ ॥

दूजो अणुव्रत-थूलाओ मोसावायाओ विरमणं कन्नालियं, गोवालियं, भोमालियं, थापणमोसो, संक ले कूडी शाख, इत्यादिक मोटका झूठ बोलणका पचक्खाण जावजीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा ॥

एवा दूजा थूल मृषावाद विरमण व्रतके-विपेजे कोई अतिचार लागो होय तो आलोउं । सहसात्कार किणी प्रति कूडो आल दीधो होय ( १ ) रह स्यछानी वात प्रगट कीधी होय ( २ ) पोतानी स्त्रीका मर्म प्रकाश्या होय ( ३ ) मृषा-उपदेश दीधा होय ( ४ ) कूदा लेख लिख्या होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ २ ॥

( ३ ) तीजो अणुव्रत-थूलाओ आदिन्नादाणाओ विरमण, खातर खिणी, गांठ छोडी, ताळो पर कूंची, वाट पाडो, पडी वस्तु मोटकी धणियां सेती जाणीने लेवणका पचक्खाण । जावजीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा ॥



एवा तीजा थूल अदत्तादान विरमण व्रत के-विषे  
 जे कोई अविचार लागो होय तो आलोठं । भोगई वस्तु लीषी होय  
 (१) चोरने साम्म दोषो होय ( २ ) राग्य बिरुद्ध करअ कीषा  
 होय ( ३ ) कूडा तोला कूडा मापा कीषा होय ( ४ ) वस्तु  
 में मेल समेल, सखरा दिखाय नखरी आपी हाय ( ५ ) तस्म  
 मिच्छामि दुष्कदे ॥ ३ ॥ )

४ चोथो अणुव्रत पूताओ मेहुपाओ विरमण, यावा गी  
 स्त्री उपरांत मैयुन सेवणका पचकसाण । जावज्जीवाए देवता  
 संबंधी दुविह विविहेणं न करमि न करबमि मणसा वयसा  
 कायसा, मिनख विर्यच संबंधी इकविहं इकविहेणं न करमि  
 कायसा ॥

एवा चौथा थूल स्वदारा सतोप विरमण व्रतके-  
 विषे जे करई अतिचार लागो हाय ता आलोठं । इधर बादा काल  
 गस्तीसु गमन कीषा होय १) अपगृहीसु गमन कीषा होय(२)  
 अनग प्रीदा कीषी हाय ( ३ ) पराया विवाह नाखग जोडिया  
 हाय ( ४ ) काम मोग वीम्र अमिलापाव मविया हाय ( ५ )  
 तस्म मिच्छामि दुष्कद ॥ ४ ॥

५ पाचमा अणुव्रत-पूताआ परिमाहाआ विरमण,  
 एत धर का, रूपा माना का, धन धान्यका, दुपद पौपइका,  
 पर बिसरका यथा परिमाण कीषा छै त उपरांत आप का  
 करी परिग्रह राखणका पचकसाण जावज्जीवाए एकविह विविहेणं  
 न करमि मणसा वयसा कायसा ॥

एवा पांचमा थूल परिग्रह विरमण व्रतके-विषे जे कोई अतिचार लागो होय तो आलोउं । सेत घरको ( १ ) रूपा, सोनाको ( २ ) धन धाव्यको ( ३ ) दुपद चौपद को ( ४ ) घर विखेराको ( ५ ) यथा परिमाण कीधो छै. ते अतिक्रम्यो होय तस्स मिच्छामि दुक्कड़ं ॥ ५ ॥

६ छट्टो दिशिविरमण व्रत-उंची नीची तिरछी दिशा को यथा परिमाण कीधो छै ते उपरांत स्वइच्छाए जाई ने पांच आश्रव द्वार सेवण का पत्रकखाण, जावजीवाए एकविह तिविहेणं न करेमि मणसा वयसा कायसा ॥

एवा छट्टो दिशिविरमण व्रत के-विषे जे कोई अतिचार लागो होय तो आलोउं ॥ उंची ( १ ) नीची ( २ ) तिरछी दिशा को यथा परिमाण कीधो छै ते अतिक्रम्यो होय ( ३ ) एक दिश घटाई होय एक दिश बधाई होय ( ४ ) संदेह षडियां पंथ आगे चाल्यो होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कड़ं ॥ ६ ॥

७ सातमो उपभोग परिभोग विरमण व्रत--  
 उच्छर्णियाविहं ( १ ) दंतणविहं ( २ ) फलविहं ( ३ ) अब्भं-  
 गणविहं ( ४ ) उवट्टणविहं ( ५ ) मज्जणविह ( ६ ) वत्थविहं  
 ( ७ ) विलेवणविह ( ८ ) पुणविहं ( ९ ) आभरणविहं ( १० )  
 धूपविहं ( ११ ) पेजविहं ( १२ ) भक्खणविहं ( १३ ) ओद-  
 नविहं ( १४ ) सूपविहं ( १५ ) विगयविहं ( १६ ) सागविहं  
 ( १७ ) माहुरविहं ( १८ ) जीमणविहं ( १९ ) पाणीविहं ( २० )  
 मुखवासविहं ( २१ ) वाहनविहं ( २२ ) सयणविहं ( २३ )

परिधिर्ह ( २४ ) सचिचविह, ( २५ ) द्वाविह ( २६ ) इत्यदिक् प्राइस षालां को मरजादा कीची छै ते उपरांत उपभोग परिभोग भाग्य का पचकडाण आबत्तोषाए एगविह तिविहेम न करेमि मणसा धयसा क्यसा ॥

एवा सातमा उपभोग विरमण ब्रतके-धिप ज

करई अतिघार लागो होय सो आलोड । पचकडाण उपरांत सचिच का आहार कीचो होय ( १ ) सचिच प्राविषद का आहार कीचो होय ( २ ) अपक का आहार कीचो होय ( ३ ) दुपक को आहार कीचो होय ( ४ ) तुच्छ औपधि मकलण कीचो होय थोडो खाय घणो नाखियो होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कंद ॥ एमोजनयकी कथा हवे कम वकी पनेर कभादान धावकने जाणवा जोग छै पण आदरवा जोग नयी त जहा, से कह छै इंगालकम्मे ( १ ) वणकम्मे ( २ ) साटी कम्मे ( ३ ) भाडीकम्मे ( ४ ) फोडीकम्मे ( ५ ) दंतवधिज्ज ( ६ ) लङ्कतयणिज्जे ( ७ ) रस्वणिज्जे ( ८ ) कमवाषीज्जे ( ९ ) विसवणिज्ज ( १० ) अंतपिल्लणकम्मे ( ११ ) निह्णकम्मे ( १२ ) दवग्गिदावणमा ( १३ ) सर दइ तलाव परिसोमणया ( १४ ) असई पोसयया ( १५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कंद ॥७॥

८ अठमो अनर्थ दइ विरमण ब्रत के-धउभिहे

पण्णत्त त जहा, अयन्नाप्यापरियं, पमायाचरियं, हिसपयाणं, पावकम्मायेणम, एवा अनर्थदंठ सयणरा पचकडाण, आवज्जीवाण दुधिह तिविहर्ण न क्कमि न कारवमि मणसा धयसा क्यसा ॥

[ एवा आठमा अनर्थदंड विरमण व्रत के विषे जे कोई अतिचार लागो होय ते आलोऊं ॥ कंडुपकी कथा किधी होय ( १ ) मंड कुचेष्टा किधी होय ( २ ) मौख्य वचन बोल्या होय ( ३ ) अधिकरण जोडी मूक्या होय ( ४ ) उपभोग परिभोग अधिका वधान्या होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ ८ ॥

[ ९ ] नवमो सामायिक व्रत—सावजं जोगं पचक्खामि, जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न करेमि न कार्वेमि मणसा वयसा कायसा एवी म्हारी श्रद्धा प्ररूपणा तो छे फरसणा करूं तेवारे सिद्ध ॥

[ एवा नवमा सामायिक व्रत के विषे जे कोई अतिचार लागो होय ते आलोऊं । मन ( १ ) वचन ( २ ) कायारा ( ३ ) जोग पाड़वे ध्यान प्रवर्तया होय, सामायिकमे संभालना नही किधी होय ( ४ ) अणपूर्णी पाड़ी होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ ९ ॥

[ १० ] दशमो देशवकाशिक व्रत—दिन प्रति प्रभात थकी प्रारंभीने पूर्वाटिक छः दिशकी जेटली भूमिका मोकली राखीछै ते उपरांत खड्छाये कायाए जईने पंच आश्रवद्वार सेवण का पचक्खण । जाव अहोरत्तं दुविहं तिविहेण न करेमि न कार्वेमि मणसा वयसा कायसा, ते मांहि द्रव्याटिक नेमकी मरजादा किधी छै ते उपरांत भोगणका पचक्खण । जाव दिवसं पज्जुवासामि, एगविहं तिविहेण न करेमि मणसा वयसा कायसा एवी म्हारी श्रद्धा प्ररूपणा तो छै फरसणा करूं तेवारे सिद्ध ॥

[ एवा दशमा दिशावकाशिक व्रतके—विषं अ कोइ अतिचार लागो होय ते आलाकं । नेमि भूमिकाधी वस्तु भा रधी अगाई हाय ( १ ) मांकलाई होय ( २ ) छद्मकरी ( ३ ) रूपकरी ( ४ ) पुत्रल नाखी आपा अणामो होय ( ५ ) तस्म मिच्छामि दुष्कं ॥ १० ॥

( ११ ) इग्यारमो पोपधव्रत—असण पाण खाइम माइमे का पक्षकखाण, अर्धम सेषणक पक्षकखाण माला अण विलपण का पक्षकखाण, सय सुसलादिक सावळ मोग का प क्षकखाण, जाव अहारध पज्जुवामि, दुविहं तिविहणं न करेमि न कारवेमि मणमा वयसा कायसा, एवी म्हारी अद्दा प्ररूपणा ता छे फरसणा क्कं वेवारे सिद्ध ॥

[ एवा इग्यारमा पोपधव्रत के—विषं अ काइ अ तिचार लागो होय ता आलोकं । पापामे मळा संघारो न जो या होय, माठी तर आया हाय ( १ ) न पूज्या हाय, माठी तर पूज्या हाय ( २ ) उचार, पासबण, भूमिकय न जाई हाय, माठी तर जोइ हाय ( ३ ) न पूज्या हाय, माठी तर पूज्या हाय ( ४ ) पापामे निद्रा, विकथा, प्रमाद किधो होय ( ५ ) तस्म मिच्छामि दुष्कं ॥ जावतां “ आवसही आवसही ” नहीं की धु होय, जावतां “ निम्सहा निस्मही ” नहीं कीधु हाय, इद्र महाराजक आया नहीं लिधा हाय, धाडी दूर पूज्यो हाय, य णा दूर परट्या हाय, परटन घानघार “ धामिर धामिर ” नहीं कीधु हाय, आयन धाइमयव नहीं क्यधु होय, तस्म मि च्छामि दुष्कं ॥ ११ ॥

[ १२ ] वारमो अतिथि संविभाग व्रत-साधु  
 निर्ग्रथने पासु एपणीक शुद्ध, अस्रणं ( १ ) पाण ( २ ) खाइमं  
 ( ३ ) साइमं ( ४ ) वत्थ ( ५ ) पडिग्गह ( ६ ) कंवल  
 ( ७ ) पायपुच्छणेणं ( ८ ) ( पाडिहारिय ) पीठ ( ९ ) फल-  
 ग ( १० ) सज्जा ) ( ११ ) संथारो ( १२ ) औषध ( १३ )  
 ने भेषज ( १४ ) प्रतिलाभ तो थको विचरूं एवी म्हारी  
 श्रद्धा प्ररूपणा तो छै फरसणा करूं तेवारे सिद्ध ॥

[ एवा वारमा अतिथि संविभाग व्रत के  
 विषै जे कोई अतिचार लागो होय तो आलोऊं । स्रज्जती वस्तु  
 सचित्त ऊपर मूकी होय ( १ ) सचित्त करी टांकी होय  
 ( २ ) पोतेरी वस्तु पारकी कहीहोय ( ३ ) अहंकार भावे  
 दान दीधु होय, थोड़ो दे घणो पोभायो-होय ( ४ ) भोजन  
 वेळा टाळीने निमंत्रणा किथी होय ( ५ ) तस्स मिच्छामि  
 दुक्कइं ॥ १२ ॥

इति वारे व्रत तथा उनके अतिचार समाप्त ॥

अथ संलेखणा का पाठ ॥ २९ ॥

अहंभेत अपच्छिम मरणांतिय संलेहणा ज्ञसणा आराहणा,  
 पोषध शाळा पूंजीने, उच्चार पासवण भूमिका पडिलेहिने, गम-  
 णागमणे पडिक्कमीने, दर्भादिक संथारो सथरीने, दर्भादिक  
 संथारो दुरुहीने, पूर्व तथा उत्तर दिशि पल्यंकादिक आसणे वे-  
 सीने, करयलसंपारिग्गहियं सिरसावत्ते मत्थए अंजली त्तिकड्डु,  
 एवं वयासी, नमोत्थुण अरिहंताणं भगवंताणं जावसंपत्ताणं,  
 एम अनंता सिद्धजीने वंदना नमस्कार करीने नमोत्थुणं अरि-

इहाण मगवंताण जावठाण संपाविउं काम, इम दूजा नमात्पुणं  
गुणीं जयवता वर्तमान तीर्थंकर महाराज्जे वंदना नमस्कार  
करीन, पातिका धमाचार्यजीन नमस्कार करीन, साधु प्रमुख  
चार तीर्थ स्वमावीन, सवे जीव राशि स्वमावीने, पूर्वे अ व्रत  
आदन्या छै, तना अतिचार दाप लाग्ता छै, त सय आलोइ,  
पदिक्कमी, निंदी, नि छरय थइ, सर्व पाप्माइयाय पञ्चमस्त्रा  
मि । सर्व मोसायाय पञ्चमस्त्रामि । सर्व अदिमादाणं पञ्च  
मस्त्रामि । सर्व महुणे पञ्चमस्त्रामि । सर्व परिग्गइ पञ्चमस्त्रा  
मि । सर्वं फाई माणं जावमिञ्ज दमवसछ, मव्य अकरणिउं  
पञ्चमस्त्रामि । जावजावाप विविई तिविडेणं न करमि न करभेमि  
कर्तवि नाणुजावामि, मणसा मयसा कयसा एम अठार पाप  
स्थानक पञ्चमस्त्रामि, सब्ब असणं पाय खाइम साइमं चउम्वि  
हयि आहार पञ्चमस्त्रामि, जावजीवाप । एम चारे आहार प  
ञ्चमस्त्रामि ज पाय, इमं भरारं इहं कंठं, पिय मणुभे मणाम  
धिअ विमासिय समयं अणुमयं महुमयं मडकरंउगसमाणं ग्यण  
करठगभय माणमिय माणं उन्हं, माणं खुहा, माणं पिचासा,  
माणं बाला, माणं चारा, माणं दंसा, माणं मसग्ग, माणं बाहि  
य, पिचिये, फाप्फयं, समीमं सभिविहिय, विविहा रागायका  
परिमहोषमग्गा फासा कुसंति, एव पियण, चरमाहं उस्साम  
निस्सासेहं, वासिरामि तिफडु । एम छरार बोमिरावीन, काल  
अथवकस्त्रमाणं विहरामि । एवी भया प्ररूपणा ता छ करसणा  
कं तभार मिद ॥

[ एवी मेलस्वणाके विपे अ फाइ अतिचार लागो हाय  
दा आलाऊ, इहलोगार्ममप्यआग ( १ ) परलोगार्ममप्यआग

( २ ) जीवेया संसृष्टयोगे ( ३ ) मरणासंसृष्टयोगे ( ४ )  
कामभोगासंसृष्टयोगे ( ५ ) मा मज्ज हुज्ज मरण ते । श्रद्धा  
प्ररूपणामे फरक आगे होय तो तस्स मिच्छामि दुक्कं ॥

अथ तस्स सव्वस्स का पाठ ॥ ३० ॥

तस्स सव्वस्स देवसियस्स अइयारस्स दुब्भासिय दुच्चितियं आ-  
लोयंते पडिक्कमामि ॥

अथ तस्स धम्मस्स का पाठ ॥ ३१ ॥

तस्स धम्मस्स केवलियन्नत्तस्स अब्भुट्ठिउमि आराहणाए, विर-  
उमि विराहणाए, तिनिहेण पडिक्कतो वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥

अथ चत्तारी मंगलं का पाठ ॥ ३२ ॥

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, के-  
वलियन्नत्तो धम्मो मंगलं; चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्त-  
मा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवली पण्णत्तो धम्मो  
लोगुत्तमा, चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते मरणं पवज्जामि,  
सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलियण्णत्तं  
धम्मं सरणं पवज्जामि ॥ अरिहंतीरो शरणो, सिद्धजीरो शरणो,  
साधुजीरो शरणो, केवलीं प्ररूपित धर्मरो शरणो ॥ चार शर-  
णा दुर्गति हरणा, और शरणो नहीं कोय; जे भव्य प्राणी आ-  
दरे, अक्षय अमर पद होय ॥ १ ॥



अथ अठारे पाप स्थानक का पाठ ॥ ३३ ॥

अठारे पाप स्थानक आलाउ । ( १ ) पला प्राणातिपात  
 ( २ ) द्वा मृपात्राद ( ३ ) तीजो अदत्तदान ( ४ ) चोपो  
 मैथुन ( ५ ) पाचमा परिग्रह ६ ) छद्वा क्वाध ( ७ ) सातमो  
 मान ( ८ ) आठमा माया ( ९ ) नवमा लाम ( १० ) दशमो  
 राग ( ११ ) इग्याग्मा द्वय ( १२ ) धारमो कल्ह ( १३ ) स-  
 रमो अन्वास्मान ( १४ ) चवदमा पैशुन्य ( १५ ) पनरमा  
 पर परिवाद ( १६ ) साठमा रति अरति ( १७ ) सतरमो  
 माया मामा ( १८ ) अठरमा मिष्ठा दक्षन धृत्य छ अठार  
 पाप स्थानक सेष्वा हाय, मवाया हाय, सवठा प्रति मलो जा  
 प्या हाय तस्स मिच्छामि दुद्ध ॥

अथ स्वमासमणा का पाठ ॥ ३४ ॥

इच्छामि, स्वमा समणा, धदिउ जावमिज्जाए, पिसीहिआण  
 ( १ ) अप्पुमाण्ह, म, मिउगाह ( २ ) पिसाहा, “ काय ”  
 “ काय ” सफत्त, स्वमाणिज्जा, म, किल्लामा अप्प किल्लताण,  
 महूसुमेण, म, दिवसा, वइक्कता ( ३ ) “ वचा ” म ( ४ )  
 “ जवाणिज्ज ” च, “ म ” ( ५ ) स्वामेति, स्वमासमणा,  
 दवासिय, वइक्कम ( ६ ) आवासिआए, पडिक्कमामि, स्वमास

( १ ) प्राणिपातो मृपात्रादोऽदत्तदान च मैथुनम् ।

परिग्रस्ता चोपो माना माया च लोभक ॥ १ ॥

रमो द्वेऽऽ रत्तरस्याम्यास्मान कल्हस्तथा ।

पैशुन्यं परिवत्स्य माया सूतमेव च ॥ २ ॥

मिष्ठादर्शनशस्य च मवसन्ततिकारणम् ।

अमून्यपादसाऽवधस्थानानि न्युसुजाम्यहम् ॥ ३ ॥

मणाणं, देवसिआए आसायणाए, तेत्तीसण्णयराए, जंकिंचि,  
मिच्छाए, मणदुक्कड़ाए, वयदुक्कड़ाए, कायदुक्कड़ाए, कोहाए,  
माणाए, मायाए, लोहाए, सच्चकालियाए, सच्चमिच्छोवया  
राए, सच्चधम्ममाइदकमणाए, आसायणाए, जो, मे, अइयारो,  
कओ, तस्स, खमासमणो, पडिक्कम्मामि, निंदामि, गरिहामि-  
अप्पाणं वोसिरामि [ ७ ] ॥

अथ पंच पदों की वंदना का पाठ ॥ ३५ ॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाणं, णमो उ-  
वज्झायाणं, णमो लोए सच्चसाहणं.

[ “ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ” ]

पहिले पद णमो अरिहंताण कहता सर्व श्री अरिहत भगवंतजी  
महाराज भणी म्हारो [ वंदना ] नमस्कार हुई जो । अरिहत-  
जी महाराज केवा छै? उप्पन्नानाण दसणधरा अरहा जिन के-  
वली, जघन्य वीस तीर्थकर, उत्कृष्टा एक सौ सित्तर देवाधिदेव  
ते मांहे वर्तमान काले—

वीस विहरमान.

( १ ) श्री सीमंधरस्वामी ( २ ) युगमंधर स्वामी ( ३ ) बा-  
हु स्वामी ( ४ ) सुबाहु स्वामी ( ५ ) सुजात स्वामी ( ६ )  
स्वयंप्रभ स्वामी ( ७ ) ऋषभानन स्वामी ( ८ ) अनतवीर्य  
स्वामी ( ९ ) सूरप्रभ स्वामी ( १० ) विशाल स्वामी ( ११ )  
वज्रधर स्वामी ( १२ ) चन्द्रानन स्वामी ( १३ ) चन्द्रबाहु  
स्वामी ( १४ ) भुजग स्वामी ( १५ ) ईश्वर स्वामी ( १६ )  
नेमिप्रभ स्वामी [ १७ ] वीरसेन स्वामी [ १८ ] महाभद्र

स्वामी [ १९ ] देवपद्य स्वामी [ २० ] अजितबीय स्वामी  
 चौतीस अतिश्रम पैंतीस बापी फती बिराजमान, एक हजार  
 आठ लक्षण का घरण हार, त्रिलोक महिमा, त्रिलोक घदनीक,  
 चौसठ इद्रारा पूजनीक, अठारे दोषां रहित रहित, इन्द्र गु  
 णो करने बिराजमान अनंता ध्यान ( १ ) अनतो दरक्षण  
 ( २ ) अनंता पारित्र ( ३ ) अनंता वीच [ ४ ] अशोक वृक्ष  
 ( ५ ) सुरपुष्प वृष्टि ( ६ ) दिव्य ध्वनि ( ७ ) चामर ( ८ )  
 सिंहासन ( ९ ) मार्महृत् ( १० ) वन्देदुमि ( ११ ) छत्र  
 धार ( १२ ) जनन्य दोष कोइ कत्रला, उत्कृष्टा नवकाइ क  
 वली, धर विचर जा महापुरुषाने म्हारो ( वंदना ) नमस्कार  
 हुइ जा । कोइ अभिनय आद्यातना हुई होय वा वारवार हाथ  
 जाइ मान मोइ खमाउ छे, आप खुमत्रा योग्य छ । एक ह्या  
 र आठ धार मन बचन कायाप करो मुजा भुजा वदना नम  
 स्कार हुइ जा ॥ १ ॥

द्वेषद जमा सिद्धार्ण कहती सर्ष सिद्धजी महाराज भणी  
 म्हारा ( वदना ) नमस्कार हुइ जो । सिद्धजी महाराज कवा  
 छे? सकृठ काय सिद्ध कराने आठ कर मपाव, पनरे भेद सि  
 द्ध सिद्धा ॥ तोव सिद्धा ( १ ) अतीर्थ सिद्धा ( २ ) ताथकर  
 सिद्धा ( ३ ) अनाथकर सिद्धा ( ४ ) स्वयमुद्ध सिद्धा ( ५ )  
 प्रत्यकनुइ सिद्धा ( ६ ) बुद्धभाहिय सिद्धा ( ७ ) इत्थीलिंग  
 सिद्धा ( ८ ) पुरुषलिंग सिद्धा ( ९ ) नपुंसकलिंग सिद्धा

( १० ) स्वलिङ्गी सिद्धा ( ११ ) अन्यलिङ्गी सिद्धा ( १२ )  
 गृहस्थलिङ्ग सिद्धा ( १३ ) एक सिद्धा ( १४ ) अनेक सिद्धा  
 ( १५ ) आठ गुणां करीने विराजमान अनंतो ज्ञान ( १ )  
 अनंतो दर्शन ( २ ) अनंतो सुख ( ३ ) क्षायिक समकित  
 ( ४ ) अटल अवगाहना [ ५ ] अमूर्तिपणो [ ६ ] अगुरुलघु  
 [ ७ ] अनत अकरण वीर्य ॥

## ॥ अडिल छंद ॥

अविनाशी अविकार परम रसधाम है,  
 समाधान सरवंग सहज अभिराम है ।

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत है,  
 जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत है ॥ १ ॥

जठे जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, रोग नहीं, शोक नहीं,  
 भूख नहीं, तृषा नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, मोह नहीं,  
 माया नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, दुःख नहीं, दाग्द्रिय नहीं,  
 एकमे अनेक, ज्योतिमें ज्योति विराजमान, एवा अनंता सिद्ध  
 भगवंत छै, जाने म्हारो [ वंदना ] नमस्कार हुई जो । कोड  
 अविनय आशातना हुई होय तो बारंवार हाथ जोट मान मोद  
 खमाउं छ, आप रूमवा योग्य छै । एक हजार आठवार मन  
 वचन कायाए करी भुजो भुजो ( वंदना ) नमस्कार हुईजो  
 \* ॥ २ ॥

तीजे पद णमो आयरियणं कहता सर्व आचार्यजी महाराज  
 मणी म्हारो ( वंदना ) नमस्कार हुई जो । आचार्यजी, महाराज  
 केवा छै? ज्ञानाचार ( १ ) दर्शनाचार ( २ ) चारित्र्याचार  
 ( ३ ) तपाचार ( ४ ) वीर्याचार ( ५ ) ए पांच आचार पाळे,

स्वामी [ १९ ] देवमल्ल स्वामी [ २० ] अजितबीय स्वामी  
 चौतीस अतिशय पैसीम घाणी करी विराजमान, एक हजार  
 आठ लक्षण का धरण हार, त्रिलाक महिया, त्रिलोक बदनीक,  
 चौसठ इंद्रांरा पूजनीक, अठारे दोपां रहित रहित, द्वादश गु  
 षां करने विराजमान अनंतो क्षान ( १ ) अनंतो दरमण  
 ( २ ) अनंतो धारित्र ( ३ ) अनंतो धीर्य [ ४ ] अज्ञाक वृष्ट  
 ( ५ ) सुरष्टुष्य वृष्टि ( ६ ) दिव्य ध्वनि ( ७ ) धामर ( ८ )  
 सिंहासन ( ९ ) भागेदक ( १० ) देवदुदुमि ( ११ ) छत्र  
 धार ( १२ ) जनन्य दाप कोद कवला, उत्कृष्टा नभकाद क  
 वला, पहर बिचर जां महापुरुषानि म्हारो ( वदना ) नमस्कार  
 हुइ जा । कई अविनय आशातना हुइ हाथ ता पारंवार हाथ  
 जाइ मान मोद समाउ छै, आप खुमदा भाग्य छ । एक हजा  
 र आठ धार मन कवन कायाप करी भुजो भुजो वदना नम  
 स्कार हुइ जा \* ॥ १ ॥

दूमपद षमा सिद्धार्थ कहता सर्व सिद्धजा महाराज मणी  
 म्याग ( वदना ) नमस्कार हुइ जा । सिद्धजी महाराज कया  
 छै? सकल कर्म सिद्ध करीन आठ कर्म रूपाय, पनर मंद सि  
 द्ध सिद्धा ॥ ताव सिद्धा ( १ ) अतीय सिद्धा ( २ ) तीथकत  
 सिद्धा ( ३ ) अताथकत सिद्धा ( ४ ) स्वययुद्ध सिद्धा ( ५ )  
 प्रत्यकनुइ सिद्धा ( ६ ) पुदभोदिय सिद्धा ( ७ ) इत्थीलिंग  
 सिद्धा ( ८ ) पुरुषलिंग सिद्धा ( ९ ) नपुंसकलिंग सिद्धा

ग्रंथका जाणणहार, इग्यारे अंग वार उपांग चरणसित्तरी कर-  
णसित्तरी भणे भणावे ए पच्चीस गुणे करी विराजमान, तथा  
चउदे पूर्व इग्यारे अंग भणे भणावे, सात नय, निश्चय व्यवहा-  
र प्रत्यक्ष ने परोक्ष दोय प्रमाण के जाणणहार, मनुष्य अथवा  
देवता कोई पण जेने विवादमें छलवाने समर्थ नहीं, सूत्र पाठ-  
का दातार उपाध्यायजी महाराज, जानें म्हारो [ वंदना ] नम-  
स्कार हुई जो । कोई अविनय आशातना हुई होय तो वारंवार  
हाथ जोड़ मान मोड़ खमाउं छूं, आप खमवा योग्य छो एक  
हजार-आठ वार मन वचन कायाए करी भुजो भुजो म्हारो  
[ वंदना ] नमस्कार हुईजो \* ॥ ४ ॥

पांचमे पद णमो लोए सव्वसाहूणं कहतां लोकरे विषे सर्व  
साधुजी महाराज भणी म्हारो ( वंदना ) नमस्कार हुई जो ।  
[ पोतारा धर्मचार्यजी जैनाचार्य पूज्यजी श्री  
श्री श्री १००८ श्री श्री श्री . . . ]

जघन्य दोय हजार क्रोड़ साधुजी, उत्कृष्टा नव हजार क्रोड़ सा-  
धुजी, पांचे समिते समिता, तीने गुप्त गुप्ता बयांळीस दोष टा-  
ळीने आहार पाणी का लेणहार, छ कायके पीर, छ कायके  
रक्षक वाचीस परीसह का जीतणहार, वाचन अनाचार के टा-  
लनहार, तेड़िया जाय नहीं, नूंतिया जीमे नहीं, निर्लोभी, नि-  
र्लालची, शूरा वीरा धीरा मोक्ष मार्ग साधे, भगवान की आ-  
ज्ञामें विहरे विचरे, शुद्ध संयम पाळे, सत्ताईस गुणां करी विरा-  
जमान, पंच महाव्रत पाळे ( ५ ) पंच इन्द्रियो वश करे

( १ ) इस जगह पर अपने अपने गुरु महाराजका नाम लेना ।

पांच महाव्रत पाठ, पांच इन्द्रियों वश कर, चार कषाय टांके, नववाइ सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य पाठ, पच समिति, तीन गुप्ति, गुद्ध आराधे ॥ छत्तीस गुणां करने विराजमान आचायजी महाराज अर्थ का टातार, आठ संपदा सहित, बां महापुरुषांन बागे वंदना नमस्कार हुइ जो ॥ कोइ अविनय आघातना हुई होय ता बारबार हाथ झाड़ मान मांइ क्षमाठ छै, आप खुमवा याग्य छा एक हजार आठवार मन वचन कषयाए करा सुजा सुजा म्हारा [ वदना ] नमस्कार हुइ जो ॥ ३ ॥

षाय पद थमा उबझायाण कहतौ सर्व उपाध्यजी महाराज मणा म्हारा ( वदना ) नमस्कार हुइ जो । उपाध्यायजी महाराज कवा छ ? उपाध्यायजी, रामधरजी, म्यबिगजी, बडु भुतिजा, इग्यार अंग, आचारांग ( १ ) सुयगदांग ( २ ) ठाजांग ( ३ ) ममबायांग ( ४ ) भगवती ( ५ ) ज्ञाता ( ६ ) उपासकउमा ( ७ ) अंतगददसा ( ८ ) अनुत्तगवमाइदमा ( ९ ) प्रभध्या करण ( १० ) निपाक ( ११ ) ॥

घारे उपांग-उध्वबाइ ( १ ) रायप्पसजी ( २ ) र्जीवामिगम ( ३ ) पद्मवणा ( ४ ) जवुडीपपण्णसि ( ५ ) चद पण्णसि ( ६ ) सुगपण्णसि ( ७ ) निरावलिया ( ८ ) कप्यविदमिया ( ९ ) पुष्किया ( १० ) पुष्कलिया ( ११ ) घन्दिदिसा ( १२ ) ॥

मूल घत्र चार-उत्तगध्ययन ( १ ) दशैकालिक ( २ ) नटा घत्र ( ३ ) अनुयागहार ( ४ ) ॥

छद चार दशभुतस्कध ( १ ) शुद्धस्कल्प ( २ ) ध्यबहार ( ३ ) निर्गीय ( ४ ) ॥ धनीसमा आध्यायक ॥ आदि देइ अनक

शीळ पाळे, तपस्या करे, भावना भावे. सवर करे, सामायिक करे, पोपो करे, पडिकमणो करे, तीन मनोरथ चौदह नियम चितवे, एक व्रत धारी, तथा वारे व्रत धारी, मूलगुण उत्तरगुण महित ते मांहे मोटाने हाथ जोड मान मोड पगे लागी खमाउं छं, छोटाने ममुच्चय खसाउं छं ॥

अथ चौरासी लक्ष जीवायोनि का पाठ ॥ ४१ ॥

साथ लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेउकाय, सात लाख वायुकाय, दश लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दोय लाख वेंद्रिय, दोय लाख ते इंद्रिय, दोय लाख चउरेंद्रिय, चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख पंचेंद्रिय तिर्यच, चौदह लाख मनुष्यरी जाति, चार गति चौरासी लाख, जीवायोनि सूक्ष्म त्रादर पर्याप्तक अपर्याप्तक जाणतां अजाणतां कोई जीव हण्यो होय, हणायो होय, हणताने भलो जाण्यो होय, मन कर वचन कर काया कर अठारे लाख चौईस हजार एक सौ वीस ( १८-२४१२० ) मिच्छामि दुक्कडं ॥

अथ खामेमि सव्वे जीवा का पाठ ॥ ४३ ॥

खामेमि सव्व जीवा, सव्वे जीवा ससंतु मे ।

मेत्ति मे सव्वभूएसु, वैरं मज्झ ण केणई ॥ १ ॥

एवं महे आलोइय, णिदिय गरहिय दुगंछियं सम्मं ।

तिविहेण पडिंक्तो, वंदामि जिणे चउच्चीस ॥ २ ॥

“ दैवसिक प्रायश्चित्तविशोधनार्थं करोमि कायोत्सर्गं ”

( १ ) आर्या वृत्तम् ॥



( १० ) चार कपाय गळे ( १४ ) माव सव ( १५ ) कुरण  
 सव ( १६ ) जाग सव ( १७ ) क्षमावत ( १८ ) वैराग्यवत  
 ( १९ ) मन समाधारणिया २० ) वयसमाधारणिया ( २१ )  
 काय समाधारणिया ( २२ ) नाण संपन्न ( २३ ) दमण सव  
 य ( २४ ) चाण्ण संपन्न ( २५ ) वदनी समा अहिमासणिया  
 ( २६ ) मग्घांति समा अहिमासणिया ( २७ ) ॥

इया माधुजा महाराजने म्हागे [ वदना ] नमस्कार हुइ जो ।  
 काइ अबिनध आझातना हुइ हाय ता वारंवार हाय जाड मान  
 माण खमाउ छ आप खमवा साम्यछा । एक हजार आठवार  
 मन वचन कामाय करी भुजा भुजा म्हारा [ वदना ] नमस्कार  
 हुइ जो \* ॥ ५ ॥

ए पंच पद लाकमें महा मंगलीक छै, महा उचम छै, शरण  
 लवा योग्य छै, वारंवार इण भयमें तथा भव भवमें कने शरणा  
 हुइ जा ॥

इति पंच पदों की वदना समाप्त ॥

अथ आयरिय उवज्झाए का पाठ ॥ ४० ॥

आयरिय उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलग्गे अ ।

अमे केई कसाया, सब्ब तिबिहेण खामेमि ॥ १ ॥

सब्बस्स समयसंघस्स, भगवओ अजलि करिण सीसे ।

सब्बं खमावइथा, खमामि सब्बस्स अइयंपि ॥ २ ॥

सब्बस्स जीवरासिस्स, भावओ बम्मनिहियनियासिथा ।

सब्बं तमावइथा, खमामि सब्बस्स अइयंपि ॥ ३ ॥

अथ स्वमत खामणा का पाठ ॥ ४१ ॥

अथाइ डीव, पनरे धेय भइि तथा धारे, भावक भात्रिका दान देव,

# अथ प्रतिक्रमण की विधि ॥



थम चौबीस स्तव करना ( " इरिया वहियाए " का पाठ " तस्सउत्तरि का पाठ पढकर कायोत्सर्ग ( काउस्सग्ग ) करना मनमें " इरियावहियाए " का पाठ बोलना. " णमो अरिहंताणं " कहकर " लोगस्स " का पाठ फिर चारों घुटना खडा करके दो " नमात्थुणं " देना दूसरे

रे नमात्थुणं में " ठाणं संपविउं कामस्सणं णमोजिणाणं जिअभयाणं " कहना.

पीछे आसन छोड खडा होकर तीन दफह " तिव्वुत्ता " बोलना. दो हाथ जोडकर देव गुरु साधर्मो भाईकी आज्ञा लेकर " देवसिक पडिक्कमणा करने की आज्ञा है " ऐसा कहके " इच्छामिणंभंते " का पाठ " नवकार, " तीन बार तिव्वुत्ता कहकर " पहिले आवश्यक की आज्ञा है " ऐसा कहना, पीछे " करेमिभंते " का पाठ " इच्छामिठामि, तस्स उत्तरि " का पाठ कहकर कायोत्सर्ग करना ( शक्ति होतो खडा रहकर करना, शक्ति न होतो बैठ कर " सिद्धासन " लगाके " जिनमुद्रावत् " कायोत्सर्ग करना.

कायोत्सर्गमें १४ ज्ञान का " जं वाइद्धं " इत्यादि, समकित का पांच " जिन वचनमे शंका आणि होय " इत्यादि, चारह व्रत्तोंका ६० ( एवा-से लेके एक एक व्रत का पांच

अथ समुच्चय पचक्त्वाण का पाठ ॥ ४४ ॥

गठि सहिषं मुठिसहिय नवकारसि पोरसी साठ पोरसी आप  
आपनी धारणा प्रमार्णे तिविहपि चउव्विहंपि आहारं अमण पा  
र्यं खाइम साइम अमत्यमा भोगेण सहमागारेणं महत्तरागारेणं  
सव्वसमादिविधिआगारेणं बोसिर ॥

अथ आलोचना का पाठ ॥

सामायिक, चउविसत्यो, बंदनक, पडिक्कमणो, ए धार आ  
वश्यक समाप्ता पांचवे आवश्यक रो आह्वाह ॥ सामायिक, च  
उविसत्यो, बंदनक, पडिक्कमणा, काउस्सग्ग, ए पांच आवश्य  
क समाप्ता छठे आवश्यक रो कामी, धन्य है भीवर्द्धमानस्वामी ॥  
तइत सामायिक, चउविसत्यो, बंदनक, पडिक्कमणो, काठस्सग्ग,  
पच्चक्त्वाण, ए छ आवश्यक माहे जाणतां जजाणतां अे कोई  
अतिचार दीप लागा हाय तथा पाठ उचारतां मात्रा अनुस्वार  
पद अक्षर अधिके जोला आगा पाछा कखा हाय तस्स मिच्छा  
दुक्कई ॥

मिथ्याम्यनो पडिक्कमणा, अव्रतना पडिक्कमणा, प्रमादनो पडिक्क-  
मणो, कपायनो पडिक्कमणा, अशुमजागना पडिक्कमणा, ए पां  
च पडिक्कमणा माइला कोई पडिक्कमणा नहीं किधा हाय तस्स  
मिच्छमि दुक्कई ॥

गया काल का पडिक्कमणा, वतमान काल को सेवर, तथा  
सामायिक, आवता काल का पच्चक्त्वाण, तर्मां ज वाप लागा  
हाय, अतिक्रम म्यतिक्रम अतिचार अनाचार सो तस्स मिच्छामि  
दुक्क ॥ धवपुं मंगलं ॥

( इति श्रावक प्रतिक्रमण सम्पूर्णम् ॥ )

ऐसे ही “ का ” और “ यं ” उच्चारण करते दूसरा आवर्तन हुआ ( २ ) “ का ” और “ य ” के उच्चारणसे तीसरा आवर्तन होता है ( ३ ). पीछे “ जत्ता भे जमणिजं च भे ,, इस नव अक्षरोंसे तीन आवर्तन होंगे, यथा—प्रथम “ ज ” मठ स्वरसे “ ता ” मध्यम स्वरसे “ भे ” ऊंचे स्वरसे ऊपर की रीति मुझव दोनों हाथ जमीनपर धर के बीचमें ( आरती रूप ) आंखोंके ऊपर हाथ धरके क्रममें एक एक अक्षर बोलते हाथ लगाना यह प्रथम आवर्तन हुआ ( १ )

“ ज. व. णि. ” यह तीनों अक्षर त्रिविध स्वरसे ऊपर के मुझव कहनेसे दूसरा आवर्तन होता है ( २ )

“ जं. च. भे ” इन तीनों अक्षरोंसे पूर्वोक्त रीति करनेसे तीसरा आवर्तन होता है ( ३ ) ऐसे दोनों मिलके ६ आवर्तन एक वक्त “ खमासमणे ” का पाठ पढ़ने से होते हैं और दूसरी बार पाठ पढ़नेसे १२ आवर्तन होते हैं.

पहिले खमासमणमें “ वड्कर्म ” तक कहके “ आवसियाए ” इस पदपर खड़ा होना और गुरु के चरणों से पीछा हटना ( विलोम रीतिसे ) और मितावग्रहके बाहिर जाना अर्थात् ती-च हाथ दूर गुरुके सन्मुख खड़ा रहकर शेष पाठ पढ़ना.

दूसरे खमासमणे में पूर्वोक्त रीति मुझव जरा शरीर को झुकाकर “ इच्छाभि खमासमणो वंदिउं जावणिजाए णिसीहीआए अणुजाणह मे मिउग्गहं णिसीही ” यह पाठ पढ़कर गुरुके नजदीक जाके बैठकर पूर्वोक्त विधि मुझव ६ आवर्तन देना. सब पाठ बैठे बैठे पढ़ना. गुरुके सामने नजर रखनी. दूसरे ख-

पांच अतिघार ) “ १५ कमादान ’ क, “ ७ सलख्या ”  
 क, ( एव ९९ ) “ १८ पाप, इच्छामिठामि ” का पाठ,  
 कायोत्सग में कहांमी “ तस्स मिच्छामि दुक्कहं ” नहीं कइ  
 ना इच्छामिठामि का पाठमें “ इच्छामिठामि काउत्सग्ग ’  
 की जगह “ इच्छामि पडिक्कामिउ ’ कइना फिर “ नवकार ”  
 पोलक “ णमा अग्गित्ठणं ” ऐसा प्रकट बोलके कायोत्सग  
 छाडना

इति प्रथम सामायिक नामक आवश्यक सम्पूर्णम् ॥

विकस्रुच का पाठ तीनवार कइकर “ दूसर आवश्यकी आ  
 झाई ” एसा बालकर ‘ लोगम्म ’ का पाठ पढना

इति षतुर्विंशतिस्तब नामक द्वितीयावश्यक समाप्तम् ।

फिर तीन विकस्रुच का पाठ कइकर “ तीसरे आवश्यक  
 का आझाई ’ एसा बोलकर दो वार “ इच्छामि खमासमणो  
 इत्यादि पाठ पढना, माधु भावक दोना को अपने पास रखा-  
 हरण ( ओषा ) [ १ ] मुखपति ( २ ) और चठौटा ( का  
 लपट्टक ) [ ३ ] इन तीन निपाय कुछ नहीं रखना, पाठमें  
 प्रथम “ भिमीही ” घट आये अब मिलावप्रहमें प्रवेशकर दो  
 नों घुटने खड रखकर हाथ ओइ गुरुक समीप बैठना पीछे  
 गुरु के पावों में हाथ लगाकर अपने शिरपर हाथ लगाना  
 ६ आघर्ष करना “ अहा कम्मं काय ” इन अक्षरों का तीन  
 आवत होते हैं यथा—दोनों हाथ संवेकर हाथकर्म दसों अंगु-  
 लियोंका जमीनपर धरके मुखसे “ अ ” अक्षर नीचे स्वरस  
 कइना पीछे एसे ही दसों अंगुलियोंको आँखोंपर धरक “ हा ’  
 अक्षर ऊँचे स्वरस बोलना यह प्रथम आवतन हुआ ( १ )

तान तिक्खुत्तेका पाठ पढकर “ पांचवें आवश्यक की आज्ञा है ” यह अक्षर बोलकर “ दैवसिक प्रायश्चित्त विशोधनार्थ करोमि कायोत्सर्ग-नवकार-करोमि भंते-इच्छामिठामि-तस्मउत्तरी-का पाठ कहकर कायोत्सर्ग करना. कायोत्सर्गमें “ देवसी, राई ” ( रात्रि ) “ पक्खी ” “ चोमासी ” “ संवत्सरी ” पडिक्कम-णामें ४ लोगस्स कहना. यहतो हमारी संप्रदाय की रीति हुई। अब कितनेक अपनी अपनी आश्रमाय मुझव कम ज्यादाह करते हैं. मनमें “ नवकार ” पढकर कायोत्सर्ग खोलना. पीछे “ णमो अरिहंताणं ” ऐसा प्रगट कहना. फिर “ लोगस्स ” प्रगट कहना. ( पांच पदों की वंदना के पीछे यहांतक सब क्रिया खड़े खड़े करना शक्ति न होतो बैठे बैठे करना. ) पीछे पहले की तरह “ इच्छामि खमासमणा ” का पाठ दो बार पढना.

इति पंचम कायोत्सर्ग नामक आवश्यकं सम्पूर्णम् ॥ ५ ॥

पीछे “ आलोचना ” का दूसरे नंबर का पाठ कहकर मुनि महाराज के पास तथा अपने से बडा हो उनके पास पच्चक्खाण करे. इनका योग न होतो अपने आपही आज्ञा लेके “ गंठि-सहियं मुठिसहियं ” इत्यादि पाठ पढकर इच्छानुकूल पच्चक्खाण करलेना.

इति छठा पच्चक्खाण नामक आवश्यकं समाप्तम् ॥ ६ ॥

( १ ) जैसे—पूज्य जयपह्लुर्जी व रघुनाथजी महाराजकी सांप्रदायवाले साधुश्रावक क्रमशः-४, ८, १२, १६, लोगस्सका और हमारी सांप्रदायवाले सदाही ४ लोगस्स का ध्यान करते है वैसे अन्यभी सांप्रदायों समझ लेना ।

मासमणमें “ आवासियाए पदिपमामि ” यह दस अक्षर नहीं बालना

इति तृतीय बंदन नामक आवश्यक संपूष्यम् ॥ ३ ॥

तीन तिक्स्तुप्ते का पाठ कहकर “ चाया आवश्यक की आज्ञा है ” एसा कहके खड़ा होकर “ आगमेतिविह ” का पाठ से लक “ इच्छामिठामि ” का पाठ पर्यंत ‘ ९९ अति चार ’ कायोत्सर्गमें कहेसो प्रगटपन कइना “ तस्स मिच्छामि दुक्कइ ” टना पीछे “ तस्स सम्मस्स ” का पाठ कहकर नाच बैठ क दाहिना घुटना ( ओमणा गोडा ) खड़ा रखकर “ नवकार, क्नेमि म्ते, चचारिमंगल, इच्छामिठामि, इरिया बहिमाए ’ का पाठ पर्यंत कहकर फिर तान तिक्स्तुप्ता बाल क ” अतिचार मेल कहन की आज्ञा है “ एसा कहकर ” आ गमेतिविहे-दसमभासमाकेत का पाठ कहक बारह प्रथ और अतिचार लिखे मुसब धामिल कहना पीछे “ सलेखणा ” का पाठ अतिचारों सहित कहना पीछे “ १८ पापस्थानक-इच्छामिठामि ’ का पाठ बोलना यहाँतक दाहिना घुटना खड़ा रलेही बैठे रहना

फिर खड़ा हो हाथ जोड़ “ तस्स धम्मस्स, इच्छामि सुमा ममणो ” पूर्ववत् दोबार कहना पीछे “ पांचपद बांदन की आज्ञा है ” एसा कहकर उछटे घुटनों से बैठकर दानों हाथ बाँड क फिर समानपर लगाके पांच पदों को बंदना करना

पीछे खड़ा होके “ ए पांचपद सोकने विपै-आवरिए उव ज्जाए अट्ठमिहीप-चोरासी लाख जीबायोनि (सात लाख पृथ्वीकाय इत्यादि ) सुममभि सम्बजीवा १८ पापस्थानक ” का पाठ पढ़ना इति चतुर्थ प्रतिकर्मण नामक आवश्यक समाप्तम् ॥ ४ ॥

# गाथा.

दोचेव नमुकारो, आगारा छच्च हुंति पोरिसिए ॥  
 सत्तेव य पुरिमट्टे, एगासणंमि अट्टेव ॥ १ ॥  
 सत्तेगट्टाणस्सउ, अट्टेव य अविलेवी आगारा ॥  
 पंचेव य भत्तट्टे, छप्पाणे चरिम चत्तारि ॥ २ ॥  
 पंच चउदो अभिग्गहे, निव्वीए अट्टं नव य आगारा ॥  
 अप्पाउरणे पंचउ, हवंति सेसेसु चत्तारि ॥ ३ ॥

## १ अथ नोकारसी का पञ्चकखाण ॥

उग्गए सूरे नमुकारसहियं पञ्चकखामि । चउव्विहंपि आहारं  
 असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणा भोगेणं ( १ ) सहसागा-  
 रेणं ( २ ) वोसिरामि ॥ १ ॥ \*

## २ अथ पोरसि का पञ्चकखाण.

उग्गए सूरे पोरसिं पञ्चकखामि चउव्विहं पि आहार असणं  
 पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणा भोगेणं ( १ ) सहसागारणं  
 ( २ ) पच्छन्नकालेणं ( ३ ) दिसामोहेणं ( ४ ) साहुवयणेण  
 ( ५ ) सव्वसमाहिवात्तियामारेणं ( ६ ) वोसिरामि ॥ २ ॥

\* दूसरोंको पञ्चकखाण करनाहो तो—

“ पञ्चकखामि ” की जगह “ पञ्चकखाई ” कहना चाहिए ।  
 और ‘ वोसिरामि ’ की जगह ‘ वोसिरे ’ कहना चाहिए ।



पीठ " आलाचना " ३ ४ ५ अनुक्रम पाठ कहकर फिर  
पूर्वाक्त रीति मुझ्ज दा " नमोत्पुण " देना

फिर जितन मुनिमहाराज हा उनका क्रमस ( चढ़ स रगत  
तक ) तीन तीन धार सिक्खुचों का पाठ पढ पढ कर बंदना  
करना पीछ साधर्मा भाइयों न क्षमवस्वामणा करना

( अन्तिम छयना ) दवसी [ दिनका ] प्रतिक्रमणमें मि  
न्डमि दुक्कड आवे जहाँपर " विवस संबधि तस्स भिन्नामि  
दुक्कडं ' कहना राइ ( रात्रि ) प्रतिक्रमणमें " राइ संबधी त  
स्स भिन्नामि दुक्कडं ' कहना पक्खी प्रतिक्रमणमें " दवसि  
पक्खी संबधी तस्स मि० " कहना चौमासीमें " दवसि चा  
मासी संबधी तस्स मि० ' कहना सबत्सरी प्रतिक्रमणमें  
" देवमि सबत्सरी संबधी तस्स भिन्नामि दुक्कडं " कहना

इति श्रावक प्रतिक्रमण

विधि समाप्त ।

## अथ अयंबिलका पञ्चकखाण ॥

रे आयंबिलं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं  
साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ )  
३ ) गिहत्थसंसठेणं ( ४ ) उक्खित्तविवेगेणं ( ५ )  
पागारेणं ( ६ ) महत्तरागारेणं ( ७ ) सच्चसमाहि-  
( ८ ) वोसिरामि ॥ ७ ॥

## चउव्विहार उपवास का पञ्चकखाण ॥

रे अभत्तठं पञ्चकखामि चउव्विहं पि आहारं असणं  
साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ )  
पागारेणं ( ३ ) महत्तरागारेणं ( ४ ) सच्चसमाहि-  
५ ) वोसिरामि ॥ ८ ॥

## प तिविहार उपवास का पञ्चकखाण ॥

रे अभत्तठं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं  
मं अन्नत्थणाभोगेण ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) पा-  
गारेण ( ३ ) महत्तरागारेण ( ४ ) सच्चसमाहिद्वि-  
५ ) पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा,  
पा, सिरे, असिच्छेण वा वोसिरामि ॥ ९ ॥

१० त पाण ॥

रे अभत्तठं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं पाणं  
साइमं अन्नत्थणाभोगेण ( १ ) सहसागारेण ( २ ) मह-  
४ ) वोसिरामि ॥ १० ॥

### ३ अथ साङ्ख्यपुरासि का पञ्चक्खाण ॥

उग्गए घरे साङ्ख्यपुरासि पञ्चक्खामि चउच्चिह पि आहार  
असण पाणं खाइम साइम अन्नरथणाभोगेण ( १ ) सहसागारेण  
( २ ) पच्छमकालेण ( ३ ) दिसामोहेणं ( ४ ) साङ्ख्यमणण  
( ५ ) सच्चसमाहिवत्तिपागारण ( ६ ) धामिरामि ॥ ३ ॥

### ४ अथ पुरिमङ्क का पञ्चक्खाण

उग्गए सूर पुरिमङ्क पञ्चक्खामि चउच्चिह पि आहारं असण पाण  
खाइम साइम अन्नरथणाभोगण ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) प  
च्छमकालेण ( ३ ) द्विसामाहण ( ४ ) साङ्ख्यमणण ( ५ )  
महत्तरागारेणं ( ६ ) सच्चसमाहिवत्तिपागारणं ( ७ ) धामिरामि ॥ ४ ॥

### ५ अथ एकासन का पञ्चक्खाण

उग्गए मूर एकासनं विद्यासणं तिविहं पि चउच्चिहं पि आहारं असण  
पाणखाइम साइम अन्नरथणाभोगणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) मा  
गारि आगारणं ( ३ ) आउटण पसारण ( ४ ) गुरु अच्चुह्वा  
णण ( ५ ) पारिहावाणियागारेणं ( ६ ) महत्तरागारेणं ( ७ )  
सच्चसमाहिवत्तिपागारणं ( ८ ) धामिरामि ॥ ५ ॥

### ६ अथ एकलठारणं का पञ्चक्खाण ॥

उग्गए घर ण्गलठारणं पञ्चक्खामि द्विविहं तिविहं चउच्चिह पि  
आहारं असण पाणं खाइम साइम अन्नरथणा भोगण ( १ )  
महसागारण ( २ ) मागारि आगारण ( ३ ) गुरुअच्चुह्वाणण  
( ४ ) पारिहावाणियागारणं ( ५ ) महत्तरागारणं ( ६ ) सच्च  
समाहिवत्तिपागारणं ( ७ ) धामिरामि ॥ ६ ॥

## ७ अथ अयंबिलका पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे आयंबिलं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) लेवालेवेणं ( ३ ) गिहत्थसंसद्वेणं ( ४ ) उक्खित्तविवेगेणं ( ५ ) पारिट्ठावणियागारेणं ( ६ ) महत्तरागारेणं ( ७ ) सच्चसमाहिवत्तियागारेणं ( ८ ) वोसिरामि ॥ ७ ॥

## ८ अथ चउव्विहार उपवास का पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे अभत्तद्वं पञ्चकखामि चउव्विहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) पारिट्ठावणियागारेणं ( ३ ) महत्तरागारेणं ( ४ ) सच्चसमाहिवत्तियागारेणं ( ५ ) वोसिरामि ॥ ८ ॥

## ९ अथ तिविहार उपवास का पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे अभत्तद्वं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) पारिट्ठावणियागारेणं ( ३ ) महत्तरागारेणं ( ४ ) सच्चसमाहिवत्तियागारेणं ( ५ ) पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, ब्रहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असिच्छेण वा वोसिरामि ॥ ९ ॥

## १० अथ चरम पञ्चकखाण ॥

दिवसचरिमं पञ्चकखामि चउव्विहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) महत्तरागारेणं ( ३ ) सच्चसमाहिवत्तियागारेणं ( ४ ) वोसिरामि ॥ १० ॥

### ३ अथ सात्वतोरसि का पञ्चकस्त्राण ॥

उग्गए चरे सात्वतोरसि पञ्चकस्त्रामि चउच्चिह वि आहारं असण पाणं स्वाइम साइम अन्नत्थणामोगेण ( १ ) सहसागारेण ( २ ) पच्छमकालेण ( ३ ) दिसामोहणं ( ४ ) साहुवयणं ( ५ ) सध्वसमाहिवत्तियागारेणं ( ६ ) बोसिरामि ॥ ३ ॥

### ४ अथ पुरिमठु का पञ्चकस्त्राण

उग्गए सूर पुरिमठु पञ्चकस्त्रामि चउच्चिहं पि आहारं अमग पाणं स्वाइम साइम अन्नत्थणामोगेणं ( १ ) सहसागारेण ( २ ) पच्छमकालेण ( ३ ) दिसामोहणं ( ४ ) साहुवयणं ( ५ ) महत्तरागारेणं ( ६ ) सध्वसमाहिवत्तियागारेण ( ७ ) बोसिरामि ॥ ४ ॥

### ५ अथ एकासन का पञ्चकस्त्राण

उग्गए सूर एकासनं वियासअ तिविहं पि चउच्चिहं पि आहारं असणं पाणं स्वाइम साइम अन्नत्थणामोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) मागारि आगारेणं ( ३ ) आउटण पसारण ( ४ ) गुरु अन्नसुहाणणं ( ५ ) पारिद्धावणियागारेणं ( ६ ) महत्तरागारेणं ( ७ ) सध्वसमाहिवत्तियागारेणं ( ८ ) बोसिरामि ॥ ५ ॥

### ६ अथ एकलठणें का पञ्चकस्त्राण ॥

उग्गए चरे एकासनं पञ्चकस्त्रामि दुविहं तिविहं चउच्चिह वि आहारं असण पाणं स्वाइम साइम अन्नत्थणा भागण ( १ ) सहसागारेण ( २ ) मागारि आगारेण ( ३ ) गुरुअन्नसुहाणण ( ४ ) पारिद्धावणियागारेणं ( ५ ) महत्तरागारेणं ( ६ ) सध्वसमाहिवत्तियागारेणं ( ७ ) बोसिरामि ॥ ६ ॥

## ७ अथ अयंबिलका पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे आयंबिलं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं  
पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ )  
लेवाल्लेवेणं ( ३ ) गिहत्थसंसट्ठेणं ( ४ ) उक्खित्तविवेगेणं ( ५ )  
पारिट्ठावणियागारेणं ( ६ ) महत्तरागारेणं ( ७ ) सच्चसमाहि-  
वत्तियागारेणं ( ८ ) वोसिरामि ॥ ७ ॥

## ८ अथ चउच्चिहार उपवासका पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे अभत्तट्ठं पञ्चकखामि चउच्चिहं पि आहारं असणं  
पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेणं ( २ )  
पारिट्ठावणियागारेणं ( ३ ) महत्तरागारेणं ( ४ ) सच्चसमाहि-  
वत्तियागारेणं ( ५ ) वोसिरामि ॥ ८ ॥

## ९ अथ तिविहार उपवासका पञ्चकखाण ॥

उग्गाए सूरे अभत्तट्ठं पञ्चकखामि तिविहं पि आहारं असणं  
खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेण ( १ ) सहसागारेणं ( २ ) पा-  
रिट्ठावणियागारेण ( ३ ) महत्तरागारेण ( ४ ) सच्चसमाहिवत्ति-  
यागारेणं ( ५ ) पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा,  
वहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असिच्छेण वा वोसिरामि ॥ ९ ॥

## १० अथ चरम पञ्चकखाण ॥

दिवसचरिमं पञ्चकखामि चउच्चिहं पि आहारं असणं पाणं  
खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं ( १ ) सहसागारेण ( २ ) मह-  
तरागारेणं ( ३ ) सच्चसमाहिवत्तियागारेण ( ४ ) वोसिरामि ॥ १० ॥

## ११ अथ अभिग्रह का पञ्चक्त्वाण ॥

उग्राए सूर गठिसहिय गृहिसहिय पञ्चक्त्वाणि चउच्चिहं पि  
 आहारं अमणं पाणं स्वाइमं साइमं अभत्यणामोगेण ( १ ) मइ०  
 ( २ ) मइ० ( ३ ) सम्मममाहियपियागारेणं ( ४ )  
 वासिरामि ॥ ११ ॥

## १२ अथ निव्विगई का पञ्चक्त्वाण ॥

उग्राए सूर निव्विगइय पञ्चक्त्वाणि चउच्चिहं पि आहार  
 अमणं पाणं स्वाइमं साइमं अभत्यणामोगेणं ( १ ) मइसागा  
 रेण ( २ ) लेवालनं ( ३ ) गिहत्यसमहेणं ( ४ ) उक्खिण  
 विवेगेण ( ५ ) पट्टुक्खमुक्खिणं ( ६ ) पारिहायणियागारेणं  
 ( ७ ) मइसगगारेणं ( ८ ) सम्मममाहियपियागारेणं ( ९ )  
 वासिरामि ॥ १२ ॥



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
 वन्देवीरम् ॥ ॐ ॥  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

# चोईसी.

( श्रीजीनाथमहाराज अरज मेरा मनकी, ॥  
 तुम खैचो हमारी डोर झरत दर्शनकी ॥ एदेशी ॥ )

जिनराज महाराज चौबीसों जिनवरजी,  
 तुम रखो हमारीलाज सुनो गणधरजी ॥ ढेर ॥

श्री ऋषभ अजित संभव अभिनदस्वामी, सुमति  
 पद्म सुपार्श्व नमो शिरनामी; श्री चंद्रप्रभ सुविधि-  
 नाथ शीतल गुण गाऊं, श्री श्रेयांस वासुपूज्य महा-

राजकूं शीश नमाऊं ॥ श्री० ॥ १ ॥ श्री विमल अनंत धर्मनाथ  
 गांति जिनडेवा, श्री कुंधुनाथ अरनाथ की करतहूं सेवा; श्री  
 मल्लिनाथ मुनिसुव्रत व्रतमोय दीजो, नमिनाथ नेम महाराज  
 पारमोय कीजो ॥ श्री० ॥ २ ॥ श्री पार्श्वनाथ महावीर शरन  
 रहूं तेरी, मैं हूं चरण कौ दास अरज सुनो मेरी; तुम-चरण की  
 शरणविन काल अनंत गमाये, अब जन्म भये इह सफल चरण  
 तुम पाये ॥ श्री० ॥ ३ ॥ हुबो चउवीसो महाराज को शरनो  
 हमारे, तुम विन नाथ अनाथ कहो बुनतारें; प्रभु दानि दयाल  
 कृपाल सुनो तन मनकी, तुम खैचो हमारी डोर झरत दर्शन की  
 ॥ श्री० ॥ ४ ॥ तुम दर्शन विन महाराज काज मुझ विद्युत्  
 तुम दर्शन विन महाराज काल बहु भटक्यो; मुनि राम कहे





महाराज पूजन करो आशा, मुझ रखा धरन क पाम न करिया  
निराशा ॥ श्री० ॥ ५ ॥ इति ॥

प्रतिक्रमण सज्जाय ॥ दान कहे जग हू वडो एदेशी ॥

करपाठिकमणो मावसुं, दाय घटी शुभजाण लालर; परभव जाती  
जीवने, मफल माघा गुणलाण लालर ॥ क० ॥ १ ॥ श्रीमुख  
वीर समुष्टे, भोजिक गय प्रतिबाघ लालर; गात तीर्थकर बांधनें  
पाषे मुक्तिनो मोष लालरे ॥ क० ॥ २ ॥ लाख सुटी माना  
तणी, देव नितप्रति दान लालरे; दायटक पाठिकमणा कर,  
नही आव तह ममान लालरे, ॥ ३ ॥ लाख वरम लग त वली  
टीव दान अपार लालरे; एक मामाधिकन तुल, नहिं आय  
दिलमे धार लालर ॥ क० ॥ ४ ॥ मामाधिक घउधिरतवा,  
घटन दाय दाय धार लालर; घत ममालो आपणा, कटेव्यु कम  
अपार लालर ॥ क० ॥ ५ ॥ कर कठसग शुभप्यातर्षी, दिनमें  
दाय दाय धार लालर; करो सजाय ते वली, ठाळि सय अति  
धार लालर ॥ क० ॥ ६ ॥ गात तीर्थकर निमला, करुता बांध  
दिन राव लालर; कम तणी काडा रुप, टळ सकल प्याघात  
लालर; ॥ क० ॥ ७ ॥ पाक्यइ नित कीजिय, पाठिकमणा  
शुदाचि लालर; सीला लहर मित मित, अविचल गतिमें निष्ठ  
लालरे ॥ क० ॥ ८ ॥ मामाधिक परगादधी, पामें अमर सिमान  
लालर; धर्मिण्ड मुनिवर कर, मुक्तितणाउं निधान लालर ॥  
॥ क० ॥ ९ ॥ इति ॥

# थोकडा संग्रह.

## पच्चीस बोलका थोकडा.

( १ ) पहिले बोले गति चार । नरकगति, तिर्यचगति । मनुष्य गति । देव गति ( २ ) दूमरे बोले जाति पाँच । एकेन्द्रिय । वे इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चारिन्द्रिय, पचेन्द्रिय । ( ३ ) तीसरे बोले काया छे । १ पृथ्वीकाय । २ अप काय । ३ तेज काय । ४ वाउ काय । ५ वनस्पति काय । ६ त्रस काय । ( ये लकाय के गोत्र है )

छ काय के नाम १ इंडी थावर काय । २ बंबी थावर काय । ३ सपि थावर काय । ४ सुमति थावर काय । ५ पयावच थावर काय । ६ जंगम काय ।

( ४ ) चोथे बोले इन्द्रिय पाँच । १ श्रोतेन्द्रिय ( कान ) । २ चक्षु इन्द्रिय ( आंख ) । ३ घ्राणेन्द्रिय ( नाक ) । ४ रसेन्द्रिय ( जीभ ) । ५ स्पर्शेन्द्रिय ( शरीर ) ॥

( ५ ) पाँचमे बोले पर्याप्ति छे । १ आहार पर्याप्ति । २ शरीर पर्याप्ति । ३ इन्द्रिय पर्याप्ति । ४ श्वात्सोश्वास पर्याप्ति । ५ भाषा पर्याप्ति । ६ मन पर्याप्ति ॥

( ६ ) छठे बोले प्राण दश । १ श्रोतेन्द्रिय बल प्राण । २ चक्षुइन्द्रिय बल प्राण । ३ घ्राणेन्द्रिय बल प्राण । ४ रसेन्द्रिय बल प्राण । ५ स्पर्शेन्द्रिय बल० । ६ मन बलप्राण । ७ वचन बल

प्राण । ८ काय बल प्राण । ९ श्वान्माशवास बल प्राण । १० आयुष्य ( आठस्रो ) बल प्राण ।

( ७ ) सातम बाल क्षरीर पौंच । १ औदारिक क्षरीर । २ वैक्रिय क्षरीर । ३ आहारिक क्षरीर । ४ तेजस क्षरीर । ५ कर्मण क्षरीर ॥

( ८ ) आठमे बाल योग ( जोग ) पद्वह । चार मनक योग - १ सत्य मन योग । २ असत्य मन योग । ३ मिथ मन योग । ४ व्यवहार मन योग । ( ४ ) बचन के योग - १ सत्य भाषा । २ असत्य भाषा । ३ मिथ भाषा । ४ व्यवहार भाषा । ( ७ ) सात कायाके योग । १ औदारिक योग । २ औदारिक मिथ योग । ३ वैक्रम योग । ४ वैक्रम मिथ क्रय योग । ५ आहारिक योग । ६ आहारिक मिथक्रम योग । ७ कर्मण योग ॥

( ९ ) नवमे बाल उपयोग चारह । पौंच ज्ञान । १ मति ज्ञान । २ भुतज्ञान । ३ अवाधि ज्ञान । ४ मनः पयष ज्ञान । ५ केवल ज्ञान ॥ तीन अज्ञान । १ मति अज्ञान । २ भुत अज्ञान । ३ विभंग अज्ञान ॥ चार दृश्यन - १ चक्षु दृश्यन । २ अचक्षु दर्शन । ३ अवाधि दर्शन । ४ केवल दर्शन ॥

( १० ) दसमें पोले कर्म आठ । १ ज्ञानावरणीय कर्म । २ दृशनावरणीय कर्म । ३ यदनोय कर्म । ४ माहनाय कर्म । ५ आयुष्य कर्म । ६ नाम कर्म । ७ गात्र कर्म । ८ अन्त गय कर्म ॥

( ११ ) इग्यारम बाल गुणस्थान ( गुणठाण ) चौदह । १ पहिला । मिथ्यात्व गुणस्थान । २ दूसरा सास्यादान गुण

स्थान । ३ तीसरा मिश्र गुण० । ४ चौथा अत्रति ( सम्यग्-  
दृष्टि ) गुण० । ५ पाँचमा देशति गुण० । ६ छठा प्रमादी  
( प्रमत्त )-संयति गुण० । ७ अप्रमादी ( अप्रमत्त ) गुण० ।  
आठमा नियति वादर ( निवृत्ति करण ) गुण स्थान । नवमा  
अनियति वादर ( अनिवृत्ति करण ) गुण० । दशमा सूक्ष्म संप-  
राय गुणस्थान । इग्यारमा उपशांत मोहनीय गुणस्थान ।  
बारमा क्षीणमोहनीय गुणस्थान । तेरमा सहयोगी केवली गुण०  
चौदमा अयोगी केवली गुणस्थान ।

( १२ ) बारमे बोले पाँच इंद्रियकी २३ विषय (अभिलाषा)॥  
श्रोत्रेन्द्रियकी तीन विषय । १ जीव शब्द । २ अजीव शब्द ।  
३ मिश्र शब्द । चक्षु इंद्रियकी पाँच विषय । १ काला । २  
नीला । ३ लाल । ४ पीला । ५ सफेद । घ्राणेन्द्रियकी दो  
विषय— १ सुगन्ध । २ दुर्गन्ध । रमेन्द्रियकी पाँच  
विषय । १ कडवा । २ कपाय । ३ तीखा ( चरपरा ) ४  
खट्टा । ५ मीठा । स्पर्शेन्द्रियकी आठ विषय । १ खरदरा । २  
मुलायम ( सुत्रालो ) ३ भारी । ४ हल्का । ५ ठंडा । ६ गरम  
( उन्हो ) । ७ रूखा ( लूखो ) । ८ चिकना ( चोपड्यो ) ।

( १३ ) तेरहमे बोले मिथ्यात्व पच्चीस । १ जीवको अजीव  
श्रद्धे ( माने ) तो मिथ्यात्व । २ अजीवको जीव श्रद्धे तो मि०  
३ धर्मको अधर्म श्रद्धेतो मि० ४ अधर्मको धर्म श्रद्धेतो मि० ।  
५ साधुको असाधु श्रद्धे तो मि० । ७ संसारके मार्गको मोक्षका  
मार्ग श्रद्धे तो मि० । ८ मोक्षके मार्ग को संसारका मार्ग श्रद्धे  
तो मि० ९ आठ कर्मसे मुक्तहुएको अमुक्त श्रद्धे तो मि० ।  
१० आठ कर्मसे अमुक्तहुएको 'मुक्तहुए श्रद्धेतो मि० । ११  
अभिग्रहिक मिथ्यात्व । १२ अनाभिग्रहिक मिथ्या० । १३

अमिनिवेशिक मिथ्या० । १४ सक्षयिक मिथ्यात्व । १५ अथा  
मोगे मिथ्यात्व । १६ लौकिक मि । १७ लोकोचर मि०  
१८ कृपा षधन मिथ्यात्व । १९ कमप्ररूपे तो मिथ्यात्व । २०  
व्यादह प्ररूपे तो मि । २१ विपरीत प्ररूपेतो मि० । २२ अक्रिय  
मिथ्यात्व । २३ अज्ञान मिथ्यात्व । २४ अविनय मि० । २५  
आशातना मिथ्यात्व ।

( १४ ) चौदहमें बोले नवतत्त्वके ( ११५ ) एकसौ पत्रह  
भेद । नीचतत्व क चौदह-भेद, सूक्ष्म एकन्द्रियके दो भेद  
१ अपयासा । और २ पयासा । बाहर एकोन्द्रिय क दो भेद  
१ अपयासा और २ पयासा । स इंद्रिय क दो भेद । १ अपर्या०  
२ पयासा । चौरिन्द्रिय क दो भेद १ अपर्यासा । २ पर्यासा  
असनी ( असञ्जी ) पञ्चन्द्रियक दो भेद । १ अपर्यासा । २ पयासा ।  
मैनी ( सञ्जी ) पञ्चन्द्रियके दो भेद । १ अपयासा । २ पर्यासा ।  
अज्ञोष तत्त्व क चौदह भेद-धर्मास्तिक्रयके तीन भेद । १  
स्कन्ध २ दक्ष । प्रदक्ष ३ । अभमास्तिक्रय के तीन भेद-१ स्कन्ध  
२ दक्ष । ३ प्रदक्ष । आक्रशास्ति कायक तीन भेद । १ स्कन्ध,  
२ दक्ष । ३ प्रदक्ष । ये नव भेद कृष्ण । और दशमा काल  
( अज्ञानत्रय ) । पुद्गलास्ति काय क चार भेद-१  
स्कन्ध । २ दक्ष । ३ प्रदक्ष और ४ परमाणु । पुष्पतत्व क नव  
भेद-१ अक्ष पुष्पे । २ पाप्प पुष्प । ३ ल्यण पुष्प । ४ सपण  
पुष्प । ५ यत्य पुष्प । ६ मन पुष्पे । ७ षधन पुष्प । ८ काय  
पुष्पे । ९ नमस्कार पुष्पे ।

पाप तत्व क अठारह भेद । १ प्राणातिपात । २ मृपावाद ।  
३ अदत्तादान । ४ मैथुन । ५ परिग्रह । ६ क्राध । ७ मान ।

८ माया । ९ लोभ । १० राग । ११ द्वेष । १२ कलह । १३ अभ्याख्यान । १४ पैशुन्य । परपरिवाद । १६ रति अरति । १७ माया मोसो । १८ मिथ्यात्व दर्शन शल्य । आश्रव तत्त्व-के बीस भेद । १ मिथ्यात्व आश्रव । २ अत्रत्त आश्रव । ३ प्रमाद आश्रव । ४ कपाय आश्रव । ५ अशुभ योग आश्रव । ६ प्राणातिपात आश्रव । ७ मृषावाद आश्रव । ८ अदत्तादान आश्रव । ९ मैथुन आश्रव । १० परिग्रह आश्रव । ११ श्रोत्रेन्द्रियआश्रव । १२ चक्षु इन्द्रिय आश्रव । १३ घ्राणेन्द्रिय आश्रव । १४ स्पर्शेन्द्रिय आश्रव । १५ मन आश्रव । १६ वचन आश्रव । १७ काय आश्रव । १८ भंडोपकरण आश्रव । २० सुई कुसग्ग ( सुईकी अग्रपे आवे उतनी वस्तु अयत्ना से लेवे और अयत्नासेरखे तो ) आश्रव ।

सवरतत्व के बीस भेद । १ सम्यक्त्व संवर । १ व्रतपत्र कखाण संव० । ३ अप्रमाद संव० । ४ अकपाय संव० । ५-शुभ योग संव० । ६ प्राणातिपात हिंसा नहीं करे तो सं० । ७ मृषा-वाद झूठ नहीं बोले तो सं० । ८ अदत्तादान चोरी नहीं करे तो सं० । ९ मैथुन कुर्शाल नहीं सेवे तो सं० । १० परिग्रह नहीं राखे तो संवर । ११ श्रोत्रेन्द्रिय वश करे तो सं० । १२ चक्षु-इन्द्रिय वश करे तो सं० । १३ घ्राणेन्द्रिय वश करे तो सं० । १४ रसेन्द्रिय वश करे तो सं० । १५ स्पर्शेन्द्रिय वश करे तो सं० । १६ मन वश करे तो सं० । १७ वचन वश करे तो सं० । १८ काया वश करे तो सं० । १९ भंडोपकरण यत्नासे उठावे

\* कान, आख, नाक, जीभ, शरीर, आदिको नियमों नई रखनेसे आश्रव ( कर्मबन्ध ) होता है ।

यत्नासे रख तो स० । ३० सुई कुक्षगमात्र यत्नासे लेवे और  
यत्नासे रखे ता सबर ॥

निर्भरा सम्ब के चारह भेद । १ अनसन । २ उषोदरी । ३  
३ वृत्ति संक्षेप ( मिथ्याचरी ) । ४ रसपरित्याग । ५ कर्मयोज्य ।  
६ संलीनता ( पठि संलीनता ) । ७ प्रायश्चित्त । ८ विनय  
९ वैयाकृत्य ( वैयाकच ) । १० स्वाध्याय ( सज्जाय ) । ११ ध्यान  
१२ कर्मोत्सर्ग ( काठसम्भ )

षष्ठतत्त्वक चार भेद । १ प्रकृति बंध । २ स्थिति बंध ।  
३ अनुभाग बंध ( रस बंध ) । ४ प्रदेष्ट बंध ।

मोक्ष तत्व के चार भेद । १ ज्ञान २ दक्षम ३ चारित्र ४  
तप । अथवा १ दान २ क्षीरि ३ रूप ४ माय ।

( १५ ) पद्महम बोले आत्मा आठ । १ ब्रह्म आत्मा । २  
कपाय कर्मत्मा । ३ योग आत्मा । ४ अपयोग आत्मा । ५ ज्ञान  
आत्मा । ६ दक्षिण आत्मा । ७ चारित्र आत्मा । ८ धीर्य आत्मा ।

( १६ ) सालहमें बोले दंडक चौबीस । सातों नारकियोंका  
एक एकदंडक, उनके नाम — १ गम्मा । २ वष्टा । ३ शीला  
४ अन्नना । ५ रिठा । ६ मर्षा । ७ माघघट्ट । सातोंक गोत्र —  
१ रत्नप्रभा । २ शंकराश्रमा । ३ पालुप्रभा । ४ पंक प्रभा । ५  
धूम प्रभा । ६ तम प्रभा । समतमाप्रभा ॥

सुवनपति दंडक ( १० ) दस दण्डक । नाम — १ असुर  
कुमार । २ नाग कुमार । ३ सुवर्ण कुमार । ४ विभुत्सुमार ।  
५ अग्नि कुमार । ६ छीप कुमार । ७ उदाधि कुमार । ८ दिशा  
कुमार । ९ पवन कुमार । १० स्थानित कुमार ।

पाप धारकों ( ५ ) पाँच दंडक । १ पृथ्वी क्षेत्रप । २

२ अप काय । ३ तेउकाय । ४ वायु काय । ५ वनस्पति काय  
 विकलेन्द्रियके ( ३ ) दंडकः—१ वेइन्द्रिय । २ ते इन्द्रिया  
 ३ चौरिन्द्रिय । ये १९ दंडक हुए । ( २० ) वीसमा तिर्यचा  
 पंचेन्द्रियका । ( २१ ) एकीसमा मनुष्यका ( २२ ) बाडममा  
 वाणव्यंतरदेवका । ( २३ ) तेवीसमा ज्योतिषी देवका  
 ( २४ ) चोविसमा वैमानिक देवका ।

( १७ ) सतरमे बोले लेश्या \* छे १ कृष्ण लेश्या । २ नील लेश्या  
 ३ कापोत लेश्या । ४ तेजो लेश्या । ५ पद्म लेश्या ॥ शुक्ल लेश्या ६  
 ( १७ ) अठारहमे बोले दृष्टि तीन । १ समग् दृष्टि । २ मिथ्या  
 दृष्टि । ३ मिश्र दृष्टि ( समा मिथ्या दृष्टि )

( १९ ) उगणीसमे बोले ध्यान चार । १ आर्त ध्यान ।  
 २ रौद्र ध्यान । ३ धर्म ध्यान । ४ शुक्ल ध्यान ॥

( २० ) वीसमे बोले पद् द्रव्य के तीस भेदः—धर्मारित  
 काय के पाँच-भेद १ द्रव्यसे धर्मारित काय एक है । २ क्षेत्रसे सम्पूर्ण  
 लोक व्यापी है । ३ कालसे आदि अन्त रहित है । ४ भावसे  
 अरूपी वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहित है । ५ गुणसे चलन गुण है  
 जीव तथा पुद्गलको चलनेमे सहायता देता है, जैसे पानीके  
 आधारसे मछली चलती है—वैसे जीव और पुद्गलभी धर्मास्ति  
 कायके आधारसे चलते है ॥

अधर्मारित कायके पाँच भेदः शेष तो ऊपर कहे मुआफिक  
 जानना । और गुणसे स्थिरगुण है, जीव और पुद्गलको

\* जिसमे जीव भटकते रहते है उसे दण्डक कहते है ।

\* जीवके परिणामोंकी एक झार्ई—पारि छाया विशेषको लेश्या कहते है ।



स्थिर रहनेमें सहायता करता है । पथिक और तरुण दृष्टान्तसं  
समझलेना चाहिए ॥

आकाशास्तिकायके पाँच भेद — १ द्रव्यस एक है । २ क्षत्र  
स लोकालोक प्रमाणमें है । ३ कालस आदि अन्त रहित है ।  
४ भावसे अरुपी वण गन्ध रस स्पर्श रहित है । ५ गुणस अव  
गाहना गुण है भीति और खुरीक दृष्टान्त अथवा दूध और  
छक्केके दृष्टान्तसे समझना ॥

जीवास्तिकायके पाँच भेद — १ द्रव्यस जीव अनन्त है ।  
२ क्षेत्रस चौदह राखलाक व्यापी है । ३ कालस आदि अन्त  
रहित है । ४ भावम अरुपावण गन्ध रस स्पर्श रहित है । ५  
गुणस चैतन्य गुण बाला, ज्ञानबाला है ॥ चन्द्रमाकी कलाक  
दृष्टान्त सं समझना ॥

पुत्रलास्तिकायके पाँच भेद — १ द्रव्यसे पुद्गल द्रव्य अनन्त  
है । २ क्षेत्रसे सम्पूर्ण लोक प्रमाणमें है । ३ काल से आदि  
अन्त रहित है । ४ भावसे रूपा है—वर्ष गन्ध रस स्पर्श सहित है ।  
५ गुणस गलन, मिलने, सडन, मिश्र होन, नष्ट होनबाला है ।  
पादलके दृष्टान्तसं समझना ॥

कालद्रव्यके पाँच भेद — १ द्रव्यसे कालद्रव्य अनन्त है ।  
२ क्षेत्रसे ढाड़ द्वीप प्रमाण में है । ३ कालम आदि अन्त  
रहित है । ४ भावम अरुपी—वण गन्ध रस स्पर्श रहित है ।  
५ गुणम परियतन गुणबाला है । कलरुनी क दृष्टान्तसे समझना ॥

( २१ ) इकवाम म बाल राशि दा । १ मीष राशि । ( २ )  
अजीष राशि । १ मीष राशिक ५६३ भेद । अमीषराशिक  
५६० भेद ॥

जीवराशिके ५६३ भेदोंका विस्तार । १४ चौदह भेद नारकी-  
के ४८ भेद तिर्यचके, तीनसौ तीन भेद मनुष्य के, एकसौ  
अठाणूं भेद देवताओंके, ऐसे कुल ५६३ भेद होते हैं ।

नारकीके चौदह भेद—सात नारकियोंका अपर्याप्ता और  
पर्याप्ता ( सात नारकियोंके नाम, और गोत्र, सोलहमे बोलमें  
आगेये हैं वहीसे जान लेना )

तिर्यचके अडतालीस भेद—पृथ्वी कायके चार भेद ।  
सूक्ष्म और वादर, दोनोंका पर्याप्ता और अपर्याप्ता । ऐसे-  
अपकाय तेउ काय वायु कायके चार चार भेद जानलेना । ये  
सोलह भेद हुए ॥ वनस्पति कायके छे भेद—१ सूक्ष्म, २ सा-  
धारण और ३ प्रत्येक, इन तीनोंका पर्याप्ता और अपर्याप्ता ।  
ये बावीस भेद एकेन्द्रियके हुए । तीन विकलेन्द्रियके छे भेद ।  
१ वे इन्द्रिय, २ ते इन्द्रिय, ३ चौरिन्द्रिय. इन तीनों का पर्याप्ता  
और अपर्याप्ता ये अठ्ठावीस भेद हुए ॥

तिर्यच पंचेन्द्रियके बीस भेद—१ जलचर, २ स्थलचर, ३  
खेचर, ४ उरपर ५ भुजपर ये पांच संज्ञी ( सन्नी ) . और पांच  
असंज्ञी ( असन्नी ) इनके पर्याप्ता और अपर्याप्ता ॥

जलचरके पाँच भेद—१ जलकच्छा, २ जलमच्छा, ३ गाहा,  
४ मगरा, ५ सुसुमार ।

स्थलचरके चार भेद—१ एक खुरा, ( जैसे घोडा, गद्धा  
इत्यादि ) २ दो खुरा, ( जैसे गाय भैंस आदिक ) ३ गडिपया

---

१ जल [पानी] में रहेवाले जीव । २—जमीनपर चलनेवाले जीव ।

जैसे—हाथी गेंडा इत्यादि । ४ चाँया—सखीपया—नखवाले जान  
घर जैसे—वाघ, रीछ, कुत्ता, पिछ्छी इत्यादि )

सोँघर के चार भेद—१ चर्मपथी, [ जिसके चमड़ेकी परें (पाँखें)  
होवें, जैसे चमचेर आदि ] २ रोमपथी—[ जिसके रोम ( बाल )  
की परें ( पाँखें ) होवे जैसे चिड़ी, तोता इत्यादि—] । ३ बितत  
पथी [ जिसके रेट्या जैसी परें ( पाँखें ) हावे उसे कहते हैं ]  
४ सुसुद्रक पथी [ जिसके डब्बा जैसी परें ( पाँखें ) हावे  
उसे कहते हैं ] ये दोनों जातक पथी टाई द्वीपके बाहर हात है;  
यहां नहीं । ]

उरेंपर के तीन भेद—अहि, अजगर, आतालिया ॥

सुअपरें—के अनेक भेद है । जैसे—वृहा ( ऊँदग ) नौलिया  
आदि ॥

मनुष्यके १०१ भेद । १५ कर्मभूमि । ३ अकर्म  
भूमि । ५६ अंतर्ही पये एकसौ एक क्षत्राक संज्ञी मनुष्य  
का पर्याप्ता और अपर्याप्ता । और एकसौ एक क्षेत्रोंके असंज्ञी  
मनुष्य का अपर्याप्ता । एवं तीनसौ तीन भेद मनुष्यक हुए ।

पंद्रह कर्मभूमि के नाम । पाँच मरुत, पाँच इरवर्त, पाँच महा  
विदेह, इनमेंसे एकैक क्षेत्र अम्बुद्वीप में है, दो दो क्षेत्र घातकी  
खडमें है । दोदो क्षेत्र अथ पुष्कराक्ष द्वीपमें हैं ।

तीस अकर्म भूमिक नाम ॥ पाँच हेमबय । पाँच ऐरप्यबय ।  
पाँच हरिवास । पाँच रम्यकवास । पाँच देव कुरू । पाँच उत्तर  
कुरू, ये तिन क्षेत्र युगलियों के—इनमेंसे एकैक क्षेत्र अम्बुद्वीपमें

१—आकाशमें उड़नेवाले जीव । ४—पेटसे चखनेवाले जीव ।

५—मुजामों ( हाथोंके ) बलसे चखनेवाले जीव । ।

है । दो दो क्षेत्र धातकी खंडमें है । दो-दो क्षेत्र अर्ध पुष्करार्थ द्वीप में है ॥

छःपन अन्तरद्वीप जम्बूद्वीपमें मेरुपर्वतसे दक्षिण दिशिमें चूल हेमवन्त पर्वत है, वह एकसौ योजनका ऊँचा है, एक हजार बावन योजन बारह कला [ एक योजनका १९ भाग करने-पर बारहवें भाग उतना ] चौड़ा है । चौबीस हजार नवसौ छत्तीस योजन आधी कला ( मठरीका ) लंबा है । उसके पूर्व, पश्चिम के अन्तमें दो दो दाढ़ें निकलकर लवण समुद्रमें गई है । एक-क दाढ़ के ऊपर सात सात अन्तर द्वीपें हैं । जम्बूद्वीपकी जगती ( कोट ) से तीनसौ योजन लवण समुद्र में जावें, जब तीनसौ-योजनका पहिला अन्तरद्वीप आवे वहाँसे चारसौ योजन समुद्रमें जावें जब चारसौ योजन का लंबा चौड़ा दूसरा अन्तरद्वीप आवे—ऐसे सौसौ योजन बढ़ाते बढ़ाते नवसौ योजन समुद्र में जावे जब नवसौ योजनका लंबा चौड़ा सातमा अंतरद्वीप आवे, इसी तरह से चारोंही दाढ़ों के ऊपर सात सात अंतरद्वीप जानना ॥

उनके नामः—१ एगरुवें, २ अभासे, ३ वैसानिये, ४ लांगुले, ५ ह्यकने, ६ गयकने, ७ गोकने, ८ सकीलकने, ९ अयंसमूहे, १० मीडमुहे, ११ आहिमुहे, १२ गोमुहे, १३ सीह-मुहे, १४ वागमुहे, १५ आसकने, १६ हत्थीकने, १७ सीह-कने, १८ वाघकने, १९ अकने, २० कन्नपावरणा, २१ ऊका मुहे, २२ मेहमुहे, २३ विज्जुमुहे, २४ विज्जुदन्ते, २५ घण, दन्ते, २६ लठदन्ते, २७ गुठदन्ते, २८ सुद्वदन्ते इति ॥

ऐसेही मेरुपर्वतसे उत्तर दिशिमें शिखरी पर्वत है—उसका विस्तार भी सब इसी मुझव समझना । ये छःपन अंतरद्वीपें

पुगलियों क है ( पुगलिक मनुष्योंके है ) ।

असह्यो मनुष्य बोदह स्थानोंमें पैदा हात है ' उपन्नतं है )  
 मो कहत है —उत्तारसुवा ( मल-विष्टामें पैदा हाव, ) २  
 पासवणसुवा ( मूत्रमें पैदा हाव ) ३ खलसुवा ( खलारमें पैदा  
 होवें ) । ४ मषामे-सुवा ( नाकक मलमें पैदा हावें ) । ५ वत  
 सवा ( उलटामें पैदा होवें ) । ५ पिच-सुवा ( पिचामें पैदा  
 हाव ) । ७ पुइएसुवा ( रस्तीमें पैदा हावे ) । ८ सापिएसुवा  
 ( शविरमें पैदा हावें ) । ९ सुकसुवा ( बीय म पैदा हावें )  
 १० सुक-योगलपरिमाडिए-सुवा ( सुक हुए. बीयक पुद्रल  
 फिरागिल जानेपर उनमें पैदा हावें ) ११ ' विगयआषकलवर  
 सुवा [ मनुष्य क सुत शरीरमें ( कलधरमें ) पैदा हावें ] । १२  
 १२ इरियपुरिससभागसुवा । ( स्यापुरुषक समाग की वक ( मयुन )  
 में पैदा हाव ) । १३ नगरनोधमभेसुवा ( शहरक नालों नालियों  
 मारियों इत्यादिमें पैदा हावें ) । १४ ' सबरसुववअमुई ठाय  
 सुवा ( सब अशुचिस्थानोंमें पैदा हावे ।

एकसो अठ्ठाणू मव बेवताओंके —दशजातिक शुधनपति  
 वव इनक नाम सोलहमें ब लमें आगत हैं ।

पत्रह परमाधामी दवोंक नाम — १ अश्व, २ अम्बराम, ३  
 ध्याम, ४ सधल, ५ रुद्र, ६ बैरुद्र, ७ काल, ८ महा काल, ९  
 अश्विपत्र, १० धनुष्य, ११ कुस, १२ धान्जु, १३ बैतरणी, १४  
 मरम्यर, १५ महा घाप ॥

१६ बाण म्यतर दवोंक नामे — १ पिशाच, २ भूत, ३ मन्त्र,  
 ४ राक्षस, ५ किमर, ६ किंपुल्ल, ७ महोरग, ८ गन्धर्व, ९

आणवन्त्री, १० पाण पन्त्री, ११ इर्सावाइ, १२ भुइवाइ, १३ कांदिय, १४ महा कांदिय, १५ कोहंड, १६ पयंग देव ॥

दश तिर्यग् जंभका देवोंके नामः—१ आण जंभका, २ पाणजंभका, ३ लयणजंभका ४ सयणजंभका, ५ वत्थजंभका, ६ पुप्पजंभका, ७ फलजंभका, ८ वीयजंभका, ९ विज्जुजंभका, १० आवियतजंभका ॥

दश ज्योतिषी देवोंके नामः—१ चंद्र, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, ५ तारा ये पांच तो टाई द्वीपमे चलते फिरते है और ग्रही पांच टाई द्वीपके बाहर स्थिर है, याने चलते फिरते नहीं है ॥

तीन प्रकारके किल्बिषि देवोंके नामः—१ तीन पलिया, २ तीन सागरिया, ३ तेरह सागरिया ॥

नव लोकान्तिक देवोंके नामः—१ सारस्वत, २ आदित्य, ३ विन्धि, ४ वरुण, ५ गर्दतोया, ६ तोपिया, ७ अद्या व्याधा, ८ अग्निच्चा, ९ रिद्धा ॥

बारह देव लोकके नामः—१ सुधर्म, २ इशान, ३ मन्तकुमार, ४ सहेन्द्र, ५ ब्रह्मलोक, ६ लंतक, ७ महाशुक्र, ८ सहस्वार, ९ आनत, १० प्राणत, ११ आरण, १२ अच्युत, ॥

नव त्रैवेयकके नामः—१ भदे, २ सुभदे, ३ रुजाए, ४ सुमाणसे, ५ प्रियदर्शने, ६ सुदर्शने, ७ आमोहे, ८ स्पण्डिभदे, ९ यशोधरे ॥

पांच अनुत्तर विमानके नामः—१ विजय, २ इजयन्न, ३ जयंत, ४ अपराजित, ५ सर्वार्थ सिद्धं ॥

इन ९९ जातिके देवताओंका अर्पयासा और परयासा मिलकर १९८ भेद हुए ।

नारकीक १४, तिर्थचके ४८, मनुष्यके ३ १ दवताओंके १९८  
सब मिलाय तो जीव राशि (जीवतत्व) के ५६३ भेद हात हैं।  
इति जीव राशिके भेद समाप्त ॥

### अब ५६० अजीव राशिके भेद कहते हैं

अजीवके दो भेद—१ रूपी अजीव, २ और अरूपी अजीव।  
अरूपी अजीवके १ भेद है और रूपी अजीवके ५३० भेद हैं।

#### (रूपी अजीवके ५३० भेदोंका विस्तार)

मौं १०० भेद बणके, ४६ गन्धके, १० रसके, १८४  
स्पर्शके १०० संछायके, यों सब मिलकर, ५३० भेद है।

१०० भेद धर्मके—१ काला, २ नीला, ३ लाल ४ पीला  
५ सफ़ेद ॥ एकैक धर्ममें—बीस बीस भेद (बोल) पात हैं—  
दो गन्ध, पाँच रस आठ स्पर्श, पाँच संछाय यों बीस भेद  
पाँचोंका धर्मोंका जानना। सब मिलाय तो साँभेद धर्मके हुए ॥

४६ गन्धके—१ सुगन्ध, २ दुर्गन्ध, ॥ इन दानोंमें—सभीम  
सेबसि बाल पात हैं—पाँच यज्ञ, पाँच रस, आठ स्पर्श और  
पाँच संछाय। एम ४६ भेद गन्धके हुए।

१०० रसके—१ कड़वा, २ कषायला, ३ तीव्रता, ४ खट्टा  
५ मीठा, एकैक रसमें—बीस २ बोल पात हैं। पाँच धर्म, दो  
गन्ध, आठ स्पर्श, पाँच संछाय, यह १० भेद रसके जानना।

१८४ भेद स्पर्शके:—१ खरदरा, २ मुलायम, (सुहालो)  
 ३ भारी, ४ हल्का, ५ ठंडा, ६ गरम, ७ चीकना, (चौपड्या)  
 ८ रूखा (लूटा) ॥ एकेक स्पर्शमे तेवीस तेवीस बोल पाते  
 है—पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, छे स्पर्श, ( एक अपना  
 (पोताको) और एक प्रतिपक्षी का छोडकर ) पांच संठाण—  
 एवं—तेवीस अट्टा एकसौ चौरासी—भेद स्पर्शके हुए ।

१००-भेद संठाण के—१ परिमंडळ संठाण, २ वट संठाण,  
 ३ त्रंश संठाण, ४ चौरंस संठाण, ५ आयत संठाण, ॥ एकेक  
 संठाण में बीस बीस बोल पाते है—पांच वर्ण, दो गंध, पांच  
 रस, आठ स्पर्श—एवं—सौभेद संठाण ( संस्थान ) के हुए ।

तीस भेद अरूपी अजीवके, सो कहते है ॥ ”

धर्मरित कायके पांच, अधर्मास्तिकायके पांच, आकाशास्ति  
 कायके पांच, कालद्रव्यके पांच, ये बीस भेद बीसमें बोलके  
 मुआफिक समझना । और धर्मरितकायके तीन भेद—१ स्कन्ध,  
 २ देश, ३ प्रदेश ऐसही अधर्मास्तिकायके और आकाशास्ति  
 कायके तीन तीन भेद जानना । और दशमा काल ( अट्टा  
 समय ) ये तीस भेद अरूपी अजीवके हुए ॥

सर्व मिलके ५६० भेद अजीव राशिके ( अजीव तत्त्वके )  
 पूरे हुए ॥

( २२ ] बावीसमें बोले श्रावकजीके वारह व्रतः—

पहले व्रतमें श्रावकजी, निरापराधी व्रस जीवोंकी हिंसाका  
 त्याग करें । और स्थावर जीवोंके हिंसाकी मर्यादा करें ।



दूसरा व्रतमें—मोटे ( बड़े ) झूठ बालनका त्याग करें ।

तीसर व्रतमें—मोटी ( बड़ी ) चोरिका त्याग करें ।

चौथे व्रतमें—परस्त्रीका त्यागन करें । और अपनी खास मैथुनादि सवन करनकी मयादा करें ।

पांचमें व्रतमें—परिग्रह रखनकी मयादा करें ।

छठ व्रतमें—छऑं दिशाओंमें जानेकी मयादा कर ।

सातमें व्रतमें—पन्द्रह कर्मादानोंका त्याग करें, और छत्रोम वालोंका मयादा करें ।

आठमें व्रतमें—अनर्थ दूढ ( नियेक पापोंका ) का त्याग करें ।

नवमें व्रतमें—सामायिक करें ।

दशमें व्रतमें—प्रति दिनमें जाने, आने, म्माने, पीने व्यय हागादि कामोंके करनकी मयादा करें ।

ग्यारहमें व्रतमें—महीना में छे पोषा ( पाँचभ ) करें ।

बारहमें व्रतमें—साधु मुनिराजको चौदह प्रकार का व्रत । शुद्ध-ठान दवे ।

### [ २४ ] तेरवीसमे वाले साधु मुनिराजके पाच महाव्रत ।

( १ ) पहिले महाव्रतमें—साधु मुनिराज सबका प्रकार किसी जीवका मार नहीं भराय नहीं, मारतोंका मला जान नहीं । \*

\* इन पाँच महाव्रतोंके मागे इत प्रकार है—पहलाके ८१, दूसराके ३६ तीसराके—५४, चौथाके—२७, पाँचवाके ५४, यों सब २५२ मांगे ( मांगी ) होत है ।

( २ ) दूजे महाव्रतमें—सर्वथा प्रकारे-झूठ बोलें नहीं, ब्रुलावें नहीं, बोलते को भला ( अच्छा ) जाने नहीं ।

( ३ ) तीसरे महाव्रतमें—सर्वथा प्रकारे चोरी करें नहीं, करावें नहीं, करतेको भला जाने नहीं ।

( ४ ) चौथे महान्नतमें—सर्वथा प्रकारें कुशील ( मैथुन ) सेवे नहीं सेवावें नहीं, सेवतेको भला जाने नहीं ।

( ५ ) पांचमें महाव्रतमें—सर्वथा प्रकारे परिग्रह ( धन-दौलत स्थावर, जंगमादि ) रखें नहीं, रखावें नहीं, रखतेको भला जाने नहीं ।

[ २४ ] चौदासमें बोले-व्रतपचखाणके ४९ भांगे:—

अक ग्यारहका भांगें, ( भागां ) ९— एक करण एक योगसे कहना—( १ ) करूं नहीं मनकर ( मनसा ) ( २ ) करूं नहीं वचनकर ( वायसा ) ( ३ ) करूं नहीं कायकर ( कायसा ) ( ४ ) कराऊं नहीं मनकर ( ५ ) कराऊं नहीं वचनकर ( ६ ) कराऊं नहीं कायाकर ( ७ ) करतेको भला जानूं नहीं ( अन-मोदूं नहीं ) मनकर, ( ८ ) करतेको भला जानूं नहीं वचनकर, ( ९ ) करतेको भला जानूं नहीं—कायाकर ॥

अंक बारहका भांगें ९—एक करण दो योगसे कहना—( १ ) करूं नहीं मनकर, वचनकर, ( २ ) करूं नहीं मनकर काया-कर, ( ३ ) करूं नहीं वचनकर कायाकर, ( ४ ] कराऊं नहीं मनकर वचनकर, [ ५ ] कराऊं नहीं, मनकर कायाकर ( ६ ) कराऊं नहीं वचनकर, कायाकर, [ ७ ] करतेको

मला जानू नहीं मनकर वचनकर [ ८ ] करतका मला जानू नहीं मनकर, कायाकर, [ ९ ] कराऊं नहीं वचनकर कायाकर।

अक तेरहका मांगे ३-एक करग तीन यागसे कहना । [ १ ] करूँ नहीं मनकर, वचनकर कायाकर ( २ ) कराऊं नहीं मनकर वचनकर कायाकर ( ३ ) करतका मला जानू नहीं मनकर, वचनकर, कायाकर ॥

अक इक्कीसका मांगे ९-दो करण एक यागसे कहना । ( १ ) करूँ नहीं कराऊं नहीं मनकर, [ २ ] करूँ नहीं कराऊं नहीं वचनकर, [ ३ ] करूँ नहीं कराऊं नहीं कायाकर ॥ [ ४ ] करूँ नहीं, करतका मला जानूँ नहीं मनकर, [ ५ ] करूँ नहीं, करतको मला जानूँ नहीं वचनकर, [ ६ ] करूँ नहीं, करतको मला जानूँ नहीं कायाकर, [ ७ ] कराऊं नहीं, करतको मला जानूँ नहीं मनकर, [ ८ ] कराऊं नहीं, करतको मला जानूँ नहीं वचनकर, [ ९ ] कराऊं नहीं करतका मला जानूँ नहीं, कायाकर ॥

अक बावीसका मांगे ९-दो करण दो यागसे कहना । [ १ ] करूँ नहीं कराऊं नहीं, मनकर, वचनकर, [ २ ] करूँ नहीं, कराऊं नहीं मनकर, कायाकर, [ ३ ] करूँ नहीं, कराऊं नहीं वचनकर कायाकर, [ ४ ] करूँ नहीं, करतको मला जानूँ नहीं मनकर वचनकर, [ ५ ] करूँ नहीं, करतको मला जानूँ नहीं मनकर, कायाकर, [ ६ ] करूँ नहीं, करतको मला जानूँ नहीं, वचनकर, कायाकर [ ७ ] कराऊं नहीं, करतका मला जानूँ नहीं, मनकर, वचनकर, [ ८ ] कराऊं नहीं, करतका मला

जानूं नहीं, वचनकर [ ९ ] कराऊं नहीं, करतेको भला जानूं नहीं  
कायाकर ॥

अंक शार्दामका भांगे ९- दो करण दो योगसे कहना । [ १ ]  
करूं नहीं, कराऊं नहीं, मनकर, वचनकर, ( २ ) करूं नहीं,  
कराऊं नहीं, मनकर, कायाकर, [ ३ ] करूं नहीं, कराऊं नहीं  
वचनकर, कायाकर, [ ४ ] करूं नहीं, करतेको भला जानूं  
नहीं, मनकर, वचनकर, [ ५ ] करूं नहीं, करतेको भला जानूं  
नहीं, मनकर, कायाकर, [ ६ ] करूं नहीं, करतेको भला जानूं  
नहीं वचनकर, कायाकर, [ ७ ] कराऊं नहीं करतेको भला जानूं  
नहीं, मनकर, वचनकर, ( ८ ) कराऊं नहीं, करतेको भला  
जानूं नहीं, मनकर, कायाकर, ( ९ ) कराऊं नहीं, करतेको  
भला जानूं नहीं वचनकर, कायाकर ॥

अंक २३ का-भांगे ३-दो करण तीन योगसे कहना--  
[ १ ] करूं नहीं, कराऊं नहीं, मनकर, वचनकर, कायाकर,  
( २ ) करूं नहीं, करतेको भला जानूं नहीं, मनकर, वचनकर,  
कायाकर, [ ३ ] कराऊं नहीं, करतेको भला जानूं नहीं, मन-  
कर, वचनकर, कायाकर ॥

अंक ३१-का भांगे ३-दो करण एक योगसे कहना--  
[ १ ] करूं नहीं, कराऊं नहीं, मनकर, वचनकर कायाकर,  
( २ ) करूं नहीं, करतेको भला जानूं नहीं, मनकर, वचनकर,  
कायाकर, ( ३ ) कराऊं नहीं, करतेको भला जानूं नहीं, मन-  
कर, वचनकर, कायाकर ॥

अंक ३२ का भांगे ३-तीन-करण दो योगसे कहना । ( १ )

करू नहीं, कराऊं नहीं, करतका मला जानू नहीं मनकर, बचन कर ( २ ) करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, करतका मला जानू नहीं, मनकर कायाकर ( ३ ) करू नहीं, कराऊ नहीं, करतका मला जानू नहीं बचनकर कायाकर ॥

—अंक ३३ का भागा १—तान करम तीन यागस कहना(१)  
करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, करतका मला जानू नहीं, मनकर बचनकर, कायाकर ॥

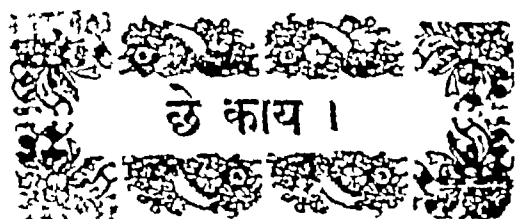
सध भागें ४९ हुय ॥

[ २५ ] पञ्चममें घोले—चारित्र पांच - १

[ १ ] सामयिक चारित्र, [ २ ] हृदापस्थापनीय चारित्र,  
[ ३ ] परिहार मिश्रुष्टि चारित्र, [ ४ ] मन्म मंगगय चारित्र,  
[ ५ ] यथाम्यात चारित्र ॥ इति ॥

सेवभते सेवभते तमेव सचम ।





## छे काय ।

संसारी जीव छे प्रकारसे पहचाने जाते हैं—उनको 'छे काय' कहते हैं । छे कायके दो भेदः—[ १ ] स्थावर, और ( २ ) त्रस । [ १ ] जो एकही जगहपर स्थिर रहें, जो नहीं चलें हलें, उसको ' स्थावर ' कहते हैं । [ २ ] जो चलें हलें तथा एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जावें, उसे त्रस कहते हैं ॥

छे कायके नामः—१ इंदी स्थावर काय, २—वंवी स्थावर काय, ३—सपि स्थावर काय, ४—सुमति स्थावर काय, ५—पयावच स्थावर काय, ६—जंगम काय ॥

छे कायके गोत्रः—१ पृथ्वी काय, २—अप काय, ३—तेउ काय, ४—वायु काय, ५—वनस्पति काय ६—त्रस काय ॥

स्थावरके दो भेदः—१—सूक्ष्म और [ २ ] बादर ॥

[ १ ] जो मारनेसे नहीं मरे, बालनेसे नहीं बलें, सपूर्ण लोकमें भरे हुए हैं, ज्ञानीके नजरमें आवे, परंतु छद्मस्थके नजरमें नहीं आवें, उसका नाम सूक्ष्म है । [ २ ] जो मारनेसे मरे बालनेसे बलें, और जो छद्मस्थके नजरमें आवें—उसका नाम बादर है ॥

पृथ्वी कायके दो भेदः—१—सूक्ष्म, और २ बादर ।

सूक्ष्म तो सब लोकमें भरी है । और बादर पृथ्वी काय यह-

है । आयुष्य—ब्रधन्य अतमुहृतका उत्कृष्ट तीन हजार वर्षका है । ऐसा ममझकर जो वायुकायक जीवोंका क्या पालेंगे—बड़े माधक अनन्त सुख पावेंगे ॥

**वनस्पति कायके दोभेद —**—**सूक्ष्म और [ २ ]**

पादर ॥ सूक्ष्म तो संपूण लोकमें मग पड़ी है । और बाढर वनस्पतिकायकेमी दो भेद है — १ प्रत्येक वनस्पति काय, और ( २ ) साधारण वनस्पति काय ॥

प्रत्येक वनस्पति याने प्रत्येक शरीरमें एकड़ी जीव रहता है, उम कहत हैं—उनके नाम — वृष, बल, गुन्म लता, तुलसी, एरण्ड, आक, घतुरा, दाढिम, बला, नारंगी, जवार, पात्ररी, गहू, मूग मोट धणा, चावल, मका आदिधान्य, और मूगकी फली, मोठकी फली, गपारकी फली, बालालकी फली, इत्यादि बहुतमी, शाकमाजरी आदि सब प्रत्येक वनस्पति काय है । इममेंमी संख्याता असंख्याता दा भद है । संख्याता यान जिमक जीवोंकी संख्या हा मठ, असंख्याता याने जिमक जीवोंकी संख्या न हा सक, इम प्रकार दा भद मान है इनका आयुष्य ब्रधन्य अतमुहृतका उत्कृष्ट दूज हजार वर्षका हाता है ।

साधारण वनस्पति याने जिमक एक शरीरमें अनन्त जीव हा उम कहत हैं । साधारण वनस्पतिके कुछ नाम नीलण, कृन्ण, गाजर मूला, आक, लमण, कांटा मूंगफली, मटर, शरकर, आदि मग जमीकद-वंगरह बंगरह साधा रज वनस्पति काय है । इगरीमी जीवोंकी अपत्या संख्याता

असंख्याता, अनन्ता ऐसे तीन भेद होते हैं । कंदमूलके, सुईके अग्रभाग [ अनी ] उतने टुकड़ेमें अनन्त जीव सर्वज्ञ देवने व्रताये हैं । इसका आयुष्य-जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तका है । साधारण वनस्पतिकायकी 'कुल कोडी' अष्टावीस लाख है । इस प्रकार इनका स्वरूप जानकर जो इनके जीवोंकी दया यालेंगे—वह मोक्षके अनन्त सुख पावेंगे ॥

**त्रसकायके चार भेदः—**[ १ ] वे इन्द्रिय, [ २ ] ते इन्द्रिय, [ ४ ] चौरिन्द्रिय, [ ५ ] पंचेन्द्रिय ॥

**वे इन्द्रिय—**याने जिसके दो इन्द्रिय [ जीभ और शरीर ] हो उसे कहते हैं ।

**वे इन्द्रिय जीवोंके कुछ नामः—**कौडी, शीप, शंख, लट, कृमि, ( कीडा ) जोंक, इत्यादि बहुतसे वे इन्द्रिय जीव हैं । वे इन्द्रियकी 'कुल कोडी' सात लाख है । आयुष्य-जघन्य अंतर्मुहूर्तका उत्कृष्ट बारह वर्षका है ।

**ते इन्द्रिय—**याने तीन इन्द्रिय ( जीभ, नाक, शरीर, ) वाले जीवोंको कहते हैं । उनके कुछ नामः—जू, लखि, चिटी [ कीडी ] मकोडा, कुंथुआ, खटमल, आदि आदि तेन्द्रिय जीव हैं । इनकी 'कुल कोडी' आठ लाख है । आयुष्य-जघन्य अंतर्मुहूर्तका उत्कृष्ट ४९ दिनका है ॥

**चौरिन्द्रिय** याने जिसके चार इन्द्रिय [ जीभ, नाक, आंख, शरीर ] हो, उसे, कहते हैं । चौरिन्द्रिय जीवोंके कुछ नामः—मकडी, मच्छर, भंवरा, टीडी, पतंगिया, विच्छू,



कसारी इत्यादि धारिन्द्रिय जीव हैं । इनका कुलकोटी ९ लाख है । आयुष्य-अधन्य अतर्मुर्तिका-उत्कृष्ट छे मासका है ॥

पंचेन्द्रिय—माने पांच इन्द्रिय घाल ( काया, मान, आंख, जीम, नाक ) जावोंकर कहत है । उनक दा म—१ अपर्याप्ता २ पर्याप्ता, तथा चार भेद—नारकी तिर्यच, मनुष्य और देवता ॥ नारकीकर कुल कोटी २५ लाख, देवताकी कुल काटी २६ लाख, तिर्यच पंचेन्द्रियकी कुल कोटी ५३॥ लाख, और मनुष्यकी कुल कोटी १२ लाख है ॥

नारकी और देवताकर आयुष्य-अधन्य दस हजार वष, उत्कृष्टा ३१ सागरकर, तिर्यच और मनुष्यका अधन्य अतर्मुह तकर उत्कृष्टा—तीन पन्थका ॥

ऐसा—मानगर आ ब्रह्म करके जीवोंकी दया पालेंगे व मोक्षके अनन्त सुख पावेंगे ॥

इति छे कायका थोकडा समाप्त ॥

---

\* तिर्यच पंचेन्द्रियकी ५३॥ लाख कुल कोटीका हिसाब — जलचरकी १२॥ लाख, स्थलचरकी १० लाख, खेचरकी १२ लाख, उरपरकी दस लाख, मुचपरकी ९ लाख, बों मिककर सब ५३॥ लाख होते है ॥

जीवके छे भेदः—१ पृथ्वीकाय, २-अप काय, ३-तेउ काय, ४-वाउ काय, ५-वनस्पति काय, ६-त्रस काय ॥ तथा १-एकेन्द्रिय, २-वेइन्द्रिय, ३-तेइन्द्रिय, ४-चौरिन्द्रिय, ५-पंचेन्द्रिय, ६-अनेन्द्रिय ॥ तथा १-सकपायी, २-क्रोधकपायी, ३-मान कपायी, ४-माया कपायी, ५-लोभ कपायी, ६-अकपायी ॥

जीवके सात भेद — १-पृथ्वी काय, २-अप काय, ३-तेउ काय, ४-वाउ काय, ५-वनस्पति काय, ६-त्रस काय, ७-अकाय ॥

जीवके आठ भेद — १ सलेशी, २-कृष्ण लेशी, ३-नील-लेशी, ४-कापुत लेशी, ५-तेजू लेशी ६-पद्म लेशी, ७-शुक्ल लेशी, ८-अलेशी ॥ तथा १-तारकी, २-तिर्यच, ३-तिर्यचनी, ४-मनुष्य, ५-मनुष्यनी, ६-देवता, ७-देवी, ८-मिद्धभगवान् ॥

जीवके नव भेद — चार गतिका अपर्याप्ता, पर्याप्ता और सिद्धभगवान् ॥ तथा पांच स्थावर और चार त्रम, ये ९ ॥

जीवके दश भेदः—पांच स्थावर, चार त्रम, ये नव, और दशमा-नो स्थावर, नो त्रम, एवं १० ॥ तथा एकेन्द्रियमे लेकर पंचेन्द्रिय तक, इन पांचोंका अपर्याप्ता और पर्याप्ता, एवं १० ॥

जीवके ग्यारह भेदः—पांचोंन्द्रियों ( एकेन्द्रियसे पंचेन्द्रिय तक ) का अपर्याप्ता, पर्याप्ता, ये दश, और नो अपर्याप्ता, नो पर्याप्ता एवं ११ ॥

जीवक बारह भेद — छहों कायका अपर्याप्ता, और पर्याप्ता य १२, ॥

जीवके तरह भेद — छहों सेध्याका अपर्याप्ता और पर्याप्ता और अलक्षी, एव १३ ॥

जीवके चौदह भेद — १ सूक्ष्म एकेन्द्रिय, २-बाह्य एवन्द्रिय, ३-बहन्द्रिय, ४-तेजन्द्रिय, ५-चौरिन्द्रिय, ६-असर्वा पचेन्द्रिय, ७-सर्वा पचेन्द्रिय, इन सातोंका अपर्याप्तों और अपर्याप्ता, ये १४ ॥ इस तरह जीवक-५६३ भेद होते हैं, जिनका विस्तार पचीस बोलके [ थोकढेके ] इन्हींमें बोलमें मागया है, वहाँसे जान लेना ॥

## २ अजीव तत्त्व ।

अजीव तत्त्व किसको कहना ? जिसमें चैतन्यता नहीं, जो सुख दुःखको न जान सकता हो या कर्मोंका कर्ता [ करने वाला ] और मोक्षा ( मोगनेवाला ) न हो, इत्यादि लक्षणोंसे जो युक्त हो उसका नाम 'अजीव' है ॥ उस अजीवके अथर्व १४ भेद, और बृहस्प ५६० भेद है ॥

इनकामी विस्तार पचीस बोलके इन्हींमें बोलमें आधुका है—वहाँसे जान लेना चाहिए ॥

## ३ पुण्य तत्त्व ।

जिन छुम कर्मोंके करनेसे जीवको, सम्पत्ति, आरोग्यता, श्री, पुत्रादिक परिवार, कीर्ति, रूप, लक्ष्मी दीर्घायुष्य, आदि २ अच्छी २ बातें मिलती है—उसका 'पुण्य' कहते हैं । सय पुण्य बाँधनेके समय जीवको दुःख मान्द्रूप होता है और



# नवतत्त्व

गाथा.

जीवाजीवा पुण्यं, पापासव संचरोय निज्झरणा ॥

बंधो मुरक्को य तहा, नव तत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥

अर्थ—१ जीव, २-अजीव, ३ पुण्य, ४-पाप, ५-आश्रव  
६ संवर, ७-निर्जरा, ८-बध, ९-मोक्ष ॥ ये नव तत्त्व हैं ।

जीवतत्त्व ।

जीवतत्त्व किसको कहना? जो चैतन्य, लक्षण-  
वाला हो, जो सदा सहउपयोगी हो, जो सुखदुःखको जाननेवाला  
हो, और जो असख्यात प्रदेशी हो, व्यवहारनयसे जो कर्मोंका  
करनेवाला, वा भोगनेवाला हो, तथा कर्मोंको तोड़नेवालाभी हो,  
निश्चयनयसे जो ज्ञानदर्शन चारित्रिका धारक हो, इत्यादि लक्ष-  
णोंकर जो सहित हो-उसका नाम जीव है ।

उस जीवके दो भेदः—१-ससारी, और २-सिद्ध ।  
१ संसारी जीव उसे कहते हैं—जो कर्म बन्धनोंसे बंधाहु-  
आ हो । २ सिद्ध जीव उसे कहते हैं-- जिसके पीछे कर्म  
रूप बन्धन न हो ॥

फिर जीवके दो भेद—<sup>१</sup>-स्थावर, <sup>२</sup>और २ प्रस,  
फिर जीवके दो भेद —<sup>१</sup>-सत्री, <sup>२</sup>और २-असत्री, फिर  
जीवके दो भेद —<sup>१</sup>-सुक्ष्म, और <sup>२</sup>-बाह्य ॥

जीवक तीन मद —<sup>१</sup> स्त्रीवेद, <sup>२</sup> पुरुष वेद, <sup>३</sup> नपुंसक  
वद ॥ तथा <sup>१</sup>-भवसिद्धिया <sup>२</sup>-अभवसिद्धिया, <sup>३</sup>-नोभव  
सिद्धिया-नो अभवसिद्धिया ॥ तथा <sup>१</sup> सत्री <sup>२</sup> असत्री, <sup>३</sup> नो  
सत्री ना असत्री ॥

जीवक चार मद —<sup>१</sup> स्त्री वेद, <sup>२</sup>-पुरुष वेद, <sup>३</sup>-नपुंसक  
वेद, <sup>४</sup>-अवेनी ॥ तथा <sup>१</sup>-अक्षुदर्शनी, <sup>२</sup>-अक्षुदर्शना, <sup>३</sup>-  
अपधि दक्षनी, <sup>४</sup>-अवल दक्षनी ॥

जीवके पांच भेद —<sup>१</sup>-नारका, <sup>२</sup> दक्षता, <sup>३</sup> तिर्यक,  
<sup>४</sup> मनुष्य, <sup>५</sup> सिद्धमगवान्, तथा <sup>१</sup>-एकन्द्रिय, बहन्द्रिय,  
<sup>३</sup>-सहन्द्रिय, <sup>४</sup>-सौरिन्द्रिय, <sup>५</sup>-पञ्चाद्रिय तथा <sup>१</sup>-मयागी  
<sup>२</sup>-मनयागी, <sup>३</sup>-वचन योगी, <sup>४</sup>-काययागी, <sup>५</sup>-अयागी ॥  
तथा <sup>१</sup>-क्रोध कपायी, <sup>२</sup>-मानकपायी, <sup>३</sup>-माया कपायी,  
<sup>४</sup> लाम कपायी, <sup>५</sup> अकपायी ॥

\*<sup>१</sup> जो एकही जगहपर रहे जिससे चञ्चल इच्छनादि क्रिया न  
हा सके, उसका नाम 'स्थावर' है । <sup>२</sup>-इसके विपरीत जिसका  
सञ्चलन हो वह 'प्रस' है । <sup>३</sup>-जिसके मन हो वह सत्री ( सत्री )  
है । <sup>४</sup>-जिसके मन न हो वह असत्री ( असत्री ) है । <sup>५</sup>-आ  
यागीकस यागीक हो सबके विना दूसरा जिसे न देख सक वह  
'सुक्ष्म' कहा जाता है । <sup>६</sup>-जो सबकी दृष्टिमें आनवस्था है वह  
'बाह्य' ( बाह्य ) है ।

भोगनेके समय सुख मालूम होता है—उसेभी 'पुण्य' कहते हैं ।

पुण्य बांधनेके जघन्य ६ भेद है—१ अन्न पुत्रे ( भूखोको भोजन देनेसे पुण्य होता है ), पाण पुत्रे [ प्यासोको पानी पिलानेसे पुण्य होता है ], ३लयण पुत्रे [ निराश्रितोंको आश्रय याने—स्थान, मकान, आदि जगह देनेसे पुण्य होता है ] ४सयण पुत्रे, [ शय्या, बिछौना पाट, पाटलादिक देनेसे पुण्य होता है ] ५ वत्थ पुत्रे ( वस्त्र, कपडा देनेसे पुण्य होता है ) ६ मन पुत्रे ( मन को अच्छे कामोंमें लगानेसे पुण्य होता है ) ७ वचन पुत्रे [ वचन याने—जवानको अच्छे कामोंमें चलानेसे पुण्य होता है ], ८ कायपुत्रे [ शरीरसे अच्छे काम बनाने—सेवाभक्ति—करनेसे पुण्य होता है ] ९—नमस्कार पुत्रे [ सबको नमस्कार करनेसे तथा सबके साथ नमकर चलनेसे पुण्य होता है ] ये पुण्य बांधने उपार्जन-पैदा-करनेके ६ साधन-उपाय-कारण-है ।

पुण्यके उत्कृष्ट ४२ भेद है:—[ जिसके द्वारा-पुण्य भोगा जाता है उसके ] १ शातावेदनीय, २ उच्च गौत्र, ३ मनुष्यगति, ४ मनुष्यानुपूर्वी, ५ देवगति, ६ देवानुपूर्वी, ७ पंचेन्द्रिय, ८ औदारिक शरीर, ९ वैक्रयिक शरीर, १० आहारक शरीर, ११ तेजस शरीर, १२ कार्माणशरीर, १३ औदारिक शरीर, अंगोपांग, १४ वैक्रयिक शरीर, अंगोपांग. १५ आहारक शरीर

१ जिस जीवके जन्मसे मरण पर्यंत किसी प्रकारका दुःख न हो सुखीवना रहे,—उसे 'शातावेदनीय' पुण्यका उदय कहते हैं २ जो लोकमान्य उच्च कुटुम्बे उत्पन्न हो वह 'उच्च गौत्र' पुण्य है । ३ मनुष्य जन्मभी 'मनुष्य गति' नामक पुण्य से मित्ता है । ४

अगोपांग १६ वज्रश्रयमनाराचशरीर सधयस्य १७  
 ममचउरंस ( समचतुर्गस्य ) सठास्य ( सस्थान ) १८ शुभ  
 वर्ण १९ शुभगघ २० शुभरस २१ शुभस्पर्श २२ अगुरु  
 लघु नाम २३ परवात नाम २४ उच्छ्वास नाम २५ आतप  
 नाम २६ उद्योतनाम २७ शुभगति नाम २८ निमास्य नाम  
 २९ अस नाम ३० वादर नाम ३१ पयास नाम ३२ प्रत्यक

‘ मनुष्यानुपूर्वी ’ मनुष्य जन्मका वय पढनेका कहते हैं । ५ दश  
 होनामी ‘ देवगति ’ मानक पुण्य है । ६ ‘ देवानुपूर्वी ’ देवगतिके बंध  
 पढनेको कहते हैं । ७ ‘ पाण्डोर्द्विषोक्ता पाना ’ ‘ पचेन्द्रिय ’ है । ८ भौदा  
 रिक ९ बैक्रियिक १० आहारक ११ तेजस १२ कार्माण इन  
 पाँचों शरीरका बंध पढनामी पुण्यका उदय है । १३ भौशरिक शरीरेक  
 पूर्ण अङ्ग पाङ्ग १४ बैक्रियिक शरीरके पूर्ण अङ्गोपांग १५ आहारक  
 इन तीन शरीरों ईन तीन शरीरोंके पूर्ण अङ्गोपाङ्गोका पानामी पुण्यक है  
 १६ जिस शरीरके हाड वटन ( बंधम ) और कीडें बन्नेके मुता  
 बिक हो उसे वज्र श्रयम नाराच शरीर सङ्गनन कहत ह, ऐसा  
 सार मिठनामी पुण्यक है । १७ जिसका शरीर चारों ओरस  
 मापमेपर एकसा आवे तथा जा शरीर मुडौल सुदर हो उसे  
 समचउरंस सठास्य कहते हैं । जिसके शरीरका १८ शुभवध  
 १९ शुभग व २० शुभरस २१ शुभस्पर्श हातहिपहमी पुण्योत्प  
 २२ ‘ यस्याः पादप पिण्डवत् गुह्यबाह्व च पतति मन्वार्क  
 मूत्रवत् लघुत्वाद्भ्रूय गच्छति तत्रगुह्यपुनाम ’ जिसका शरीर छोड  
 पिण्डकी तरह भारी, बीचका जानेवाला तथा अर्कमूत्रक मुताबिक  
 उपरका जानेवाला न हा, याने न तो भारी हो और न हल्का हो

नाम. ३३ स्थिर नाम. ३४ शुभ नाम. ३५ सौभाग्य नाम.  
३६ सुस्वर नाम. ३७ आदेय नाम. ३८ यशःकीर्ति नाम. ३९

उसे 'अगुरुलघु नाम' कहते हैं । २३ 'परेषाघात परघात -यद्दुदया-  
त्तीक्ष्णशृंगनखसर्पदाढादयो भवन्ति अवयवा तंत्ररवातनाम' जिसके  
उदयसे दूंसरोंका घात करसकें ऐसे शरीरावयव मिले उसका 'पर-  
घात नाम' है । २४ सुखपूर्वकश्वासोच्छ्वास लेनेको 'उच्छ्वास नाम'  
कहते हैं । २५ जिसका शरीरसूर्यवत् तेजवान् हो वह 'आतपनाम'  
हैं । २६ चन्द्रमाके जैसी जिसके शरीरकी प्रभा हो उसका 'उद्योत  
नाम' हैं । २७ जिसकी चाल मनोहर हो 'वह शुभगति' हैं । २८  
जिसके शरीरके अवयव, इन्द्रियों, जहाँकेतहाँ हो उसे 'निर्माणनाम'  
कहते हैं । २९ जिसके उदयसे वेइन्द्रियादिकमें जन्म हो उसे 'त्रस'  
कहते हैं । ३० 'यद्दुदयादन्यत्राधाकरशरीर भवति तद्वादरनाम' जिस  
शरीरसे दूंसरोंको पीडा हो तथा जो स्थानको शोककर रहे, वह 'वादर' है  
३१ छहों पर्याप्ति जिसके पूरी हो वह 'पर्याप्ति नाम' है. ३२ एक  
शरीरमें एकही आत्मा ( जीव ) हो, उसे 'प्रत्येक नाम' कहते हैं।  
३३ -जिसके उदयसे शरीरमें रसादिक धातु और उपधातु अपनी २  
जगहपर स्थिर रहे सो 'स्थिरनाम' है । ३४-जिसके उदयसे श-  
रीरके मनोज्ञ-रमणीय-प्रशस्त मस्तकादिक अवयव हो वह शुभनाम  
है । ३५-जिसके उदयसे अन्य जीव उससे प्रीति करें वह 'सौभा-  
ग्य नाम' है । ३६-जिसका स्वर (कण्ठ आवाज) मनोज्ञ-सुहावना  
हो सो 'सुस्वर नाम' है । ३७-जिसके वचनका कोई उल्लघन  
न करसकें वह 'आदेयनाम' पुण्यफल है । ३९-जिसकी यश.कीर्ति  
जगत्गारमें फैलजाय उसके 'यश कीर्ति नाम' पुण्यका उदय कहना



देषायु, ४० मनुष्यायु ४१ तिर्यंचायु ४२ तीर्थकर नामकर्मा।  
य पुण्यके ४२ भेद हुए ।

### ५ पापतत्व

पापतत्त्व किंशकं कहना ? जिस कामोंके करनसे जीवका दु खोंकी प्राप्ति होती है उसे 'पाप' कहत है । तथा पाप करते समय तो जीवको अच्छा माख्म हा परंतु भोगनक समय पुरा माख्म हा वह 'पाप' है । उस पापके (पाप बांधनेके ) बंधन्य [कमस कम] अठारह भेद ( प्रकार ) है - १ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ कलह ( लडाई ) १३ अम्भाकमान १४ पैशुन्य १५ परपरिवाद १६ रति अरति १७ माया मोसो ( मर्ममासा ) मिथ्यादशनश्चरय ॥

पापके उत्कृष्ट ( पाप भागनक ) ८२ भेद हैं - १ मतिज्ञानावरणीय २ धृतज्ञानावरणीय ३ अबधिज्ञानावरणीय ४ चाहिण । १९-४ - ४१-जिसके उदयस देव-मनुष्य-तिर्यंचका पूजायु प्राप्त हा उस देषायु मनुष्यायु, तिर्यंचायु नामक पुण्यप्रवृत्तिका उदय कहना चाहिण । ४२-जिसस तार्थकर पदकी प्राप्ति हो वह तीर्थकर नाम' पुण्य फल है ।

य पुण्य ४२ भन्नेहा सजिम मश्राथ हुआ ।

१-मतिज्ञानावरणीय जन कहत है-आ मतिज्ञानका ( इन्द्रियों तथा मनस ना कुछ जाना जाता है तम मतिज्ञान कहते है । म हान भयना मतिज्ञानका भावरण या पाप को । २-धृतज्ञानावर

मनः पर्यवज्ञानावरणीय. ५ केवल नाज्ञावरणीय. ६ निद्रा. ७ निद्रा-निद्रा. ८ प्रचला. ९ प्रचला प्रचला. १० थिणाद्धिनिद्रा ( स्त्यान-गृद्धि ) ११ चक्षुदर्शनावरणीय. १२ अचक्षुदर्शनावरणीय. १३

णीय उसे कहते हैं—जो श्रुत [ मुननेसे जो बात मालूम होती है उसे श्रुतज्ञान कहते है ] ज्ञानका घात करें. । ३—अवधिज्ञानावरणीय उसे कहते है जो अवधि ज्ञान [ विना इन्द्रियोंकी सहायताके आत्मिक शक्तिमे रूपी पदार्थोंके जाननेको अवधि ज्ञान कहते हैं । यह पचेन्द्रिय सजी जीवकेही होता है ] का घात करें । ४—मन पर्यवज्ञानावरणीय उसे कहते हैं—जो मन पर्यव [ विना इन्द्रियोंकी सहायताके दूसरोंके मनकी बात जानलेनेको मन.पर्यव ज्ञान कहते हैं ] ज्ञानका घात करें । ५—केवल ज्ञानावरणीय उसे कहते है—जो केवल ज्ञान [ लोक अलोककी, भूत भविष्यत् और वर्तमानकी सर्व वस्तुओंको और उनके गुण पर्यायों ( हालतों ) को एकसाथ एक कालमें विना इन्द्रियोंकी सहायतासे आत्मिक शक्ति से जाननेको केवल ज्ञान कहते हैं केवलज्ञानके ज्ञानसे कोई वस्तु वची नहीं रहती ] का घात करें । ६—सुखसे जागृत होनेको निद्रा कहते है । ७ दु खसे जागृत होनेको ' निद्रा निद्रा ' कहते हैं । ८—जिसे उठते बैठते नींद आया करती है, तथा कुछ सोताभी रहे, और कुछ जागताभी रहे, उसे ' प्रचला ' कहते हैं । ९ जिसे चलते फिरते नींद आया करती है तथा जिसके मुखसे नींदमें लार बहती रहती है, उसे ' प्रचला प्रचला ' कहते हैं । १०—जिसकी उत्कृष्ट छे महिनोकी नींद होता है, जो नींदमेंही सब काम करता रहता है तथा नींदमें अपनी शक्तिसे बाहरकाभी काम हो तोभी वह कर लेता है और फिर जागनेपर यहभी मालूम नरहे कि—मैंने क्या

अंधाभिर्दर्शनावरेणीय १४ करल दर्शनावरम्भीय, १५ नीच  
 गीत्र १६ अद्याता वेदनीय १७ निष्प्यात्वे मोहनीय १८  
 स्थावर नाम १० सूक्ष्म नाम २० अपर्याप्त नाम २१ साधा-  
 रणनाम

किया था, उस 'चिणद्धि निद्रा' कहते हैं। इस नदवालेके वासु  
 देवमे आधा बड़ होता है और यह मरकर नरकमें जाता है।  
 ११ अक्षुद्रज्ञानावरणीय उस कहते हैं—जो अक्षुद्रज्ञान [ भाषास  
 दम्भना ] न होने द। १२ अक्षुद्रदर्शनावरेणीय उस कहते हैं जो  
 अक्षुद्रज्ञान [ आसके बिना बाकी शक्तियों तथा मनस किसी वस्तुका  
 देखना ] न जाने द। १३—अवनि दर्शनावरेणीय उसे कहते हैं—जो  
 अक्षुद्रि दर्शन न होने दे। १४—केवल ज्ञानावरणीय उस कहते हैं  
 —जो करल दर्शन न जाने द। १५—नीच गीत्र उसे कहते हैं—  
 जिसके उदयम साक निद्रित-अघात हसक कुलमें पैदा हो। १६  
 अद्यातावेदनीय उस कहते हैं—जिसके उदयसे दुःख हो। १७—  
 निष्प्यात्वे मोहनीय उस कहते हैं—जिसके उदयसे जीवको यथाथ  
 त्रासोका भ्रष्टान ( विषास ) न हो। १८—स्थावरनाम—उसे कहते  
 हैं—जिसके उदयस जीव पूर्वी, अत्र, अग्नि, वायु बनरपतिमें, अथवा  
 पृथ्वीमें जगम लेता है। २०—सूक्ष्म नाम उस कहते हैं—  
 जिसके उदयन एवा पारीक शरीर पावकि— नतो यह किसीस वृ-  
 मक के न बड़ किसीको रोठ मके। छाटा मिठी पथरके बाधमन  
 का न निष्कृ- जाता है। २० अपर्याप्त नाम' बड़ है—जिसके उद-  
 यमो वयास है। न हा २१ साधारण नाम बड़ है—जिसके  
 उदय एव एसाके साम्य मानक आव हाँ २२ 'अस्थिरनाम

२२ आरिष्यनाम, २३ अश्रुयनाम, २४ दूर्वाग्ननाम, २५ दुः-  
 गारनाम, २६ अनादेय नाम, २७ अयज्ञःकीर्ति नाम, २८  
 नरकमतिनाम, २९ नरकायु, ३० नरकानुपूर्णा, ३१ अनन्ता-  
 नुवन्धी प्रोथ, ३२ अनंतानुवन्धी मान, ३३ अनंतानुवन्धी  
 माया, ३४ अनंतानुवन्धी लोभ, ३५ अप्रत्याख्यानापरणीय  
 प्रोथ, ३६ अप्रत्याख्यानापरणीय मान, ३७ अप्रत्याख्याना-  
 परणीय माया, ३८ अप्रत्याख्यानापरणीय लोभ, ३९ प्रत्या-  
 ख्यानापरणीय प्रोथ, ४० प्रत्याख्यानापरणीय मान, ४१

हमके 'उदयमे क्षीरके' भाव जीव उपायात् जपने जपने जपने  
 पदार्थनं नहीं रहते है, २३ 'अश्रुयनाम' हमके 'उदयमे क्षीरके' अक्षयप  
 [ द्विगे ] संके होते है, २४ 'दूर्वाग्ननाम' हमके 'उदयमे दूर्वा' भाव  
 जपनेमे प्राप्ति या फिर यत्न है, २५ 'दुःगारनाम' हमके 'उदयमे  
 ग्वर [ आत्मान ] पदार्थ नहीं होता है । २६ 'अनादेयनाम' हमके  
 'उदयमे मोक्ष' पदार्थ कथमको न माना है, २७ 'अयज्ञःकीर्ति' हमके  
 'उदयमे जीवको' समासे प्रोथ नहीं होते पाती है, २८ 'नरक-  
 मति' अमे 'कलव द्वैजगमे' 'उदयमे जीव नरकको' भाव, २९ 'नरक-  
 चायु' अमे 'कलव द्वैजगमे' 'उदयमे जीवको' नारकीके शरीरमे गेक भवने, ३०  
 'अनन्तानुपूर्णा' नरकको सब पदार्थको कहते है, ३१ अनंतानुवन्धी  
 प्रोथ, ३२ मान, ३३ माया, ३४ लोभ अमे कहते है जो आत्मानके  
 मयपदार्थन मृणवा माक्ष करे, 'अनन्तानुवन्धी' कथाम रहती है 'अव्यक्तीन  
 नहीं होता, हमको स्थिति आपकीव प्रथी है, ३५ 'अप्रत्याख्याना  
 परणीय प्रोथ, ३६ मान, ३७ माया ३८ अय जे कहते है जो  
 आत्मानके दय परिष्का भाव है, हमको स्थिति १ वर्षकी है, ३९,

प्रत्याख्यानावरणाय माया ४२ प्रत्याख्यानावरणीय लोभ ४३  
 सज्वलनका क्रोध ४४ सज्वलनका मान ४५ सज्वलनकी  
 माया ४६ सज्वलनका लोभ ४७ हास्य ४८ रति, ४९ अरति  
 ५० मय ५१ शाक ५२ दुग्धा ( गुग्गुला ) ५३ स्त्रीवेद  
 ५४ पुरुषवेद ५५ नपुंसक वेद ५६ तिर्यग्गति ५७ त्रिष  
 चातुपूर्वा ५८ एकन्द्रियनाम ५९ यन्द्रियनाम ६० तन्द्रिय

प्रत्याख्यानावरणाय क्रोध ४० मान ४१ माया ४२ लोभ उभे  
 कहते हैं-जो आत्माक सपूर्ण चारित्रिका नाश करे इसकी स्थिति  
 चार मासकी है ४३ सज्वलनका क्रोध ४४ मान ४५ माया  
 ४६ लोभ मन्हे कहते हैं-जो यथाकृपात चारित्रिका घात करे  
 इसकी स्थिति पंद्रहदिनकी है ४७ हास्य उसे कहते हैं-जिसके  
 उदयसे हसी आये ४८ रति उसे कहते हैं-जिसके उदयसे प्रीति  
 हो ४९ अरति उसे कहते हैं-जिस उदयसे अप्रीति हो ५० मय  
 उसे कहते हैं-जिसके उदयसे डर आये ५१ शाक उसे कहते हैं  
 जिसके उदयसे सताप हो ५२ दुग्धा ( गुग्गुला ) उसे कहते हैं  
 जिसके उदयसे ग्लानि उत्पन्न हो ५३ स्त्रीवेद उसे कहते हैं  
 जिसके उदयसे जीवके पुरुषसे रमण करनेके भाव हो ५४ पुरुष  
 वेद उसे कहते हैं-जिसके उदयसे जीवके स्त्रीसे रमनेके भाव हो  
 ५५ नपुंसक वेद उसे कहते हैं-जिसके उदयसे स्त्री पुरुष, दोनोंसे  
 रमनेके परिणाम हो ५६ तिर्यग्गति तिर्यग्ग योनिमें जानेको कहते  
 हैं ५७ त्रिषचातुपूर्वा त्रिषच गतिका ब्रह्म पढ़नेको कहते हैं  
 ५८ जिसके उदयसे जीव, एकन्द्रिय ५९ तन्द्रिय ६० तन्द्रिय  
 ६१ तन्द्रियिका सार वा ग द र म क मसे एकन्द्रियादि नाम

नाम. ६१ 'चौरिन्द्रिय नाम'. ६२ अशुभगतिनाम. ६३ उपघात नाम. ६४ अशुभवर्ण. ६५ अशुभगन्ध. ६६ अशुभरस. ६७ ६८ अशुभस्पर्श. ६९ ऋषभ नाराच संघयण [संहनन] ७० नाराच संघयण. ७१ अर्ध नाराच संघयण. ७२ कीलक संघयण ७३ छेवट संघयण [ असंप्राप्ताश्रुपाटिका संहनन ] ७४ न्यग्रोधप-

कहते हैं ६२ जिसकी चाल खराब हो, उसे अशुभगतिनाम कहते हैं- ६३ उपघातनाम उसे कहते हैं-जिसके उदयसे ऐसे अग हो, जिनसे अपनाही घात हो. ६४ जिसके उदयसे शरीरका अशुभवर्ण (रंग) ६५ अशुभगन्ध (वास) ६६ अशुभ रस, ६७ अशुभस्पर्श हो, उसे अशुभवर्ण नामादि कहते हैं. ६८ जिस शरीरके हाड, और बेठन (वेष्टन) तो वज्रके हो परंतु कीलें, वज्रकी न हो, उसे ऋषभ नाराच संघयण कहते हैं. ६९ जिस शरीरकी हड्डियोंमें- बेठन और कीलें लगी होती हैं उसे नाराच संघयण कहते हैं ७० जिसशरीरकी आधी हड्डियोंमें-बेठन और कीलें लगी होती है उसे नाराच संघयण कहते है ७१ जिस शरीरकी आधी हड्डियोंमें कीलें होती है और आधीमें नहीं होती, उसे अर्ध नाराच संघयण कहते है ७२ जिस शरीरकी हड्डियोंकी संधिया कीलोंसे मिली होती है उसे कीलक ( कीलिका ) संघयण कहते है ७३ जिस शरीरकी जुदी जुदी हड्डिया नसोंसे बंधी होती है उसे छेवट [ असंप्राप्ताश्रुपाटिका ] संघयण कहते हैं. ७४-२-न्यग्रोध परिमडल सस्थानवालेका शरीर बड़के पेड़की तरह

१ हाडोंके समूहको संघयण ( सहनन ) कहते हैं हाडों, बधनों और कीलियोंके परिवर्तनसे सहननके छे भेद होते है

२ शरीरकी आकृति-सूरत-शिकलको सस्थान कहते है

रिमडल संस्थान—( संठाण ) ७५ स्वाति संस्थान [सादि  
मस्थान ) ७६ बामन संस्थान ७७ कुम्भ संस्थान ७८  
हुंबक संस्थान ७९ दानांतराय ८० लामांतराय ८१ मागा  
शराय ८२ उपमोगांतराय ८३ वीरान्तराय ये पापतत्त्वके  
मेद हुए

## ५ आश्रवतत्व

आश्रव तत्त्व किसका कहना ? दिन कारकासे कर्मका आ-

होता है याने नामिक नीचेका भाग छोटा और ऊपरका भाग  
बड़ा होता है ७५ स्वाति संस्थानवालेका शरीर नीचेसे बड़ा ऊपर  
से छोटा होता है ७६ कुम्भ संस्थान वालेका शरीर कुबड़ा होता है  
७७ बामन संस्थान वालेका शरीर टीमणा होता है ७८ हुंबक  
संस्थान वालेका शरीर एकता नहीं होता याने शरीरका कोई हिस्सा  
छोटा तो कोई बड़ा, इस प्रकार असोमनीय होता है ७९ दानांतराय  
उसे कहते हैं—जिसके उदयसे जीभ दाम न देखे ८० लामांतराय  
उसे कहते हैं जिसके उदयसे काम न देखे ८१ मोगांतराय उसे  
कहते हैं जिसके उदयसे अष्ट पदार्थोंका मोग न सके ८२ उप  
मोगांतराय उसे कहते हैं—जिसके उदयसे बारबार मोगमें जानेवाले  
( जवर कपड बगैरह जाँको ) पदार्थोंका मोग न सके ८३  
वीरान्तराय उस कहते हैं जिसके उदयसे शरीर निर्बली हो, सामर्थ्य  
और ताकत न हो, भयवा हो, तो उसके प्रकाशित न करसके

१ जीभोंका मारनस, शीरी करनेसे, मैपुम संभनसे, परिग्रह रस  
नस, पाँचों इन्द्रियों, चारों कपायों, तीनों योगोंका बस न करनेसे,  
आश्रव होता है

त्माके साथ सम्बन्ध होता है उसे आश्रव कहते हैं। याने "आश्रयते कर्म अनेन इत्याश्रवः" जिससे कर्मोंका आना हो—जैसे किसी नावमें कोई छेद हो जाय और उस छेदमेंसे-उस नावमें पानी आने लगे, इसी प्रकार व्रत और प्रत्याख्यानके न होनेसे, विषय कर्पायोंके भवनसे आत्मारूप नदीमें, इन्द्रियरूप छेदसे कर्मरूप पानी आने लगे उसका नाम "आश्रव" है.

आश्रवके जघन्य बीस भेद हैं—वह पच्चीस बोलमें पहिले बतलाये गये हैं—और उत्कृष्ट ४२ भेद हैं:—१ प्राणोत्तिपात आश्रव, २ मृपावाद आश्रव, ३ अदत्तादान आश्रव, ४ मैथुन आश्रव, ५ परिग्रह आश्रव, ६ श्रोतेन्द्रिय आश्रव, ७ चक्षु इन्द्रिय आश्रव, ८ प्राणोन्द्रिय आश्रव, ९ रसेन्द्रिय आश्रव, १० स्पर्शोन्द्रिय आश्रव, ११ क्रोध आश्रव, १२ मान आश्रव, १३

१ कायासे जीवादि मारनेको 'काइया क्रिया' कहते हैं. २ शस्त्रादिकोंसे जाँवोंका घात करनेको 'अधिकरणिया' क्रिया कहते हैं ३ जीव अजीवके ऊपर द्वेष रखनेसे पाउसिया क्रिया लगती है. ४ दूसरोंको परिताप उपजावे तो, परितावणिया क्रिया होती है. ५ जीव हिंसाको पाणाइवाइया क्रिया कहते हैं. ५ आरंभादि पापोंके करनेसे आरंभिया क्रिया लगती है. ७ धनधान्यादि परिग्रह रखनेसे तथा उनपर ममत्वभाव रहनेसे परिग्रहक्रिया होती है. ८ किसीके साथ छल कपट दंभ करनेसे, ठगनेसे-मायायत्तिया क्रिया लगती है. ९ जिनेन्द्र देवके वचनोंको न माननेसे-विपरीतप्ररूपना करनेसे मिथ्यादिसण्णत्तिया क्रिया लगती है. १० किसी प्रकारके व्रत, प्रत्याख्यान नहीं करनेसे 'अपचक्खाणिया क्रिया' लगती है.



माया आभव, १४ लोभ आभव, १५ मन आभव, १६ चञ्चल  
 आभव, १७ काम आभव य १७ और २५ क्रिया-१ काइया  
 २ अघिकरखिया, ३ पाउसिया, ४ परितापखिया, ५ पासा-  
 ह्वाइया, ६ आरमिया, ७ परिग्रहिया, ८ मावावणिया, ९  
 मिथ्यादसखवणिया, १० 'अपबन्धाखिया, ११ दिठिया,  
 १२ पुठिया, १३ पाइभिया, १४ शामतौवखिया, १५ निस  
 खिया १६ साइधिया, १७ आसवखिया, १८ विदारखिया,

११ 'कोतहुँस' मागोंसे नाटक, फ्लाक, लमाछा आदि देखनेसे दिठिया  
 क्रिया खगती है १२ राग मागोंसे खी, पुरुष, जेवर, कपड़ा गाय  
 बँक, आदि पदार्थोंको स्पर्श करनेसे 'पुठिया क्रिया' खगती है १३  
 किसीको 'बनाख परिवार सम्पन्न, सुखी, देखकर, उसका सुरा  
 थितम 'करे तो पाइभिया क्रिया खगती है १४ अपनी सम्पदा  
 देखकर 'आन' करे, तथा अपनी सपदाकी प्रससा सुनकर हर्षित होवे  
 या दुःख, दर्द-बी, पैस, प्रमुखके बरतनोंके उपाडे रखने तो घामे  
 तोषणिया क्रिया खगती है १५ राजादिकोंके आदेशसे, समाम करे  
 बख, सख, गिद, कोट बगैरह वनलें, कुआ, भावडी, सुदावे वा  
 निसखिया क्रिया खगती है १६ जस सुद अभिमानके बख होकर  
 बीष दिमा करे तथा दूसरोंसे करारे, तथा मोनी, किसान आदिका  
 भधा करे तो साइधिया क्रिया खगती है १७ दूसरोंको आरम समा  
 रम करनेकी आहा दे तो आपबणिया क्रिया खगती है १८ बीन,  
 बजीबक बध करनने बिशरणिया क्रिया खगती है १९ दूसरोंके  
 भोगोंकी इच्छा करे, मममें कामभोगोंकी तिसामिछाया रखे  
 तथा बखानि महीरकरण अयत्नासे उदारें, आरि अयत्नासे रखे तो

१९ अणाभोगक्रिया, २० अणवकंखवत्तियां, २१ अणउपयो-  
गक्रिया, २२ सामुदाणिया, २३ पेजवत्तियां, २४ दोसवत्तियां,  
२४ इरियावहिया क्रियां, ये आश्रवके ४२ भेद हुए।

## ६ संवरतत्त्व.

संवर तत्त्व किसको कहना? संवर कहते हैं रोकनेको, याने  
आत्मारूप नदीमें इन्द्रियरूप छेदसे जो कर्मरूप पानी आता है  
उसे जो रोकदे, उसका नाम संवर है।

संवरके जघन्य २० भेद, उत्कृष्ट ५७ भेद है. जघन्य २०  
भेद पच्चीस बोलमें आचुके हैं। यहाँ उत्कृष्ट ५७ भेदोंका  
विस्तार कहते हैं:—

पांच समिति—१ इरिया समिति, २ भाषासमिति, ३ एषणा-  
समिति, ४ आयाणभंडमतनिखेवणा समिति, ५ उच्चारणपासवण  
खेल जल संघाण पारिठावणिया समिति ॥ ( तीन गुप्ति ) ६

अणाभांगक्रिया लगती हैं. २० ससार विरुद्ध और धर्म विरुद्ध कोई  
कार्य करनेसे अणवकंखवत्तिया क्रिया लगती है. २१ उपयोगरहित  
कोई काम करनेसे अणउपयोग क्रिया लगती है २२ मेर्ळा, तमाशा,  
आदि देखा जाता है, तथा बहुत लोक मिलकर जो कार्य करते हैं, वह  
सामुदाणिया क्रिया हैं. २३ राग, प्रीति, मोहके वशसे पेजवत्तिया  
क्रिया लगती हैं. २४ क्रोधके वशसे दोषवत्तिया क्रिया लगती हैं.  
२५ चलते हलते इरिया वहिया क्रिया लगती हैं,

१ कोई आदान समिति. २ कोई उत्सर्ग समिति कहते हैं.

मन-गुप्ति, ७ वचन गुप्ति, ८ काम गुप्ति ॥ ( शार्ङ्गस्य परिपह )  
 ९ क्षुधापरिपह, १० तृषा परिपह, ११ शक्तिपाण्डह १२ उष्ण  
 परिपह, १३ दश मशक परिपह, १४ अचल परिपह, १५  
 अरति परिपह, १६ स्त्री-परिपह, १७ शर्षा परिपह १८ आसन

१ ऐसकर बचनका 'इरिया समिति' कहते हैं निषय [ पाप  
 रहित ] मिष्ट, प्रिय, सत्य, बचन वाचनका 'भापासमिति' कहते हैं  
 २ शास्त्रमयाशुक्त निर्दोष आहार मस्य पत्र, आदि खनका 'एष  
 णा समिति' कहते हैं ३ प्रत्यक्ष मस्तु मत्नामे उठाने यमाम  
 रसनका 'अयाणभङ्गमत निखवणा समिति' कहते हैं ५ चापनेयोम्य  
 वस्तुको मरमासे बाँधनेका 'उत्तार पासमण सल जल मवाप्य पाप  
 तावाणिया समिति' कहते हैं ६ मन बस करमसे 'मन गुप्ति' हाती  
 है ७ वचन बस करनसे 'वचन गुप्ति' हाती है ८ काम [ शरीर ]  
 बस करनसे 'काम गुप्ति' होता है ९ मुखके सहन करनेका क्षुधा  
 परिपह कहते हैं १० प्यासके सहन करनेको तृषापरिपह कहते हैं  
 ११ शर्षाका दुःख सहन करनेका शीतपरिपह कहते हैं ११ गर्मी  
 का दुःख सहन करनेको उष्ण परिपह कहते हैं १३ दास, मण्डर  
 विण्डु बगैर जाबोंके काटनेको दश मशक परिपह कहते हैं १४  
 कन्दूवसोते निर्बाह करनेका अवेस परिपह कहते हैं १५ अनिष्ट  
 वस्तुपरमी द्रव्य नहीं करनेका अरति परिपह कहते हैं १६ ब्रह्मचर्य  
 व्रत भंग करनेके लिये शर्षाके द्वारा बनक उपद्रव होनेपरमी  
 लेकार नहीं करना मन परिप्यामोका बचने नहीं दना शर्षापरिपह है  
 १७ चलन समय पैरों कटिनी घास ककर खुम जानेका दुःख

परिपह, १६ शय्यापरिपह, २० आक्रोश परिपह, २१ वैध परिपह, २२ याचना परिपह, २३ अलाभपरिपह, २४ रोग परिपह, २५ तृणस्पर्श परिपह, २६ मल परिपह, सत्कार पुरस्कार परिपह, २७ प्रज्ञा परिपह, २९ अज्ञान परिपह, ३४

सहन करना तथा पैदल चलना चर्यापरिपह हैं. १८ एकही आसन पर बैठे रहनेका दुःख सहन करना, आसन परिपह है. १९ ककरीली जैमीन अथवा पत्थरपर सीनेका दुःख सहन करना शय्यापरिपह होता है. २० किसी दुष्ट पुरुषके गाली वगैरह देनेपरभी क्रोध न करके क्षमा धारण करना आक्रोश परिपह है. २१ किसी दुष्ट पुरुषके द्वारा मारे पीटे जानेपरभी क्रोध और क्लेश नहीं करना वैध परिपह है. २२ मागकर लाना-भिक्षा करना-गौचरी लाना-मागना-याचना परिपह है. २३ विमारीका दुःख सहन करना रोग परिपह है. २४ आवश्यकतानुसार कोई वस्तु न मिलनेपर क्लेश न करना अलाभ परिपह है. २५ शरीरमें काच, सुई, काटे वगैरहके चुभजानेका दुःख सहन करना तृणस्पर्श परिपह है. २६ शरीरमें पसीना आजाने, चस्त्रोंमें धूल मिट्टी लगजानेका दुःख सहन करना और नहाना धौना नहीं करना मल परिपह है. २७ किसीके आदर सत्कार अथवा विनय प्रणाम वगैरह न करनेपर बुग न मानना; सत्कार पुरस्कार परिपह है. २८ अधिक विद्वान् होनेपरभी मान न करना प्रज्ञा परिपह है. २९ मिहनत करनेपरभी [ पढनेपरभी ] जान न आनेका दुःख सहन करना-अज्ञान परिपह है. ३० केवळी तीर्थकर कथित-सूक्ष्म बातें समझमें न आनेपरभी अपनी श्रद्धाका दूषित न करनेकी दर्शन परिपह है.

दृष्टान परिपह \* - - -

## [ दश प्रकारका याति धर्म- ]

१ ३१ 'खीती' (क्रोध न करना) ३२ 'मुक्ति' (लोभन करना) ३३ 'अखवे' (कपट न करना) ३४ मइवे (मान न करना) ३५ 'साधवे अथवा शांचे' (केवलीक धयनोंकी, आद्याओंकी चोरी न करना तथा अपने अंत करणकर शुद्ध रखना) ३६ 'सुष्प' (सध बोसना) ३७ 'संयमे' (१७ प्रका संयम पालन करना) ३८ 'तवे' (१२ प्रकारका तप करना या मनको बश करना) ३९ 'आर्किचख' (समस्त परिग्रहका त्याग करना-अथवा ममत्वभाव राहित होना) ४० बमचरवास" (मैपुनका त्याग करना)

## ( चारह भावना )

४१ अनित्य भावना-ऐसा विचार करनाकि संसारकी तमाम चीजें नाश हो जानेवाली हैं, काईभी नित्य नहीं है

४२-अशरख भावना-ऐसा विचार करना कि अगतमें कोई क्य शरख नहीं है और मगसम बखानपालामी कोई नहीं है

४३ समार भावना-ऐसा चिन्तन करना कि यह ससार अमार है, इममें अरामी मुख नहीं है

४४ अकृष भावना-गमा विचार करना कि-अपने अण्डे

\* मुनिभाग कर्मोंकी निर्भरा और कायकृष करनेक लिए समता भाषोंस आ स्वयं दु स सहन फारत है अण्डे परिपह ( परिपह शब्दम परिपह सहन समतना चाहिर ) फहत है

चुरे कर्मोंके फलको यह जीव अकेलाही भोगता है, कोई सगा साथी नहीं बँटा सकता.

४५ अन्यत्व भावना—ऐसा विचार करना कि पुत्र, स्त्री वगैरह संसारकी कोईभी वस्तु अपनी नहीं है,

४६ अशुचि भावना—ऐसा विचार करना कि—यह देह अपवित्र और घिनावनी है, इससे कैसे प्रीति करना चाहिए ?

४७ आश्रव भावना—ऐसा चितवन करना कि—मन, वचन कायके हलन चलनसे कर्मोंका आश्रव होता है, सो बहुत दुःखदाई है, इससे वचना चाहिए ।

४८ संवर भावना—ऐसा विचार करना कि—संवरसे यह जीव संसार समुद्रमे पार हो सकता है इस लिए संवरके कारणोंको ग्रहण करना चाहिए.

४९ निर्जरा भावना—ऐसा विचार करना कि—कर्मोंका कुछ दूर होना निर्जरा है, इस लिए इसके कारणोंको जानकर कर्मोंको दूर करना चाहिए,

५० लोकभावना—लोकके स्वरूपका विचार करना कि—कितना बड़ा है, उसमे कौन २ जगह है, और किस किस जगह क्या क्या रचना है, और उससे संसार परिभ्रमणकी हालत मालूम करना.

५१ बोधि दुर्लभ भावना—[ बोध भावना ]—ऐसा विचार करना कि—यथा प्रवृत्तिकरण या अकाम निर्जरासे, मनुष्यभव, उत्तमकुल, दीर्घायुष्य, शरीर निरोग, धर्मश्रवणादि योग वगैरह वगैरह बड़ी कठिनतासे प्राप्त हुए है, इन्हें पाकर वेमतलब न

खोना चाहिए किन्तु रत्नत्रय [ सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान सम्यग् चारित्र ] का धारण करना चाहिए ।

५२ धर्मभावना—धर्मका स्वरूप चिन्तन करना कि इसीसे हम लोक धार परलाक के सब तरहके सुख मिल सकत हैं

### [ पांच प्रकारका चारित्र ]

५३—सामायिक चारित्र ५४ छद्मोपस्थापन य चारित्र ५५ परिहार विशुद्धि चारित्र ५६ छद्म सांपराय चारित्र ५७ यथाव्याप्त चारित्र

१-सब जीवोंमें समताभाव रखना राक्षसेपरहित जाना-सुख दुःखमें समान रहना शुभ अशुभ विकल्पोंका त्याग करना, जिसमें ज्ञान दर्शन, चारित्रका पूर्ण लाभ हो, जिससे-सावध कर्मोंका त्याग हो जाय, उसका नाम सामायिक चारित्र है

२ पूर्वोक्त-सब विरति सामायिक चारित्रकाही-छटादि विशुद्ध प्रकरणसे विशुद्ध किया जाता है तथा जो नबदीक्षित साधुको क्रुद्ध समयवाद् हर्षाभिव्यक्ति अध्ययन पढ़ाकर पक्ष महाव्रत दिय जात है तथा प्रतादिमें मग पढ़नपर प्रायश्चित्त बगैरह लेकर सावध न जाना-पढता है-बह छे दोषन्यापनीय चारित्र है

३ रागद्वेषादि विकल्पोका त्यागकर तथादियोगसे अधिक-ताक साथ आत्मविशुद्धि करना परिहार विशुद्धि चारित्र है

४ अपनी आत्माका कपायसे रहित करते करते छद्मलाम

कपाय नाममात्रको रहजाय उसको सूक्ष्म सांपराय कहते हैं.

५ सर्वथा कपाय रहित-जैसा निष्कंप आत्माका शुद्ध स्वभाव है वैसा होना यथास्थित चारित्र है.

५ समिति, ३ गुप्ति, २२ परिपह, १० यतिधर्म, १२ भावना, ५ चाग्नि, सर्व मिलकर संवरके ५७ भेद पूरे हुए.

## ७ निर्जरातत्त्व.

निर्जरा तत्त्व किसको कहना? जिससे कर्मोंका खिरना-झडना हो, याने जिससे कर्मोंका थोडा थोडा क्षय होता जाय-उसे निर्जरा कहते हैं. जैसे किसी नांवमें पानी भरजाय-और उसे थोड़ा थोड़ा कर बाहर फेंकाजाय-इसी प्रकार आत्माके पीछे जो कर्म लगे हुए हैं उनका थोडा थोडा क्षय होना-निर्जरा है. इसकेभी दो भेद हैं. ( १ ) द्रव्य निर्जरा (२) भाव निर्जरा तथा ( १ ) अकाम निर्जरा, २ सकाम निर्जरा.

१ आत्माके जिन भावोंसे कर्म अपना फल देकर नष्ट होता है-वह भाव निर्जरा है. २ और समय पाकर तपसे कर्मका नाश होना-द्रव्यनिर्जरा है.

१ इच्छाके बिना जो कष्ट सहन किया जाता है उसे अकाम निर्जरा कहते हैं.

२ अपनी इच्छामें जो कष्ट सहन किया जाता है उसे सकाम निर्जरा कहते हैं.



## निर्जरातत्वके जघन्य उत्कृष्ट वारह भेद हैं

१ अनसन २ उनादरी, ३ वृचिसद्यप [ मिषाचरी ] ४  
रस परित्याग, ५ कर्मक्षेत्र, ६ प्रतिसलीनता, ७ प्रायश्चित्त  
८ विनय ९ वैयावच्च, १० सङ्ग्राह, ११ ध्यान, १२  
कठसङ्ग

१ तीनों तथा चारों आहारका त्याग करनेको 'अनसन' कहते हैं इसका दो भेद — १ इतरीय, और २ अवकाशिय, इतरीय तपके ६ भेद — १ अर्णी तप, २ प्रतर तप, ३ घन तप, ४ वर्ग तप, ५ वर्गवर्ग तप, ६ प्रकीर्ण तप

( १ ) एक उपवाससँ लेकर छह महीने तककी तपस्याको अर्णीतप कहत हैं

( २ ) प्रतर तप उन्हें कहत हैं—जो इस रीतिस तप किया जाता है—उपवास, बैला, छैला, चाँला, फिर बैला, तैला, चाँला, फिर उपवास तैला, घाला फिर उपवास, बैला फिर चाँला, उपवास, बैला तैला इस प्रकार सोलह काठोंमें आनवाल तपका प्रतरतप कहत हैं यह तप एक महीना और दसवीस रातमें पूरा जाता है

३ घन तप — उपरक मृताधिक ६४ काठोंमें आनेवाल अर्कोकी तपस्याका कहत हैं यह तप सात महीनों और चौदह दिनोंमें पूरा जाता है

४ वर्ग तप— उपरक मृताधिक ४००६ काठोंमें आनेवाल अर्कोकी तपस्याका कहत हैं यह तप ३० वर्ष ० महीने, ०६ दिनोंमें पूरा जाता है

५ वर्गावर्ग तप-१ करोड, ६७ लाख, ७७ हजार, २१६-  
कोठोंमें आनेवाले अंकोंकी तपस्याको कहते हैं. यह तप १  
लाख, ६३ हजार, १११ वर्ष, ९ महीना, २६ दिनोंमें पूरा  
होता है

६ प्रकीर्ण तप-अनेक प्रकारसे किया जाता है. इसके कुछ  
भेद ये हैं:-एकावली, रत्नावली, कनकावली, मुक्तावलि, लघु  
सिंह क्रीडित, बृहत्सिंह क्रीडित खुद्दभग सर्वतो भद्र, महाभद्र  
महासर्वतोभद्र, जवमध्यपडिमा, वज्रमध्यपडिमा, गुणरत्नावली  
कर्म चूर, आंबिलवर्धमान इत्यादि इत्यादि

१ एकावली तप इस रीतिसे किया जाता है:-प्रथम-उप-  
वास करें, फिर बैला, करे, तैला करें, इसके बाद वीचमें, फुट-  
कर आठ उपवास करे, फिर उपवाससे लेकर १६ तक चढ़ावें,  
फिर फुटकर चौतीस उपवास करे. फिर सोलहसे लेकर उप-  
वासतक पीडा उतारे, फिर वीचमें फुटकर आठ उपवास करें.  
बादमें ३-२-१ करें. इस तरह चार वक्त तप करें पहली  
वारमें ( पारणाके दिन ) जैसा मिले वैसा आहार करे, दूसरी  
वारमें-ऊपरसे विगयको त्यागे. याने विगय न ले तीसरी  
वारमें लूखा खावें चौथी वारमें-आंबिल करें

इस तपके करनेमें-चार वर्ष, आठमास, आठ दिन लगते हैं.  
ऐसेही आगे ६ नवमें तप तक की जो जो तपस्या है वेभी  
चार चार वक्तही करना, समझना. परंतु जहां उहा जो जो  
फर्क है वह दिखाते हैं.

२ रत्नावली तपमें-पहलेके एकावली तपमें जहां आठ आठ

और चौतास उपवास है वहाँ-आठ आठ और चौतीस चौतीस बेलें समझन चाहिए इस तपके करनेमें पांच वर्ष, द्वा महीना, अठ्ठावीस दिन लगते हैं शेष रीति एकावलीकी तरह जानना चाहिए

३ कनकावली तप-रत्नावली तपमें जहाँ-आठ आठ और चौतीस चौतास बेलें हैं-वहाँ आठ आठ तथा चौतीस चौतीस बेलें जानने, इसके करनेमें-पांच वर्ष, नव मान अठारह दिन, लगते हैं शपरीति-रत्नावलीका तरह जानना

४ मुक्तावली तप-एकमे लेकर १६ तक बढ़ाना और उतारना, और बढ़ाना और उतारना इस प्रकारकरनेसे मुक्तावली तप होता है इसके करनेमें ३ वर्ष, १० महीन लगते हैं

५ लघु सिंह क्रीडा तप-इस तरह करें-पहले-१ फिर २ फिर १, फिर ३ फिर २, फिर ४ फिर १-५ ४ ६ ५-७ ६ ८ ७-९ ८ ९-७-८ ६ ७-५ ६ ४ ५ ३ ४ २ ३ १ २ १ इस प्रकार क्रम क्रमसे चार वक्त उपवासोंके शोक करें इस तपके करनेमें-द्वा वर्ष, अठ्ठावीस दिन लगते हैं-

६ बृहत् सिंह क्रीडित तप-इस तरह किया जाता है १ २ १ ३ २ ४ ३ ५ ४ ६ ५ ७ ६ ८ ७-९ ८ १० ९ ११ १० १२ ११ १३ १२ १४-१३ १५ १४-१६ १५ १६ १७ १५ १३ १४ १ १३ ११ १२ १० ११ ९ १० ८ ९-७ ८-६ ७ ५ ६ ४ ५ ३-४ २ ३ १ २ १ इस प्रकार चार दफह उपवासोंके शोक करनेका ण्डनामेंही क्रीडित तप करते हैं इसके करनेमें ६ वर्ष, २ महीना, १२ दिन लगते हैं



प्रथम यदि एकमके राज पन्द्रह कैवल आहार करें दूजक राज १४  
 कैवल, उस घटात घटात अमावामक राज एक कैवल पर आषो  
 फिर बढ़ाना शुरू करें, सा शुद्धि एकमके राज दा कैवल आहारत  
 दूजक राज तीन कैवल, तीसक राज चार फँवल यों बढात  
 बढात चौदशक राज १५-कैवल आहार फर पूनमक राज  
 उपवाम करें इस प्रकारके उपवास नाम 'ब्रह्ममध्य पद्धिमा' है  
 इसक करनेमेंही एक महीना लगता है

१२ गुणरत्नावली उपवास करनेकी विधि — नीचे लिखे  
 अनुसार आदिहार उपव्या करें, दिनमें सूयकी आतापना ले  
 उक्कटामन ( उक्कटासन ) स बैठ, रातमें धीरासनस रहें, या  
 नम रहें सोलह महीनोंतक यह विधि करें जिसमें पहिल मही  
 नमें-८५ उपवास करे दूसरे महीनेमें-१०-बैलें को तीसर  
 महीनेमें-आठ तलें करें साध महीनेमें-छे बैलें करें पांचव  
 महीनेमें पांच पबैलें फर, छठे महीनेमें-छह छहक धार थोकें करें,  
 सातमें महीनेमें सात साके तीन थोकें करें आठवें महीनेमें  
 -आठ आठक तान थोकें को नवमें महीनेमें नव नवक तीन  
 थोकें करें दसवें महानमें-दस दसक तान थोकें करें, ग्यारहवें  
 महानमें-ग्यारह ग्यारह तीन थोकें करें, बारहवें महीनेमें-  
 बारह बारहक दा थोकें करें तेरहवें महीनेमें तेरह तरहक दा

१- छगत्तार दो उपवास करनेको बैसा कहते है २ तीस  
 उपवास करनेको तैसा कहत है, ३ चार उपवास करनेका चौसा  
 कहते है ४ पांच उपवास करनेका पँचसा कहत है ५ बार थोक  
 चार बार करनेको कहते है

थोक करें, चौदहवें महीनेमें—चौदह चौदहके दो थोक करें, पंद्रहवे महीनेमें—पन्द्रह पन्द्रहके दो थोक करें, सोलहवें महीनेमें सोलह सोलहके दो थोक करें, इस प्रकारके तपका नाम गुणरत्नावली है

१३-कर्मचूर तप—इस तरह करें—पहले एक आठई करे फिर तेरह पंचोलें, सतरह चौलें, तेईस तैलें, बयालीस त्रैलें. और सौ उपवास करें. इसको कर्मचूर तप कहते हैं. इसके कर नेमें एक वर्ष, सात मास, बीस रोज लगते हैं

१४-आंघ्रिल वर्द्धमान तप—इस तरह होता है:—एक आंघ्रिल और एक उपवास, दो आंघ्रिल और एक उपवास, तीन आंघ्रिल और एक उपवास, याचत् सौ आंघ्रिल और एक उपवास इस तरहके तपका “आंघ्रिल वर्द्धमान” नाम है. यह चौदह वर्ष तीन महीना और बीस दिनमें पूरा होता है.

अवकाहिय ( तप ) के ६ भेद—( १ ) ‘भक्तपञ्चखाण - यावज्जीवपर्यन्त—चारों आहार छोड़ देनेको कहते हैं, ( २ ) ‘पादोगमन’ आहार और शरीर दोनों छोड़ देनेको और हलन चलन क्रिया नहीं करनेको कहते हैं. ( ३ ) ‘परिकम्म’—भक्त प्रत्याख्यान वाला प्रतिक्रमण करें, उसे कहते हैं. ( ४ ) ‘अपरिकम्म’ पादोगमनवाला प्रतिक्रमण नहीं करें, उसे कहते हैं. ( ५ ) ‘निहारिम’—गाँवमें संथारा करने और उनके शरीरका दहन होनेको कहते हैं.

( ६ ) ‘अनिहारिम’—गाँवके बाहिर अटवियों, पहाड़ों आदिमें संथारा किया जाता है और फिर उनके शरीरका दहन नहीं होता—उसे कहते हैं.

( २ ) उखोदरी तपके दो भेद—द्रव्य उखादरी २ भाष उखोदरी

द्रव्य उणोदरीके ३ भेद—' आहार उणादरी २ वस्त्र उणोदरी, ३ पात्र उणोदरी,

१, २, ३—आहार, वस्त्र, पात्र, आदि उपकरणोंके क्रम क्रम नको आहार-वस्त्र-पात्र उपकरण उणोदरी कहते हैं

भाष उखादरीके ८ भेद — १ क्राघ उखादरी, २ मान उणोदरी, ३ माया उखोदरी, ४ लोम उणादरी ५ राग उखोदरी, ६ द्वेष उणादरी, ७ द्वेष उणोदरी, ८ अल्प भवन उणोदरी

१-२-३-४-५-६-७-क्राघ मान, माया, लोम राग, द्वेष, अल्प भवन इन भाषोंका घटानको क्रमम क्रोधादि उखादरी कहते हैं ८ अल्पभाषी हानेका, अल्प भवन उखोदरी कहते हैं

३ मिथाचरीके चार भेद — १ द्रव्य मिथाचरी, २ क्षेत्र मिथाचरी, ३ कास मिथाचरी, ४ भाष मिथाचरी

द्रव्य मिथाचरीके २६ भेद — १ उखित चरिये—'यसा अभिग्रह करे कि-वरतनमेंसे निकालकर दगा ता लूगा २-निखित चरिये—'ऐसा अभिग्रह करे कि-वरतनमें टालता हुआ दगा ता लूगा ३ 'उखित निखित चरिये' ऐसा अभिग्रह करे कि-वरतनमें निकाल, पापिमडालता हुआ दगा ता लूगा ४ 'निखित उखित चरिये'—'ऐसा अभिग्रह करे कि-वरतनमें टाल पापिम निकालता हुआ दगा ता लूगा ५-दृष्टि-भाष चरिये' ऐसा अभिग्रह करे कि-दृष्टिको पुग्मता

हुआ दे तो लूंगा. ६ 'साहसिभमाण चरिये' ऐसा अभिग्रह करें कि दूसरेको पुरसनेवाद जो वचाहुआ आहार मिले तो लूंगा. ७- 'अवशिद्धमाण चरिये' - ऐसा अभिग्रह धारण करें कि-दूसरेके लिये ले जाता हुआ आहार मिले तो लूंगा. ८ 'उवशिद्धमाण चरिये' ऐसा अभिग्रह करें कि-दूसरेको देनेवाद वचाहुआ और वापिस लायाहुआ आहार मिले तो लूं. ९- 'उवशिद्ध माण चरिये' - ऐसा अभिग्रह करें कि- पहिले दूसरेको दे और फिर उनसे वापिल ले. मुझे दे तो लूं. १०- 'अवशिद्ध उवशिद्धमाण चरिये' - ऐसा अभिग्रह करें कि-दूसरेके पाससे लेकर दे तो लूं. ११- " संसठमाण चरिए " ऐसा अभिग्रह करें कि-भरे हुए हाथोंसे दे तो लूं. १२ 'असंसठ चरिये' - ऐसा अभिग्रह करें कि-विन भरे हाथोंसे दे तो लूं. १३ 'तज्जाए संसठ चरिए' - ऐसा अभिग्रह करें कि-जिस वस्तुसे हाथ भरे हुए हो अगर वही वस्तु दे तो लूं. १४- 'अन्नाए चरिये' ऐसा अभिग्रह करें कि-जहां मेरी पहचान न हो वहांसे मिले तो लूं, १५ 'मोण चरिये' - ऐसा अभिग्रह करें कि-कोई चुपचाप (मौन रखकर) दे तो लूं. १६- 'दिठलाभए' - ऐसा अभिग्रह करें कि- देनेकी वस्तु वताकर दे तो लूं. १७ 'अदिठलाभए' - ऐसा अभिग्रह करें कि-विना दिखाये दे तो लूं. १८ 'पुठलाभए' - ऐसा अभिग्रह करें कि-पूछकर वस्तु दे तो लूं. १९ 'अपुठलाभए' ऐसा अभिग्रह करें कि-विना पूछे दे तो लूं. २० 'भिखलाभए' - मेरी निन्दा कर दे तो लूं. २१ 'अभिखलाभए' - मेरी स्तुति कर दे तो लूं. २२ 'अन्नमिलाए' जिसके खानेसे शरीरमें अशांता हो, वैसा आहार दे तो लूं. २३ 'उत्तणीहिए' - जो



आपल्यानेको बँठा हो और उसमेंसे जे तो लू २४ 'अरमित  
विष्वाधि' सरस [ अन्धा ) आहार मिले तो लू २५ 'शुद्ध  
सखीए' निर्दोष आहार मिले तो लू २६ 'सखादेचरि'  
खुबछी तथा अन्य किसी मापके प्रनाशमे आहार लू

क्षेत्र भिक्षाचरीके आठ भेद— १ 'पेटिके समान गौचरी  
ऊरे याने चारों कोनोंक घरोसे आहार ले २ 'अर्धपनीके  
समान' गौचरी करे [ भिक्षा मागे ], याने दो फानोंक घरोसे  
आहार ले ३ 'गोभूषकी तरह' गौचरी करे, याने एक इधरके  
घरस और एक उधरके घरसे आहार ले ४ पतगियाकी  
तरह गौचरी करे, याने खुल खुले [ फुटकर ] घरोसे आहार  
ले ५ अम्यतर शशावर्ध गौचरी—पहिले नीचेक घरोसे और  
फिर ऊपरके घरोसे आहार लू ६ 'बाग अंखापत गौचरी  
सहिले ऊपरक घरोसे और फिर नीचेक घरोसे आहार ले  
७ जात हुए आहारल परंतु फिर वापिस आवेहुए न ल  
८ जात हुए आहार ले, परंतु वापिस जाते हुए न ल

फाल भिक्षाचरीके चार भेद— १ पहिले प्रहरका लामा  
हुआ तीसरे प्रहरमें मागे [ खावे ], २ दूसरे प्रहरका लामा  
हुआ, चौथे प्रहरमें मागे ३ दूसरे प्रहरका लामाहुआ तीसरे  
प्रहरमें मागे ४ पहिले प्रहरका लामा हुआ, दूसरे प्रहरमें  
में मागे

गाय भिक्षाचरीके चार भेद— १ सव यस्तुप्रौकी अलग  
थकग गों २ सव यस्तुप्रौकी शामिल कर खावे ३ दिव  
चाली पीउ न आ ४ सुँइने प्राय ( निपाळा ) न केर आ  
प्रमाणमे कम खावे

## रस परित्यागके १० भेद.

१ दूध, दही, घी तैल, मीठा इन पांच विषयका त्याग करें. २ ऊपरसे विषय न ले. ३ चावल आदिकोंका उसावण [ रांधने-पकानेके बाद जो पानी निकाला जाता है, उसमें रहा हुआ-अन्नका अंश ] ही खाकर रह जावे. ४ विना रसका आहार वरे ५ पकाया हुआ पुराने धानका आहार वरें ६ 'अंत आहार'-उडद चणे प्रमुखके बाकुले खाकर रह जावे. ७ 'पंत आहार' ठण्डा वामी खाकर रहे. ८ "लुह आहार" रूखा [ लूखा ] आहार करें. ९ "तुच्छ आहार" निःसार शक्तिहीन आहार करे. १० रूखा, सूखा, निःसार, सार, सब को एक जगह कर [ मिलाकर ] खावें.

## कायक्लेशके १८ भेद.

साधुकी वारह प्रतिमा [ पद्धिमा ] धारण करें ( बहन करें ) :—१ पहिली प्रतिमा. एक महीनेकी, उसमें-एक दात आहार, और एक दात पानीकी ले. २ दूसरी प्रतिमा दो महीनोंकी-उसमें दो दात आहार और दो दात पानीकी ले. ३ तीसरी प्रतिमा तीन महीनोंकी-उसमें तीन दात आहार और तीन दात पानीकी लें. ४ चौथी-चर रही १० की उसमें चार दात आहार, और चार दात पानीकी लें. ५ पांच-पांच महीनोंकी-उसमें पांच दात आहार, और पांच दात पानीकी ले. ६ छठी-छह महीनोंकी-इसमें छह दात आहार और छह दात पानीकी लें. ७ सातवां प्रतिमा सात महीनोंकी उसमें सात दात आहार और सात दात पानीकी लें. आठवीं, नववीं, और

दशवी प्रतिमामें सात सात दिनोंतक एकान्तर आँविवार उपवास करें ११ ग्यारहवींमें वैला करें १२ बारहवींमें तैला करें शमशानमें कामात्सग करें १३ कायोत्सर्ग कर खडा रहे १४ अनक प्रकारके आसन करें १५ केमालोष करें १६ उग्र विहार करें १७ ठण्ड, घाम सहन करें १८ खाद्य आदि नहीं खुजावे बगैरह बगैरह

### प्रतिसलीनताके चार भेद

१ इंद्रिय प्रतिसलीनता २ कषाय प्रतिसलीनता, ३ योग प्रतिसलीनता, ४ विविक्त सवस्थासम्य प्रति सलीनता

इन्द्रिय प्रतिसलीनताके पांच भेदः—आश्रेन्द्रिय प्रतिसलीनता, अक्षु इन्द्रिय प्रति सलीनता प्राणइन्द्रिय प्रतिसलीनता रस इन्द्रिय प्रतिसलीनता, स्पर्श इन्द्रिय प्रतिसलीनता,

२ कषाय प्रतिसलीनताके चार भेद—१ कांष कषाय प्रति सलीनता मान कषाय प्रतिसलीनता, माया कषाय प्रति सलीनता, लोभ कषाय प्रतिसलीनता

३ योग प्रतिसलीनताके ३ भेद—मन योग प्रतिसलीनता, वचन योग प्रतिसलीनता, काय योग प्रतिसलीनता,

( पाँचों इंद्रियों, चारों कषाय, तीनों योग इनके वक्ष करनका प्रतिसलीनता कहते हैं ]

१—प्रतिसलीनताका अर्थ होता है—वक्ष करना, कादूमें रखना या कम करना

२—स्त्री, पशु, मनुष्यक रहित स्थानमें रहनेका नाम “ विविक्त शयनासम प्रतिसलीनता ” है

४ त्रिविक्त सयणासण प्रतिसलीनताका एकही भेद है.

## प्रायश्चित्तके ५० भेद.

१० लिये हुए व्रत प्रत्याख्यानोंमें दश कारणोंसे दोष लगता है:- १ कंदर्प, -याने कामके वश होनेपर. २-प्रमादके वश होनेपर. ३-अनजानपनसे. ४-क्षुधाके वश होनेपर. ५-कोई आपत्ति आजानेपर, ६-संदेह उत्पन्न होनेपर. ७-उन्मादके वश होनेपर. ८-भय होनेपर. ९-द्वेषके वश होनेपर. १०-परीक्षाके निमित्तसे. २०-जो अविनीत-पापात्मक पुरुष होता है-वह आलोचना दश प्रकारसे करता है. ( पापोंका प्रकाश करता है. ):—१ स्वयं गुस्सामें [क्रोध में ] आकर या दूसरोंको क्रोधमें लाकर आलोचना करें [अपने दोषों [ पापों ] को कहे. २-पहिले दोषोंका प्रायश्चित्त पूछकर [ जैसेकि किसीने अमुक पाप किया तो उसका क्या प्रायश्चित्त है? ] फिर आलोचना करें. ३ दूसरेके देखादेख याने जिस प्रकारसे दूसरेको कहता-देखे वैसा आपही कहने लगे. ४छोटे छोटे दोष कहे बड़े न कहे. ५ बड़े बड़े दोष कहे, छोटे न कहे. ६-बोलता हुआ गडबड करें. ७-लोकोंको सुनाकर कहें ८-बहुतसे लोगोंके सामने वकें. ९-जो प्रायश्चित्तका ( दण्ड-विधिका ) जानकार, न हो, उसके आगे कहे. १०-सदोषी ( सुननेवालाभी दोषी हो उसके ) के आगे कहे.

३० जो इन दश गुणोंका धारक होता है वही आलोचना [ आलोचना ] कर सकता है:- १ जो आत्म कल्याणकी भावना वाला हो. २ जो जातिवन्त हो. ३ जो कुलवन्त

हो ४ जो विनयवान् हा ५ जो ज्ञानवान् हो ६ जो दर्शनका  
 धारक हो ७-जा चारित्र्यका धारक हा ८-जो धर्मावान् हो  
 ९-जो वैराग्यवान् हा १०-जो जितेन्द्रिय हा

[ ४० ] जो इन दशगुणोंका धारक होता है यही प्रायश्चित्त  
 ( दण्ड ) दे सकता है — १ जा शुद्धाचारा हा वह २ जिसका  
 व्यवहार शुद्ध हो वह ३ प्रायश्चित्त विधिका जान हो वह ४  
 शुद्ध श्रद्धावान् हा वह ५ भीड़ भाड़ [ पक्षपात या लजा ]  
 न रखनेवाला हा वह ६ शुद्ध करनेका सामर्थ्य रखता हो वह  
 ७ गर्भरिस्वभाव वाला हा वह ८ दोषोंके मुहस दोष क्यूँ  
 करवा सकता हा वह ९ जो विषयण हा वह १० प्रायश्चित्त  
 लेनेवालेकी शक्तिका जान हो वह

[ ५० ] दश प्रकारका प्रायश्चित्त होता है:— १ गुरुके  
 आगे पाप प्रकाश देनेसे २ प्रतिक्रमण माने पश्चात्पापयुक्त  
 मिच्छामि, दुकड देनेसे ३ आलोचना और मिथ्या दुष्कृत  
 दानोंसे ४ अकल्पनीय वस्तुको दूर करनेसे [ परठ. आनेसे-  
 छोड़ आनेसे ] ५ इरियावही आदि कर्मोंसर्ग करनेसे ६  
 आंशिक उपवास आदि तपके करनेसे ७ धडेको [ दीषामें ]  
 छोटा करनेसे ८-दूसरीपक्ष दीषा देनेसे ९-उठने बैठने  
 इतने चलने की शक्ति न रह ऐसा तप करानेसे १०-कमसे  
 कम ६ गास, ज्यादासे ज्यादा पारह वर्षतक सांप्रदायके  
 पादिर रखनेसे

१ जिनके कर्मसे किये हुए पापोंका नाश हो सके, या माफ़े  
 से कुछ दण्ड हो सके—उसे प्रायश्चित्त कहते है

विनयके मूल भेद सातः—१ ज्ञान विनय, २ दर्शन विनय  
३ चारित्र विनय. ४ मन विनय, ५ वचन विनय, ६ काय  
विनय. ७ लोक व्यवहार विनय.

१-ज्ञान विनयके ५ भेदः—मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव,  
केवल, [ इन पांचों ज्ञानवालोंका विनय करे ] ॥

२-दर्शन विनयके दो भेदः—१ आदर सत्कार विनय,  
और २-आशातना विनय.

( आशातना विनयके ४५ भेदः—१ अरिहंतकी आशा.  
तना न करें. २ अरिहंत प्ररूपित धर्मकी आशातना न करे-  
३ आचार्यकी आशातना० ४ उपाध्यायकी आशातना० ५ स्थ-  
विरकी आशातना० ६ कुलकी आशातना० ७ गणकी आशा०  
८ संघकी आशा० ९ क्रियावन्तकी आशा० १० संभोगीकी  
आशा० ११ मतिज्ञानीकी आशा० १२ श्रुतज्ञानीकी आशा०  
१३ अवधिज्ञानीकी आशा० १४ मनःपर्यवज्ञानीकी आशा०  
१५ केवल ज्ञानीकी आशा० इन १५ के गुणानुवाद करें, यह  
३० भेद हुए. इन १५ की भक्ति करें. यह सर्व मिलकर ४५  
भेद हुए. ]

३ चारित्र विनयके ५ भेदः—१ सामाधिक, २ छेदीपस्थाप  
नीय, ३ परिहार विशुद्धि, ४ सूक्ष्म सांपराय, ५ यथाख्यात.  
इन पांचों चारित्र वालोंका विनय करे.

४ मन विनयके दो भेदः—१ पापके कामोंमें मनको न  
जाने दे, और २ धर्मके कामोंमें मनको लगावें.

५ वचन विनयके दो भेदः—१ पापके कामोंमें मौन  
रखें, और २ धर्मके कामोंमें बोलें.

६ काय विनयके ७ भेद—बलनेमें, खड़े रहनेमें, उठनेमें बैठनेमें, सोनेमें, खानेमें, पीनेमें, सब शक्तिभोजसे यत्नासे काममें

७ टाक व्यवहार विनयके ७ भेद—गुरुकी आज्ञामें चलने, २ अपनेसे अधिक गुणवान स्वधर्मीकी आज्ञा माने ३ स्वधर्मीका काम करे, ४ उपकारीका उपकार माने ५ 'चित्ता'का परित्याग करे ६ सावधानता पूर्वक धर्तवि करे ७ देशकर्त्तों 'नुसार चले

### वैयावक्त [वैयावृत्य] के १० भेद

१ आचार्य, २ उपाध्याय ३ नवदीक्षित, ४ गेर्गी, ५ तपस्वा, ६ स्त्रबिर, ७ स्वधर्मी ८ गुरुमाह, ९ सप्रदाय १० सब इन दसोंकी आज्ञार, वस्त्र, पात्र, स्थानादिसे वैयावक्त करे

### मज्झायके ५ भेद

१ वायसा, २ पुच्छसा, ३ परियट्टणा ४ अणुपेहा, ५ धर्मकथा

१ सूत्र पढ़नेका वायसा कहते हैं

२ शंकाओंको निर्णय करनेका पुच्छसा कहते हैं

३ पढ़ेहुए और पूछेहुएको दीर्घ छटिसे विचारना—'अणुपेहा' है

४ पढ़ेहुए और पूछेहुएको धारधार याद करना—योर यट्टसा है

५ व्याख्यान वाचना, उपदेश देना, लोगोंको तात्त्विक बातें [न्याय युक्तियोंसे] समझाना धर्मकथा है

## ध्यानके ४ भेद.

१ आर्त्त ध्यान २ रौद्रध्यान, ३ धर्मध्यान, ४ शुद्धध्यान,

आर्त्तध्यानके चार भेदः-१ मन इच्छित वस्तुओंके संयोगकी इच्छा करना, २ मनके प्रतिकूल वस्तुओंके वियोगकी इच्छा करना. ३ मेरे ज्वरादि रोगोंका नाश हो ऐसी चिन्ता करना ४ मेरे कामभोगोंका कभी नाश नहो ऐसी अभिलाषा करना

आर्त्तध्यानके चार लक्षणः-१ आक्रन्द करना २ शोक करना ३ आँसू गेरना, ४ विलाप करना.

[ इन लक्षणोंमेंसे एकभी लक्षण जिसमें मिलता हो उसे आर्त्तध्यानी जीव कहना चाहिए ]

रौद्र ध्यानके चार भेदः-हिसानन्द जीव हिसा करनेमें आनन्द मानना ] मृपानन्द ( झूठ बोलनेमें आनन्द मानना. चौर्यानन्द ( चौरा करनेमें आनन्द मानना ) कामभोगानन्द ( काम भोगोंके सेवनमें आनन्द मानना वा तीव्राभिलाषा रखना )

रौद्र ध्यानके चार लक्षणः-हिसा, झूठ चौरा, मैथुन, परिग्रह, इन पंचाश्रवोंका एकवार, या चारवार चिंतन करना, हिसामय धर्मस्थापना , या अज्ञानतासे अकृत्य काम करना, और मरे वहांतक अपने कियेहुए पापोंका पश्चात्ताप न करना, इन लक्षणोंमेंसे एकभी लक्षण जिसमें पाताहो, उसे रौद्रध्यानी आत्मा समझना चाहिए. ]

☞ इन दोनों ध्यानोंको छोड़ने, दूर करनेसेभी तप होता है,



६ काय विनयके ७ भेद - चलनेमें, खड़े रहनेमें, उठनेमें बैठनेमें, साननेमें, स्नाननेमें, पीनेमें, सब इन्द्रियोंसे यत्नामें काममें

७ लोक व्यवहार विनयके ७ भेद - गुरुका आशामें चलना, २ अपनेमें आधिक गुणधान स्वधर्मीकी आज्ञा माने ३ स्वधर्मीका काम करे, ४ उपकारीका उपकार माने ५ 'विता'का परित्याग करे ६ सावधानता पूर्वक बर्ताव करे ७ देशकर्त्ता जुमार चले

### वैयाचस्य [वैयाचृत्य] के १० भेद

१ आचार्य २ उपाध्याय ३ नवदीक्षित, ४ रोगी, ५ तपस्वी, ६ स्वधर, ७ स्वधर्मी, ८ गुरुमाह, ९ सप्रदाय १० सप्त इन दशोंकी आहार, वस्त्र पात्र, स्थानादिसं वैयाचस्य करे

### मज्झायके ५ भेद

१ वायणा, २ पुच्छया ३ परिबद्धया ४ अणुपेहा, ५ धर्मकथा

१ सूत्र पठनेका वायणा कहते हैं

२ शंकाओंका निर्मूल्य करनका पुच्छया कहते हैं

३ पदद्वय और पूछेद्वयका दीर्घ दृष्टिसे विचारना- 'अणुपेहा' है

३ पदद्वय और पूछेद्वयको बारबार याद करना-पारिबद्धया है

५ म्यास्थान याचना उपदेश देना, हागोंको साविकक याते [ न्याय युक्तियोंसे ] समझाना धर्मकथा है

## ध्यानके ४ भेद.

१ आर्त्त ध्यान, २ रौद्रध्यान, ३ धर्मध्यान, ४ शुद्धध्यान,

आर्त्तध्यानके चार भेदः—१ मन इच्छित वस्तुओंके संयोगकी इच्छा करना, २ मनके प्रतिकूल वस्तुओंके वियोगकी इच्छा करना. ३ मेरे ज्वरादि रोगोंका नाश हो ऐसी चिन्ता करना ४ मेरे कामभोगोंका कभी नाश नहो ऐसी अभिलाषा करना

आर्त्तध्यानके चार लक्षणः—१ आक्रन्द करना २ शोक करना ३ आँसू गेरना, ४ विलाप करना.

[ इन लक्षणोंमेंसे एकभी लक्षण जिसमें मिलता हो उसे आर्त्तध्यानी जीव कहना चाहिए ]

रौद्र ध्यानके चार भेदः—हिसानन्द जीव हिसा करनेमें आनन्द मानना ] मृषानन्द ( झूठ बोलनेमें आनन्द मानना. चौर्यानन्द ( चोरी करनेमें आनन्द मानना ) कामभोगानन्द ( काम भोगोंके सेवनमें आनन्द मानना वा तीव्राभिलाषा रखना )

रौद्र ध्यानके चार लक्षणः—हिंसा, झूठ चोरी, मैथुन, परिग्रह, इन पंचाश्रवोंका एकवार, या वारंवार चिंतन करना, हिंसामय धर्मस्थापना, या अज्ञानतासे अकृत्य काम करना, और मेरे वहांतक अपने कियेहुए पापोंका पश्चात्ताप न करना, इन लक्षणोंमेंसे एकभी लक्षण जिसमें पाताहो, उसे रौद्रध्यानी आत्मा समझना चाहिए. ]

☞ इन दोनों ध्यानोंको छोडने, दूर करनेसेभी तप होता है,

## धर्मध्यानके चार भेद

१ तीर्थं करोकी आत्माको विचारना, २ मैं रागद्वेष रहित हाऊँ, ऐसी चिन्ता करना, ३ दुःख और सुख शुभाशुभ कर्मोंसेई होता है यह चिन्तन करना, ४ लोकाकार याने-छाक [ अंगत् ] के स्वरूपको विचारना

## धर्मध्यानके चार लक्षण —

१ जिसके हृदयमें तीर्थं करोकी आत्मानुसार चलनकी रुचि हो, २ जिसको तत्त्वार्थत्व पद्विज्ञानकी रुचि हो ३ जिसको उपदेश-ध्वनि करनेकी रुचि हो ४ जिसको एव सिद्धान्त पढ़नेकी रुचि हो

[ये लक्षण जिसमें पाते हैं उस धर्मध्यानी की वृत्ति कहना चाहिए]

## धर्म ध्यानकी चार भावना

१ ' आर्षिणाणुप्येहा ' ऐसा विचार करे कि-पौरुषात्मिक सर्व पदार्थ अनित्य है, २ ' असराणुप्येहा ' ऐसा विचार करे कि-संसारमें आत्माको किसीका ( एक धर्मका छोड़कर ) धरणा नहीं है, ३ ' एगसाणुप्येहा ' ऐसा चिन्तन करे कि-आत्मा सदासे अकेला है, संसारमें इसका कोई साथी नहीं है ४ ' ससाराणुप्येहा ' इस प्रकार सोच कि-संसारपरिभ्रमण दुःख मय है सबलेश भावमी तसमें सुख नहीं है

## धर्मध्यानके चार अवलम्बन

१ भावना, २ पुच्छपा, ३ परियट्टणा, ४ धर्मकथा

## शुद्ध ध्यानके चार भेदः

१ द्रव्यके गुण पर्यायोंका अलग २ विचार करना. २ एक, द्रव्यकाही विचार करना. ३ सूक्ष्म क्रिया रहित होना. परिणामोंको न डिगने देना. [ चलाय मान न होने देना ] ४ जि-म क्रियाका नाश क्रिया है—उसमें फिर वापिस प्रवृत्ति न होने देना.

## शुद्ध ध्यानके चार लक्षणः

१ तिल आर तैलकी तरह कर्म और आत्मा को जुटे जाने २ बाह्य और अभ्यन्तर संयोगोंसे निवृत्त होवे ३ अनु-कूल और प्रतिकूल दोनों तरहके परिपहोंको समता भावमें महन करे. ४ मनोज और अमनोज पदार्थोंपर राग द्वेष न लावे

## शुद्ध ध्यानके चार अवलम्बन.

१ क्षमा, २ निर्लोभ, ३ सरलस्वभाव, ४ निरभिमान, इन चारोंको धारण करनेसे सहजही शुद्धध्यान रहता है.

## शुद्ध ध्यानकी चार भावना.

१ “ आवायाणुपेहा ” ऐसा विचारे कि-राग और द्वेषही कर्म बन्धके कारण है, इसलिए यह छोडने योग्य है. २ “ अशुभाणुपेहा ” ऐसा विचारें कि-संसारमें जो जो पौंड-लिक वस्तु है, वे सब अशुभ ( अञ्जी नहीं है. ) हैं. ३ “ अनन्तवत्तियाणुपेहा ” ऐसा चिन्तन करें कि इस जी-वनमें संसारमें अनन्त पुद्गल पगवर्तन किये हैं ४ “ विपरिणा-माणुपेहा ” ऐसा विचार करें कि पुद्गलका स्वभाव पलटताही रहता है. पौंडलिक सब वस्तु अस्थिर है.

## कायोत्सर्ग के २५ भेद

मृत्यु भेद दा है - १ द्रव्य कायोत्सर्ग [ २ ] भाष का योत्सर्ग

द्रव्य कायात्मग के चार भेद - १ " शरीर कायात्सर्ग " [ शरीरका ममत्व छोड़नेको कहते हैं ] २ गण कायात्मग ( गण्ड सम्प्रदायका ममत्व त्यागन करनेका कहते हैं ) ३ " उबही कायात्मग " [ वस्त्र पात्र वगैरह भद्रापगण उपाधि छोड़नेका कहते हैं ] " ममपाश कायात्मग ( आहार पानो, त्यागन का कहते हैं )

भाष कायात्मग के ३ भेद - १ कषाय कायात्मग २ ममार कायात्मग ३ कम कायात्मग

कषाय कायात्मग के चार भेद - १ काय २ मान, ३ माया ४ साम, इन्हे छोड़नेका कहते हैं

ममार कायात्मग के चार भेद - १ नरक, २ नियम ३ दण्ड, ४ मनुष्य इन चारों गतिमें जानकर कम कषयनोंके त्याग करनेका कहते हैं

कम कायात्मगके छोट भेद - क्षान्ताश्मिपि आदि आर्यों कम कषयनोंके करगोमें आम्भारा कषानेका नाम कम कायात्मग है यह अनन्तग गणक १२ मणोर विन्दार हुआ

### ८ चघतत्व

संपाद्य दिय करना कमकर आम्भार गाव रूप आर्ष कर्नाही गार मन शत्रानर नाम ४५ है

## बंधके चार भेद है.

१ प्रकृति बंध, २ स्थिति बंध, ३ अनुभाग बंध, ४ प्रदेश बंध,  
१ कर्मका जो स्वभाव या परिणाम है. उसे प्रकृतिबंध क-  
हते हैं. २ कर्मकी जो स्थिति है. उसे स्थितिबंध कहते हैं.

३ जीवके परिणामोंका तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, मंद, मंद-  
तर, मंदतम, आदि आदि भावोंकी अपेक्षासे जो हल्का  
या भारी कर्म बंध होता है, उसे अनुभाग बंध कहते हैं.

४ कर्म पुद्गलोंका जो समूह [ दल ] है, उसे प्रदेश बंध  
कहते हैं.

अब इन्हींको [ चार प्रकारके बंधोंको ] मोदक के दृष्टांतसे  
समझाते हैं.

जैसे किसी सोंठ आदि डालकर बनाये हुए मोदक- ( लड्डू )  
का स्वभाव, वात हरण करनेका होता है, जीरा आदि डाले  
हुए मोदकका स्वभाव पित्त हरण करनेका होता है, इसी तरह  
आठों कर्मोंका स्वभाव अलग अलग होता है. वास्तविकमें देखा  
जायतो कर्म शब्दसे एकका ही बोध होता है, परंतु उसमें स्वभावकी

१—सचित ( शिथिल ढीला )

२ निकाचित ( अति दृढ, खूब मजबूत ).

तपादिके योगसे, या शुभ भावानाके बलसे क्षय होनेवाला, भोगे  
भेनाही छूटने वाला “ सचित ” कर्म कहलाता है.

२—जो अतिगाढ दृढ होता है. याने किसी उपायसे उसका  
क्षय नहीं होसकता, जो भोगनाही पडता है. वह ‘ निकाचित ’  
कर्म कहलाता है.

मिश्रतासं भाठ मट हुए हैं, जैसे १ ज्ञानावरणीय कर्म का स्वभाव  
 ज्ञानाकी ज्ञान शक्तिको ढकाना है जैसे २ यह कम विशय  
 रूपस प्रगा- हाता जाता है जैसेही जैसे यह ज्ञान शक्तिका  
 विशय रूपस भाच्छाठित करता जाता है जैसे जैसे इस कर्ममें  
 शिथिलता आती जाती है जैसेही जैसे बुद्धिका विकास हाता  
 जाता है इस कमक पूर्णतया नष्ट होजानपर कवल ज्ञान, जि-  
 मस, साकल्लाकक ममस्त पदार्थोंका जानकारी हाती है येमा  
 ज्ञान हो जाता है

२ दशनावरणीय कम -दशन शक्तिको ढकाता है ज्ञान  
 और दशनमें विशय अन्तर नहीं है सामान्य आकारक ज्ञानका  
 नाम दशन, रसस्वागया है जैसे हमने किसीका दूरस दखा; हम  
 उमका पहिचान नहीं सक; कवल इतनाही ज्ञान सके कि यह  
 मनुष्य है, इसका नाम है-दशन उसा मनुष्यका विशय रूपस  
 जान सना है ज्ञान

३ वेदनीय कमका काय मुख दु खका अनुभव कराना है  
 या मुखका अनुभव कराता है जम शाता वेदनीय कहते है  
 और जा दु खका अनुभव कराता है उमका आशाता वेदनीय  
 कहत है

४ माहनीय कम --माह पैश करता है स्त्रीपर माह पुत्रपर  
 माह मिश्रपर मोह और अन्य पदार्थोंपर माह डाना मोहनाय  
 कमका परिणाम है जा लागे माहम अघ हा जात है, उठे  
 कसव्याकत-पा मान नहीं हाता अघ पिया हुआ मनुष्य  
 जम वस्तुमिथ्यातेक नहीं दख सफता है, येमही जा मनष्य  
 माहकी गट आम्बामें दोता है यहभी तपका तप रणिम

नहीं समझ सकता है; और विपरीत स्थितिमें गौते खाया करता है मोहका लालोक हजारों उदाहरण हम रात दिन देखते हैं आठों कर्मोंसे यह कर्म आत्म स्वरूपकी खराबी करनेमें नेताका कार्य करता है. इस कर्मके दो भेद हैं:—तत्त्व दृष्टिको रोकनेवाला ' दर्शन मोहनीय ' और चारित्रको रोकनेवाला ' चारित्र मोहनीय .

५ आयुष्य कर्म के चार भेद हैं:—देवायु. मनुष्यायु, तिर्यचायु, और नरकायु. यह कर्म बैडीका काम करता है. जबतक पैरमें बैडी होती है. तबतक मनुष्य स्वतंत्रतासे भाग दौड़ नहीं करसकता है, वैसेही जबतक आयुष्यकर्म होता है तबतक जीव, देवगति, मनुष्यगति, तिर्यच गति, या नरकगतिसे—जिसमें वह होता है, निकल नहीं सकता है.

६ नामकर्मके अनेक भेद प्रभेद है:—अच्छा या बुरा शरीरका संगठन, सुरूप या कुरूपकी प्राप्ति, यश या अपयशका मिलना, सौभाग्य या दुर्भाग्य और सुस्वरया दुस्वरका होना आदि आदि कई बातोंका आधार इसी नाम कर्मपर है, जैसे चित्रकार भले या बुरे चित्र बनाता है, वैसेही यह कर्मभी जीवको विचित्र स्थितियोंमें रखता है

७ गौतकर्मके दो भेद है:—उच्च और नीच. ऊंचे कुलमें या नीचे कुलमें उत्पन्न होना इसी कर्मका प्रभाव है, ज्ञाति बन्धनकी परवाह नहीं करनेवाले देशोंमेंभी ऊंच नीचका व्यवहार होता है. इसका कारण यही कर्म है.

८ अन्तराय कर्म—विघ्न डालनका कार्य करता है धनी



और घर्मका जाननेवाला होकरभी कोई दान नहीं कर सकता इसका कारण यह कम है वैराग्यवृत्ति या त्याग वृत्तिके न होनेपरभी कोई घनका भोग नहीं करसकता है, इसका कारण यह कर्म है किसीको बुद्धिपूर्वक अनेक प्रयत्न करनेपरभी लाभ नहीं होता, उल्टी हानि उठानी पड़ती है इसका कारण यह कम है शरीरके पुष्ट होनेपरभी उद्यम करनेमें प्रवृत्ति नहीं होती, इसका कारणभी यही अन्तराय कर्म है

### [ आठों कर्मोंका स्वभाव ]

- १ 'ज्ञानावरणीय' कर्मका स्वभाव, ज्ञानगुणको मिटाना है
- २ 'दर्शनावरणीय' का स्वभाव दर्शन गुणका मिटाना है
- ३ घेदनीयका स्वभाव दुःख सुखका अनुभव कराना है
- ४ मोहनीयका स्वभाव—मोह (प्रीति, ) राग पैदा करना है
- ५ आयुष्य कर्मका स्वभाव—चारों गतिके शरीरमें रोक रखना है
- ६ नामकमेका स्वभाव—अच्छ या बुरा कहलाना है
- ७ गौत्र कर्मका स्वभाव—ऊँच या नीच कुलमें पैदा करना है
- ८ 'अन्तराय' का स्वभाव प्रत्येक काममें विघ्न उपस्थित करना है

### २ स्थितिवध

ऊपर कहे हुए कोई मोदककी स्थिति एक मासकी होती है, काईकी दोमासकी होती है, और किसीकी चार मासकी

होती है. इसी प्रकार कर्मोंके रहनेकी (कर्मोंकी) भी स्थिति होती है. ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, इन दो कर्मोंकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है और उत्कृष्ट ३० कोडाकोडी, सागरोपमकी है

वेदनीय कर्मकी स्थिति जघन्य धारह मुहूर्तकी है, और उत्कृष्टी ३० सागरोपमकी है

मोहनीय कर्मकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है और उत्कृष्टी ७० कोडाकोड सागरोपमकी है.

आयुष्य कर्मकी स्थिति—जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है. और उत्कृष्टी ३३ सागरोपमकी है.

नामकर्मकी स्थिति—जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है उत्कृष्टी बीस कोडाकोड सागरोपमकी है

गौत्र कर्मकी स्थिति—जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है और उत्कृष्टी बीस कोडाकोड सागरोपमकी है

अन्तराय कर्मकी स्थिति—जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है और उत्कृष्टी तीस कोडाकोड सागरोपमकी है.

## [ आठों कर्मोंकी प्रकृतियाँ, ]

पहिलेकी ५, दूसरेकी ९, तीसरेकी २; चौथेकी २८ पांचवेकी ४, छठेकी १०३, सातवेंकी २, आठवेकी ५.

---

१ किसी जगहपर दो समयकी लिखी है. २—३ किसी जगहपर आठ समयकी लिखी है. ४ इन्हींका ' भवाधाकाल ' भी और जुदा होता है.

१ आठों कर्म किस किसका काम करते हैं

१ ज्ञानावरणीय कर्म आंखकी परकी पट्टीका काम करता है जैसे आंखपरकी पट्टी कोई पदार्थको देखने नहीं देती, वैसेही ज्ञानावरणीय कर्म आत्माको ज्ञान नहीं होने देता

२ दर्शनावरणीय कर्म द्वारपाल [ द्वार रक्षक ] का काम करता है जैसे द्वारपाल किसीको अन्दर नहीं जाने देता, वैसेही दर्शनावरणीय कर्म सम्यग्दर्शनमें प्रवेश नहीं करने देता

३ वेदनीय कर्म-शहद लिपटी सरगार [ शहदसे मरोड़ ] का काम करता है, जैसे किसीकी शहदसे लिपटी हुई तरवारसे जबान काटनेपरमी दुःख मान्य नहीं होता शहदके मिठाससे उसको मजाही मालूम हाता है वैसेही आत्मा संसार क दुःखोंको सुख मान बठा है यह वेदनीय कर्मका प्रभाव है

४ माहनीय कर्म मद्य [ मदिरा-शराब ] का काम करता है जैसे शराब मनुष्यके असली स्वभावको बिगाड़ देता है-वैसे मोहनीय कर्मनेमी आमाके असली स्वभावको बिगाड़ रक्खा है

५ आयुष्यकर्म पैरकी पैठीका काम करता है जैसे पैरकी पैठी मनुष्यको इधर उधर भगने नहीं देती, वैसेही आयुष्य कर्मभी आत्माको चारों गतिक शरीरमेंसे निकलने नहीं देता

६ नाम कर्म-चित्रकारका काम करता है जैसे चित्रकार अनेक चित्र बनाता है-वैसेही नामकर्मभी आत्माको नानारूप-नाना नाम देता है

७ गौत्र कर्म- कुम्भकारका काम करता है। जैसे कुम्भकार एक ही मिट्टीके दो बरतन बनाता है-उसमें एक पूज्य और एक अपूज्य हो जाता है. वैसेही गौत्र कर्म आत्माको ऊँच और नीच कुलमें डालता है।

८ अन्तराय कर्म-भंडारीका काम करता है। जैसे-भंडारी राजाकी आज्ञा मिलनेपरभी जल्दी माल नहीं देता-वैसेही अन्तराय कर्म आत्माका 'जल्दी' फायदा नहीं होने देता. हर एक काममें आँडा आता है.

### ३ अनुभाग बंध.

जैसे वही (ऊपर कहाहुआ) मोदक कोई कम मीठा होता है- और कोई ज्यादा मीठा होता है, और कोई कम कडवा होता है. और कोई विशेष कडवा होता है इसी तरह एकही कर्म बांधतेवक्त परिणामोंकी, (भावोंकी अपेक्षासे आगे (कम और ज्यादाहपनके हिसाबसे ) कोई कर्म शुभ फल देनेवाला होता है तो कोई ज्यादाह अशुभ फल देनेवाला होता है। कोई कम अशुभ फल देनेवाला होता है तो कोई ज्यादाह शुभ फल देनेवाला होता है. जीव जिस भावोंमें-जैसा कर्म बांधता है. विपाक कालमें वह वैसाही फल देता है. ( जितनी शक्ति डालोगे उतना मीठा होगा. इस दृष्टान्तसे )-यह अनुभाग बंध कहाँता है

### ४ प्रदेश बंध.

जैसे उपर्युक्त मोदकमेंसे किसी मोदकमें द्रव्यका परिमाण

१ एक पानी पीनेका और एक पाखाने जानेका.

बाड़ा होता है और किसीमें ज्यादा होता है, उसी तरह कई कर्म, तर्क में कर्म वर्गगत कुछल घाट हाते है—और कोरिमें अधिक होते है—[ यों कर्म बंधमें कम या ज्यादा प्रदेशों का होना ] उसे प्रदेश बंध कहत है ।

## १ मोक्ष तत्त्व

माध तत्त्व किसका कहना ! मय कर्मोंस छूट जाने—मुक्त हो जाने [ कृत्स्न कम धयो मोक्ष ] का माध कहत है

तया—जन्म और मरणस अलग हा जाने या परमात्मा पद पालनका नाम मोक्ष या मुक्ति है ।

मुक्त जीवोंके [ सिद्धोंके ] १५ भेद है

१ तीर्थ सिद्धा [ जो तीर्थकर भगवानको केवल ज्ञान हुए—पाई और चार तीर्थ स्थापित हुए बाद मोक्ष गय वे जीव जैसे—गणधरादिक ]

२ अतीर्थ सिद्धा—[ जो तीर्थकर भगवानको केवल ज्ञान जानके परिलेही मोक्षमें चले गय वे जीव जैसे—मरुदेवी आदि ]

३ तीर्थकर सिद्धा—[ जो तीर्थकर पद पाकर मोक्ष गय वे जीव ]

४ अतीर्थकर सिद्धा—[ जो तीर्थकर तो न हुए परन्तु केवल ज्ञान पाकर मोक्ष गय वे जीव ]

५ गृहस्थ लिंग सिद्धा—[ जो गृहस्थक बंधमें मोक्ष गय वे जीव ]

६ स्पार्शिंग सिद्धा [ साधुके वेपमें मोक्ष गये वे जीव ]

७ अन्यलिंग सिद्धा [ दूसरे साधुओंके वेपमें मोक्ष गए वे जीव, जैसे-बल्कल चिरी संन्यासी आदि ]

पुरुषलिंग सिद्धा-( जो पुरुष चिन्हके धारक मोक्ष गये, वे जीव. ]

९ स्त्री लिंग सिद्धा- [ जो स्त्री चिन्हके धारक मोक्ष गये, वे जीव, )

१० नपुंसक लिंग सिद्धा-( जो नपुंसक चिन्हके धारक मोक्ष गये वे जीव,—जैसे गांगेय आदि ]\*

११ प्रत्येक बुद्ध सिद्धा [ किसी पदार्थको देख वैरागी हुए और फिर चारित्र ले मोक्ष गये, वे जीव )

१२ स्वयं बुद्ध सिद्धा [विना किसीका उपदेश सुने, जाति स्मरणादि ज्ञानसे प्रतिबोध पा, चारित्रले, मोक्षगये वे जीव. )

१३ बुद्ध बोधि सिद्धा ( गुरुका उपदेश लगनेसे—चारित्र-लिया और मोक्ष गये, वे जीव )

१४ एक सिद्धा (जो एक समयमें एकही मोक्ष गया, वह जीव).

१५ अनेक सिद्धा ( जो एक समयमें, एक साथ बहुत जीव मोक्षमें गये, वे )

ये मुक्त जीवोंके १५ भेद हुए.

( यद्यपि-तीर्थ सिद्धा और अतीर्थ सिद्धा, इन दो भेदोंमें शेष १३ भेदोंका समावेश हो जाता है, तथापि विशेष प्रकारसे समझानेके लिये १५ भेद कहे हैं.

\* जो जन्म नपुंसक होता वह कभी मोक्ष नहीं जाता ।

## मोक्ष जानेके चार भेद

१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र्य ४ तप  
 तथा— १ दान, २ शील, ३ तप, ४ माव  
 इनको स्वीकार कर जीव मोक्ष जाता है

### ( मोक्षके ९ द्वार )

१ सत्यद प्ररूपना द्वार २ द्रव्यद्वार, ३ क्षेत्रद्वार ४ रूप  
 शना द्वार ५ कालद्वार, ६ अंतरद्वार, ७ मागद्वार, ८ माव  
 द्वार, ९ अव्य वदुत्व द्वार

१ सत्यद प्ररूपनाद्वार — गतकालमें मोक्ष थी, वर्तमान  
 कालमें है और आगामी कालमें मोक्षवनी रहगी यह सत्यद  
 प्ररूपनाद्वार है

२ द्रव्यद्वार — समारके अमव्य जीवों, और धनस्यक्त  
 जाईकर शप २३ दण्डकोंक जीवोंसमी ' सिद्ध अनठ गुणा  
 अधिक है यह द्रव्यद्वार हुआ

३ क्षेत्रद्वार — सर्गर्षे सिद्ध विमानकी ध्वजा पताकास बारह  
 याजन ऊँचा जानबाद ४५ लाख योजन लम्बी और चौंठा  
 त्रिगुणी पारधि ( घरा ) वाली सिद्ध शिला [ जिस मूक्त  
 शिलामी कहत है ] है, उमर ऊपर ३३३ धनुष्य, ३२ अंगुल  
 प्रमाण उठना जगहमें सिद्धोंका निवास है यह क्षेत्रद्वार हुआ

४—स्पर्शनद्वार—सिद्ध क्षेत्रसे कुछ अधिक क्षेत्र सिद्ध-पग  
 मात्मा स्पश रह है यह स्पर्शनाद्वार हुआ

१ चार माग

५ कालद्वारः—एककी अपेक्षासे सिद्ध भगवान आदि अनन्त हैं, और अनेककी अपेक्षासे अनादि अनन्त है.

६ अन्तरद्वारः—एक दफह जो जीव मुक्त होगया, याने सिद्ध होगया वह फिर कभी संसारमें वापिस नहीं आता,—जन्ममरण नहीं करता. जहाँ, एक सिद्ध है, वहाँ अनन्त सिद्ध है, जहाँ अनन्त सिद्ध है, वहाँ एक सिद्ध है. सिद्ध-सिद्ध सब एक समान है, उनमें कोई तफावत [ फर्क ] नहीं है.

७ भागद्वारः—सब जीवोंसे सिद्ध अनन्तवें भाग और लोकके असंख्यातवें भाग है

८ भावद्वारः—सिद्धोंमें क्षायिक भाव, क्षायिक सम्यक्त्व, केवल ज्ञान. केवल दर्शन, ये सब पाते हैं. सिद्धत्व है सो परिणामिक भाव है.

९ अल्प बहुत्वद्वारः—सबसे थोड़े नपुंसक लिंग सिद्ध, उससे स्त्रीलिंग सिद्ध संख्यात गुणों है, एक समयमें सिद्ध हो तो कितने हो ? , एक समयमें १० नपुंसक, २० स्त्री, १०८ पुरुष, सिद्ध हो सकते हैं.

इनमेंसे सिद्ध होता हैः—

१ त्रसमेंसे सिद्ध होता है, २ वादरमेंसे सिद्ध होता है, ३ संज्ञी पंचेद्रीमेंसे सिद्ध होता है, ४ मनुष्य गतिमेंसे सिद्ध होता है. ५ वज्र ऋषभ नाराच संघयणवाला सिद्ध होता है, ६ शुक्ल ध्यानवाला सिद्ध होता है, ७ क्षायिक सम्यक्त्व वाला सिद्ध होता है. ८ यथाख्यात चारित्र वाला सिद्ध होता है, ९ पंडित वीर्यवाला सिद्ध होता है, १० केवल ज्ञानवाला सिद्ध होता है,



११ फवल दशन बाला सिद्ध होता है १२ मम्य जीव सिद्ध होता है, १३ परमशुक्लेशया बाला सिद्ध होता है, १४ चम शरीरी जीव सिद्ध होता है १५ अघन्य दा हाथकी अवगाहना वाला, उत्कृष्टी पांचसौ भनुष्यकी अवगाहनावाला सिद्ध होता है १६ कर्मभूमि होनेपर, अघन्य ९ बपेका आयुष्य वाला और उत्कृष्ट कगडपूषका आयुष्यवाला सिद्ध होता है

इति नवतत्त्व सपूर्णम्

## बालबोध जैन तत्त्व ज्ञानपाठ माला ।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र ।

१

सम्यग्दर्शन ।

सच्चे देव, सच्चे गुरु, सच्चे शास्त्र तथा दयामयी धर्म का सच्चे दिल से श्रद्धान ( यकीन ) करना और उनमें किसी प्रकार की भी शंका नहीं करना, इसका नाम सम्यग्दर्शन है ।

सम्यग्दर्शन, धर्मरूपी पेड़ की जड़ है अथवा धर्मरूपी घरकी नींव है । सबसे पहले इसे धारण करना चाहिये । इसके विना सब धर्म कर्म निष्फल हैं । उनसे कुछ अधिक लाभ नहीं होता ।

सम्यग्दर्शन की बड़ी महिमा है । जिस जीव को सम्यग्दर्शन हो गया वह मर कर उत्तम गतिमेंही जाता है । कभी उसकी दुर्गति नहीं होती ।

### सम्यग्ज्ञान ।

पदार्थ के स्वरूप को ठीक जसा का तसा जानना आर उसमें किसी प्रकार का संदेह या संशय नहीं करना, इसका नाम सम्यग्ज्ञान है ।

सम्यग्ज्ञान के होने से पहले जो ज्ञान होता है उसे कुज्ञान [अज्ञान] कहते हैं । वही कुज्ञान सम्यग्दर्शन होने पर सम्यग्ज्ञान कहलाता है । सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान का कारण है । विना सच्ची श्रद्धा के सम्यग्ज्ञान नहीं हो सकता ।

सम्बन्धान से ही आत्मज्ञान और केवलज्ञान होता है । इस लिए सम्बन्धान को शास्त्र स्थाप्याय, पढ़ने पढ़ाने सुनने सुनाने, तथा बार बार विचारने से प्राप्त करना चाहिये ।

ज्ञान की बड़ी महिमा है । ज्ञान होने से थोड़ी सी मिहनत में मन भ्रम के पाप कटते हैं वा अज्ञानी जीव क करारों जन्म की मिहनत में भी नहीं कटत ।

### सम्पक् चारित्र ।

हिंसा, मूट, चोरी, कुर्बान परिग्रह तथा कपाम धर्मस जिन क कर्ण हम संसार में भ्रम रहे हैं, इनसे विरक्त जाना इसका नाम सम्पक् चारित्र है ।

सम्बन्धान, और सम्बन्धान क प्राप्त कर होने पर संसार क, पर पदाया में राग रूप ध्यान क लिए सम्पक् चारित्र का धारण करना जरूरी है ।

सम्बन्धान, सम्बन्धान और सम्पक्चारित्र इन तीनों का मिलना मोक्ष का मार्ग है, अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति का उपाय है ।

२-

### सषा देव, शास्त्र, गुरु ।

सषा देव ।

सषा देव उम कहत है, आ धीतरागी, मन्त्र और हिता पदशी हा ।

धीतरागी उम कहत है, आ न किसी स राग करता है और न किगी स डेप ग्यता हा, सषको बरापर द्यता हा ।

सर्वज्ञ उसे कहते हैं, जो संसारके सब पदार्थों को सब दशाओंमें देखे और जाने । अर्थात् संसार में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जिसे सर्वज्ञ न जानता हो ।

जो कुछ पहले हो गया, जो अब हो रहा है और जो कुछ आगे होगा, वह सब सर्वज्ञ को मालूम है ।

हितोपदेशी उसे कहते हैं जो सब जिवों को कल्याण करनेवाला उपदेश दे ।

जिस देव में ये तीन गुण पाए जायें, जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो—वही सच्चा देव है । उसको अरहतं जिनेंद्र तीर्थकर, परमेष्ठी आदि अनेक नामोंसे पुकारते हैं ।

## सच्चा शास्त्र ।

सच्चा शास्त्र उसे कहते हैं, जो सच्चे देव का कहा हुआ हो, कोई भी जिसका खंडन न कर सके, जिसमें किसी तरह का विरोध न हो, सच्ची बातों का उपदेश भरा हो, जिसके पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने से जीवोंका कल्याण हो और जो खोटे मार्ग का नाश करनेवाला हो । इसको आगम सरस्वती जिनवाणी भी कहते हैं ।

## सच्चा गुरु.

सच्चा गुरु उसे कहते हैं—जो पांचो इन्द्रियोंके विषयसे किसीभी विषयकी लालसा न रखता हो । जो हिंसा, झूट चोरी, मैथुन और परिग्रह, इनका त्यागी हो । जो भिन्ना-भाङ्करी वृत्तिद्वारा अपना जीवन निर्वाह करता हो, जो धैर्यादि

गुणोंस विभूषित हा, जा आत्म चिंतनमें लौन हा, ऐम गुरु श्री ही साधु मुनि, यति, तपस्त्रा आदि कहत है ।

३

## जीव और अजीव ।

जाव—उन्हें कहते हैं जा जीव हों, जिनमें जान हा, जिनमें जानन देखने की ताकत हा । जैसे आदमी, घोडा, बछ, कीड़ी मकाडा वगैरह ।

मावायः—जगत में हम जितने स्त्री, पुरुष, पशु पंथी, कीड़े, मकोड़े, वगैरह को खाते पीते चबते फिरते देखते हैं उन सब में जीव हैं ।

अजीव—उन्हें कहते हैं जिन में जान न हो जैसे घसी मिट्टी, ईंट, पत्थर, लकड़ी, मज, कुर्सी, कलम, कागज, गीपी, रत्नी वगैरह ।

## जीव के भेद ।

जीव दो तरह क होत हैंः—एक मुक्त जीव और दूसरे सँ मारी जीव ।

१ मुक्त जीव उन्हें कहते हैं जा संसार सँ छूटे गये हैं अथात् जिनका माध हागया है और जिन्होंने मुदाक लिय मया सुख पालिया है और जो कभी संसार में सँतकर नहीं आवे ।

२ ममारी जीव वे हैं जा संसार में घूम रहे हैं और जन्म मरण क दुःख उठा रहे हैं । संमारी जीव दो तरह क हात हैं ।

१ प्रमर्षीय, २ स्वाबरजीव ।

त्रस जीव उन्हें कहते हैं जो अपनी इच्छा से चलते फिरते हैं, डरते हैं, भागते हैं, खाना ढूँढते हो अर्थात् दो इंद्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय और पांच इंद्रिय जीव, जैसे लट, चिंवटी, मक्खी, बर् [ ततइया ] घोडा, बैल, आदमी वगैरह ।

स्थावर जीव अर्थात् एक इंद्रिय जीव उन्हें कहते हैं जो पैदा होते हैं, बढ़ते हैं मरते हो पर अपने आप चल फिर नहीं सकते हैं । जैसे पृथिवी ( जमीन ), जल [ पानी ], तेज ( आग ), वायु ( हवा ) और वनस्पति ( पेड वगैरह ) ।

### त्रस जीवों के भेद.

त्रस जीव चार प्रकार के होते हैं,—

१ दो इन्द्रिय जीव, २ तीन इन्द्रिय जीव, ३ चार इन्द्रिय जीव ४ पंचेन्द्रिय जीव ।

नोट:—दो इन्द्रिय जीव, तीन इन्द्रिय जीव और चार इन्द्रिय जीव, इन जीवों को विकलत्रय कहते हैं ।

पंचेन्द्रिय जीवों में से तिर्यच पंचेन्द्रिय जीव पांच तरह के होते हैं:—

१ जलचर जीव, २ थलचर जीव, ३ नभचर जीव ४ उरपर जीव, ५ भुजपर जीव ।

१ जलचर जीव, उन्हें कहते हैं जो जल में ही रहें ।

जैसे—मच्छी, मगरमछ वगैरह ।

२ । थलचर जीव उन्हे कहते हैं जो जमीन पर चलते फिरते हैं । जैसे गाय, बैस कुत्ता, बिल्ली वगैरह ।

३ । नभचर जीव उन्हें कहते हैं जो आकाश में उडा

करते हैं । जैसे कौवा, चील, कबूतर वगैरह ।

४ । ऊपर जीव, उन्हे कहते हैं जो पेटके सहारे से चलते हैं । जैसे-साँप, वगैरह ।

५ । मुँहपर जीव, उन्हे कहते हैं । जो दोनों हाथोंके सहारेसे चलते हैं । जैसे-मूस वगैरह ।

पंचेन्द्रिय जीव सैनी, असैनी के भेद से दो तरह के होते हैं । १ सैनी ( सँधी ) २ असैनी [ असंधी ] ।

सैनी जीव उन्हे कहते हैं जिनके मन हा अर्थात् जो शिखा और उपदेश ग्रहण कर सकें । जैसे ऊट हाथी बकरी, मोर, बन्दर वगैरह पंचेन्द्रिय त्रिपच्च, मनुष्य, नारकी ।

असैनी जीव- उन्हे कहते हैं जिनके मन न हो अर्थात् जो शिखा और उपदेश ग्रहण न कर सकें । ऐसे जीव प्रायः माता पिता क रज और वीर्य के मिलन से पैदा नहीं होते किंतु आपस में एक दूसरे के मिलन से पैदा हो जाते हैं । जल में रहने वाले साँप बहुत करके असैनी होते हैं । कादवाला भी असैनी होता है ।

### स्थायर जीवों के भेद ।

स्थायर जीव, जिनके कबल एक स्पर्शन इन्द्रिय ही हाती है, पाँच प्रकार के होते हैं ।

१ । एकेन्द्रिय, दोन्द्रिय, तन्द्रिय, भावचतुर्न्द्रिय जीवोंके नियम से असैनी हो जाते हैं ।

२ । व पाँच प्रकार के स्थायर जीव, भाव प्रम जीव इनका ४ रूप पड़ते हैं ।

१ । पृथ्वीकायिकजीव— अर्थात् पृथ्वी ही जिनका शरीर हो । जैसे-मिट्टी, पत्थर, अभ्रक ( भोडल ) , रत्न सोना, चांदी वगैरह खानि से निकलने वाली धातुएँ, परन्तु पैदा होने की जगह अर्थात् खानि से अलग होने पर प्रायः उन में जीव नहीं रहते ।

१ । जलकायिकजीव—अर्थात् जल ही जिनका शरीर हो । जैसे जल ओला बर्फ, ओस वगैरह ।

३ अग्निकायिकजीव—अर्थात् अग्नि ही जिन का शरीर हो । जैसे—दीपक, लौ, बिजली, आग, वगैरह ।

४ । वायुकायिकजीव—अर्थात् वायु ही जिनका शरीर हो । जैसे हवा ।

५ । वनस्पतिकायिकजीव—अर्थात् वनस्पतिही जिनका शरीर हो । जैसे वृक्ष, बेल, फल, फूल, जड़ी, बूटी, वगैरह ।

ये पांचों काय के जीव वादर [ स्थूल ] और सूक्ष्म के भेद से दो प्रकार के होते हैं ।

## ४

### पांच पाप ।

पाप—पांच होते हैं । १ हिंसा, २ भ्रूट, ३ चोरी, ४ कुशील, ५ परिग्रह ।

१ । हिंसा—प्रमाद से अपने वा दूसरे के प्राणों के घात करने वा दिल दुखाने को हिंसा कहते हैं । इस पाप के करने वाले को निर्दयी, हिंसक, हत्यारा कहते हैं इसलिये:—



श्रीव्रत की कृपया मत खार ।

मह सब घमों में है मार ॥

२ । मूठ जिस बात या जिस चीज को जैसा देखा हो या जैसा कहा हो या जैसा सुना हो, उसको वैसा न कहना सो मूठ है । इस पाप क करने वाले मूठे, दगाबाज कहलाते हैं । इसलिये—

मूठ वचन मुख पर मत लाव ।

साँच वचन पर राखहु माव ॥

३ । चारी-बिना दिय किसी की गिरी या पड़ी या रखी या भूला हुई वस्तु का ग्रहण करना अथवा उठा कर किसी दूसरे का दे वना, सा चारी है । इस पाप क करने वाले चार तस्कर कहलाते हैं और उनका ममो घुरा कहते हैं । इसलिये—

मालिक की आज्ञा बिन क्रोध ।

चाव गई सा चारो डाव ॥

छाते आज्ञा बिन मत गहो ।

चारी स नित डरत रहो ॥

४ । दुशील-पराई स्त्री क साथ रमने को दुशील कहते हैं । इस पाप क करने वाले स्वभिचारी, चार, सुप्या, बदमाश कहते हैं और वे एक में घुरी दृष्टि से देखे जाते हैं । इसलिये—

परदागक नेह ज लगत ।

इस स सुम दूगहि मांगो ॥

५ । पगिरा उधान, प्रधान घन, घाम, गौ, पैल, शर्मा

घोड़े, कपड़े, वरतन, जेवर वगैरह चीजों, से मोह रखना और इन्हीं संसारी चीजों का इकठ्ठे करने में लालसा रखना सो परिग्रह है। इस पाप के करने वालों को लोभी, बहुधंधी और कंजूष कहते है। इसलिये—

धन गृहादि में मूर्छा हरो।

इसका अति संग्रह मत करो ॥

५

## ( कषाय )

कषाय—उसे कहते है जो आत्मा को कषे अर्थात् दुःख दें।  
ऐसी कषायें चार है—१ क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ।

१ क्रोध—गुस्सेको कहते है।

२ मान—धमंड को कहते है।

३ माया—छल कपट करनेको कहते हैं अर्थात् मन में और वचन में और, करे कुछ और।

४ लोभ—लालच और तृष्णा को कहते हैं।

ये चारोंही कषायें पाप बंधकी मुख्य कारण हैं। और जीव को बहुत दुःख देनेवाली हैं।

ताते क्रोध कभी मत करें। मान कषाय न मनमें धरो।

माया सत्त वच तन तें हरो। लालच मांहि कवहुं मत परो।

## [ ६ ]

जीवकी अबस्था विशेष गति गति कहते है। गति चार प्रकार की है:—१ नरक गति, २ तिर्यच गति, ३ मनुष्य गति, ४ देव गति ।

१ नरकगति—इस पृथ्वी के नाथे मात नरक हैं । उन नरकों में बड़ा मारी दुःख है । उनमें रहने वाले जीवों को रात दिन दुःखहा दुःख सहना पड़ता है । एक समय मात्र भी सुख नहीं मिलता । इन नरकों में अत्र पशु वा मनुष्य मर कर जन्म लता है, तब उसको नरक गति जाना कहते हैं । इस गति के जीव पंचन्द्रियही होते हैं

२ तिर्यचगति—स्थावर जीव, पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े, मगर, बच्छ धंगरह जानवरों को तिर्यच कहते हैं । जब कोई जीव मरकर इनमें जन्म लेवे तो उसको तिर्यच गति में जन्म लेना कहते हैं । इस गति में पाँचोंही इन्द्रियोंके जीव होते है ।

३ मनुष्यगति—कोई भी जीव मर कर मनुष्यका शरीर धारण कर तो उसको मनुष्यगति में जन्म लेना कहते हैं । मनुष्यगति के जीव पंचेन्द्रिय ही हात हैं

४ देवगति—ऊपर कहे हुए तीन प्रकार के सिवाय एक चौथे प्रकारके जीव होते हैं । अिनका अनक प्रकार के उत्तम २ भोग उपभोगकी चीजें प्राप्त होती है और जो रात दिन सुखमें मग रहत है उनको देव कहते हैं । उन देवोंमें, मरकर जो कोई जीव आत्म स्व ता टराका देवगति का जाना कहते है इस गतिक जीव पंचेन्द्रियही हात है ।

( इन्द्रिया, )

इन्द्रिय उसे कहते हैं—जिसके द्वारा जीव पहचाना जाय। वे इंद्रियां पांच होती हैं। १ स्पर्शन इंद्रिय अर्थात् त्वचा [चमड़ा] २ रसना इंद्रिय अर्थात् जीभ, ३ घ्राण इंद्रिय अर्थात् नाक. ४ चक्षु इंद्रिय अर्थात् आंख. ५ कर्ण इंद्रिय अर्थात् कान.

स्पर्शन इंद्रिय उसे कहते हैं—जिससे छू जानेपर हलके भारी रूखे चिकने, कडे, नरम ठंडे गर्मका ज्ञान हो। जैसे आग छूनेसे गर्म, और पानी छूनेसे ठंडा मालूम होता है वगैरह।

रसना इंद्रिय उसे कहते—जिससे खट्टे, मीठे, कडवे, चरपरे और कषायले रस का [ स्वादका ) ज्ञान हो। जैसे—पेडा चखनेसे मीठा, नीमके पत्ते कडवे, मिरच चिरपरी और नींबू खट्टा, मालूम होता है।

घ्राणेन्द्रिय उसे कहते हैं—जिस के द्वारा सुगंध ( खुशबू ) और दुर्गंध [ बदबू ] का ज्ञान हो। जैसे गुलाब के बड़े के फूलों से सुगंध और मिट्टीके तेल से दुर्गंध आती है।

चक्षु इंद्रिय उसे कहते हैं जिससे काले, पीले, नीले, लाल, और सफेद रंग का तथा डम रंगों के मेलसे बने हुए तरह २के रंगोंका ज्ञान हो। जैसे दूध, दही, चांदी सफेद है कोयला काला और खून लाल है। सोना पीला और मोर का पंखा नीला है।

कर्ण इंद्रिय उसे कहते हैं—जिस से आदमी जानवर तथा बाजे वगैरह की आवाज जानी जाय।

( पांच तरह के जीव )

एक इन्द्रिय जीव—उनको कहते हैं जिनके सिर्फ एक ही स्पर्शन इन्द्रिय है। जैसे मिट्टी, पानी, आग, हवा, फूल फूल पेड़।

दो इन्द्रिय जीव—उनका कहते हैं जिनके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियाँ हैं। जैसे लकड़, केंचुआ, अंक, शसक वगैरह।

तीन इन्द्रिय जीव—उनको कहते हैं जिनके स्पर्शन, रसना और घ्राण, ये तीन इन्द्रियाँ हैं। जैसे खिबटी, खिबटा, खटमल, मू वगैरह।

चार इन्द्रिय जीव—उन्हें कहते हैं जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण और श्रुति ये चार इन्द्रिय हैं। जैसे मौरा, बर ( ततस्या ) मकखी, मच्छर, टिटूही वगैरह।

पाँच इन्द्रिय जीव—उन्हें कहते हैं जिनके पाँचों ही इन्द्रियाँ हैं, जैसे—देव, नारकी, मर्द, औरत, बँठ, पाटा वगैरह।

### अजीव के भेद।

अजीव पाँच प्रकार के होते हैं —

१ पुद्गल, २ घन, ३ अपघ्न ४ आकाश, ५ अक्षर ।

पुद्गल उस कहते हैं, जिसमें स्पर्श, रस, गंध और बल पाये जायें ।

पुद्गल के कई भेद हैं । स्पृश ( माटा ) पुद्गल तो आँखों से देखने में आता है; परन्तु सूक्ष्म ( पारीक ) पुद्गल नहीं

१ स्पर्श, रस, गंध, बल का पाठ आगे दिया है ।

दिखाई देता । पुद्गल के सबसे छोटे टुकड़े को परमाणु कहते हैं । दो या दो से ज्यादा मिले हुए पुद्गल परमाणुओं को संघ कहते हैं । धूप, छाया, अँधेरा, चाँदना सब पुद्गल की पर्याएँ, ( हालतें ) हैं ।

२ धर्म उभे कहते हैं, जो जीव और पुद्गलों को चलने में सहकारी हो अर्थात् मदद देता हो । जैसे जल मछली को चलने में सहकारी है । यह पदार्थ तमाम लोक में पाया जाता है और अपनी आँखों से देखने में नहीं आता ।

३ अधर्म उस कहते हैं, जो जीव और पुद्गलों के ठहरने में सहकारी हो । जैसे पेड़ की छाया थके हुए मुसाफिर को ठहरने में सहकारी है । यह पदार्थ भी तमाम लोक में पाया जाता है और अपनी आँखों से देखने में नहीं आता ।

धर्म अधर्म द्रव्य जीव पुद्गल को प्रेरणा करके चलाते या ठहराते नहीं हैं, परन्तु जब वे चलते हैं अथवा ठहरते हैं उस समय उनको मदद करते हैं । हाँ यह जरूर है कि यदि धर्म द्रव्य न हो तो कोई पदार्थ नहीं चल सकता और यदि अधर्म द्रव्य न हो तो कोई पदार्थ नहीं ठहर सकता । यहाँ धर्म अधर्म से साधारण धर्म अधर्म न समझना चाहिए जिनके अर्थ पुराय पाप के हैं ।

नोट—पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन पाच प्रकार के अजीवों में एक जीव द्रव्य और मिलान से छह द्रव्य हो जाते हैं इन छहों द्रव्यों में से काल द्रव्य को छोड़ कर शेष के पाच द्रव्य पचास्तिकाय कहलाते हैं । काल द्रव्य कायवान् नहीं है । उसका एक एक अणु अलग अलग है ।

४ आकाश उसे कहते हैं, जो अन्य चीजों को अवकाश (स्थान) दे। अर्थात् यह वह पदार्थ है जिसमें सब चीजें रहती हैं।

इसके दो मद हैं - १ लोकाकाश, अलोकाकाश। लाकाकाश में जीव अजीव, पुत्रल, घर्म, अघर्म, वगैरह सब चीजें पाई जाती हैं, परन्तु अलोकाकाश में केवल आकाश ही आकाश है और कुछ नहीं।

५ काल उसे कहते हैं, जो चीजों की हालतों के बदलने में मदद देता है। व्यवहार में पल, घड़ी, प्रहर दिन, सप्ताह [ हफ्ता ], पक्ष [ पंद्रहवाँ ] मास, वर्ष वगैरह का काल कहते हैं।

१०

( रूप, रस, गन्ध, स्पर्श । )

रूप, रस, गन्ध और स्पर्श ये पुत्रल के गुण हैं। ये सदा पुत्रल में ही पाये जाते हैं। पुत्रल को छोड़ कर और किसी द्रव्य में नहीं रहते। ये चारों ही सदा साथ साथ रहते हैं। जैसे फल द्रव्य आम में पीला रूप है मीठा रस है, अच्छी गन्ध है, और कामल स्पष्ट है।

रूप उसे कहते हैं, जो नय इन्द्रिय से जाना जाय। यह पाँच प्रकार का होता है। कृष्ण [ काला ] नील [ नीला ] श्वेत [ सफ़ेद ] पीत [ पीला ] और इत [ सफ़ेद ]। जैसे शोथल में काला, नील में नीला, गरु में लाल गान में पीला या दूध में सफ़ेद रूप है।

रूप का दूसरा नाम रंग है । इन रंगों के मिलाने से और भी कई रंग हो जाते हैं । जैसे नीला और पीला रंग मिलाने से हरा रंग बन जाता है ।

रस उसे कहते हैं, जो रसना [ जिह्वा ] इन्द्रिय से जाना जाय । रस पाँच प्रकार का होता है । तिक्त ( तीखा अथवा चर्परा ) कटु [ कड़वा ], कषाय ( कसैला ), आम्ल [ खट्टा ] और मधुर ( मीठा ) । जैसे मिर्चमें तीखा, नीम में कड़वा, आँवले में कसैला, नीबू में खट्टा और गन्ने में मीठा रस होता है

गंध उसे कहते हैं, जो घ्राण [ नासिका ] इन्द्रिय से जाना जाय । गंध दो प्रकार की होती है, सुगंध ( खुशबू ) और दुर्गंध ( बदबू ) । जैसे गुलाब के फूल में सुगंध और मिट्टी के तेल में दुर्गंध होती है ।

स्पर्श उसे कहते हैं, जो स्पर्शन इन्द्रिय से या छूने से जाना जाय । स्पर्श आठ प्रकार का होता है । स्निग्ध ( चिकना ) रूक्ष [ रूखा ], शीत ( ठंडा ), उष्ण ( गरम-), मृदु [ कोमल, नरम ], कर्कश ( कठोर, कडा ), गुरु ( भारी ) और लघु [ हलका ] । जैसे घी में स्निग्ध, बालू में रूक्ष, पानी में शीत, अग्नि में उष्ण, मक्खन में मृदु, पत्थर में कर्कश, लोहे में गुरु, और रूई में लघु स्पर्श रहता है ।

रूप ५, रस ५, गंध २, और स्पर्श ८ इस प्रकार सब मिल कर 'पुद्गल' में २० गुण होते हैं ।



## आठ कर्म ।

कर्म उन्हें कहते हैं वा आत्मा का असली स्वभाव प्रगट न हान दें । जैसे बहुत सी धूल मिट्टी उठ कर धरम का राशिनी को ढक देती है, उसी प्रकार बहुत से पुद्गल परमेशु (छाट छाट टुकड़े) वा इस आकाश में सँध जगड मर कुए है, आत्मा में क्रोध आदि कषाय उत्पन्न होने से आत्मा के प्रदर्शक साध मिलकर आत्मा का स्वभाव ढक देते हैं । कषाय क सम्बन्ध से उनमें सुख दुःख वगैरह देने की शक्ति भी हो जाती है, इस लिये उनका कर्म कहते हैं ।

कुम आठ हैं—ज्ञानावरणी, दशानावरणी, वेदनीय, मोहनीय आयु नाम, गात्र और अन्तराय ।।

१. ज्ञानावरणी कर्म उल्ल कहते हैं, वा आत्मा क ज्ञानागुण का प्रकट न हान दे । जैसे एक प्रतिमा पर परदा डाल दिया गया । कष वह परदा प्रतिमा को ढक हुए है । प्रगट नहीं होने देता । वसा प्रकार ज्ञानावरणीकर्म, ज्ञान का ढक लेता है, प्रगट नहीं हान देता । जैसे मोहन अपना पाठ खूब चाद करता है, परन्तु उसे चाद नहीं होता । इससे मोहन क ज्ञानावरणीकर्म का उदय समझना चाहिये ।

किसी क पदमें विम्र डालना, किसी की पुस्तक फाड देना, छुपा देना, किसी की न बताना 'अपने गुरु अथवा और किसी विद्वान की निन्दा करना, अपने ज्ञान का गर्व करना, दिया पढ़ने में आलस्य करना, झूठा उपदेश देना व-

गैरह कामों से ज्ञानावरणीकर्म बँधता है । अर्थात् ज्ञान का प्रकाश नहीं होता, किंतु इनसे विपरीत करने से ज्ञान का प्रकाश होता है ।

दर्शनावरणी कर्म उसे कहते हैं, जो आत्मा के दर्शन गुण को प्रगट न होने दे । जैसे एक राजा का पहरेदार पहरे पर बैठा हुआ है । वह किसी को भी अंदर जाकर राजा के दर्शन नहीं करने देता, सब को बाहर से ही रोक देता है । इसी प्रकार दर्शनावरणी कर्म किसी को दर्शन नहीं होने देता । जैसे मोहन मुनिराजके दर्शन करनेको गया था, परन्तु दर्शन न हुआ । इससे समझना चाहिये कि मोहन के दर्शनावरणी कर्म का उदय है ।

किसी के देखने में विघ्न करना, स्वयं देखे हुये पदार्थों को प्रगट न करना, अपने पास की वस्तु दूसरों को न दिखाना अपनी दृष्टि का गर्व करना, दिनमें सोना, दूसरे की आँखें फोड़ना, मुनियों को देखकर ग्लानि करना, धर्मात्मा को दोष लगाना, ऐसे कामों से दर्शनावरणी कर्म बँधता है और इनके विपरीत करनेसे आत्मा का दर्शन गुण प्रगट होता है ।

वेदनीय कर्म उसे कहते हैं, जो आत्मा को सुख दुःख दे । इस कर्म के उदय से संसारी जीवों को ऐसी चीजों का मिलाना होता है, जिनके कारण वे सुख मालूम करते हैं । जैसे शहद लिपटी तलवार की धार चाटनेसे सुख दुःख दोनों होते हैं । अर्थात् शहद सीठा लगता है, परंतु तलवार की धार से जीभ कट जाती है, इससे दुःख होता है । इसी प्रकार

वेदनीयकर्म सुख दुःख दोनों देता है। जैसे प्रकाशचन्द्रने लड़खलाया, अच्छा लगा और पैर में कौटा गड़ गया दुःख हुआ। दोनों ही हालतों में वेदनीयकर्मका उदय समझना चाहिये। जिससे सुख होता है, उसे शातावेदनीय कहते हैं और जिससे दुःख होता है, उसे अशातावेदनीय कहते हैं।

दुःख करना शाक करना, पश्चात्ताप करना, रोना, मारना पीटना ऐसे कामोंसे अशाता [ दुःख देनेवाले ] वेदनीयकर्म का बंध होता है।

सब जीवों पर दया करना, ब्रत पालना, छाम नहीं करना, धर्म धारण करना दान देना, ऐसे कामों से शाता [ सुख देनेवाले ] वेदनीय कर्म का बंध होता है।

= मोहनीय कर्म उसे कहते हैं, जिसके उदय से यह आत्मा अपने को भूल जाय और अपने से जुड़ी चीजों में छुमा जावे। जैसे शराब पीने वाला शराब पीकर अपने को भूल जाता है, उसे मल बुरे का कुछ ज्ञान नहीं रहता और न वह मार्ग बहि न श्री पुत्रादिको पहिचान सकता है, इसी प्रकार मोहनीय कर्म इस जीव को सुला देता है। मोहनीय कर्म के उदय से इस जीव को अपने मले बुरे का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता और न वह बुरे कर्म करने से डरता है। काम, क्रोध, मान, माया लोभ आदि सब मोहनीय कर्म के उदय से होते हैं। सोहनेके क्रोध में आकर मोहन का मार डाला, राम न लोभ

१ परीक्षा में अथवा और किसी काम में सफलता न होने पर अथवा किसी स हार जाने पर पछताना।

में आकर गोविंद के माल को लूट लिया, इससे समझना चाहिये कि सोहन और राम के मोहनीय कर्म का उदय है ।

सच्चे देव, शास्त्र, गुरु में दोष लगाने से, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, हिंसा बगैरह करने से मोहनीय कर्म बँधता है ।

आयु कर्म उसे कहते हैं, जो आत्मा को नारक, तिर्यच, मनुष्य और देव के शरीरों में से किसी एक में रखे । इस कर्म के कारण जीव इस संसार में नाना प्रकार की योनियों में भ्रमण करता काल व्यतीत करता है ।

जैसे एक मनुष्य का पैर काठ में ( खोडे में ) फँसा हुआ है । अब वह काठ उस मनुष्य को उस स्थान पर रोके हुए है । जब तक उसका पैर काठ में फँसा रहेगा, तब तक वह मनुष्य दूमरी जगह नहीं जा सकता । इसी प्रकार आयु कर्म इस जीव को मनुष्य आदि के शरीर में रोके हुए है । जब तक वह आयु कर्म रहेगा तब तक यह जीव उसी शरीर में रहेगा । हमारा जीव इस मनुष्य आयु कर्म का उदय है और खोडे का जीव तिर्यच शरीर में रुका हुआ है, उसके तिर्यच आयु कर्म का उदय है ।

बहुत हिंसा करनेसे, बहुत आरम्भ और परिग्रह रखने से नारक आयु बँधती है, अर्थात् ऐसा करने से यह जीव नरक में जाता है ।

कपट छल करने से तिर्यच होता है । थोड़ा आरम्भ और थोड़ा परिग्रह रखने से मनुष्य होता है ।

व्रत उपवास बगैरह करने से, शान्तिपूर्वक भूख, प्यास गर्मी सर्दी की बाधा सहनेसे देव होता है ।

नामकर्म उस कहते हैं—जो आत्माको अनक प्रकार परिष्ण मावे, अर्थात् जिसक उदय होने से तरह तरह के शरीर और उसके अंगोपांग बनें । जैसे चित्रकार ( चित्तरा ) अनेक प्रकार क चित्र बनाता है । कोई मनुष्यका, कोई हाथी का, कोई स्त्री का, कोई बैलका, किसी का हाथ लम्बा, किसी का छोटा, कोई कुबड़ा, कोई बौना, इसी प्रकार नाम कर्म इस जीव का कमी सुन्दर, कमी चपटी नाकवाला, कमी लम्बे दाँतवाला, कमी कुबड़ा, कमी बाना, कमी काला कमी गारा कमी सुरीली आवाजवाला, कमी मोटी आवाजवाला अनेक रूपसे परिष्णमाता है । हमारा शरीर और आँख नाक कान धँसैरह सब नाम कर्म क उदयसे बने हैं ।

धर्मक करना, आपसमें लड़ना, झूठे देवों का मानना, चुगला खाना, किसी की नकल करना, किसीका पुरा सौपना धँसैरह कामोंसे अशुभ नाम कर्म बँधता है ।

आपसमें मिलकर रहना, धमात्माका देखकर खुश होना न कमा किसी का पुरा सौपना, न धुरा करना मन बचन काय का सरल रखना, ऐसे कामोंसे शुभ नाम कर्म बँधता है ।

गोत्र कर्म उस कहते हैं—जो इस भाव को ऊँच अथवा नाच कुल में पैदा कर । जैसे कुम्हार छोट बड़ सब तरहक बतन बनाता है, उसी प्रकार गोत्र कर्म इस आत्मा को ऊँचा अथवा नाचा बना देता है । उच्च गोत्र क उदयसे अरुण चरि प्रभाले लोकान्य कुल में पैदा होता है और नीच गोत्र क उदयसे खोटे आधरमबाळ लोकनिच कुलमें पैदा होता है, सबों हिंसा झूठ धोरो धँसैरह पुरे कर्म करता है ।

दूसरे की निन्दा और अपनी प्रशंसा करने से, देव गुरु शास्त्र का अविनय करने से अपनी जाति, कुल, रूप, बल, विद्या का घमंड करने से नीच गोत्र बँधता है ।

दूसरों की प्रशंसा करने, स्वयं विनीत भाव से रहने और अहंकार नहीं करने से ऊँच गोत्र बँधता है ।

अन्तराय कर्म उसे कहते हैं—जिसके उदय से किसी कार्य में विघ्न आ जाय अथवा जो किसी कार्य में विघ्न डाले । जैसे किसी महाराजा ने किसी विद्यार्थी के लिये १०० रु० देने की आज्ञा दी, परंतु खजानची साहब ने कुछ गडबड़ करके अथवा कुछ बहाना बना करके वह रुपया नहीं दिया । अर्थात् विद्यार्थी क १०० रु० मिलने से खजानची साहब विघ्नरूप होगये । इसी प्रकार अन्तराय कर्म कार्यों में विघ्न किया करता है । मोहन रोटी खा रहा था, अकस्मात् बंदर आकर हाथ से रोटी छीन ले गया तो मोहनके अन्तराय कर्मका उदय समझना चाहिये ।

कोई को लाभ होता हो उसे न होने देना, बालकों को विद्या न पढ़ाना अपने आधीन नौकर चाकर को धर्म सेवन न करने देना, दान देते हुए को रोक देना, दूसरे की भोगने योग्य वस्तुओं को विगाड देना, ऐसे कामों से अंतराय कर्म बँधता है ।

११

पर्याप्ति.

सचित पुद्गलोंको यथा योग्य परिणमन करनेकी एक शक्ति विशेषको पर्याप्ति कहते हैं । ये छः प्रकारकी होती है । ( १ )

आहार, [ २ ] शरीर, ( ३ ) इन्द्रिय, [ ४ ] आसोच्छ्वास,  
[ ५ ] मापा, और [ ६ ] मन ]

१ आहारक वर्गका ग्रहण कर उसका रस बनानेकी शक्ति-  
का आहारपर्याप्ति कहते हैं ।

२ रसका खून, मांस, मेद मज्जा, अस्ति और धीर्य ऐस-  
सात घातु बना शरीर बनानेवाली शक्तिको शरीरपर्याप्ति  
कहते हैं ।

३ घातुसे स्पर्श, रसनादि द्रव्य-इन्द्रियों बनानेकी ओ शक्ति-  
विशेष उसे इन्द्रिय-पर्याप्ति कहते हैं ।

४ आसोच्छ्वास वाग्य पुद्गल-वर्गकाओंको ग्रहण कर उन्हें  
आसोच्छ्वासके रूपमें बदलनेकी शक्तिको आसोच्छ्वास-पर्याप्ति  
कहते हैं ।

५ मापायोग्य पुद्गल-वर्गकाओंको ग्रहण कर उन्हें मापाक  
रूपमें बदलनेकी शक्तिका मापा पर्याप्ति कहते हैं ।

६ मनवाग्य पुद्गल वर्गकाओंको ग्रहण कर उन्हें मनके रूप  
में परिणामन करनेकी शक्तिको मन पर्याप्ति कहते हैं ।

१२

## शरीर

देह' को शरीर कहते हैं

शरीर पाँच हाते हैं । ( १ ) आहारक, [ २ ] बैक्रियक,  
[ ३ ] आहारक ( ४ ) तैजस और [ ५ ] कार्माण ।

१ मनुष्यों और पशु पाँच आदि जीवजन्तुओंके शरीर  
आदीरूप शरीर कहलाता है ।

२ जो शरीर छोटा और बड़ा हो सकता है; बदल सकता है; उसे वैक्रियक शरीर कहते हैं। देवता और नारकियों के वैक्रियक शरीर ही होते हैं।

३ मुनियोंको शंका होती है, तब उनके शरीरसे एक पुतला सर्वज्ञोंसे प्रश्न पूछनेको जानिके लिए निकलता है; वह आहारक शरीर कहलाता है।

४ आहारको पचानेवाला तैजस शरीर होता है।

५ कर्मपैरमाणुओंका समुदाय—जिनका आत्माके साथ संबन्ध है—कार्माण शरीर कहलाता है।

१३

## योग.

मन, वचन और शरीरकी क्रियाको याग कहते हैं।

योग पन्द्रह प्रकारके होते हैं। चार मनोयोग, चार वचन-योग और सात काययोग।

१ जैसा देखा जैसा सुना वैसाही सच्चा सोंचना, सत्य मनयोग है।

२ देखा या सुना उससे उल्टा—मिथ्या सोंचना, असत्य मनोयोग है।

३ कुछ सच्चा और कुछ झूठा विचार करना मिश्र मनोयोग है।

४ सत्य भी नहीं और असत्य भी नहीं ऐसा गोलमाल विचार करना व्यवहार मनोयोग है।



५ जैसा देखा सुना या विचारा वैसाही धारणा, सत्य-वचन योग है ।

६ सत्यसे विपरीत-झूठ-बोलना असत्यवचन योग है ।

७ कुछ सत्य और कुछ झूठ बात कहना मिश्र वचनयोग है ।

८ सत्य भी नहीं और झूठ भी नहीं-गोलमाल बात कहना म्पबहार वचनयोग है ।

९ मनुष्यों और तिरिचोंकी उत्पत्तिक समय औदारिक धारा बनानेमें जो योग होता है, उसे औदारिक मिश्र काययोग कहते हैं ।

१० औदारिक शरीरसे जो योग हाता है उस औदारिक काय योग कहते हैं ।

११ देवताओं और नारकियोंकी उत्पत्तिक समय वैक्रिय शरीर बनानेमें जो योग होता है उस वैक्रिय-मिश्र काययोग कहते हैं ।

१२ वैक्रिय शरीरसे जो योग होता है उस वैक्रिय काय योग कहते हैं ।

१३ मुनियों को आहारक शरीर बनानेमें जो क्रिया कस्ती पड़ती है उस आहारक-मिश्र काययोग कहते हैं ।

१४ आहारक शरीरसे जो क्रिया होती है उसे आहारक काय योग कहते हैं ।

१५ जिससे कर्म परमाणु आनेकी क्रिया होती है उस कार्माण काययोग कहते हैं ।

## उपयोग ।

किसी चीजको जाननेके लिए आत्माकी जो क्रिया होती है उसे उपयोग कहते हैं ।

उपयोग बारह होते हैं । आठ ज्ञानोपयोग और चार दर्शनोपयोग ।

१ पाँच इन्द्रियोंमेंसे किसी एक इन्द्रीके द्वारा और मनके द्वारा जो बात जानी जाती है उसे मतिज्ञान कहते हैं ।

२ शास्त्रोंके पढ़नेसे, सुननेसे अथवा मनन करनेसे जो ज्ञान होता है उसे श्रुतज्ञान कहते हैं ।

३ अमुक सीमामें रहे हुए पौद्गलिक पदार्थोंका इन्द्रियोंकी सहायताके विना ज्ञान होना अवधिज्ञान कहलाता है ।

४ ढाई द्वीपके अंदरके मनुष्यों और तिर्यचोंके मनकी बात विना इन्द्रियोंकी सहायताके जिस ज्ञानसे जानी जाती है; उसे मनःपर्यव ज्ञान कहते हैं ।

५ इन्द्रियोंकी सहायताके विना रूपी और अरूपी सब तरहके पदार्थोंका जिससे ज्ञान होता है, उसे केवलज्ञान कहते हैं ।

६ मिथ्यात्व सहित मतिज्ञानको—जिससे वस्तुस्वरूप ठीक ठीक नहीं विचारा जाता है—मतिअज्ञान कहते हैं ।

७ मिथ्यात्व सहित श्रुतज्ञानको—जिससे वस्तुका सत्य-स्वरूप नहीं जाना जाता है—श्रुत अज्ञान कहते हैं ।

८ मिथ्यात्व सहित अबाधिज्ञानका-विसस अमुक इदव-  
कके पदार्थ आत्मासे जान जाते हैं, उस ज्ञानमें फरक हो  
जाता है-उसे विभग-ज्ञान कहते हैं ।

९ औखसे देखना-औखसे वस्तुका सामान्य ज्ञान हाना-  
अधुदर्शन कहलाता है ।

१० औख बिना शेष चार इन्द्रियोमे वस्तुका आ सामान्य  
ज्ञान होता है, उसे अधुदर्शन कहते हैं ।

११ अमुक सीमाके अंदर रही हुई रूपी अधिज्ञा वा  
सामान्य ज्ञान होता है, उस अबाधिदर्शन कहते हैं ।

१२ ससारके रूपी और अरूपी सब पदार्थोके सामान्य  
रीतिसे जानना केवल दर्शन है ।

१५

### गुणस्थान

आध्याय और भाषोक्ति द्वारा अधिज्ञा जो स्थिति होती है  
उस गुण-स्थान कहते हैं ।

गुणस्थान चौदह होते हैं । ( १ ) मिथ्यात्व, ( २ ) सा  
स्वादन, ( ३ ) मिथ, [ ४ ] अतिरति सम्पत्ति, [ ५ ] देश  
विरति ( ६ ) प्रमत्त ( ७ ) अप्रमत्त, [ ८ ] निवृत्तिकरण,  
( ९ ) अनिवृत्तिकरण, ( १० ) सूक्ष्म भवराय, ( ११ ) उप  
शान्तमोह, ( १२ ) धीणमाह, [ १३ ] सवागी केवली, और  
[ १४ ] अयोगी केवली ।

१ वस्तुके अघली सम्पका न मानकर विपरीत (उस्त) )

माननेवालेको मिथ्यात्वी कहते हैं। उसकी स्थितिका नाम मिथ्यात्व गुणस्थान है।

२ सम्यक्त्वसे गिरनेपर बीचमें भावोंकी थोड़े समयतक जो स्थिति होती है, उसे सास्वादान गुणस्थान कहते हैं।

३ सत्य और असत्य दोनोंको समान ही समझनेवालोंकी स्थिति जहाँ होती है, अर्थात् जहाँ वास्तविक तत्त्वसे स्नेह नहीं होता और मिथ्यात्वसे अप्रीति नहीं होती; ऐसी स्थितिको मिश्र गुणस्थान कहते हैं।

४ जिस स्थितिमें देव, गुरु और धर्मके ऊपर श्रद्धानतो होता है, परंतु व्रत प्रत्याख्यान-पञ्चखाण-नहीं होता उसको सम्पद्दृष्टि गुणस्थान कहते हैं।

५ जिस स्थितिमें थोड़ा-एक देश-त्याग होता है-व्रत होता है-उसको-देशविरति गुणस्थान कहते हैं। इस गुणस्थानवालेको अणुव्रती भी कहते हैं।

६ पाँच महाव्रतोंका जिस स्थितिमें सप्रमाद पालन किया जाता है उसको सर्व विरति या प्रमत्त गुणस्थान कहते हैं।

७ विशेष उत्तम भाव जिस स्थितिमें होते हैं-प्रमाद रहित व्रतोंका जिसमें पालन किया जाता है-उसको अप्रमत्त गुणस्थान कहते हैं।

८ जिस स्थितिमें अपूर्व ( जो पहिले कभी नहीं आये हों ऐसे ) निर्मल भाव आते हैं उसको अपूर्ण करण या निवृत्ति-करण, गुणस्थान कहते हैं।

९ जिस स्थितिमें लोमक म्पूल-भाट-विभाग (संज्ञ दुकने) करक दाब दिये जात हैं या नष्ट कर दिये जात हैं उसको अनिष्टविकरक या बादर सम्पराय गुणस्वान कहते हैं ।

१० जिस स्थितिमें लोमक छस्म ( छोटे ) विभाग करक दाब दिदि जात है या नष्ट कर दिये जाते हैं उसको छस्मसंपराय गुणस्वान कहते हैं ।

११ जिस स्थितिमें मोहनाम कम दबा हुआ [सवामे] रहता है; परन्तु उदरमें नहीं जाता उसको उपशान्तमोह गुणस्वान कहते हैं ।

१२ जिस स्थितिमें मोहनीम कम सर्वथा नष्ट हो जाता है उसको चीग मोह गुणस्वान कहते हैं ।

१३ तीर्थकरों और अन्य सामान्य केवलियोंकी स्थितिको-जिसमें योग रहता है-सपागी कबली गुणस्वान कहते हैं ।

१४ मोक्ष जानक कुछ काल पहिलेकी स्थितिका जिसमें योग सर्वथा रुक जाता है-अयोगी केरसा गुणस्वान कहते हैं ।

१६

## आत्मा

आत्मा जीव-आठ प्रकारके हात है । [ १ ] द्रव्यात्मा [ २ ] कपायात्मा, [ ३ ] योगात्मा, ( ४ ) उपयोगात्मा, [ ५ ] ज्ञानात्मा, [ ६ ] दशनारमा, ( ७ ) धारित्रात्मा और [ ८ ] वीर्यात्मा ।

१ शरीर कुटुंब और घनादिको वा अपना मानता है उसे द्रव्यात्मा कहते हैं ।

२ क्रोध, मान, माया, और लोभके अंदर रहनेवाले को कषायात्मा कहते हैं ।

३ मन, वचन और कायासे क्रिया करनेवालेको योगात्मा कहते हैं ।

४ बारह प्रकारके ( ८ प्रकारके ज्ञान और ४ प्रकारके दर्शन ) उपयोगोंमें वर्ताव करनेवालेको उपयोगात्मा कहते हैं ।

५ ज्ञानमें रमण करनेवालेको ज्ञानात्मा कहते हैं ।

६ दर्शनमें रमण करनेवालेको दर्शनात्मा कहते हैं ।

७ चारित्र्यमें रमण करनेवाले आत्माको चारित्र्यात्मा कहते हैं ।

८ वीर्यमें—आत्मिक शक्ति विशेषमें—वर्ताव करनेवालेको वीर्यात्मा कहते हैं ।

१७

## लेश्या ।

जीवके परिणामोंकी एक झँई—परिछाया—विशेषको लेश्या कहते हैं । इसके छः भेद हैं । ( १ ) कृष्ण [ २ ] नील ( ३ ) कापोत ( ४ ) तेज [ ५ ] पद्म और [ ६ ] शुक्ल । ये छहों लेश्याएँ निम्नलिखित उदाहरणसे भलीभाँति समझमें आ जायेंगी ।

जामुन खानेके लिये ६ आदमी वृक्षके नीचे आये । उनमेंसे एकने कहाः—“ सारा वृक्ष ही जड़से काट दो । ” दूसरा बोलाः—“ तना-धड रहने दो और मव काटलो । ” तीसरेने कहाः—“ जिन टहनियोंपर जामुन लग रहे हैं उन्हें काट लो । ”

शैया बोला —“ टहनियाँ क्यों काटते हो ? जामुनके झुमके तोड़लो । ” छठेने कहा —“ एक हुए जामुन नाचे, पडे ई उन्हींके खालो । इनमें सबसे उखाड़नेवालेकी कृष्ण लेख्या है; मोटी २ डालियाँ काटनेके भावबालकी नाल लेख्या है; टहनियाँ काटनेके भावबालकी फलपोत लेख्या है; झुमके ताड़नेके भावबालकी तजा लेख्या है; पके पके जामुन, तोड़लेनेके भावबालकी पत्र लेख्या है और नीच पड़ हुए खानेवालेकी छुलू लेख्या है ।

१८

दृष्टि ।

दृष्टि, अज्ञान या विश्वासको कहते हैं । यह तीन तरहकी है । [ १ ] मिथ्यादृष्टि, ( २ ) मिथदृष्टि और [ ३ ] सम्मदृष्टि ।

१ सख तत्त्वका भूटा और भूटेका सखा मानना मिथ्यादृष्टि है ।

२ सख और सूठ दोनों तरहक तत्त्वोंका समान देखना मिथ दृष्टि है । इस सम्मिमिथ्या दृष्टि मी कहते हैं ।

३ सख तत्त्वका सूखा और सूठका सूटा मानना सम्मदृष्टि है ।

१९

राशि ।

जगत्में राशि ( ममूद ) पाई । ( १ ) बीषराशि, [ २ ] अज्ञात राशि ।

१ जितने भी चेतन पदार्थ हैं वे जीव राशिमें हैं ।  
जैसे मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि ।

२ जितने भी अचेतन पदार्थ हैं वे अजीव राशिमें हैं ।  
जैसे मकान, चार पाई, बिछौना आदि ।

२०

### निक्षेप.

पदार्थमें आरोपण करनेका नाम निक्षेप है । ये चार प्रकारका होता है । [ १ ] नाम, [ २ ] स्थापना, [ ३ ] द्रव्य और [ ४ ] भाव ।

१ किसी पदार्थको उसके आकार गुण, जाति या क्रियाकी अपेक्षा विना अमुक संज्ञासे पहिचानना, नामनिक्षेप है ।

२ उसी आकारके पदार्थमें या अन्य आकारके पदार्थमें वस्तुकी स्थापना करनेको स्थापना निक्षेप कहते हैं ।

३ जिससे कार्य होता है, जिससे पर्याय बनती है उसे द्रव्य निक्षेप कहते हैं ।

४ कार्य या पर्यायको भाव निक्षेप कहते हैं ।

२१

### अभक्ष्य ।

जिन पदार्थोंके खानेसे त्रसजीवोंका घात होता हो, अथवा बहुत स्थावर जीवोंका घात होता हो । जो प्रमाद बढ़ानेवाले हों, और जो, अनिष्ट हों, तथा जो भले पुरुषोंके सेवन करने योग्य न हो, वे सब अभ्यक्ष्य कहलाते हैं ।



अभ्यक्ष्य—नहीं खान योग्य—बाईस चीजें हैं । ( १ ) बड़का फल, ( २ ) पीपलका फल [ ३ ] ऊँबरका फल, [ ४ ] पिंपरीका फल, ( ५ ) कतुंबरका फल, [ ६ ] शहद, ( ७ ) मक्खन, [ ८ ] मँस [ ९ ] शराब ( १० ) आले, [ ११ ] बिठ ( अफीम सोमल, सख्या आदि बहरी चीजें, [ १२ ] सरदीकी न्यादतीसे जमा हुआ बरफ, ( १३ ) सब तरहकी कच्ची मिट्टी—नमक, [ १४ ] रात्रि मोहन, [ १५ ] बहुत बीजवाला फल, ( १६ ) साधारण वनस्पति [ कंद मूल आदि ] ( १७ ) आचार, [ १८ ] बिदल [ कच्छ दही, दूध या छाछक साथ बसन, दाल आदि खाना ], ( १९ ) बेगन, [ २० ] अजान फल, [ २१ ] तुच्छ फल, [ चनबर आदि ], और [ २२ ] चलित रस [ वासी मोहन आदि ]

२२ ;

## - अनुयोग ।

अनुयोग चार तरहका है । [ १ ] द्रव्यानुयोग, ( २ ) गमितानुयोग, [ ३ ] परस्परगणानुयोग, और ( ४ ) धर्मकथानुयोग ।

१ जिसमें छ. द्रव्य, भाठ कम नौ तत्त्व आदिका बर्खन हा उस द्रव्यानुयोग कहत ह ।

२ जिसमें द्वीप समुद्रादिके अहर आप हुए पवत, नदी, टश आदिकी सगह, चाँदाई ऊँपाई, तथा संग्या आदिका भजन हा उसे गमितानुयोग कहत ह ।

३ जिसमें मृनिमों और आवकौक आचारका बजन हा उस परस्परगणानुयोग कहते हैं ।

४ जिसमें गत, उत्तम और धर्मात्मा स्त्री-पुरुषोंका वर्णन हो उसे धर्मकथानुयोग कहते हैं ।

२३

### समवाय ।

समवाय [ साथमें रहनेवाले कारण ] पाँच हैं । [ १ ] काल, ( २ ) स्वभाव, ( ३ ) नियति, [ ४ ] कर्म, और [ ५ ] उद्यम ।

१ जो जिसवक्त और जिस ऋतुमें होता हो वह उसी वक्त और उसी ऋतुमें हो उसे काल समवाय कहते हैं ।

२ जिसका जैसा स्वभाव हो वह हमेशा वैसाही रहे, उसमें किसी तरहका परिवर्तन न हो उसे स्वभाव समवाय कहते हैं ।

३ जो होनहार-भवितव्य-हो वही हो, उसे नियति समवाय कहते हैं ।

४ सब कुछ पहिले किये हुए कर्मोंके अनुसार ही होना, कर्म समवाय है ।

५ परिश्रम-उद्योग-करना उद्यम समवाय है ।

२४

### पाखंड ।

जिसमें मिथ्या मार्ग-ठगीका मार्ग-हो उसे पाखंड कहते हैं । उसके मूल चार भेद हैं । ( १ ) क्रियावाद, ( २ ) अक्रियावाद, ( ३ ) विनयवाद और ( ४ ) अज्ञानवाद । इन्हींके तीन सौ तरेसठ भेद भी होते हैं ।

( १ ) प्रत्यक्ष प्रमाण और [ २ ] परोक्ष प्रमाण ।

[ १ ] मनसहित पंचों इन्द्रियों द्वारा जो बात जानी जाती है वह प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है ।

[ २ ] जो बात-अनुमानसे, तर्कसे बुद्धिसे या आगमस [ शास्त्राधारसे ] जानी जाती है-उमका नाम परोक्ष प्रमाण है ।

२७

### स्याद्वाद ।

“ स्याद्वाद ”—वह सिद्धान्त है—जो जैन शास्त्रोंका रहस्य ममत्तनेकी असली हुआ है । जिस पुरुषके हाथमें स्याद्वाद रूप हाथियार है उसे काह पराजित नहीं कर सकता । स्याद्वाद सिद्धान्त अकारण्य और अखण्ड है । जिसने न्यायशास्त्रमें गौता लगाया है, वही इसकी ख्याको समझ सकता है ।

अब “ स्याद्वाद ” क्या है ? सो बतलाते हैं ।

स्याद्वादका अर्थ है—वस्तुका मिश्र मिश्र दृष्टि-पिंडुओंसे मिश्र करना इच्छना या कइना । एक ही वस्तुमें अणुक अणुक अपेक्षासे मिश्र मिश्र धर्मोंको स्वीकार करनेका नाम ‘ स्याद्वाद ’ है । जैसे एक ही पुरुषमें पिता, पुत्र, बच्चा, भ्राता, मामा भानज आदि व्यवहार माना जाता है । वैसे ही एक ही वस्तुमें अनक धर्म मान जाते हैं । एक ही घटमें नित्यत्व और अनित्यत्व आदि विरुद्ध रूपसु दिसाई दत्त हुए धर्मोंका अपभ्रष्टादृष्टि स्यात्कार कर्नका नाम ‘ स्याद्वाद दर्शन ’ है ।

एक ही पुरुष अपने पिताकी अपेक्षा पुत्र, अपने पुत्रकी अपेक्षा पिता, अपने भ्राजे और भानजकी अपेक्षा बच्चा और

मांसा एवं अपने चचा और मामाकी अपेक्षा भतीजा और भानजा होता है । प्रत्येक मनुष्य जानता है कि, इस प्रकार परस्पर विरुद्ध दिखाई देनेवाली बातें भी भिन्न भिन्न अपेक्षाओंसे एक ही मनुष्यमें स्थित रहती हैं । इसी तरह नित्यत्व आदि परस्पर विरोधी धर्म भी एक ही घटमें भिन्न भिन्न अपेक्षाओंसे क्यों नहीं माने जा सकते हैं ?

पहिले इस बातका विचार करना चाहिए कि ' घट ' क्या पदार्थ है ? हम देखते हैं कि एक ही मिट्टीमेंसे घडा, कूडा, सिकोरा आदि पदार्थ बनते हैं । घडा फोड दो और उसी मिट्टीसे बने हुए कूडेको दिखाओ । कोई उसको घडा नहीं कहेगा । क्यों ? क्यों मिट्टी तो वही है ? कारण यह है कि उसकी सूरत बदल गई । अब वह घडा नहीं कहा जा सकता है । इससे सिद्ध होता है कि ' घडा ' मिट्टीका एक आकार-विशेष है । मगर यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि-आकार-विशेष मिट्टीसे सर्वथा भिन्न नहीं होता है । आकारमें परिवर्तित मिट्टी ही जब ' घडा ' ' कूडा ' आदि नामोंसे व्यवहृत होती है, तब यह कैसे माना जा सकता है कि घडेका आकार और मिट्टी सर्वथा भिन्न है ? इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि घडेका आकार और मिट्टी, ये दोनों घडेके स्वरूप हैं । अब यह विचारना चाहिए कि उभय स्वरूपोंमें विनाशी स्वरूप कौनसा है और ध्रुव कौनसा ? यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है कि घडेका आकार-स्वरूप ' विनाशी ' है । क्योंकि घडा फूट जाता है । घडेका दूसरा स्वरूप जो मिट्टी है, वह अविनाशी

है । क्योंकि मिट्टीके कई पदार्थ बनते हैं, और टूट जाते हैं; परन्तु मिट्टी तो वह ही रहती है । ये बातें अनुभव सिद्ध हैं ।

हम देख गये हैं कि बड़का एक स्वरूप विनाशी है और दूसरा ध्रुव । इससे सहजतासे यह समझा जा सकता है कि विनाशी रूपसे बड़ा अनित्य है और ध्रुव रूपसे बड़ा नित्य है । इस तरह एक ही वस्तुमें नित्यता और अनित्यताकी मान्यता का रखनेवाले सिद्धान्तकार ' स्याद्वाद ' कहा गया है ।

स्याद्वादका क्षेत्र उक्त नित्य और अनित्य इन दाही बातों में पर्याप्त नहीं होता है । ' सत्त्व और असत्त्व आदि दूसरी, विरुद्धरूपमें दिखाई देनेवाली बातें भी स्याद्वादमें आ जाती हैं । बड़ा आँखोंसे प्रत्यक्ष दिखाई देता है, इससे यह तो अभायास ही सिद्ध हो जाता है कि वह ' सत् ' है । मगर न्याय कहता है कि यद्यक दृष्टिसे वह ' असत् ' भी है ।

यह बात खास विचारणीय है कि, प्रत्यक पदार्थ आ ' सत् ' कहलाता है किस लिए ? रूप, रस, आकार आदि अपने ही गुणोंमें—अपने ही बलोंसे—प्रत्यक पदार्थ सत् होता है । दूसरेके गुणोंसे कोई पदार्थ ' सत् ' नहीं हो सकता है । जो बाप कहता है, वह अपने पुत्रसे, किसी दूसरेके पुत्रसे नहीं । याना खाम पुत्र ही पुरुषको बाप कहता है; दूसरेका पुत्र उसको बाप नहीं कह सकता । इस तरह जने—स्वपुत्रकी अपेक्षा जो पिता जाना दे वही पर पुत्रकी अपेक्षा अपिता होता है;

वैसे ही अपने गुणोंसे—अपने धर्मोंसे—अपने स्वरूपसे जो पदार्थ 'सत्' है, वही पदार्थ दूसरेके धर्मोंसे—दूसरोंमें रहे हुए गुणोंसे—दूसरोंके स्वरूपसे 'सत्' नहीं हो सकता है। जब 'सत्' नहीं हो सकता है, तब यह बात स्वतः सिद्ध हो जाती है कि वह 'असत्' होता है।

इस तरह भिन्न भिन्न अपेक्षाओंसे 'सत्' को 'असत्' कहनेमें विचारशील विद्वानोंको कोई बाधा दिखाई नहीं देगी। 'सत्' को भी 'सत्' पनेका जो निषेध किया जाता है, वह ऊपर कहे अनुसार अपनेमें नहीं रही हुई विशेष धर्मकी सत्ताकी अपेक्षासे। जिसमें लेखनशक्ति या वक्तृत्वशक्ति नहीं है, वह कहता है कि—'मैं लेखक नहीं हूँ।' या "मैं वक्ता नहीं हूँ।" इन शब्दप्रयोगोंमें 'मैं' और साथ ही 'नहीं' का उच्चारण किया गया है, वह ठीक है। कारण, हरेक समझ सकता है कि यद्यपि 'मैं' स्वयं 'सत्' हूँ, तथापि मुझमें लेखन या वक्तृत्वशक्ति नहीं है इसलिए उस शक्तिरूपसे "मैं नहीं हूँ"। इस तरह अनुसंधान करनेसे सर्वत्र एक ही व्यक्तिमें 'सत्त्व' और 'असत्त्व' का स्याद्वाद बराबर समझमें आ जाता है।

स्याद्वादके सिद्धान्तको हम और भी थोड़ा स्पष्ट करेंगे—  
सारे पदार्थ उत्पत्ति, स्थिति और विनाश, ऐसे तीन धर्म वाले हैं। उदाहरणार्थ—एक स्वर्णकी कंठी लो। उसको तोड़-

१—“ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्त सत् । ” तत्त्वार्थसूत्र, ' उमास्वाति ' वाचक ।

कर डारा बना जाला । इस बातको इरेक समझ सकता है कि कंठी नष्ट हुई और बोरा उत्पन्न हुआ । मगर यह नहीं कहा जा सकता है कि, कंठी सर्वथा नष्ट ही हो गई है और, डारा बिलकुल ही नवीन उत्पन्न हुआ है । डारका बिलकुल ही नवीन उत्पन्न होना तो उस समय माना जा सकता है जब कि उसमें कंठीकी कोई चीज आई ही न-हो । मगर जब कि कंठीका सारा स्वर्ण डारेमें आ गया है; कंठीका आकार-मात्र ही बदला है; तब यह नहीं कहा जा सकता है कि डारा बिलकुल नया उत्पन्न हुआ है । इसी तरह यह मानना होगा कि कंठी भी सर्वथा नष्ट नहीं हुई है । कंठीका सर्वथा नष्ट होना तबही माना जा सकता है जब कि कंठीका कोई चीज बाधा न बचा हो । परन्तु जब कि कंठीका सारा स्वर्ण डारेमें आ गया है तब यह कैसे कहा जा सकता है कि कंठी सर्वथा नष्ट हो गई है । इससे यह स्पष्ट हो गया कि, कंठीका नाश उसके आकारका नाश मात्र है और डारेकी उत्पत्ति उसके आकारकी उत्पत्ति मात्र है और कंठी और डारेका स्वर्ण एक ही है । कंठी और डारा एक ही स्वयंके आकार-भेदके सिवा दूसरा कुछ नहीं है ।

इस उदाहरणमें यह मूलो प्रकार समझमें आ गया कि कंठीका नाश कर डारा बनानेमें-कंठीके आकारका नाश, डारेके आकारकी उत्पत्ति और स्वर्णकी स्थिति इस प्रकार उत्पत्ति नाश और प्रोत्थ, ( स्थिति ) तीनों धर्म बराबर हैं इसी तरह घटको फोड़कर ईंटा बनाये हुए उदाहरणको भी समझ लेना चाहिए । पर अब गिर जाता है तब जिन पदार्थोंसे

घर बना होता है वे चीजें कभी सर्वथा विलीन नहीं होती हैं। वे सब चीजें स्थूल रूपसे अथवा अन्ततः परमाणु रूपमें तो अवश्यमेव जगत्में रहती ही हैं। अतः तत्त्वदृष्टिसे यह कहना अघटित है कि घर सर्वथा नष्ट हो गया है। जब कोई स्थूल वस्तु नष्ट हो जाती है तब उसके परमाणु दूसरी वस्तुके साथ मिलकर नवीन परिवर्तन खडा करते हैं। संसारके पदार्थ स-सारहीमें, इधर उधर, विचरण करते हैं; जिससे नवीन नवीन रूपोंका प्रादुर्भाव होता है। दीपक बुझ गया, इससे यह नहीं समझना चाहिए कि वह सर्वथा नष्ट हो गया है। दीपकका परमाणु-समूह वैसाका वैसा ही मौजूद है। जिस परमाणु संघातसे दीपक उत्पन्न हुआ था, वही परमाणु-संघात, दूसरा रूप पा जानेसे, दीपक-रूपमें न दीखकर, अंधकार-रूपमें दीखता है; अंधकार रूपमें उसका अनुभव होता है। सूर्यकी किरणोंसे पानीको सूखा हुआ देखकर, यह नहीं समझ लेना चाहिए कि पानीका अत्यंत अभाव हो गया है। पानी, चाहे किसी रूपमें क्यों न हो, बराबर स्थित है। यह हो सकता है कि, किसी वस्तुका स्थूलरूप नष्ट हो जाने पर उसका सूक्ष्म रूप दिखाई न दे, मगर यह नहीं हो सकता कि उसका सर्वथा अभाव ही हो जाय। यह सिद्धान्त अटल है कि न कोई मूल वस्तु नवीन उत्पन्न होती है और न किसी मूल वस्तुका सर्वथा नाश ही होता है, दूधसे बना हुआ दही, नवीन उत्पन्न नहीं हुआ। यह दूधहीका परिणाम है। इस बातको सब जानते हैं कि दुग्धरूपसे नष्ट-होकर दही रूपमें आनेवाला पदार्थ भी दुग्धहीकी तरह 'गोरसः' कहलाता है। अत एव



गोरसका स्वागी दुग्ध और दही दोनों चीजें नहीं खा सकता है। इसमें दूध और दहीमें वा साम्य है वह अच्छी तरह अनुभवमें आ सकता है।' इसी प्रकार सब अगह सफम्ना चाहिए कि, मूलतत्त्व सदा स्थिर रहते हैं, और इसमें बड़े-बड़े परिवर्तन होते रहते हैं; यानी पूर्वपरिणामका नाश और नवीन परिणामका प्रादुर्भाव होता रहता है वह विनाश और उत्पाद है। इससे सारे पदार्थ उत्पादि, विनाश और स्थिति (घोम्य) स्वभाववाले प्रमाणित होते हैं। जिसका उत्पाद विनाश होता है उसको जैनशास्त्र 'पर्याय' कहते हैं। जो मूल वस्तु सदा स्थायी है, वह 'द्रव्य' के नामसे पुकारी जाती है। द्रव्यसे (मूल वस्तुरूपसे) प्रत्येक पदार्थ नित्य है, और पर्यायसे अनित्य है। इस तरह प्रत्येक पदार्थको न

१—“पयोक्तो न दध्यति न पयाप्रति दधिक्तः ।

अगोरसक्तो नीम तस्माद् वस्तु श्रवणकम्” ॥

—शास्त्राचार्यमुच्यते शरिभद्रसूत्रे

‘उत्पन्न दधिमावेन नष्ट दुग्धतया पयः ।

गोरसत्वात् स्थिर आत्मन् स्मद्धाद्विद्वजनीऽपि कः ? ॥

—अभ्यारमोपनिषद्, यशोविजयजी ।

२-विज्ञानशास्त्र भी कहता है कि, मूल प्रकृति भ्रुव स्थिर है और उससे उत्पन्न होनेवाले पदार्थ ठसक रूपांतर-परिणामांतर है। इस तरह ज्ञान, विनाश और घोम्यके जैन सिद्धांतका, विज्ञान (Science) भी पूर्णतया समर्थन करता है।

एकान्त अनित्य बल्के नित्यानित्यरूपसे मानेनाही ' स्याद्वाद ' है।

इसके सिवा एक वस्तुके प्रति ' अस्ति ' , ' नास्ति ' , का बंध भी —जैसा कि उपर कहा गया है—ध्यानमें रखना चाहिये। घट ( प्रत्येक पदार्थ ) अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे ' सत् ' है और दूसरेके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे ' असत् ' है। जैसे-वर्षाऋतुमें, काशीमें जो मिट्टीका काला घडा बना है वह द्रव्यसे मिट्टी है—मृत्तिकारूप है, जलरूप नहीं है; क्षेत्रसे बनारसका है, दूसरे क्षेत्रोंका नहीं है; कालसे वर्षा —ऋतुका है दूसरी ऋतुओंका नहीं है और भावसे काले वर्णवाला है अन्य वर्णका नहीं है। संक्षेपमें यह है, कि प्रत्येक वस्तु अपने स्वरूपहीसे ' अस्ति ' कही जा सकती है, स्वरूपसे नहीं। जब वस्तु दूसरेके स्वरूपसे ' अस्ति ' नहीं कहलाती है तब उसके विपरीत कहलायगी। यानी ' नास्ति '।

स्याद्वादका एक उदाहरण और देंगे। वस्तुमात्रमें सामान्य और विशेष ऐसे दो धर्म होते हैं। सौ ' घडे ' होते हैं उनमें ' घडा ' ' घडा , ऐसी एक प्रकारकी जो बुद्धि उत्पन्न होती है, वह यह बताती है कि तमाम घडोंमें सामान्यधर्म—एकरूपता है। मगर लोक उनमेंसे अपने भिन्न भिन्न घडे जब पहिचान कर उठा लेते हैं, तब यह मालूम होता है कि प्रत्येक घडेमें कुछ न कुछ पहिचानका चिन्ह है, यानी भिन्नता है। यह भिन्नता ही उनका विशेष-धर्म है। इस तरह सारे पदार्थोंमें सामान्य और विशेष धर्म हैं। ये दोनों धर्म सापेक्ष हैं; वस्तुसे अभिन्न हैं। अतः—प्रत्येक वस्तुको सामान्य और विशेष धर्मवाली समझना ही स्याद्वाददर्शन है।

गौरसका त्यागा दुग्ध और दही ढानों चीजें नहीं खा सकता है। इससे दूध और दहीमें जो साम्य है वह अच्छी तरह अनुभवमें आ सकता है।' इसी प्रकार सब जगह सकम्भना चाहिए कि, मूलवस्तु सदा स्थिर रहते हैं, और इसमें जो अनक परिवर्तन हात रहते हैं; यानी पूर्वपरिणामका नाश और नवीन परिणामका प्रादुर्भाव होता रहता है वह विनाश और उत्पाद है। इससे, सारे पदार्थ उत्पत्ति, विनाश और स्थिति (घौष्य) स्वभाववाला प्रमाणित होते हैं। जिसका उत्पाद, विनाश होता है उसको जैनशास्त्र 'पर्याय' कहते हैं। जो मूल वस्तु सदा स्थायी है, वह 'द्रव्य' के नामसे पुकारी जाती है। द्रव्यमे (मूल वस्तुरूपमे) प्रत्येक पदार्थ नित्य है, और पर्यायसे अनित्य है। इस तरह प्रत्येक पदार्थको न

१—“पयोक्तो न दृश्यति न पर्यायति दधिकृत ।

अगौरसक्तो नीमे तस्माद् वस्तु त्रयत्वकम्” ॥

—शास्त्रात्तत्प्रमुच्यते शरीरभद्रसूरी

‘उत्पन्न दधिभावेन मद्य दुग्धतया पय ।

गौरसत्त्वात् स्थिर आनम् स्वच्छाद्दृष्टि जनोऽपि क ? ॥

—अभ्यतमोपनिषद्, यशाविश्वेशी ।

२-विज्ञानशास्त्र भी कहता है कि, मूल प्रकृति भ्रुव स्थिर है और उससे उत्पन्न होनेवाले पदार्थ उसके रूपांतर-परिणामांतर है। इस तरह अणु, विनाश और घौष्यके जैन सिद्धान्तका, बिहार (Science) भी पूर्णतया समर्थन करता है।

एकान्त अनित्य ब्रह्मे नित्यानित्यरूपसे मानेनाही ' स्याद्वाद ' है।

इसके सिवा एक वस्तुके प्रति ' अस्ति ' , ' नास्ति ' , का संबंध भी — जैसा कि उपर कहा गया है — ध्यानमें रखना चाहिये। घट ( प्रत्येक पदार्थ ) अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे ' सत् ' है और दूसरेके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे ' असत् ' है। जैसे- वर्षाऋतुमें, काशीमें जो मिट्टीका काला घडा बना है वह द्रव्यसे मिट्टी है—मृत्तिकारूप है, जलरूप नहीं है; क्षेत्रसे बनारसका है, दूसरे क्षेत्रोंका नहीं है; कालसे वर्षा — ऋतुका है दूसरी ऋतुओंका नहीं है और भावसे काले वर्णवाला है अन्य वर्णका नहीं है। संक्षेपमें यह है कि प्रत्येक वस्तु अपने स्वरूपहीसे ' अस्ति ' कही जा सकती है, स्वरूपसे नहीं। जब वस्तु दूसरेके स्वरूपसे ' अस्ति ' नहीं कहलाती है तब उसके विपरीत कहलायगी। यानी ' नास्ति '।

स्याद्वादका एक उदाहरण और देंगे। वस्तुमात्रमें सामान्य और विशेष ऐसे दो धर्म होते है। सौ ' घडे ' होते हैं उनमें ' घडा ' ' घडा , ऐसी एक प्रकारकी जो बुद्धि उत्पन्न होती है, वह यह बताती है कि तमाम घडोंमें सामान्यधर्म—एकरूपता है। मगर लोक उनमेंसे अपने भिन्न भिन्न घडे जब पहिचान कर उठा लेते हैं, तब यह मालूम होता है कि प्रत्येक घडेमें कुछ न कुछ पहिचानका चिन्ह है, यानी भिन्नता है। यह भिन्नता ही उनका विशेष-धर्म है। इस तरह सारे पदार्थोंमें सामान्य और विशेष धर्म हैं। ये दोनों धर्म सापेक्ष है; वस्तुसे अभिन्न हैं। अतः प्रत्येक वस्तुको सामान्य और विशेष धर्मवाली समझना ही स्याद्वाददर्शन है।

गौरसका स्थायी दुग्ध और दही दोनों चीजें नहीं खा सकता है। इससे दूध और दहीमें जो साम्य है वह अच्छी तरह भ्रुमभवमें आ सकता है। इसी प्रकार सब जगह सकम्नना चाहिए कि, मूलतत्त्व सदा स्थिर रहते हैं, और इसमें जो अनेक परिवर्तन होते रहते हैं; यानी पूर्वपरिणामका नाश और नवीन परिणामका प्रादुर्भाव होता रहता है वह विनाश और उत्पाद है। इससे सारे पैदाये उत्पात्ति, विनाश और स्थिति ( भ्रौम्य ) स्वभावबाले प्रमाणित होते हैं। जिसका उत्पाद, विनाश होता है उसको जैनशास्त्र ' पर्याय ' कहते हैं। जो मूल वस्तु सदा स्वामी है, वह ' द्रव्य ' के नामसे पुकारी जाती है। द्रव्यसे ( मूल वस्तुरूपसे ) प्रत्येक पदार्थ नित्य है, और पर्यायसे अनित्य है। इस तरह प्रत्येक पदार्थको न

१—“ पयोऋतो न दम्यति न पयाऽपि दधिभक्त ।

अगौरभवतो मोमे तस्माद् वस्तु प्रयात्मकम् ॥”

—शास्त्रार्थसमुच्चय हारमदसूत्रे

‘ उत्पन्न दधिभावेन नष्ट दुग्धतया पय ।

गुप्तसम्बन्ध स्थिर जानन् स्वच्छादद्विद् जनोऽपि क ॥”

—भष्यस्मौपमिपद, पशोविज्रवेर्जी ।

२-विद्वानशास्त्र भी कहता है कि, मूल प्रकृति भ्रुम स्थिर है और उससे उत्पन्न होनेवाले पदार्थ उसके रूपांतर-परिणामांतर है। इस तरह उदाहर, विनाश और भ्रौम्यके जैन सिद्धान्तका, विद्वान ( Science ) भी पूर्णतया समर्पण करता है।

जो संशयके स्वरूपको अच्छी तरह समझते हैं, वे स्याद्वादको संशयवाद कहनेका कभी साहस नहीं करते । कई बार रातमें, काली रस्सीको देखकर संदेह होता है कि—‘ यह सर्प है या रस्सी?’ दूसरे वृक्षके टूँठको देखकर संदेह होता है कि—‘ यह मनुष्य है या वृक्ष?’ ऐसी संशयकी अनेक बातें हैं, जिनका हम कई-बार अनुभव करते हैं । इस संशयमें सर्प और रस्सी अथवा वृक्ष और मनुष्य दोनोंमेंसे एकभी वस्तु निश्चित नहीं होती है । पदार्थका ठीक तरहसे समझमें न आना ही संशय है । क्या कोई स्याद्वादमें इस तरहका संशय बता सकता है? स्याद्वाद कहता है कि, एकही वस्तुको भिन्न भिन्न अपेक्षासे; अनेक तरहसे देखो । एक ही वस्तु अमुक अपेक्षासे ‘अस्ति’ है यह निश्चित बात है; और अमुक अपेक्षासे ‘नास्ति’ है यह भी बात निश्चित है । इसी तरह, एक वस्तु अमुक दृष्टिसे नित्य स्वरूपभी निश्चित है और अमुक दृष्टिसे अनित्यस्वरूप भी निश्चित है । इस तरह एक ही पदार्थको, परस्परमें विरुद्ध मालूम होनेवाले दो धर्मोंसहित होनेका जो निश्चय करना है, वही स्याद्वाद है । इस स्याद्वादको ‘संशयवाद’ कहना मानों प्रकाशको अंधकार बताना है ।

“ स्याद् अस्त्येव घटः ” “ स्याद् नास्त्येव घटः । ” ...

“ स्याद् नित्य एव घटः ” “ स्याद् अनित्य एव घटः ”

स्याद्वादके ‘एव’ कार युक्त इन वाक्योंमें अमुक अपेक्षासे घट ‘सत्’ ही है और अमुक अपेक्षासे घट ‘असत्’ ही है ।

१ वास्तवमें विरुद्ध नहीं ।

२—‘स्यात्’ शब्दका अर्थ होता है—अमुक अपेक्षासे । [ सत्-

स्याद्वादके संबंधमें कुछ साग कहते हैं कि, यह संशयवाद है निश्चयवाद नहीं। एक पदार्थको नित्य भी समझना और अनित्य भी, अथवा एक ही वस्तुका 'सत्' भी मानना और 'असत्' भी मानना संशयवाद नहीं है तो और क्या है ? मगर विचारके लोगोंको यह कथन-यह प्रश्न अशुभ जान पड़ता है।

१—स्याद्वादके विषयमें तार्किकोंकी ठर्कणएँ अतिप्रबल हैं। हरिमद्रसरिने 'अनेकान्तब्रह्मपताका' में इस विषयका प्रौढताके साथ खोजन किया है।

२—गुजरातक प्रसिद्ध विद्वान् श्री० अरानंदशर्करा भुवने अपने एक व्याख्यानमें स्याद्वादके संबंधमें कहा था—स्याद्वादका सिद्धांत अनेक सिद्धान्तोंको देखकर उनका समन्वय करनेके लिए प्रकट किया गया है। स्याद्वाद हमारे सामने एकमात्रका दृष्टिबिन्दु उपस्थित करता है अकारणार्थमें स्याद्वाद के ऊपर जो आपेक्ष किया है, उसका,—गुरु रहस्यके साथ कोई संबंध नहीं है। यह निश्चय है कि विविधदृष्टि बिन्दुओं-द्वारा म्नीकत्व किये बिना किसी वस्तुका सपूर्ण स्वरूप समझमें नहीं आ सकता है। इसलिए स्याद्वाद उपयुगी और सार्थक है। महात्मारक सिद्धान्तोंमें बताया गये स्याद्वादको कई संशयवाद बताते हैं। मगर मैं यह बात नहीं मानता। स्याद्वाद संशयवाद नहीं है। यह हमको एक मार्ग बताता है—यह हमें सिखाता है कि निश्चयका अवलोकन किस तरह करना चाहिए।

काशीके स्वर्गीय महम्मदोपाध्याय राममिश्रशास्त्रीने स्याद्वादके लिए अपना जो उत्तम अभिप्राय दिया था उसके लिए उनका सुमन-सम्मेजन सार्थक व्याख्या न देखना चाहिए।

हिए । 'स्यात्' शब्दका अर्थ—'कदाचित्' 'शायद' या इसी

१—“ इच्छन् प्रधानं सत्त्वाद्यैर्विरुद्धैर्गुम्फितं गुणैः ।  
साख्य. सख्यावता मुख्यो नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

२—“ चित्रमेकमनेक च रूप प्रामाणिक वदन् ।  
योगो वैशेषिको वापि नानेकान्त प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

भावार्थ—नैयायिक और वैशेषिक एक चित्र रूप मानते हैं ।  
जिसमें अनेक वर्ण होते हैं उसे चित्र रूप कहते हैं । इसको एकरूप  
और अनेकरूप कहना यह स्याद्वादकी सीमा है ।

३—“ विज्ञानस्यैकमाकारं नानाऽऽकारकरम्बितम् ।  
इच्छस्तथागत प्राज्ञो नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

४—“ जातिव्यक्त्यात्मक वस्तु वदन्ननुभवोचितम् ।  
भट्टो वापि मुरारिर्वा नानेकान्त प्रतिक्षिपेत् ” ॥

“ अवद्ध परमार्थेन बद्ध च व्यवहारतः ।

ब्रुवाणो ब्रह्मवेदान्ती नानेकान्त प्रतिक्षिपेत् ”

“ ब्रुवाणमिन्नभिन्नार्थान् नयभेदव्यपेक्षया ।

प्रतिक्षिपेयुर्नो वेदा स्याद्वाद सार्वतान्त्रिकम् ” ॥

—यशोविजयर्जाकृत अध्यात्मोपनिषद् ।

भावार्थ—“ जाति और व्यक्ति इन दो रूपोंसे वस्तुको बताने-



अमुक अपेक्षासे पट 'नित्य' ही है और अमुक अपेक्षासे पट 'अनित्य' ही है—इस प्रकार नियमारमक अथ समझना चा

होगे, अतो इसका विशेष विवरण है ] विज्ञान दृष्टिसे दर्शन शास्त्रोंका अर्थोक्तन करनबासे मही प्रकारसे समझ सकते है कि, प्रत्येक दर्शनकारको 'स्वाज्ञादसिद्धान्त' स्वीकारना पडा है । तत्व, रज, और तम, इन तीन परस्पर विरुद्ध गुणवाली प्रकृतिको मानन बाळा सांकेतिक दर्शन; पृथ्वीको परमाणु रूपसे निम्न और स्थूलरूपसे अनित्य माननेवाला तथा द्रव्यत्व, पृथ्वीरज आदि घटकोंको सामान्य और विशेषरूपसे स्वीकार करनबाळा नैयायिक, वैशेषिक दर्शन; अनेक वर्णयुक्त वस्तुके अनेक वर्णकारवासे एक विशुद्धामको, जिसमें अनक विरुद्ध वर्ण प्रतिभासित होते है—माननेवाला बौद्ध दर्शन, प्रमाता, प्रमिति और प्रवेप आकारवाळ एक ज्ञानको, जो उन तीन पदार्थोंका प्रतिभासरूप है, मज्जर कानेवाळा मीमांसक दर्शन और अन्य प्रकारसे दूसरे भी स्वाज्ञादको अर्थात् स्वीकार करते है । अन्तमें चार्वाकको भी स्वाज्ञादका आज्ञामें बंधना पडा है । जैसे—पृथ्वी, अछ, तेज और वायु इन चार तत्वोंके सिवा पंचवा तत्व चार्वाक नहीं मानते । इस लिए चार तत्वोंमें उत्पन्न होनेवाळे चैतन्यको चार्वाक चार तत्वोंसे अलग नहीं मान सकता है । चार्वाक यह भी जानता है कि, चैतन्यको पृथिव्यादिप्रत्यक्षतत्त्वरूप माना जाय तो घट्टदि पदार्थोंके चेतन बन जानेका दोष आ जाता है । अतएव चार्वाकका यह कथन है या चार्वाकको यह कहना चाहिए कि—चैतन्य, पृथिव्यादिअनकतत्त्वरूप है । इस तरह एक चैतन्यको अनेकवस्तुरूप—अनेकतत्त्वात्मक मानना यह स्वाज्ञादहीकी मुद्रा है ।

हिए । 'स्यात्' शब्दका अर्थ—'कदाचित्' 'शायद' या इसी

१—“ इच्छन् प्रधानं सत्त्वाद्यैर्विरुद्धैर्गुम्फितं गुणैः ।

साख्य सख्यावता मुख्यो नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

२—“ चित्रमेकमनेक च रूप प्रामाणिक वदन् ।

योगो वैशेषिको वापि नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

भावार्थ—नैयायिक और वैशेषिक एक चित्र रूप मानते हैं । जिसमें अनेक वर्ण होते हैं उसे चित्र रूप कहते हैं । इसको एकरूप और अनेकरूप कहना यह स्याद्वादकी सीमा है ।

३—“ विज्ञानस्यैकमाकारं नानाऽऽकारकरम्बितम् ।

इच्छस्तथागत. प्राज्ञो नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

—हेमचन्द्राचार्यकृत वीतरागस्तोत्र ।

४—“ जातिव्यक्त्यात्मक वस्तु वदन्ननुभवोचितम् ।

भट्टो वापि मुरारिर्वा नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ” ॥

“ अबद्ध परमार्थेन बद्ध च व्यवहारतः ।

ब्रुवाणो ब्रह्मवेदान्ती नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत् ”

“ ब्रुवाणमिन्नभिन्नार्थान् नयभेदव्यपेक्षया ।

प्रतिक्षिपेयुर्नो वेदा स्याद्वाद सार्वतान्त्रिकम् ” ॥

—यशोविजयर्जाकृत अध्यात्मोपनिषद् ।

भावार्थ—“ जाति और व्यक्ति इन दो रूपोंसे वस्तुको बताने-

प्रकारके दूसरे संशयात्मक शब्दोंसे नहीं करना चाहिए। निम्न वस्तुमें संशयात्मक शब्दका क्या काम? घटकों घटरूपसं समझना जिसका अर्थ है—निम्नरूप है, उतनाही अर्थ—निम्नरूप, घटको अणु अणु छिटके अनित्य और नित्य दोनोंरूपसे, समझना है। इससे स्याद्वाद् अव्यवस्थित या अस्थिर सिद्धान्त ही नहीं कहा जा सकता है।

अब वस्तुके प्रत्येक धर्ममें स्याद्वादकी विवेचना, जिसको 'सप्तमङ्गी' कहते हैं, की जाती है।

बाहे मूढ और मुरारि स्याद्वादकी उपेक्षा नहीं कर सकते हैं।" "आत्माका व्यवहारसे ब्रह्म और परमार्थसे अणु माननेवाले ब्रह्मवादी स्याद्वादका विरस्कार नहीं कर सकते हैं।" "भिन्न भिन्न तर्कोंकी विवक्षासे भिन्न भिन्न अर्थोंका प्रतिपादन करनेवाले वेद सर्व तन्त्र सिद्ध स्याद्वादको भिन्नार नहीं दे सकते हैं।

५. यह ध्यानमें रखना चाहिए कि इस तरह माननेमें ही आत्मा की गरज पूरी नहीं होती है। और इस लिए आत्माहीदिके प्रप्य देखने चाहिए। स्याद्वादके सबधमें चार्वाककी सम्मति लेनी चाहिए या नहीं, इस विषयमें हेमचन्द्राचार्य वशिष्ठरागसौत्रमें लिखते हैं कि—

‘सम्मतिर्विमतिर्वीपि चार्वाकस्य न मृण्यते।

परखाकाऽऽश्रममाश्रेषु यस्य मुच्यति संतुषी ॥ ४

भाषा—स्याद्वादके संबधमें चार्वाककी, जिसकी बुद्धि परखाक आत्मा और मासक सर्वधमें मूढ हो गई है, सम्मति या विमति [ धर्मदगी या मायमर्गा ] देखनेकी जरूरत नहीं है।

## सप्तभंगी.

ऊपर कहा जा चुका है कि 'स्याद्वाद' भिन्न भिन्न अपेक्षासि आस्तित्व-नास्तित्व, नित्यत्व-अनित्यत्व आदि अनेक धर्मोंका एकही वस्तुमें होना बताता है। इससे यह समझमें आता है कि वस्तुस्वरूप जिस प्रकारका हो, उसी रीतिसे उसकी विवेचना करनी चाहिये। वस्तुस्वरूपकी जिज्ञासावाले किसीने पूछा कि—“घडा क्या अनित्य है” उत्तरदाता यदि इसका यह उत्तर दे कि घडा अनित्य ही, है तो उसका यह उत्तर या तो अधूरा है या अयथार्थ है। यदि यह उत्तर अमुक दृष्टि-विन्दुसे कहा गया है तो वह अधूरा है। क्यों कि उसमें ऐसा कोई शब्द नहीं है जिससे यह समझमें आवे कि यह कथन अमुक अपेक्षासे कहा गया है। अतः वह उत्तर पूर्ण होनेके लिए किसी अन्य शब्दकी अपेक्षा रखता है। अगर वह संपूर्ण दृष्टि-विन्दुओंके विचारका परिणाम है तो अयथार्थ है। क्योंकि घडा ( प्रत्येक पदार्थ ) संपूर्ण दृष्टि-विन्दुओंसे विचार करनेपर अनित्यके साथही नित्य भी प्रमाणित होता है। इससे विचारशील समझ सकते हैं कि—वस्तुका कोई धर्म बताना हो तब इस तरह बताना चाहिए कि जिससे उसका प्रतिपक्षी धर्मका उसमेंसे लोप न हो जाय। अर्थात् किसी भी वस्तुको नित्य बताते समय, उसे कथनमें कोई ऐसा शब्द भी जरूर आना चाहिए कि जिससे उस वस्तुके अंदर रहे हुए अनित्यत्व धर्मका अभाव मालूम न हो। इसी तरह किसी वस्तुको अनित्य बतानेमें भी

ऐसा छन्द अंदर रखना चाहिए कि जिससे उस वस्तुगत नित्यत्वका अभाव सूचित न हो'। संस्कृत मापामें ऐसा छन्द 'स्वात्' है। 'स्वात्' शब्दका अर्थ होता है 'अमुक अपेक्षास'। 'स्वात्' शब्द अथवा इसीका अर्थवाची 'कर्त्तव्य शब्द' या अमुक अपेक्षासे' वाक्य जोड़कर 'स्वात् नित्य एव घट'—“घट अमुक अपेक्षास अनित्य ही है, इस तरह विवेचन करनेमें घटमें अमुक अन्य अपेक्षासे जा नित्यत्वधर्म रहा हुआ है, उसमें पाषा नहीं पहुँचती है। इससे यह समझमें आ जाता है कि वस्तुस्वरूपक अनुसार शब्दोंका प्रयोग कैसे करना चाहिए जैन शास्त्रकार कहते हैं कि वस्तुक प्रत्येक धर्मक विधान और निषेधसंभव रखनेवाला छन्दप्रयोग सात प्रकारक हैं। उदाहरणार्थ हम 'घट' का लेकर इसके अनित्यधर्मका विचार करेंगे।

प्रथम शब्द प्रयोग—'यह निश्चित है कि घट अनित्य है। मगर वह अमुक अपेक्षासे। इस वाक्यमें अमुक छटितसे घटमें सुगम्यतया अनित्य धर्मका विधान होता है।

दूसरा शब्दप्रयोग—'यह निःसंदेह है कि घट अनित्य धर्मराहित है मगर अमुक अपेक्षासे।' इस वाक्यद्वारा घटमें अमुक अपेक्षास अनित्य धर्मका मुख्यतया निषेध किया गया है।

तीसरा शब्द प्रयोग—किसाने पूछा कि— 'घट क्या अनित्य

१ इसी तरह 'अस्तित्व' आदि धर्मोंमें भी समझ लेना चाहिए।

२—'स्वात्' छन्द या उसीका अर्थवाची दूसरा छन्द जोड़-

बिनाभी बचनमध्यबद्ध होता है; मगर न्युत्पन्न पुटपत्रे सर्वत्र भव

३—त-द्विजा अनुसंधान रहा करता है।

और, नित्य, दोनों धर्मवाला है ?” उसके उत्तरमें कहना कि—  
 “ हाँ, घट अमुक्त अपेक्षासे, अवश्यमेव नित्य और अनित्य है।  
 “ यह तीसरा वचन-प्रकार है । इस वाक्यसे मुख्यतया अनित्य  
 धर्मका विधान और उसका निषेध, क्रमशः किया जाता है ।

चतुर्थ शब्द प्रयोग—“ घट किसी अपेक्षासे अवक्तव्य है ।”  
 घट अनित्य और नित्य दोनों तरहसे क्रमशः बताया जा सक-  
 ता है, जैसा कि तीसरे शब्दप्रयोगमें कहा गया है । मगर  
 यदि क्रम विना—युगपत् ( एक ही साथ ) घटको अनित्य  
 और नित्य बताना हो तो, उसके लिए जैनशास्त्रकारोंने,  
 ‘ अनित्य ’ ‘ नित्य ’ या दूसरा कोई शब्द उपयोगमें नहीं  
 आ सकता इसलिए ‘ अवक्तव्य ’ शब्दका व्यवहार किया है ।  
 यह है भी ठीक । घट जैसे अनित्य रूपसे अनुभवमें आता है ।  
 उसी तरह नित्य रूपसे भी अनुभवमें आता है । इससे, घट,  
 जैसे केवल अनित्य रूपमें नहीं ठहरता वैसे ही केवल नित्य-  
 रूपमें भी घटित नहीं होता है । बल्के वह नित्यानित्यरूप  
 विलक्षणज त्रिवाला ठहरता है । ऐसी हालतमें घटको यदि  
 यथार्थ रूपमें नित्य और अनित्य दोनों तरहसे—क्रमशः नहीं  
 किन्तु एक ही साथ बताना हो तो शास्त्रकार कहते हैं कि  
 इस तरह बतानेके लिए कोई शब्द नहीं है । अतः घट  
 अवक्तव्य है ।

---

१ शब्द एक भी ऐसा नहीं है कि जो 'नित्य' और अनित्य दोनों  
 धर्मोंको एक ही साथमें, मुख्यतया प्रतिपादन कर सके । इस प्र-  
 कारसे प्रतिपादन करनेकी शब्दोंमें शक्ति नहीं है । ' नित्यानित्य '

चार वचन-प्रकार बताय गये । उनमें सूत्र वों प्रारंभके दो ही हैं । पिछले दो वचन-प्रकार प्रारंभके दो वचनप्रकारके संयोगसे उत्पन्न हुए हैं । “ कथञ्चित्-अमुक अपेक्षामे घट अनित्य ही है । ” “ कथञ्चित्-अमुक अपेक्षामे घट नित्य ही है । ” ये प्रारंभके दो वाक्य, जो अर्थ बताते हैं वही अर्थ तीसरा वचन प्रकार क्रमशः बताता है; और, उसी अर्थको

यह समाप्त-वाक्य भी क्रमहीसे नित्य और अनित्य धर्मोंका प्रतिपादन करता है । एक साथ नहीं । “ सकृदुच्चरितं पदं सकृदुच्चार्य गमयति ” अर्थात् “ एक पदमकटैकधर्मोवच्छिन्नमेवार्थं बोधयति ” । इस न्यायसे, “ एक शब्द, एकबार एक ही धर्मको एक ही धर्ममे युक्त अर्थको प्रकट करता है ” ऐसा अर्थ निकलता है । और इससे यह समझना चाहिए कि-सूर्य और चंद्र इन दोनोंका वाक्यक पुनरुक्त शब्द ( ऐसे ही अनेक अर्थवाले 'दूमे शब्द भी ) सूर्य और चंद्रके क्रमशः बोधन करता है, एक साथ नहीं । इसमे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि यदि अनित्य नित्य धर्मोंको एक साथ बतलानके लिए कोई महीन सांकेतिक शब्द घटा जायगा तो उससे भी फायदा नहीं चलेगा ।

यहाँ यह बात स्पष्टानमें रखनी चाहिए कि एक ही साथमे, मुख्यतासे नहीं कहे जा सकें ऐसे अनित्यधर्म-नित्यधर्मोंका 'अवतत्त्व' शब्द ने भी कथन नहीं हो सकता है किन्तु, वे धर्म मुख्यतया एक ही साथ नहीं कहे जा सकते हैं, इसलिये वस्तुमें 'अवतत्त्व' नामका धर्म प्राप्त होता है किन्तु 'अवतत्त्व', धर्म 'अवतत्त्व', ८८ अथवा ९१ आता है ।

चौथा वाक्य युगपत्-एक साथ बताता है । इस चौथे वाक्य पर विचार करनेसे यह समझमें आ सकता है कि, घट किसी अपेक्षासे अवक्तव्य भी है । अर्थात् किसी अपेक्षासे घटमें ' अवक्तव्य ' धर्म भी है; परन्तु घटको कभी एकान्त अवक्तव्य नहीं मानना चाहिए । यदि ऐसा मानेंगे तो घट जो अमुक अपेक्षासे अनित्य और अमुक अपेक्षासे नित्य रूपमें अनुभवमें आता है, उसमें बाधा आ जायगी । अतएव ऊपरके चारों वचनप्रयोगोंको ' स्यात् ' शब्दसे युक्त, अर्थात् कथंचित्-अमुक अपेक्षासे, समझना चाहिए ।

इन चार वचन प्रकारोंसे अन्य तीन वचन-प्रयोग भी उत्पन्न किये जा सकते हैं ।

पाँचवाँ वचन-प्रकार—" अमुक अपेक्षासे घट अनित्य होनेके साथ ही अवक्तव्य भी है । "

छठा वचन प्रकार—" अमुक अपेक्षासे घट नित्य होनेके साथ ही अवक्तव्य भी है । "

सातवाँ वचन-प्रकार—" अमुक अपेक्षासे घट नित्य-अनित्य होनेके साथ ही अवक्तव्य भी है । "

सामान्यतया, घटका तीन तरहसे-नित्य, अनित्य और अवक्तव्यरूपसे-विचार किया जा चुका है । इन तीन वचन प्रकारोंके उक्त चार वचन-प्रकारोंको साथ मिला देनेसे सात वचनप्रकार होते हैं । इन सात वचन-प्रकारोंको जैन ' सप्तभंगी ' कहते हैं । ' सप्त ' यानी सात, और ' भंग ' यानी वचनप्रकार । अर्थात् सात वचन-प्रकारके समूहको सप्तभंगी



कहते हैं । इन सातों बचन प्रयोगोंको भिन्न-भिन्न अपेक्षासे भिन्न भिन्न दृष्टिसे-समझना चाहिए । किसीभी बचनप्रकारको एकान्त दृष्टिसे नहीं मानना चाहिए । यह बात ता सरसतासे समझमें आ सकती है कि, यदि एक बचन-प्रकारको एकान्त दृष्टिसे मानेंगे, ता दूसरे बचनप्रकार असुल्य हो जायेंगे ।

यह सप्तमगी ( सात बचनप्रयोग ) दो भागोंमें, भिन्नक की जाती है । एकको कहते हैं 'सकलादेश' और दूसरेको 'विकला

१ " सर्वत्राऽऽप्यं ध्वनिर्बिभिमितिषेभाम्यां स्वाधेमभिद्रवान सप्त-  
मङ्गीमनुगच्छति । "

" एकत्रावस्तुमि एकैकधर्मपर्यनुयोगवशाद् भविरोधेन व्यस्तयोः  
सदस्तयोश्च विधिमिवेषयो कस्यनया स्यात्काराङ्गिता सप्तभा-नाक्-  
प्रयोग-सप्तमगी । "

स्यादस्येव सर्वम् इति विधिकस्यनया प्रथमो मङ्ग । "

' स्याद् नास्येव सर्वम्, इति निवेशकस्यनया द्वितीय ]

" स्यादस्येव स्याद्नास्येव, इति क्रमतो विधिनियेव कस्यनया  
तृतीय । "

" स्यादस्येव व्यमेव, इति युगपद्विधिनियेवकस्यनया चतुर्थे । "

" स्यादस्येव स्यादस्येव व्यमेव इति विधिकस्यनया युगपद् विधि-  
नियेवकस्यनया च पञ्चम । "

" स्याद् नास्येव स्यादस्येव व्यमेव इति निवेशकस्यनया युगपद्  
विधिनियेव कस्यनया च षष्ठ । "

" स्यादस्येव स्याद्नास्येव स्यादस्येव व्यमेव, इति क्रमतो विधि-  
नियेवकस्यनया युगपद्विधिनियेव कस्यनया च सप्तम । "

देश' । "अमुक अपेक्षासे घट अनित्यही है ।" इस वाक्यसे अनित्य धर्मके साथ रहते हुए घटके दूसरे धर्मोंको बोधनकरानेका कार्य 'मकलादेश' करता है । 'सकल' यानी तमाम धर्मोंको 'आदेश, यानी कहनेवाला । यह 'प्रमाणवाक्य भी कहा जाता है । क्योंकि प्रमाण वस्तुके तमाम धर्मोंको विषय करनेवाला माना जाता है । 'अमुक अपेक्षासे घट अनित्य ही है ।" इस वाक्यसे घटके केवल 'अनित्य' धर्मको बतानेका कार्य 'विकलादेश' का है । 'विकल' यानी अपूर्ण । अर्थात् अमुक वस्तुधर्मको 'आदेश' यानी कहनेवाला 'विकलादेश' है । विकलादेश 'नय'—वाक्य माना गया है । 'नय' प्रमाणका अंश है । प्रमाण सम्पूर्ण वस्तुको ग्रहण करता है; और नय उसके अंशको ।

इस बातको तो हरेक समझता है कि, शब्द या वाक्यका कार्य अर्थबोध करनेका होता है । वस्तुके सम्पूर्ण ज्ञानको 'प्रमाण' कहते हैं और उस ज्ञानको प्रकाशित करनेवाला वाक्य 'प्रमाणवाक्य' कहलाता है । वस्तुके अमुक अंशके ज्ञानको 'नय' कहते हैं और उस अमुक अंशके ज्ञानको प्रकाशित करनेवाला वाक्य 'नयवाक्य' कहलाता है । इन प्रमाणवाक्यों और नयवाक्योंको सात विभागमें बाँटनेकी नाम 'सप्तभंगी' है ।

---

१—यह विषय अत्यंत गहन हैं, विस्तृत हैं । सप्तभंगीतरंगिणी नामा जैन तर्कसंग्रहमें इस विषयका प्रातपादन किया गया है । 'संमतिप्रकरण' आदि जैन न्यायशास्त्रोंमें इस विषयका बहुत गंभीरतासे विचार किया गया है ।

- अब नयाका, थोड़ासा वर्णन, किया जायगा ।

२९

नय ।

एक ही वस्तुके विषयमें भिन्न-भिन्न दृष्टिविन्दुओंसे, उत्पन्न होनेवाले भिन्न-भिन्न यथाथ अभिलाषाओंको 'नय' कहते हैं। एक ही मनुष्य भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें काका, मामा, मती-आ, मानआ, माई, पुत्र, पिता, असुर, और जमाई समझा जाता है, सो यह 'नय' क सिधा और क्लृप्त नहीं है। हम यह बता चुके हैं, कि वस्तुमें एकही धर्म नहीं है। अनेक धर्म वाली वस्तुमें अमुक धर्मसे संबध रखनेवाला जो अभिप्राय प्रेषता है उसको अंशशास्त्रोंने 'नय' संज्ञा दी है। वस्तुमें कितने धर्म हैं उनसे सबध रखनेवाले कितने अभिप्राय हैं व सब 'नय' कहलाते हैं।

एक ही घट वस्तु मूल द्रव्य-मिष्ट्रीकी अपवा विनाशी नहीं है; नित्य है। परन्तु घटके आकाररूप परिवारही दृष्टि से विनाशी है। इस तरह भिन्न-भिन्न दृष्टि विन्दुसे घटको नित्य और विनाशी माननवाली दोनों मान्यताएँ 'नय' हैं।

इस बातको सब मानते हैं कि आत्मा नित्य है। और यह बात है भी ठाक; क्योंकि उसका नाश नहीं होता है। मगर इस बातका सबक अनुभव हो सकता है, कि उसका परिवर्तन विषिष्य तरहसे होता है। कारण, आत्मा किसी समय प्रकृत अवस्थामें होता है, किसी समय मनुष्य स्थिति प्राप्त करता

हैं; कभी देवगतिका भोक्ता बनता है और कभी नरकादि दुर्गतियोंमें जाकर गिरता है। यह कितना परिवर्तन है ? एक ही आत्माकी यह कैसी विलक्षण अवस्था है ? यह क्या बताती है ? आत्माकी परिवर्तनशीलता। एक शरीरके परिवर्तनसे भी, यह समझमें आ सकता है कि, आत्मा परिवर्तनकी घटमालमें फिरता रहता है ऐसी स्थितिमें यह नहीं माना जा सकता है कि, आत्मा सर्वथा—एकान्ततः नित्य है। अतएव यह माना जा सकता है कि आत्मा न एकान्ततः नित्य है; न एकान्ततः अनित्य है; बल्के नित्यानित्य है। इस दशामें आत्मा जिस दृष्टिसे नित्य है वह, और जिस दृष्टिसे अनित्य है वह, दोनों ही दृष्टियाँ ' नय ' कहलाती हैं।

यह बात सुस्पष्ट और निस्सन्देह है कि, आत्मा शरीरसे जुदा है। तो भी यह ध्यानमें रखना चाहिए कि, आत्मा शरीरमें ऐसे ही व्याप्त हो रहा है जैसे कि मक्खनमें घृत। इसीसे शरीरके किसी भी भागमें जब चाट पहुँचती है, तब तत्काल ही आत्माको वेदना होने लगती है। शरीर और आत्माके ऐसे प्रगाढ संबंधको लेकर जैनशास्त्रकार कहते हैं कि यद्यपि आत्मा शरीरसे वस्तुतः भिन्न है, तथापि सर्वथा नहीं। यदि सर्वथा भिन्न मानेंगे तो, आत्माको, शरीर पर आघात लगनेसे, कुछ कष्ट नहीं होगा, जैसे कि एक आदमी को आघात पहुँचानेसे दूसरे आदमीको कष्ट नहीं होता है; परन्तु आर्वाक्य-वृद्धका यह अनुभव है कि, शरीर पर आघात होनेसे आत्माको उसकी वेदना होती है। इसलिए किसी अशमें आत्मा और शरीरका अभेद भी मानना चाहिए। अर्थात्

शरीर और आत्मा भिन्न होनेके साथही कर्णचित् अभिन्न भी हैं। इस स्थितिमें जिस दृष्टिसे आत्मा और शरीर अभिन्न हैं वह, दोनों दृष्टियों ' नय ' कहलाती है।

जो अभिप्राय, ज्ञानसे माय माना जाता है, वह ' ज्ञान नय ' है और जो अभिप्राय क्रियास मायमिद्व बतता है वह क्रियानय ' है। ये दोनों अभिप्राय नय हैं।

जो दृष्टि, वस्तुकी तात्त्विकस्थितिसे अर्थात् वस्तुक मूलस्वरूपको स्पर्श करनेवाली है, वह ' निश्चयनय ' है और जो दृष्टि वस्तुकी बाह्य अवस्थाकी ओर लक्ष खींचती है वह ' व्यवहारनय ' है। निश्चयनय बतता है कि आत्मा ( सत्ता ही जाय ) शुद्ध बुद्ध-निरंजन-साक्षदानंदमय है और व्यवहार नय बतता है कि आत्मा, कमबद्ध अवस्थामें माहबान्-अविद्यावान् है। इस तरहसे निश्चय और व्यवहारके अनेक उदाहरण हैं।

अभिप्राय बतलानेवाले शब्द वाक्य, शास्त्र या सिद्धान्त सब ' नय ' कहलाते हैं। उक्त नय अपनी मर्यादामें माननीय हैं। परन्तु यदि वे एक दूसरेको असत्य ठहरानेके लिए वस्त्र हैं तो अमान्य हो जाते हैं। जैसे-ज्ञानसे मुक्ति बतानेवाला सिद्धान्त और क्रियास मुक्ति बतानेवाला सिद्धान्त-ये दोनों सिद्धान्त, स्वपक्षका मण्डन करते हुए यदि वे एक दूसरेका खण्डन करने लगे तो विरस्कारक पात्र हैं। इस तरह बटका अनित्य और नित्य बतलानेवाले सिद्धान्त, तथा आत्मा और शरीरका मंद और अमंद बतानेवाले सिद्धान्त यदि एक दूसरेपर आक्षेप करनेका उतावू हों, तो वे अमान्य ठहरते हैं।

यह समझ रखना चाहिए कि नय आंशिक सत्य है। आंशिक सत्य संपूर्ण सत्य नहीं माना जा सकता है। आत्माको अनित्य या घटको नित्य मानना सर्वांशमें सत्य नहीं हो सकता है। जो सत्य जितने अंशोंमें हो उसको उतने ही अंशोंमें मानना युक्त है।

इसकी गिनती नहीं हो सकती है कि वस्तुतः नय कितने हैं। अभिप्राय या वचनप्रयोग जब गणनासे बाहिर हैं तब नय—जो उनमें जुदा नहीं है—कैसे गणनाके अंदर हो सकते हैं। यानी नयोंकीभी गिनती नहीं हो सकती है। ऐसा होनेपर भी नयोंके मुख्यतया दो भेद बताये गये हैं—द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक। मूल पदार्थको 'द्रव्य' कहते हैं। जैसे—घड़ेकी मिट्टी। मूल द्रव्यके परिणामको 'पर्याय' कहते हैं। मिट्टी अथवा अन्य किसी द्रव्यमें जो परिवर्तन होता है वह सब पर्याय है। द्रव्यार्थिक का मतलब है, मूल पदार्थोंपर लक्ष्य देनेवाला अभिप्राय; और 'पर्यायार्थिक नय' का मतलब है पर्यायोंको लक्ष्य करनेवाला अभिप्राय। द्रव्यार्थिक नय सब पदार्थोंको नित्य मानता है। जैसे—घड़ा मूलद्रव्य—मृत्तिकारूपसे नित्य है। पर्यायार्थिक नय सब पदार्थोंको नित्य मानता है। जैसे—स्वर्ण, माला, जंजीर, कडे, अंगूठी आदि पदार्थोंमें परिवर्तन होता रहता है। इस, अनित्यत्वको परिवर्तन

१ " जानइया वयणपहा तावइया चैव ह्यति नयवाया । "

—'सम्मार्तिसूत्र' 'सिद्धसेनदिवाकर'

होने मिथनाही समझना चाहिये, क्यों कि सर्वथा-नाश या सर्वथा अपूर्व उत्पाद किसी वस्तुका कमी नहीं होता है।

प्रकारान्तरसे नयकेँ सात-मेव बताये गये हैं। नैगम, समग्र व्यवहार, ऋतुग्रह, शब्द, समामिरुद्ध और एवंभूत।

नैगम—'नैगम' का अर्थ है संकल्प-कल्पना। इस कल्पनास वा वस्तुव्यवहार होता है,— 'भूतनैगम' 'भाविष्यत् नैगम' और 'वर्तमान नैगम'। जो वस्तु हो चुकी है उसका

वर्तमानरूपमें व्यवहार करना 'भूत नैगम' है। जैसे भाव-पदी दीवालीका दिन है कि जिस दिन महाशिवस्वामी मोक्षमें गये थे। यह भूतकालका वर्तमानमें उपचार है। महाशिवक निर्वाणका दिन भाव ( भाव दीवालीका दिन ) मान लिया जाता है। इस तरह भूतकालक वर्तमानमें उपचारक अनेक उदाहरण हैं। जानेवाली वस्तुको हुई कहना 'भाविष्यत् नैगम' है। जैसे चावल पक न हो; पक जानेमें थोड़ी ही दूर रही हो उस समय कहा जाता है कि 'चावल पक गये हैं। ऐसा वाक्यव्यवहार प्रचलित है। अथवा—अर्धन् दूधको सुक्त होनेक पहिले ही कहा जाता है कि सुक्त हो गये। यह नैगमनय है। इधन, पानी आदि चावल पकानेका सामान इकट्ठा करत हुए मनुष्यको काह पूछे कि क्या करते हो? वह उत्तर दे कि मैं चावल पकाता हूँ।' यह उत्तर 'वर्तमान नैगमनय' है।

१ अथातस्य वतमानवत् कथम अत्र स भूतनैगम । यथा—'तदे काऽप दीपोऽसुवपर्वं संस्मिन् वर्तमानस्थात् मोक्षे गतवन्तं'

— नवप्रदीप, यशोविजयजी ।

क्यों कि चावल पकानेकी क्रिया यद्यपि वर्तमानमें प्रारंभ नहीं हुई है तोभी वह वर्तमान रूपमें बताई गई है ।

संग्रह—सामान्यतया वस्तुओंका समुच्चय करके कथन करना 'संग्रह' नय है । जैसे—'सारे शरीरोंका आत्मा एक है ।' इस कथनसे वस्तुतः सब शरीरोंमें एक आत्मा सिद्ध नहीं होता है । प्रत्येक शरीरमें आत्मा भिन्न भिन्न ही है; तथापि सब आत्माओंमें रही हुई समानजातिकी अपेक्षासे कहा जाता है कि—“सब शरीरोंमें आत्मा एक है ।”

व्यवहार—यह नय वस्तुओंमें रही हुई समानताकी उपेक्षा करके, विशेषताकी ओर लक्ष खींचता है । इस नयकी प्रवृत्ति लोकव्यवहारकी तरफ है । पाँच वर्णवाले भँवरेको 'काला भँवर' बताना इस नयकी पद्धति है । रस्ता आता है, कूडा क्षरता है इन सब उपचारोंका इस नयमें समावेश हो जाता है ।

ऋजुसूत्र—वस्तुमें होते हुए नवीन नवीन रूपांतरोंकी ओर यह नय लक्ष्य आकर्षित करता है । स्वर्णके मुकुट, कुंडल आदि जो पर्याय हैं उन पर्यायोंको यह नय देखता है । पर्यायोंके अलावा स्थायी द्रव्यकी ओर यह नय दृग्पात नहीं करता है । इसीलिए पर्याय विनश्वर होनेसे सदास्थायी द्रव्य इस नयकी दृष्टिमें कोई चीज नहीं है ।

शब्द—इस नयका कार्य है—अनेक पर्यायशब्दोंका एक अर्थ मानना । यह नय बताता है कि, कि 'कंपंडा' 'ब्रह्म'

१ इसके सिवा अन्य प्रकारसे बहुतसे भेद-प्रभेदोंकी व्याख्या इस नयमें आती है ।



‘वसन’ आदि शब्दोंका अर्थ एकही है।”

समाभिरुद्ध—इस नयकी पद्धति है—पर्याय शब्दोंके भेदसे अर्थका भेद मानना। यह कहता है, कि कुम कलश घट आदि शब्द यदि भिन्न अर्थवाले हैं; क्योंकि कुम, कलश, घट आदि शब्द यदि भिन्न अर्थवाले न हो तो घट, पट अर्थ आदि शब्द भी भिन्न अर्थवाले न हों चाहिये; इसलिए शब्द के भेदसे अर्थका भेद है।

एवंभूत—इस नयकी दृष्टिसे शब्द, अपने अर्थका वाचक (कहनेवाला) उस समय होता है, जिस समय वह अर्थ-पदार्थ उस शब्दकी व्युत्पत्तिसे क्रियाका जो भाव निकलता हो, उस क्रियामें प्रवृत्त हुआ हो। जैसे—‘गो’ शब्दकी व्युत्पत्ति है—‘गच्छतीति गौ’ अर्थात् जो गमन् करता है उस गो कहते हैं। मगर वह ‘गो’ शब्द—इस नयके अभिप्रायसे—प्रत्येक गठका वाचक नहीं हो सकता है; किन्तु केवल गमन क्रियामें प्रवृत्त-चलती हुई-गायका ही वाचक हो सकता है। इस नयका कथन है कि, शब्दकी व्युत्पत्तिक अनुसार ही यदि उसका अर्थ होता है तो उस अर्थका वह शब्द कह सकता है।

यह बात मस्ती प्रकारसे समझाकर कही जा चुकी है कि वे साठों नय एक प्रकारके दृष्टिबिन्दु है। अपनी अपनी मर्यादा में स्थित रहकर, अन्य दृष्टिबिन्दुओंका खंडन न करनेहीमें मर्यादाकी साधुता है। मध्यम्य पुरुष सब नयोंको भिन्न भिन्न

दृष्टिमें मान देकर तत्त्वक्षेत्रकी विशाल भीमाका अवलोकन करते हैं । इमीलिए ये रागद्वेषकी बाधा न होनेसे, आत्माकी निर्मल दशा प्राप्त कर सकते हैं ।

[ पा. बो. ज. घ. पं. त्रो. और ज. द. से ।

इति ।

---

१ 'नय'-का विषय गंभीर हैं । इसके अंदर भिन्न भिन्न अनेक व्याख्याएँ समाविष्ट हैं । उमास्वाती महाराजकृत तत्त्वार्थसूत्र और यशो विजयजी उपाध्यायकृत नयप्रदीप, नयोपदेश, नयरहस्य आदि तथा अन्य अनेक ग्रन्थोंसे यह विषय विशेष रूपसे—स्पष्टतया समझमें आ सकता है ।

# पांच सम्यक्त्व.

सम्यक्त्व किसका कहना ? 'वत्वार्यभदानं सम्यग्दश  
नम्' वत्वार्य भदान करनेको [विद्यास रखनेका] सम्यक्त्व  
कहते है। तथा सचे दच सच गुरु, और सचा दयामयी घम  
पर सच दिलस विभाम रखना, उसीका नाम 'सम्यक्त्व' है

बह सम्यक्त्व ५ प्रकारका है - १ ब्राह्मदान सम्यक्त्व,  
२ उपशम सम्यक्त्व, ३ वेदक सम्यक्त्व, ४ क्षयोपशम सम्यक्त्व  
५ धार्मिक सम्यक्त्व ॥

## पांचों सम्यक्त्वकी स्थिति ।

१ ब्राह्मदान सम्यक्त्वकी स्थिति अपन्य १ समयकी,  
उत्कृष्टा ६ भावठिकाकी है । २ उपशम सम्यक्त्वकी स्थिति  
अपन्य और उत्कृष्टा अवसुद्धकी है । ३ वेदके सम्यक्त्वकी  
स्थिति अपन्य उत्कृष्टा एक समयकी है । ४ क्षयोपशम सम्य  
क्त्वकी स्थिति अपन्य एक समयकी, उत्कृष्टा ६९ सायस  
कुछ धार्मिक है । ५ धार्मिक सम्यक्त्वकी स्थिति प्रही होती है ।

## एक भवमें कौनसी सम्यक्त्व, कितनी बार आती है ?

१-२ शाश्वदान और उपशम सम्यक्त्व एक भवमें ( एक जन्ममें ) जघन्य एकवार [ दफह ] आती है और उत्कृष्टी पाँच बार आती है । ३ वेदक सम्यक्त्व, एक भवमें जघन्य उत्कृष्टी एकवार आती है । ४ क्षयोपशम सम्यक्त्व एक भवमें जघन्य एकवार आती है और उत्कृष्टी असंख्यातवार आती है । ५ क्षायिक सम्यक्त्व आनेवादा फिर नहीं जाती । आखिरतक रहती है ।

### सम्यक्त्वके भेद ।

उपशम सम्यक्त्वके ७ भेदः—१ अनंतानुबंधी क्रोध; २ मान, ३ माया, ४ लोभ, ५ मिथ्यात्व मोहनीय, ६ मिश्र मोहनीय, और ७ सम्यक्त्व मोहनीय, इन सातों प्रकृतियोंको उपशमानेसे ( ढाँकनेसे ) उपशम सम्यक्त्व कहलाता है । इन सातोंमेंसे किसीकी उपशमाने, और किसीको खपानेसे ( क्षय करनेसे ) 'क्षयोपशम' सम्यक्त्व कहलाता है ।

क्षयोपशम सम्यक्त्वके चार भेदः—१ उपरोक्त चार प्रकृतियोंको क्षय करनेसे तथा उपशमानेसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहलाता है । २ तथा पाँच प्रकृतियोंको क्षय करने, और दो प्रकृतियोंको उपशमानेसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहलाता है । ३ तथा छह प्रकृतियोंको क्षय करने एकको उपशमानेसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहलाता है । ४ तथा चार प्रकृतियोंको क्षय

करने, दाका उपस्थाने, और एकको बदनेमे 'क्षयोपशम वेदक सम्यक्त्व कहलाता है ।

द्वय वेदक सम्यक्त्वके ३ भेद — १ चार प्रकृतियोंके क्षय करने, और तीनके वेदनेका नाम 'द्वय वेदक सम्यक्त्व है । २ तथा पांच प्रकृतियोंके क्षय करने 'द्वीको वेदनेका नाम द्वय वेदक सम्यक्त्व है । ३ तथा छह प्रकृतियोंको क्षय करने और एकको वेदनेका नाम 'द्वयवेदक सम्यक्त्व है । ' ४ सातों प्रकृतियोंको क्षय करनेको 'त्रायिक सम्यक्त्व' कहते है ।

'औरभी सम्यक्त्व नव प्रकारका है ।

१ द्रव्य सम्यक्त्व, २ माय सम्यक्त्व, ३ निश्चय सम्यक्त्व  
४ व्यवहार सम्यक्त्व, ५ निःसर्ग सम्यक्त्व, ६ उपदेश सम्यक्त्व,  
७ कारक सम्यक्त्व, ८ रुचक सम्यक्त्व ९ दीपक सम्यक्त्व ॥

१ द्रव्य सम्यक्त्व किसको कहना ?—जो केवली तीर्थकरोंके बचनोंको तो यथातथ्य मानता हो, परंतु उनके बचनोंके रहस्यको न समझता हो उनके भेदानुमदको न जानता हो । और जो केवल गुरुसे लिया हुआ सम्यक्त्व पकड़ रक्खा हो, यह द्रव्य सम्यक्त्व है ।

२ माय सम्यक्त्व किसको कहना ?—जो तीर्थकरोंके बचनोंको रहस्य समझता हो, जो भेदानुमद जानता हो, यह माय सम्यक्त्व है, इस ऊपर कौषिकी दृष्टान्त—अमे कौषिके जैसा रूप हाता है वैसेही दीप हाता है—वदत्—माय सम्यक्त्व हाता भी जैसा तत्व रहस्य हाता है—वैसेही देखलता जानलता है ।

३ निश्चय सम्यक्त्व किसको कहना?—ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य में शुभभावोंमें रमण करनेको निश्चय सम्यक्त्व कहते हैं.

४ व्यवहार सम्यक्त्व किसको कहना?—जो बाह्य लक्षणोंसे [याने—साधु, श्रावकका आचार पालन और सामायिक पापघ्न प्रतिक्रमण त्याग—प्रत्याख्यान आदि करनेसे] जाना जाय। उसे-व्यवहार सम्यक्त्व कहते हैं।

५ निःसर्ग सम्यक्त्व किसको कहना?—जो गुरुके उपदेश विनाही जाति स्मरणादि ज्ञानके योगसे सत्य तत्त्वोंको जान-लेता है, विश्वास करलेता है, वह निःसर्ग सम्यक्त्व है। जैसे—मृगापुत्रके मुआफिक।

६ उपदेश सम्यक्त्व किसको कहना?—गुरुके उपदेशसे देवगुरु, धर्मको पहचानकर उनपर विश्वास रखनेको 'उपदेश सम्यक्त्व' कहते हैं।

७ कारक सम्यक्त्व किसको कहना? शास्त्रोंमें जैसा कहा कहा है—वैसाही आचार, पालन, क्रिया करनेको कारक सम्यक्त्व कहते हैं।

८ रोचक सम्यक्त्व किसको कहना?—जो शास्त्र और गुरुके वचनोंपर रुचि रखता हो,—वैसा करने, और चलनेका इरादा करता हो, परन्तु वह कर-या चल नहीं सकता, उसका 'रोचक सम्यक्त्व' कहते हैं।

९ दीपक सम्यक्त्व किसको कहना?—जो दूसरे लोगोंको तो सदुपदेश दे-मन्मार्ग बतावे, पर, आप, उस अनुसार न

खलें, जैसे दीपक झारोंक लिए हो प्रकाश करता है परन्तु वह अपन नीच अथवाही रखता है—इस दापक सम्यक्त्व करते हैं।

अब व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ भेद कहते हैं।

१ सम्यक्त्वकी चार अद्वयता — १ तत्त्वज्ञानका अभ्यास करें  
 २ तत्त्वज्ञानियों और बहुभुति आघाय महाराजों आदिकी सेवा करें। ३ कुद्वय, कुगुरु कुधर्मका परिचय (संगति) छोड़।  
 ४ कुद्वय, कुगुरु, कुधर्मपर प्रयत्न न रखें।

२ सम्यक्त्वके तीन लिंग—१ स्त्रीलिंग, २ पुरुषलिंग ३ नपुंसकलिंग \*

३ दश प्रकारका विनय — १ सम्यक्स्त्री अरिहंतका विनय करें २ सिद्धका विनय करें, ३ ज्ञानवानका विनय करें ४ सप्रसिद्धान्तका विनय करें ५ धर्मवान्—धर्मात्माओंका विनय करें ६ माधुका विनय करें ७ भगवाणका विनय करें

\* कोई सम्यक्त्वके तीन लिंग ये बताते हैं —

१—जैसे कोई कामी, युवान पुरुष मनश्चिच्छिन्न काम मोग विममे पर तृप्त होता है। जैसे सम्यक्स्त्री जीवमी शीतरागकी वाणी सुनकर तृप्त होता है।

२—जैसे कोई भूषा आत्मी मोहन पाकर तृप्त होता है। जैसे सम्यक्स्त्री जीवमी शीतरागकी वाणी श्रवणकर तृप्त होता है।

३ जैसे कोई विद्यामित्री पुरुष विद्या यज्ञमेवाके आचार्य, अध्यापक आदिका योग पाकर तृप्त होता है जैसे सम्यक्स्त्री (सम्यग्दृष्टि), जीवमी शीतरागकी वाणी सुनकर तृप्त होता है

८ उपाध्यायका विनय करें, ९ प्रवचनका विनय करें, १० सम्यग्दृष्टिका विनय करें.

४ सम्यक्त्वकी तीन शुद्धताः—१ मन शुद्धता, २ वचन शुद्धता, ३ काय शुद्धता.

[ १ मनसे अरिहंतोंका ध्यान करनेको मनशुद्धि कहते हैं, २ वचनसे अरिहंतोंके गुणग्राम करनेको वचन शुद्धि कहते हैं, ३ काय [ शरीर ] से अरिहंतोंको नमन करनेको—काय शुद्धि कहते हैं ]

४ सम्यक्त्वके पांच लक्षणः—१ शम, २ संभ्रम, ३ निर्वेद, ४ अनुकम्पा, और ५ आस्था ॥\*

( १ क्रोध, मान, माया. लोभके घटानेको शम कहते हैं, २ इन्द्रिय जनित—पौद्गलिक सुखोंको झूठे समझकर, आत्म-सुखमें तल्लीन होनेको संभ्रम कहते हैं । ३ प्रत्येक वस्तुको उदासीन भावोंसे भोगनेको निर्वेद कहते हैं, ४ दुःखी जीवों-पर परोपकारकरने, उनपर दया लाने और उनके उद्धारका मार्ग सोचने, वगैरह वगैरहको अनुकम्पा कहते हैं, ५ भगवत् वचन पर विश्वास रखनेको आस्था कहते हैं. )

५ सम्यक्त्वकी आठ प्रभावना [ याने धर्मदीपने धर्मोन्नति होनेके आठ रास्ते ) १ समाजमें आचार्य, गुरु आदि धर्मशास्त्रोंके ज्ञाता होतो धर्मोन्नति हो, २ धर्मोपदेशक अच्छे हो तो धर्मोन्नति हो, ३ न्यायशास्त्रके जान होतो धर्मोन्नति

\* शम संभ्रम निर्वेदानुकम्पास्तित्व लक्षणैः ॥ लक्षणैः पचमि सम्यक् सम्यक्त्वमुपलक्ष्यते ॥ १ ॥



हो, ४ अवसरके [ समयके ) ज्ञान हो तो धर्मोन्नति हो ५ तपस्वी हो तो धर्मोन्नति हो, ६ अनेक शास्त्रोंके ज्ञाता-विद्वान् हा तो धर्मोन्नति हो, ७ भिष्टभाषी हा तो धर्मोन्नति हो, ८ काव्य शास्त्रके ज्ञाता-कवि वर्गाह हो तो धर्मोन्नति हा \*

\* हमारे आग्रहके कतिपय साधु भावकोंका सम्यक्त्व ही आठ प्रभावनाओं पर अवश्य ध्यान देना चाहिये । इन आठ प्रभाव नोंमें इतना गूढ़ तत्व छुस २ कर मरा है कि इनपर जितना उदापोह किया जाय, उतना थोडा है, धन्य है हमारे उन पूर्वचार्योंको, कोटिघ घन्य है कि— उन्हेने किस खूबीसे हमें उन्नतिक आठ रास बतलाये ।

यदि—हमारे विचारार्थ पाठक इसपर सब विचार करेंगे तो उनके पता लग जायगा कि—इन आठोंमें प्राचीन और अर्वाचीन उन्नति पय सब समागये है । हमारे आचार्योंने कोई बात इनमेंबाकी न रखी जो इनमें न हो । समी प्रचारकी सुधारना इनमें आधुकी है । इनके सम्झमें इतना समूह चातुर्व है कि-मेरीही बेलि मी-क्या बड़े २ विद्वानोंकी लेखिमी में जानताहूँ इतकी प्रशंसा लि सनेको असमर्थ होगी । इन आठोंको जिपर लेजाओ उधरही ये आस कते कम दे सकत है । हमारे भावके कई माई, नारकर साधु-आ धर्मोन्नति या समाजान्मति की वर्तमान प्रणालिक विरोधी है उतका इस भिन्न पाठमें जाने बाछे आठ मार्गोंसे कुछ शिक्षा ग्रहण करना चाहिये । आसा है कि-उतकी इनसे अवश्य आयेसुछेगी ।

धुनिपरमानन्द जैन,

( ६ ) सम्यक्त्वके पांच अतिचारः-शंका, कांक्षा, विचि-  
कित्सा, मिथ्यात्वी की प्रशंसा और मिथ्यात्वी का परिचय ।

१-धर्ममें या केवली के वचनोंमें संशय लानको शंका कहते हैं ।

२-अन्य धर्मकी वांछा करने को ' कांक्षा कहते हैं ।

३-धर्मके फलमें या करनी के फलमें सन्देह करने ( जो मैं करनी करता हूँ इसका फल मुझे लगेगा या नहीं ) को विचिक्त्सा कहते हैं ।

४-मिथ्यादृष्टि याने अन्यमत मतान्तरों की प्रशंसा करनेको, मिथ्यात्वी [ पर पाखण्डी ] की प्रशंसा कहते हैं ।

५-मिथ्यादृष्टिका परिचय याने संगति करने को " मिथ्यात्वी परिचय " कहते हैं ।

( जो इन ५ बातोंको स्वीकार करता है, वह शुद्ध सम्यक्त्वी नहीं कहाता, इनका स्वीकार करनेसे सम्यक्त्वी की सम्यक्त्व दूषित होती हैं । )

सम्यक्त्वके पांच भूषणः-१-धर्ममें विचक्षण होना, २-चतुर्विध संघकी सेवाकरना, ३-गुणवान् की भक्ति करना, ४-धर्ममें दृढ रहना, ५-न्याय युक्तियों से मिथ्यात्वियों की बातोंका उत्तर देना । मिथ्यादृष्टियोंको अपने धर्मके तत्त्व समझाना ।

ये सम्यक्त्व के पांच भूषण हैं । ये गुण सम्यक्त्वी में होने से धर्मकी शोभा बढ़ती है ।

( ८ ) सम्यक्त्वके ६ आगारः-१-राजका, २-पंचोंका,

३-अपनेस अधिक बलवानका, ४-देवयोगका, ५ माता पिता का, ६-दुष्कालादिको ।-

[ अगर सम्यक्स्वीका, राजाक कहनसे, पंथोंके कहनेस, अपनेसे अधिक बलवानकी आज्ञासे, माता पिताक हुकमसे, देवयोगसे, दुष्काल आदिके पडनसे, मिथ्यात्वियोंका दानादि देना पड, तथा कोई धर्म बिरुद्ध या धीतरागकी आज्ञा बिरुद्ध एकाध काम करना पड तो उसकी सम्यक्त्वमें बह्ना ( दाव ) नहीं लग सकता । इसलिये सम्यक्त्व छेती वक्त से ६ आगार ( छत्र ) रक्ख आवे हैं ।

( ० ) सम्यक्त्व के छह दोष - १-पर पाखण्डीके पाम न आवे २- पर पाखण्डीसे संमापग न करे, ३ पर पाखण्डीको दान [ मोक्षका कारण समझकर ] न द ( अनुकम्पा बुद्धिसे दान का आगार है ), ४-पर पाखण्डीकी स्तुति न कर, ५-पर पाखण्डीका आदर सरकार न करे, ६-पर पाखण्डीको धर्म जानकर नमस्कार न करे-[ लाकिक व्यवहार रखनके लिए करना पड ता आगार है । ]

सम्यक्स्वी, इन छह दापों को छाड ता पूरा सम्यक्स्वी कहलाता है ।

सम्यक्स्वीकी छह भावना - १-सम्यक्स्वी जीव ऐसा विचारकरे कि मेरे महान् पुष्पक उदयम यह सम्यक्स्वरूप पवित्र रत्न हाथ धाया है इसलिये इसका मुझ संमाप्तकर रखना चाहिए और इस किंचित् मात्रमी मत्ता न करना चाहिए । २ सम्यक्स्वी जीव ज्या विचार करे कि-संसारमें इतना गुण जीव का एक सम्यक्स्वी आगार-मृत है । संम-

नगर निवासी जनोंको गढकोट खाई वगैरह का आधार है  
 वैसेही ज्ञान और चारित्र को सम्यक्त्व का आधार है । ३-  
 सम्यक्त्वी जीव ऐसा विचारें कि-जिस तरह पृथ्वी सब जीवोंको  
 आधारभूत है उसी तरह सम्यक्त्वभी ज्ञान और चारित्रका  
 आधारभूत है । क्योंकि सम्यक्त्व न होगा तो न ज्ञान स्थिर  
 रहसकेगा और न चारित्रही स्थिर रहसकेगा । ४-सम्यक्त्वी  
 जीव ऐसा विचारें कि-सर्वज्ञ कथित धर्मका भाजन [ पात्र-  
 स्थान, याने सम्यक्त्वन के रहनेकी जगह ] एक सम्यक्त्व ही है ।  
 ६-सम्यक्त्वी फिर ऐसा विचारें कि-जिसप्रकार चक्रवर्तिके  
 रत्नोंका भाजन निधान है वैसेही सर्व विरति, या देश विरति  
 का भाजन सम्यक्त्व है ।

सम्यक्त्वके छह स्थानकः— १-सम्यक्त्व, धर्मरूप वृक्षका  
 पेड है । २-सम्यक्त्व, धर्मरूप नगरका दुर्ग [ कोट ] है ।  
 ३-सम्यक्त्व, धर्मरूप मकानकी नीव है । ४-सम्यक्त्व, धर्म-  
 रूप भोजनका थाल ( पात्र ) है । ५-सम्यक्त्व, धर्मरूप  
 किराणोकी दुकान है ।\*

ये व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ भेद हुए ।

पांच सम्यक्त्वका स्वरूप पूरा हुआ ।

\* कहीं पर छह भावना इस प्रकार लिखी है — १-सम्यग्दृष्टि  
 पुरुष अपनी आत्माको असंख्यात प्रदेशी जाने, २-व्यवहारनयसे  
 आत्माको कर्मोंका कर्ता समझे, ३-व्यवहारनयसे आत्माको कर्मोंका  
 भोक्ता समझे, ४-अपनी आत्माको सिद्धोंके समान जाने, ५-अपनी  
 आत्माको मोक्षगतिमें जाने-वाला, जाने । ६-ज्ञान दर्शन चारित्र  
 और तप, इन चार कार्णोंको मोक्षगति में लेजानेवाले समझे ।

# नरकका विस्तार.

श्री पञ्चावणा सूत्रके दूसरे पदके अनुसार नरक ( नारकी ) का विस्तार करते हैं ।

नारकीके २१ द्वार ।

१-नामद्वार ।

७ सात नारकियोंके नाम - १-गमा, २ वंशा, ३ छीसा, ४ खंखना, ५ सीठा, ६ मषा, ७ मानबर्ह ।

२-गौत्र द्वार ।

सात नारकियोंके गौत्र - १ रत्नप्रभा २ शर्कराप्रभा, ३ बोलुप्रभा ४ पकपमा, ५ घूमप्रभा ६ तमप्रभा, ७ तमा प्रभा ।

३-अर्थद्वार ।

१ ' रत्नप्रभा ' यह नाम क्यों रक्खा गया ? उस नरकका काले रत्नोंमें मृत्तिका बिन्द है और उसकी काले रत्नोंमेंही पीठिका है इसमें उसका नाम रत्नप्रभा रक्खा गया है ।

२ ' शर्कराप्रभा ' नाम क्यों रक्खा ? उस नरकका मृत्तिका बिन्द पीठिकाकरीं जैसा है और पीठिकाकरीं जैसीही उसकी पीठिका है । इसलिये उसका नाम ' शर्कराप्रभा ' है ।

\* नरकमें रहनेवाले आबोकरी ' नारकी ' या ' नैरिका ' कहते हैं ।

३ ' वालुप्रभा ' नाम क्यों रक्खा ? इस नरकका मृत्तिका पिण्ड गरमगरम रेती जैसा है और गरम गरम रेती जैसीही इसकी पीठीका है इसलिए इसका नाम ' वालुप्रभा ' है ।

४ ' पंकप्रभा ' यह नाम क्यों रक्खा ? इसका मृत्तिका पिण्ड कीचड जैसा है और कीचड जैसीही इसकी पीठीका है इससे इसका नाम ' पंकप्रभा ' है ।

५ ' धूमप्रभा ' यह नाम क्यों रक्खा ? उसका धुँएँ जैसा मृत्ति-पिण्ड है और धुँएँ जैसीही पीठीका है इससे उसे ' धूमप्रभा ' कहते हैं ।

६ ' तमप्रभा ' यह नाम क्यों रक्खा ? इसका अन्धकार-मय मृत्तिका पिण्ड है और अन्धकारमय ही उसकी पीठीका है इससे उसका नाम ' तमप्रभा ' है ।

७ ' तमातमाप्रभा ' यह नाम क्यों रक्खा ? इसका तम-प्रभासेभी विशेष अन्धकारमय मृत्तिका पिण्ड है और विशेष अन्धकारमय ही उसकी पीठीका है इससे यह ' तमातमाप्रभा ' कही जाती है ।

## ४-५ पिण्डद्वार और पोलार द्वार ।

पहली नारकीका १८०००० हजार योजनका मृत्तिका पिण्ड है । उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड देनेपर, बीचमें १७८००००, योजनकी पोलार है । दूसरी नारकीका १,३२००,०० हजार योजन का

१-जिस वस्तुके अन्दर जो ' पोल ' होती है उसे ' पोलार ' कहते हैं ।

मृचिकापिण्ड है। उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ देने पर, बीचमें १३०००० हजार योजनकी पोलार है। तीसरी नारकीका १२८०० हजार योजनका मृचिका पिण्ड है। उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ देनेपर, बीचमें १२६००० हजार योजनकी पोलार है। चौथी नारकीका १२००० हजार योजनका मृचिका पिण्ड है। उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ देने पर बीचमें १२०००० हजार योजनकी पोलार है। पाँचवी नारकीका ११८००० हजार योजनका मृचिका पिण्ड है। उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ देनेपर बीचमें ११६००० योजनकी पोलार है। छठीनारकीका ११६००० योजनका मृचिका पिण्ड है। उसमेंसे एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ देनेपर बीचमें, ११४००० हजार योजनकी पोलार है। सातवी नारकीका १०८००० हजार योजनका मृचिका पिण्ड है। उसमेंसे ५२५०० हजार योजन ऊपर और ५२५०० योजन नीचे छोड़ देनेपर, बीचमें १०००० हजार योजनकी पोलार है।

### ६-नरका वासा द्वार ।

पहली नारकीमें १० लाख नरक वासा है । दूसरीमें २५

१-नरककी अर्धसंज्ञा जो मीटापम यामि दक्ष है, उसे पिण्ड कहते हैं । २ जिसमें नरकके बीच ( भेरिये ) रहते हैं उसे ' नरका वासा ' कहते हैं । बैसा-कि-गाव । १

लाख, तीसरीमें १५ लाख, चौथीमें १० लाख, पांचवीमें ३ लाख, छठीमें १ लाख, सातवीमें ५ नरकवासा है ।

### ७-पाथडा द्वार ।

पहली नारकीमें १३ पाथडे है । दूसरीमें ११, तीसरीमें ९, चौथीमें ७, पांचवीमें ५, छठीमें ३, सातवीमें १ पाथडा है ।

### ८-अलोक द्वार ।

पहली नारकीसे १२ योजन तिरछा ( टेढा ) जाने बाद अलोक आता है । दूसरीसे १२ $\frac{३}{४}$  योजन जाने बाद, तीसरीसे १२- योजन जाने बाद, चौथीसे १४ योजन जाने बाद, पांचवीसे १४ $\frac{३}{४}$  जाने बाद, छठीसे १५ $\frac{१}{२}$  जाने बाद, सातवीसे १६ योजन जाने बाद अलोक आता है ।

### ९-आधार द्वार ।

सातों नारकी घनोदधि, घन, और तण, वायुके, आधारसे ठहरी हुई है ।

विशेष स्पष्टीकरण: सातों नारकियोंके नीचे अख्यात योजनका लम्बा, चौडा और जाडा, घनोदधि [ पानी ] घन, और तन वायु है । वह इस क्रमसे है । सबके पहिले घनोदधि है और उसके नीचे घनवायु है और उसके नीचे तनवायु है । इसतरह से सातों नारकियोंके नीचे घनोदधि और घन वायु तन वायु [ वायु ] है । उनके ऊपर सातों नारकी ठहरी हुई है । घनोदधि, घनवायु और तनवायु अलोकके ( उनके नीचे फिर

१-जिसमें नरकके नैरिये रहते हैं-उसे ' पाथडा ' कहते हैं ।  
जैसा-कि मकान,



अलोकही आता है, और कुछ नहीं ) आधारसे रह हुए ह ।  
 ये तीनों घनोदधि घनवायु, और तनवायु, इतन समूह ( क  
 ठिन ) हैं कि अगर इनपर घनोंकी मार पड़े, तोमी ये ग्नी  
 यात्र टूटफूट नहीं सकते ।

### १०-आन्तरा द्वार ।

पहली नारकीमें १२ 'आन्तरे' है । वे प्रत्येक आन्तरे  
 ११-५८३१ पाञ्चन के लम्बे और चौड़े हैं । दूसरीमें-१०  
 आन्तरे हैं । वे प्रत्येक ९७०० योजनके लम्बे और चौड़े हैं ।  
 तीसरीमें ८ आन्तरे हैं । वे प्रत्येक १२३७५ पाञ्चनके लम्बे  
 और चौड़े हैं । चौथीमें छह आन्तरे हैं । वे प्रत्येक १५१६६३  
 योजनके लम्बे और चौड़े हैं । पाँचवींमें—चार आन्तरे हैं ।  
 वे प्रत्येक २५२५० योजनके लम्बे और चौड़े हैं । छठोंमें—दो  
 आन्तरे हैं । वे प्रत्येक-५२५०० योजनके लम्बे-चौड़े हैं ।  
 सातवींमें एकमी 'आन्तरा नहीं है ।

### ११ खुले और पक्तिबन्ध नरकावासा द्वार

पहली नरकमें २९९५६७ खुला नरकावासा है और  
 ४४३२ पक्तिबन्ध नरकावासा है । दूसरी नारकीमें २४०७३०५  
 खुला नरकावास है और २६०५५ पक्तिबन्ध नरकावासा है

१-जिसमें भयन पडिब रहने हैं उसे ' आन्तरा ' कहते हैं ।

२-जो कुछ नरकावासे हैं ( याने एक यहाँ तो एक यहाँ  
 देखे ) उन्हें खुले नरकावासा कहते हैं और जो लगा तार [ एक-  
 क अभी एक ] नरकावासा है उन्हें पक्तिबन्ध नरकावासा कहते हैं ।

तीसरी नारकीमें—१४९, ५५-१५, खुल्ला नरकावासा है ।  
 और १४८५, पंक्तिबन्ध नरकावासा है । चौथी नारकीमें—  
 ९९९२९३, खुल्ला नरकावासा है और ७०२, पंक्तिबन्ध नरका  
 वासा है । पांचवी नारकीमें—२-९९७३५, खुल्ला नरका वासा  
 है और २६५, पंक्तिबन्ध नरका वासा है । छठी नारकीमें—  
 ९९९३२ खुल्ला नरका वासा है । और ६३-पंक्तिबन्ध नरका  
 वासा है । सातवी नारकीमें—खुल्ला नरकावासा एक भी नहीं है  
 और पांच पंक्तिबन्ध ' नरका वासा ' है ।

### १२—अन्धकार द्वार ।

प्रत्येक नारकीमें जो अन्धकार है वह महा अशुभ पुद्गलमय है ।

### १३—उत्पन्न द्वार ।

नारकमें पैदा होनेके जो स्थान हैं ( गर्भस्थान ) उनमें कोई  
 त्रिकुंभके आकार है, कोई घटके आकार है, कोई पेटके  
 आकार है, कोई कूंडाके आकार है । इस प्रकार नाना  
 तरहके आकारके नारकीके जीवों के जन्मस्थान हैं । उनको  
 [ जन्मस्थानको ] ' कुंभियों ' कहते हैं ।

### १४—क्षेत्रवेदना द्वार ।

प्रत्येक नारकमें क्षेत्र वेदना दश प्रकारकी है—अनन्तक्षुधा  
 अनन्त तृषा, अनन्त शीत, अनन्त उष्ण अनन्त दाह, अन-  
 न्त ज्वर, अनन्त भय; अनन्त शोक, अनन्त खाज, अनन्त-  
 परवशता । यह दश प्रकारकी क्षेत्र वेदना नारकीके जीवोंके  
 पीछे हमेशा लगी हुई है । यह क्षेत्र वेदना नारकीके जीवोंका  
 पलभरभी पीटा नहीं छोडती है ।

पहली नारकीसे दूसरी नारकीमें अनन्त गुणी क्षेत्र वेदना है । दूसरीसे भी तीसरीमें-अनन्त गुणी है । यों उत्तरोत्तर छोटीस सातवीं में भी अनन्त गुणी है । तथा नारकीयोंके नामानुसारभी वहाँ भूमिस्पर्श की भी वेदना अनन्त गुणी है । जैस-रत्नप्रमाकी भूमिका स्पर्श खरदरा है । शर्करा प्रमाकी भूमिका स्पर्श तरवारकी धार-जैसा है । वासु प्रमाकी भूमिका स्पर्श जलती हुई आगिके समान है । पकप्रमाकी भूमि केवल रक्त पीप मय और कीचड़ मय है । धूमप्रमामें मोमल, निम्ब आक जैसा धुआँ है । तमप्रमामें अन्धकार है । समाप्तमा प्रमा में गाढ़ अंधकार है । यह स्पर्श वेदन भी नारकीक जीवोंका अनन्त गुणी है

### १५-परमाधामी द्वार ।

नरकमें नारकीके जीवोंका दुःख देनके लिए १५ जातिक परमाधामी देव रहते हैं । उनके नामनब तत्रमें बतलाये हैं वहाँस जानलने चाहिए ।

### ( द्रवकृत वेदना द्वार )

पहिली, दूसरी, तीसरी नरकमें परमाधामी देवता ऊपरसे मार मारत हैं, और कहत हैं कि-तूने अमुक अन्ममें अमुक पाप किया था उमका यह फल है ।

आधी पाँदधी नरकमें-ऊपरस परमाधामी देवताओंकी मार तो नहीं है परन्तु अगर किसी पैमानिक देवका नारकीक नरियक साथ पर भाव होता है, तो वह आकर दुःख (वेदना) दत है । छोटी, मातपी नरक नेरिब, परस्परही सड़ते सगड़ते

और कटते मरते हैं । देवकृत वेदनासे परस्परकी नरक वेदना वहाँ अंख्यात गुणी अधिक है ।

### १६—वैक्रियक द्वार ।

नारकीके जीवोका वैक्रय खराब होता है । वह ऐसा कि-वैक्रियसे वे शस्त्रादि बनाते हैं और उनके द्वारा परस्पर लडते मरते हैं । या वज्रमुखी कीड़े का रूप बनाते हैं, और दूसरे नारकीके शरीरमें प्रवेश कर जाते हैं और फिर वहां बड़ा रूप धारण कर उसके शरीरके टुकड़े टुकड़े कर देते हैं ऐसा नारकीके जीवोंका वैक्रिय है ।

### १७—राज द्वार ।

पहिली नारकी एक राजकी लम्बी चौड़ी है । दूसरी नारकी ढाई राजकी, तीसरी नारकी चारराजकी, चौथी पांचराजकी, पांचवी छहराजकी, छठी -साढा छहराजकी, सातवी-सातराजकी है । परन्तु सातवीं नारकीके नेरिये एकही राजमें रहते हैं । इन्हें ' त्रसनाली ' भी कहते हैं ।

### १८—काण्ड द्वार ।

पहली नारकीमें तीन काण्ड हैं:-पहिला, सोलह हजार योजनका, सोलह जातिके रत्नोंमय खरकाण्ड है । दूसरा पानी मय, आठहजार योजनका 'आयुल बहुल काण्ड है । तीसरा-८४ हजार योजनका, पङ्कमय कीचडमें ) पङ्कबहुल काण्ड है ।

### १९ ( संघयण द्वार ) .

नारकीके जीवोंमें मवयग नहीं है । परन्तु पहली और दूसरीमें छहोंही संघयण बाले जाते हैं । तीसरीमें प्रथमके ( छह

संघयणोंमेंके ) पांच संघयण धाले जाते हैं । चौथीमें-प्रथमके चार संघयणधाले जाते हैं । पाँचवींमें अथमक तीन संघयण धाले जाते हैं । छठीमें-दो संघयणधाले जाते हैं । सातवींमें-केवल वज्र अथमनाराच संघयणधाले जाते हैं ।

## २० [ जीवद्वार ]

कौन जीव कौनसी नरकमें जाते हैं ?

संझी मनुष्य और संझी, असंझी तिर्यच मरकर पहली नरकमें जाते हैं । भुजपर तिर्यच मरकर दूसरी नरक तक जाता है ( भागे नहीं जा सकता ) । खिचर [ नमचर ] तिर्यच मरकर तीसरीतक जाता है प्लचर; तिर्यच मरकर चौथी नरकतक जाता है । उरपर तिर्यच, पाँचवीं नरकतक जाता है । स्त्री पशु नरकतक जाती है । सातवींमें संझी मनुष्य और अलचर तिर्यच ही जाता है ।

## २१ [ घर्ण, गघ, रस, स्पर्श द्वार ]

नारकियोंमें-अधुमघर्ण, अधुमगन्ध, अधुमरस और अधुमस्पर्श ही होते हैं । उनका आहार बगैर सब अधुम पुत्रग लौकाही होता है ।

इति

मास्वाडी, हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी  
 आदि भाषाओंके स्तवन, पद,  
 स्तोत्र आदिकोंका  
**संग्रह.**

१—चौवीस जितस्तवन.

( ' एक दिवस लकापति ' इस चालमें. )

ऋषभ अजित संभव स्वामी, अभिनंदनजी अंतरजामी,  
 अंतर जामी, कर्म खपाय सुगति गयाए ॥ सुमति पद्म जिनेश्वरू  
 सुपार्श्वजी परमेश्वरू, परमेश्वरू, चंद्राग्रभु स्वामी सुख लयाए  
 ॥ १ ॥ सुविधि नाथ शीतल ध्याऊ, श्रेयांस तणा गुण मुख  
 गाऊं, गुण मुख गाऊं, वासु पूज्य वंदूं सहीए ॥ विमल, नाथ  
 अनंत ज्ञानी, धर्म नाथ शुक्लध्यानी, शुक्लध्यानी, शांति नाथ  
 गाता लहीए ॥ २ ॥ कुंधुनाथ, अरनाथ, नमूं, मल्लिनाथ दुख  
 सर्व गमूं, दुख सर्व गमूं, कीरति सुनिसुव्रत तणीए ॥ नमि  
 नाथ, नेमीश्वरू, पार्श्वजी परमेश्वरू, परमेश्वरू, महावीर  
 क्षासन घणीए ॥ ३ ॥ एचौवीसों जिनराया, ए चौवीसों  
 शिव सुख पाया, शिव सुख पाया, कर्म खपाय सुगति  
 गयाए ॥ ए चार वीस जिनवर जपसी, तो अष्टकर्म तेहना  
 खपसी, तेहना खपसी, दुर्लभ नरमव पाइयाए ॥ ४ ॥ पूज्यश्री  
 दौलतरामजी, ऋष लालचंद तसु नामजी, तसु नागजी

राम पुर गुण गाविषाय ॥ राम पुर गुण गाविषया, चारों तरफ-  
रे मन भाविषया, मन माविषया, पूज्यजीर परसादिद्युंए ॥ ५ ॥

२ ( नाथ कैसे गजका फव सुबायो, इस चालमें, )

भीजिन मुसन पार उतारा, प्रसु मै खाकर खरणांग ॥४॥  
श्रुपम अजित समष आमिसदन, ताप्या जीव अपारो ॥ सुमति  
पद्य सुपाथ चन्द्राप्रभु, मेथ्या विषय बिकारा ॥ भीजि० ॥१॥  
सुविधि शीतल भेयांस वासुपूज्य, मुगति तथा दातारो ॥  
विमल अनन्त घर्म शीति नाथजी, श्राता करी ससारो ॥ भी० २ ॥  
कुंथु अर, मट्टिमुनिसुव्रतजी, करगया खेवो पारो ॥  
नमिनेमि पार्थ, महाबीरवी श्रासनरा सिरदारो ॥ भीजि० ॥३॥  
म्यारइ गणधर बीस विहरमान, सर्व साधुजी अणगारा ॥  
अनंत चौबीसीने नित २ वंदू, करगया स्ववा पारो ॥ भीजि० ॥  
दान शील तप भावना भाषो, ए जगमें ततसारो ॥  
अप लालचदकी यही विनती, म्हारां करा निस्तारो ॥ भीजि० ॥५॥

३-( तुम तरण तारण भव विचारण, इस चालमें, )

भी आदिनाथ अजित ममष, सुमरु भीअभिर्नदना ॥ १ ॥  
चरण जिनवीक मीम चरधर कहे जी, पसपल वन्दना ॥ २ ॥  
धो सुमति नाथ पद्य प्रसु जग, तिरण तारण मुपासणी ॥  
धायन्दा प्रमूर्जाक चरण पदत, पित्त मष यय श्रासजी ॥ ३ ॥  
धी सुविधि नाथ, मुदव शीतल भेयांस अशरण ईश्वरी ॥  
गु पृथवा चरण नियदिन, रहे मेरो सीमजी, ॥ ३ ॥

विमल नाथ, अनन्त, धर्मजीरो,- ध्यान निज उरमें धरो ॥  
श्री शांतिनाथजीके पाय स्पर्शत फिर न चौंरासी फिरो ॥ ४ ॥  
श्री कुंथुनाथ अरनाथ स्वामी, महि अशरण शरण है ॥  
श्री मुनिसुव्रतजीके पढत पावों, हरत जन्म रु मरण है ॥ ५ ॥  
श्री नमिनाथ, अरिष्ट नेमि, पार्श्व पारस ध्याइए ॥  
श्रीमहावीरजीके चरण वंदत, निर्भय शिवमुख पाइए ॥ ६ ॥  
छोड सकल मिथ्यात्वको, गुरु धर्मकी परीक्षा करो ॥  
देव अरिहत नाम जप जप, मोक्ष भारग पग धरो ॥ ७ ॥  
मदा मंगल होय जपतां, ए चौवीसीरा नाम है ॥  
कहत ऋषिजी, लाभ निश्चय, महा सुखरी खान है ॥ ८ ॥

## ४-विहरमान जिनस्तवन.

( एक दिवस लकापति, इस चालमें )

प्रणमूं श्रीमंदिर स्वामी, युगमंदिर अंतर्यामी, शिरनामी, बाहू,  
सुबाहू, वदियेए ॥ पांचमा सुजात ए, स्वयं प्रभु विख्यात ए,  
दिनरात ए, प्रणमी पाप निकंदिये ए ॥ १ ॥ ऋषभानन्दन  
सातमा, अनंत वीर्य परमात्मा, शुद्धातमा; सरग्रभु नमवा नमूं  
ए; दशमा श्रीविशाल ए, वज्रधर सुरसाल ए, गुणमाल ए,  
चन्द्रानन पद चित्त रमूं ए ॥ २ ॥ चन्द्र बाहु चित्त ध्याइए,  
भुजंगेश्वर गुण गाइए, शिरनाइए, नेमिप्रथ चरणोंविषेए ॥ श्री  
वीरसेन महाभद्र ए, देवजस अक्षुद्रए, सहुद्र ए, -अर्जात वीर्य  
गुण कुण लिखे ए ॥ ३ ॥ धनुष पांचसौं परिमाणू, अवगाहन  
सहुनी जानू, त्रिशुवन आनू, सहस्र अष्ट लक्षण धणी ए ॥



पूर्व, चौरासी लाख ए, आयु सहुना लाख ए, अमिलाख ए।  
 मोसन बिन दर्शन पूर्ण ए ॥ ४ ॥ इति अर्द्ध में राज, बाबी  
 अमृत धानि मात्रे, सप्तय मात्रः मध्यजीवाना मन तथाए ॥  
 चौतीस अतिशय जिनराया, इन्द्र चौष्ठ पूष पाया; गुण गाभा,  
 न रहे फिर कोई मणा ए ॥ ५ ॥ ताजिमे राग ह रिम ए  
 मत्रिय जिनवर धीस ए, अहानिष्ठ ए धर्मध्यान भविष्य करा  
 ए ॥ क्या धर्म जिनवर तणा, किन्ही जीवने मसि हणा, सहु  
 मुणा; तर मवरतन मिन्या खरो ए ॥ ६ ॥ चार तीन नव रुक  
 ए ( १९-२४ ), माष माम सुविष्णु ए, सुदि एक ए; जाड  
 करी उमगर्ह ए ॥ जिनवरजीमे गुण बहु, मदमति मे, किम  
 कहू, भाषक सहु, गाभा निष्ठदिन रगर्ह ए ॥ ७ ॥ पूज्य भी  
 रेखराजजी, ताण्य तिरण्य अहानजी, सुखसाधजी, महिमणल  
 यक्ष कविया ए ॥ त गुरुन सुमसाय जी, हरिदुरी-पुरमाय  
 जी, सुखदायजी, 'नवमल' जिन गुण गाह्या ए ॥ ८ ॥

५-( बद्ध सोलह जिन सोवन वरणा, इस नाममें )

भी विहर मान बद्ध वीसो ॥ टेर ॥

भीमंदिर युगमंदिर स्वामी, बाह, सुधाहजी शिवगामी ॥ सुधा  
 तबी म्ययंप्रम ईशा ॥ भी विह ॥ १ ॥ भूपमानन्दन् अनंत  
 बोग माग, भीष्मप्रह्वजीराला आटा, विशालमणी नद्राऊ सीमा  
 ॥ भी विह ॥ २ ॥ वसुधरन, खन्त्रानन्दा, चंद्र पाहु बाया  
 धारे आनन्दा; मुजंग जीत्या राग न सीसो ॥ भी विह ॥ ३ ॥  
 इश्वर नम प्रभुन ध्यारो श्रीरसणजीरा गुण भाषा, महामठ  
 नर्म निशदीमा ॥ भी विह ॥ ४ ॥ दवअश अमित पाप, मड

विदेह क्षेत्र विचरे धीरो, ज्यारो नाम लियाँ हिवडो हीसो ॥  
श्री विह० ॥ ५ ॥ पांचसौ धनुषारी देही सहु स्वाभी लाख  
चौरासी पूर्व आयु, अतिशय जिनजीरा चौतीसो ॥ श्री विह०  
॥ ६ ॥ जगन्य साधुजी थारे सौ कोडी, दश लाख जघन्य  
केवली जोडी, वाणीरा गुण कह्या पैतीसो ॥ श्री विह० ॥ ७ ॥  
चार चार तीर्थकर एकण मेरू लारो, ज्यांरो साध साधवीनो  
परिवारो, मुगत जासी आठूं कर्म पीसो ॥ श्री विह० ॥ ८ ॥  
ए विहरमान विसोही जाणा, जांरो भजन करो उत्तमप्राणी,  
ज्युं पूरे मनडारी जगीसो ॥ श्री विह० ॥ ९ ॥ शहर भेटते  
शुभ ठामो, ऋष जयमलजी किया गुण ग्रामो; संवत अठारे  
चौवीसो ॥ श्री विह० ॥ १० ॥

## ६ गणधर स्तवन.

( वीर जिनेसर केरो शिष्य, इस चालमे )

वंदूं इग्यारे गणधार ॥ टेर ॥

इन्द्र भूतिजीरोलीजे नाम, तो मन वंछित सीझे काम ॥ मोटा  
लब्धि तणा भंडार ॥ वंदू० ॥ १ ॥ अग्निभूति गौतमजीरा  
माई, वीरजीने दीठां समता आई, ऋद्धि त्याग लियो संयम  
भार ॥ वदू० ॥ २ ॥ वायुभूति मोटा मुनिराज, ए तीनोंही सगा  
भाय, पांच पांचसौ निकल्यालार ॥ वदू० ॥ ३ ॥ विगत स्वामि-  
जी चौथा जाण, भजन किया जाय अमर विमाण, देवलोकं  
सुखराक्षणकार ॥ वदू० ॥ ४ ॥ स्वामी सुधर्मा वीरर्जाहे पाट,  
जन्म मरण सेवकराकाट, सुझने आपतणो आधार ॥ वंदू० ॥

॥ ५ ॥ मही पुत्र ने मौरी पूत, मुगल आबकरा वीषा बत,  
 त्रिविधे त्याग्या पाप अठार ॥ बंदू० ॥ ६ ॥ अर्कपितने अर्क  
 अता, वारणी रे बघन रक्षा रक्षा चौद पुरबना मेडार ॥  
 बंदू० ॥ ७ ॥ मत्तारबने धीप्रमास, मुगल नगरमे करबिवा  
 वास, अपर्ताहोष जपजपकार ॥ बंदू ॥ ८ ॥ एहपारे ब्राह्मण  
 आस, घमालीसौ निकर्या साध, ज्यां करदियो खेबा पार ॥  
 बंदू० ॥ ९ ॥ इण नामे सब आखा फले, दोखी दुष्मन दूरे टले  
 अदि बुद्धि पांम सुखसार ॥ बंदू० ॥ १० ॥ इण नामे सब नाछे  
 पाप निहरा अपिण मधियण आप चित्त चौख हिरदामे  
 धार ॥ बंदू० ॥ ११ ॥ सबव अठार तैयालीस आस, पूम्प  
 जयमलत्रीनी अमूत वाज, चौमासो स्तपन किया पीपाड ॥ बंदू०  
 ॥ १२ ॥ आषाढ शुदि सातमेर दिन, गणधरजीन भासा एक  
 मन, मण आशकरणत्री अणगार ॥ बंदू० ॥ १३ ॥

### ७ सोलह सतीस्तवन

( उपरकी चालमे )

छीतल शिनबर करुं प्रणाम, सोले सतिर्याता छेव नाम ॥  
 प्राणी चन्दना राजेमति द्रौपदी कौशल्या मुगावती ॥ १ ॥  
 मुलसा सीता मुमद्रा जान, शिषा कुन्ता छीस गुण ध्यान ॥  
 नल-धरणी दधदती सती, चम्पना प्रभावती पद्मावती ॥ २ ॥  
 शाल-गुणे मुहावे सिरी, रूपम दधनी पिषा सुवरी, ए सोले  
 सतिर्या शाल गुण मरी, मधियण सुमरो भावेकरी ॥ ३ ॥  
 इण नामे सब सफट षड, मन चितित मनारम फले ॥ इण  
 नामे सब सीसे काज लीजे मुक्तपूरीनो राज ॥ ४ ॥ मूत-मंत

इण नामे टले, ऋद्धि वृद्धि घर आई मिले ॥ इण नामे सुख  
होय जगीस, ए सतियां सुमरो निजदासि ॥ ५ ॥

## ८ नवकार मंत्र स्तवन.

( वदू सोले जिन सोवन घरणा, इस त्नालमें.)

श्रीनवकार मंत्रजीरो ध्यान धरो ॥ टेरे ॥

पहिले पद अरिहत देवा, ज्यांरी चौसठ् इन्द्र करे सेवा; मारग  
ज्यारो शुद्ध खरो ॥ श्री नव० ॥ १ ॥ चौतीस अतिशय पैतसि  
चाणी, प्रभु सगलारा मनरी जाणी, कर जोडी जासूं विनती  
करो ॥ श्री नव० ॥ २ ॥ भवर्जावाने भगवंत तारे, पिछे आप  
सुगत मांहे पधारे, सकल तीर्थकरनो एकसरो ॥ श्री नव० ॥  
॥ ३ ॥ घनरे भेदे सिद्धसिद्धा, ज्यां अष्टकर्मने क्षय किधा,  
शिव रमणीने वेग वरो ॥ श्री नव० ॥ ४ ॥ चौदेही राजरे  
ऊपरसही, जठे जन्मजराने मरण नही, ज्यांरो भजन कियां  
भव सायर तिरो ॥ श्री नव० ॥ ५ ॥ तीजे पद आचारजजाणी,  
जांरी वल्ल भलागे अमृतवाणी, तन मनसूं ज्यांरी सेव करो ॥ श्री  
नव० ॥ ६ ॥ संघ मांहे सोहे स्वामी, जिके मोक्ष तणा होय  
रह्या कामी ॥ ज्यांने पूज्यां म्हारो पाप झरो ॥ श्री नव० ॥ ७ ॥  
उपाध्यायजीरी बुद्धि भारी, ज्यां प्रतिदोध्या नहु नरनारी, सत्र  
अर्थ ज करे सखरो ॥ श्री नव० ॥ ८ ॥ गुण पचवीसो करी  
दीपे, ज्यांमू पाखेडी कोई नही जीपे, दूर कियो जिण पाप  
परो ॥ श्री नव० ॥ ९ ॥ पांचम पद सांधुजी पूजो, यां  
सराखा नजर न आवे दूजां, मिटाय देवे ते जन्म जरो ॥ श्री

नव० ॥ १० ॥ जो आत्मारा दुस्वखाषा, ता पांच पर्दाजारा  
 गुण गाषा, कराड मचारा कमे इरा ॥ श्री नव० ॥ ११ ॥ पूज  
 जयमलजीर प्रसादे वेढी, मुण्ठा सुटे कर्मारी कोढी; जीव उ  
 कायारा जतन करो ॥ श्री नव ॥ १२ ॥ अहर बिकानर  
 चौमासे श्रुपि रायचंदखी इम माप, मुक्ति खाहा ता घर्म करा  
 ॥ श्री नव० ॥ १३ ॥

९-( उपजे मानद बाठो जिन अपता, इस पाठमें )

श्रीनवकार वपा मन रगे, चांदे पूरब सारर प्राणी, सर्व  
 मंगल मांहे पहला मंगल, जपता जमजयकारर प्राणी ॥ श्री  
 नव० ॥ १ ॥ पहिल पद त्रिमुवन जग पूजत, प्रणमूं शीखरि  
 हतरे प्राणी; अष्ट करम धरजत धीजे पद, ध्याऊ सिद्ध अनंत  
 र प्राणी ॥ श्री नव० ॥ २ ॥ आचारजताजे पद प्रणमूं, गुण  
 छधीस मंडार र प्राणी; चौथे पद उपाध्याय नमीजे, छत्र सिद्धांत  
 नाधार र प्राणी ॥ श्री नव० ॥ ३ ॥ सर्व साधुधी पंचम पद  
 प्रणमूं, पंच महाव्रत धारर प्राणी; नवपद, अष्ट परनी संपदा,  
 अडमठ धरण विशारर प्राणी ॥ श्री० ॥ ४ ॥ यष्ट उपद्रव  
 करिता चान्या, परधा एह प्रसिद्धर प्राणी; षंड विगलन चारज  
 दुइक, पासी सुरनी श्रद्धरे प्राणी ॥ ५ ॥ सारन पोरमाइण  
 भव मीधा, धिर कुमर शुभधणनरे, प्राणी ॥ ६ ॥ सपे मिन्-  
 धइ पुण्यनी माळा, 'मिरिमति' प्रघानरे प्राणी ॥ ६ ॥ सठ  
 मुदघन इमहीन कलतां, गपनी श्रीनवकारर प्राणी; झुली मिट  
 मिहामन हुवा, इन्द्र कर जपजपकारर प्राणी ॥ श्री नव० ॥ ७ ॥

अटसठ अक्षर एहना कदिए, एक अक्षरनो उच्चाररे प्राणी ॥  
सात मागर्ना पातिक जावे, शास्त्र मांहे अधिकाररे प्राणी ॥  
॥ श्री० ॥ ८ ॥

## १०-श्रीमहावीर जिनस्तवन.

( इंप्यकी चालमें )

श्रीमहावीर शासन धर्णी, जिन त्रिभुवन स्वामी ॥  
चरण कमल नित चित्त धरूं, प्रणमूं शिर नाभी ॥  
सुरयिति नगरी पिता मात, लंछन अवगाहना ॥  
वर्ण आऊखो कुमरपदे तपस्या परिमाणा ॥  
चारित्र तप प्रभु गुण भणूं ए, छत्रस्थ केवल नाण ॥  
तीर्थ, गणधर केवली, जिन शासन परिमाणे ॥ १ ॥  
देवलोक दशमें-वीस सागर पूरण स्थिति पाया,  
कुण्डन पुरी नगर चली श्री जिनवर आया ॥  
पिता सिद्धार्थ पुत्र मात त्रसलादे नंदा ॥  
ज्यारी कुंखे अवतन्त्या श्री वीर जिनन्दा ॥  
ज्यारें चरणां लांछन सिंहना ए, अवगाहना करमात ॥  
तन कंचन सम शोभता, ते प्रणमूं जगनाथ ॥ २ ॥  
बहतर वर्षनो आऊखो पाया सुखकारी ॥  
तीस वरष प्रभुकुमरपदे, रखा अभिग्रह धारी ॥  
सुमेरू गिरिपर इन्द्र चौष्टामिल महोत्सव करियो ॥  
अनन्त बली अरिहत जान, नाम श्री वीर प्रभु धरियो ॥

ज्यारी मात पिता सूरगति लई ए, पछ लाना समयमार ॥  
 तपस्या कीनी निरमली, प्रसु साठी धार धरप मझार ॥ ३ ॥  
 नव चौमासा तप किया प्रसु एक किया छ मासा ॥  
 पांच दिन ऊषा अभिग्रह-एक छे मास विमासी ॥  
 एक एक मासा तप किया प्रसु द्वादश बिरिया ॥  
 पहचर पक्ष और दा दा मास छ बिरिया करेया ॥  
 दाम अढाई आर तीन दोय ए, इम बेट मासी दाय ॥  
 मद्रमहामद्र, शिवमद्र, तप तप्या इम सोलह दिन शाय ॥ ४ ॥  
 मिथुनी पडिमा अष्ट भगतनी द्वादश कीनी ॥  
 दायसौन गुणतीस छहमै तप गिषती लानी ॥  
 इग्यार वरप छे मास, पचीस दिन तपस्या केरा ॥  
 इग्यार मास उगचीस दिवस पारणा मलेरा ॥ इण बिधि  
 म्वायीजी तप तपिया ए, पछे लीना केवल नाथ ॥  
 तीस वरप ऊषा विशरिया, ते प्रजमू बधमान । ५ ॥  
 प्रथम अस्थि दूओ चपा, पिष्ट चपा दोय कहिए, ॥  
 बाणिया विद्याला ग्राम बिहु भिलि द्वादश लहिए ॥  
 चतुर्दश नाउंदे पाठ, छे मिथला माथए ॥  
 महल पुरी दाय सब मिली अबतीमख गथिए ॥  
 एक आलबिया, एक भाबरवीए, एक अनारख आव, ॥  
 परम चौमासा पाबापुरी, अठे प्रसु पहुँता निर्बाण ॥ ६ ॥  
 मुनिवर चौंदे सहस्र, सहस्र छतीस अरखका ॥  
 एक लख गुण सठ सहस्र भाकक, तीन लाख भाविका ॥  
 अधिक अठार सहस्र, इग्यारे गणधरनी मासा ॥

गौतम स्वामी शिष्य बड, सती चन्दनवाला ॥  
 जारं केवल ज्ञानी सातसौ ए, प्रभु पहुँता निर्वाण ॥  
 शासन वरते श्री वीरनो, इकवीस सहस्र वर्ष प्रमाण ॥ ७ ॥  
 पूर्व तीनसौ धार, तेरहसौ अवाधिज्ञानी ॥  
 मनःपर्यव पांचसौ जान, सातसां केवल ज्ञानी ॥  
 वैक्रय लब्धिनाधार, सातसौ मुनिवर कहिए ।  
 वादी चारमौजान, भिन्न भिन्न चर्चा लहिए ॥  
 एका एक चारित्र लियोए, प्रभु एका एक निर्वाण ॥  
 चौष्ट वरष लग चालियो, दर्शन केवल नाण ॥ ८ ॥  
 चारह नरबल वृषभ, वृषभ दश एक जिम हयवर ॥  
 चारह हयवर महिष, महिष पांचसां एक गयवर ॥  
 पांचसौ गज हरी एक सहस्र दाय हरी अष्टापद ॥  
 दशलाख बलदेव-दाय वासुदेव और दाय चक्रीपद ॥  
 क्रोड चक्री इक सुरकह्योए, क्रोड सुरां एक इन्द ॥  
 इन्द्र अनन्तास्रं नहीं नमें, चिटी अंगुली अग्र जिनन्द ॥ ९ ॥  
 आपतणा प्रभु गुण अनन्त कोई पार न पावे ॥  
 लब्धि प्रभावे, क्रोड काय, कोई शिर क्रोड वणावे ॥  
 शिर शिर क्रोडा क्रोड वदन, क्रोडा क्रोड सुवाणी ॥  
 जिभ्या जिभ्या स्रं क्रोड क्रोड गुण करे सुज्ञानी ॥  
 कई क्रोडाक्रोड सागर लग ए, करे ज्ञान गुण सार ।  
 तो पिण पार पावे नहीं, प्रभु गुण अनन्त अपार ॥ १० ॥  
 चौदेही राजूलोक भरिया, बालूना कणिया ॥  
 सर्व जीवनी रोमराय नहीं जावे गिणिया ॥



एक एक वाछ गुणकरे प्रभु अनन्त अनंता ॥

पूज्य प्रसाद रूप सालषंद कह, नही आवे अन्ता ॥ -

संत्रत अठारं बामठ ए, मास मृगशिर छन्द ॥ -

राम पुर गुण गाविषा, घन्य घन्य वीर जिनन्द ॥ ११ ॥ '

### १०-दान, शील, तप, भावपरं स्तवन

सांमल जीवहार ! दानज दीजिये, दानं शिवसुख मेखा कीजिणा  
 कीजिए संचो मुक्ति मुखनो दान भयांन दियो, घन सेठ कुमर  
 सुवाहु प्रमुख, शालिभद्र प्रसिद्ध धरो ॥ दान ब मूलराज पापा  
 मठ घन अद्विजही, गौपाल ब्राह्मण धीरदाने, रत्न वरपा घर  
 रई ॥ रेवती औपधिदान दिवा, चन्दनवासा सुख लया ॥ म  
 जाणी जीवदा दान दीजे दुगदाम गणि इम कसो ॥ १ ॥  
 सांमला जीवदा शील मसो मणू, आपद सुखदण संपत्तिकारण  
 ॥ संपत्तिकरण शील गिरुआ, नेमनाथे धारियो, बन्धु स्वामी  
 धम कारण, तबी बाठो नारियो ॥ छेठ सुदर्शन शील बलकर  
 श्ली सिंहासन धया ॥ स्पूल मङ्गीको शील अविचल बयर  
 स्वामी इह रखां ॥ द्रौपदी, सीता अने सुलसा, पद्मावती जग  
 बाणिए ॥ इम प्राण जीवदा शील पालो दुर्गदास बलाधि पं  
 ॥ २ ॥ सांमला जीवहारे, तप तपिये मसा, द्वादश मेदे रे जग  
 मही निमळे ॥ निर्मला द्वादश मेद तपिये, वरपं दिवस प्रथम  
 जिन ॥ छ मास तप बल ज्ञान पायो वीर जिनबर तत्सर्ष  
 ॥ बलदत्त तपबल सुबल पाप्यो धनो साधु बलाधि ए ॥ इर  
 कशी मुर पुन्य दुवा तप प्रमात्रे जाणिए ॥ काली सुकाली

आदि सतियां राज शिव पुरनोलह्यो ॥ दुर्गदास गणि एम  
 भाखे, तपे वारज सिद्ध वायो ॥ ३ ॥ सांभलं जीवडारे भावना  
 भविए, भावनर्था सुखे शाश्वता पाइए ॥ पाइए शाश्वता सुख  
 उत्तम भरत केवल पामियो ॥ इला सुत चन्द रुद्राचारज,  
 आदिदे शिवगामियो ॥ भवदेव, जीरण शैठ, मृगलो, दृढप्रहारी  
 मुनीश्वरो ॥ मुनि अर्हणक, कुमर ढढण, गज सुकुमाल यतीश्वरो  
 मरुदेवी, राजमति, मृगावती, वली केवल ज्ञान प्रकाशियो ॥  
 इम शुद्ध भावना भावो भवियण, दुर्गदास गणिभाषियो ॥ ४ ॥

## ११-हितोपदेश.

भव जीवा, करणी हो कीजो चित्त निर्मली ॥ टेर ॥  
 भविजीवा, आदि जिनेश्वर विनवुं, सतगुरु लागूं पाय ॥ भवि-  
 जीवा, मन, वच, काया वश करो, छोडो चार कषाय, ॥ भवि०  
 ॥ १ ॥ भविजीवा; मनुष जनम दुर्लभ लह्यो, सूतर सुणवो सार  
 ॥ भविजीवा, साची सरधा दोहिली, उत्तम कुल अवतार ॥ भवि०  
 ॥ २ ॥ भविजीवा, सिक्कियो इण संसारमें, ज्युं भडभुंजांनीभाड  
 ॥ भविजीवा, निर्ग्रथ गुरु हेला देवे, अदतो आंख उघाड ॥  
 भवि० ॥ ३ ॥ भविजीवा, मोहमिथ्यातरा नीदमें, सूतोकाल  
 अनाद, ॥ भविजीवा, जनम मरण जग पूरियो, ज्ञान विना  
 नहीं याद ॥ भविजीवा ॥ ४ ॥ भविजीवा नरकतणा दुःखें  
 दोहिला, सुणतां थर हरे काय ॥ भविजीवा, पापकर्म डकटा  
 किया, मार अनंती खाय ॥ भवि० ॥ ५ ॥ भविजीवा, चंद्र  
 सूरजनो मुखे नहीं, दीसे घोर अंधार ॥ भविजीवा, न्हासणनें

सरी जड़ी, जिहां काष तिहां मार ॥ ६ ॥ मविजीवा, कल्ल-  
 धामी देवता, ज्योही पतरा खात ॥ मविजीवा मार बेबे कथे  
 ज्योवे, कर अनती पात ॥ ७ ॥ मविजीवा, बैतरणी नदी कं  
 जिनरा तीखो नीर; ॥ मविजीवा, अल फरसावे बीबने, भिन्न  
 क्षिप्त होय करीर ॥ ८ ॥ मविजीवा, ताता तरुवा मल मरी,  
 नदी बैतरणी मार ॥ मविजीवा, सिममांही इकपापिता, कोरे  
 त लागे मोह ॥ ९ ॥ मविजीवा, मवमांही इकिया रखा, केस  
 अणगल नीर ॥ मविजीवा ताता तांवा मावता उठ बुहुली  
 पीठ ॥ १० ॥ मविजीवा, दयादबीछे विजअतो मन दनमें जीर  
 ॥ मविजीवा कषिवा पसारा पापरा, फूटे करकर मार ॥ ११ ॥  
 मविजीवा, खोरी करतां पारकी, मोसी लता मात ॥ मविजीवा  
 नरमवेम भवाहुवा, त्यां होवे हालबहाल ॥ १२ ॥ मविजीवा,  
 काठ र कर कडता, पेदन वहुली धाय ॥ मविजीवा, सुबतां  
 बीवेडा परहर सधा किसीपर आय ॥ १३ ॥ मविजीवा, पापी  
 पारातीपरे, ताडे ने मिलजाय ॥ मविजीवा, आषानी पर  
 बालम, ता पिन्न मरण न थाम ॥ १४ ॥ मविजीवा, आपसमें  
 लडतां थका, कततारास अपार ॥ मविजीवा, पुरजोर हा पडे,  
 किर पाछा मिलजाय ॥ १५ ॥ मविजीवा, मांघो भोजनरातरो  
 करतां इरता नाय ॥ मविजीवा, बोमर, विष्ट लहने घाले, सूँवर  
 मांघ ॥ १६ ॥ मविजीवा, अर्थ अनर्थ धर्म करण, होम्वा  
 सुसु विन ज्ञान ॥ मविजीवा, राष्ट्रताहीयूं बैतरणीमें करावे नित्त  
 ज्ञान ॥ १७ ॥ मविजीवा, घघामें श्रुता रखा, श्रुता धरने मार  
 ॥ मविजीवा, अगन बण रण ज्ञान्वा, घाटी घुके अगा  
 ॥ १८ ॥ मविजीवा, उंडान्यूं चरता सवा, न खाण्या विधिवार ॥

भविजीवां, पान फूल फल छेदिया, दया न आणी लिंगार  
 ॥ १९ ॥ भविजीवा, वृक्ष तिहां कूंड सावली, जिणरी विसारे  
 छांय ॥ भविजीवा, पानपडे तरवार ज्यू, टुक टुक हो जाय ॥  
 ॥ २० ॥ भविजीवा, लोहतणी करे पूतली, फरसावे ते अंग ॥  
 भविजीवा, रंगराता माता फिर परत्रियाके संग ॥ २१ ॥ भवि-  
 जीवां थांभोदेखी थारहन्यो, कंण लागी देह ॥ भविजीवा, हा  
 हा, मुझवालो मती ॥ फेर न करखं नेह ॥ २२ ॥ भविजीवा,  
 हाथ पांव छेदन करे, नांखे अंग मरौर ॥ भविजीवा, कही  
 किण ओले उचरे नहीं किणरीही जीर ॥ २३ ॥ भविजीवा,  
 पापकर्म किया घणा, कर २ मनमें हंस ॥ भविजीवा, बोले  
 परमाधामी देवता, नहीं हमारो दोष ॥ २४ ॥ भविजीवा,  
 क्षिणजीतव सुखकारणे, पल सागरसहेमार ॥ भविजीवा, विण  
 भूगत्यां छूटे नहीं, छेदन भेदन मार ॥ २५ ॥ भविजीवा,  
 सतगुरुनी चाणी सुणो, जीतो क्रोधने मान ॥ भविजीवा, कु-  
 गुरु, कुदेव धर्म-तजी, जिन वचने रुचि आण ॥ २६ ॥ भवि-  
 जीवा, सतगुरुनी सेवा करो, पाखंड मत परो निवार ॥ भवि-  
 जीवा, शुद्ध समकित हिचडे धरो, ज्यू पामो भवपार ॥ २७ ॥  
 भविजीवा, पंचमहाव्रत निर्मला, तपस्या धारह भेद ॥ भवि-  
 जीवा, संयम-सतरा भेदनो, करो कर्माखं खेद ॥ २८ ॥ भवि-  
 जीवा, सूधो संयमे एक दिन तर्णा, पाल्यां, पामेभवपार ॥  
 भविजीवा, स्वर्गमें सांसो नहीं, तिणमें फेर न सार ॥ २९ ॥

## १२—चक्रवर्ति भर्तृ महाराजकी ऋद्धि वर्णन

५ प्रथम समारिण अणमजिनन्दण, नामिराजा मरुदेदीनानन्द  
 ए ॥ र्या प्रभुजीके एकसा पुत्र यमा, भर्तृ महाराज सघलामे  
 शिरे कक्षा ॥ १ ॥ पदवी चक्रवर्ति छ स्रष्टना घषी, देश  
 प्रदेशामे आय फँटी घषा ॥ स्वष्ट किया सब अपने अधिकार  
 ए साघतां लागी वर्ष साठ हजार ए ॥ २ ॥ सिंहर स रू  
 पूर्व हूमर पण रमा, वष हजार मवलीक राजा घषा ॥ छे  
 लाख पूर्व सहस्र घाट ए, शीगघ्यो राज चक्रवर्ति घाट ए  
 ॥ ३ ॥ पूर्वपुष्य मरुतेश्वर कीघए, बैसी ज्यां पापी छे समलो  
 ऋद्ध ए ॥ चौदे रतन नबनिधान ए, चौष्ट हजार सेबे घलि  
 गजान ए ॥ ४ ॥ सहस्र बचीस कक्षा घलि देश ए ॥ सहस्र  
 साले सुरसेवे इमेश ए ॥ चौष्ट सहस्र अतेश्वरनार ए, दो दा  
 बारमना एक्य सार ए ॥ ५ ॥ नाटकना पहरसा रूपकार ए,  
 कामर्षी एक साका ने बाणवें हजार ए ॥ एतला रूप बैक्य  
 करे रही, भर्तृ विना कोई महल खाली नहीं ॥ ६ ॥ सोले  
 हजार खेवा कक्षा शिरदार ए, सहस्र बहोत्तर नगर अघार ए  
 ॥ मण्य सहस्र चौबिस ऋद्धिलही, सहस्र अठतालीस रतन  
 पाटक कही ॥ ७ ॥ चौबीस हजार कैबरना ठाम ए, भर्तृन  
 क्रोड छिन्नु कक्षा गाम ए ॥ ८ ॥ चौरासी लाख रथ, हयबर  
 पाड ए, पायदल चालिया छिन्नै क्रोड ए ॥ तीन तो लाख  
 आयुष खाला आम ए, लाख चौरासी ज्यारे कक्षा निधान ए  
 ॥ ९ ॥ दण तो क्रोड कही खषा पताक ए, दीवीकरा कक्षा  
 पांच तो लाख ए ॥ बहत्तर मोहन छे तीर तो आय ए,

तीन तो क्रोड, गोकल कह्या गाय ए ॥ १० ॥ एक तो क्रोड  
 वली हलज भाख ए, भोजन करा कह्या तीन लाख ए ॥ सैन्या  
 तणा घर छत्तीस हजार ए, तीन तो-क्रोड मूथा वली यार ए  
 ॥ ११ ॥ चौऱ्यासी लाख कह्या कोटवाल ए, चतुर सैन्या करे  
 मार-संभाल ए ॥ चार लुच्चा तणी नही पडे-फेट ए, तनितो  
 क्रोड कह्या भर्तने सेठ ए ॥ १२ ॥ भरतने जोवतां नजरधापे  
 नहीं, सहस्र छत्तीस तो राजधानी कहीं ॥ तीन तो क्रोड बाजा  
 नित नही खंडे, चोदे हजार तो वली मेला मंडे ॥ १३ ॥  
 रसोईदार कह्या तीनसौ साठ ए, लाख सवा तो दिवी नहीं  
 घाट ए ॥ तीन तो क्रोड वेदां तणी जात ए, हाजर ते खडा  
 दिनने-रात ए ॥ १४ ॥ लश्कर कोश अडतालीसमें पडे, चार  
 क्रोड रसोडे अन्नसरे ॥ केतो सूत्र केतो परंपग भाख ए, रसो-  
 डे लूण लागे मण दश लाख ए ॥ १५ ॥ शूर ने वीर बलवंत  
 जो मिया, वड २ ऑण नमावें छे भोमिया ॥ दया करुणा तणा  
 ईश भंडार ए, शालनो खंख शालनो पस्वार ए ॥ १६ ॥ वाप  
 आदीश्वर त्रिभुवनराधणी, माय सुमंगला कीर्ति अतिघणी ॥  
 हाथीरे होदे दादी गई मोक्ष ए, नाभिराजा तो गया देव लोक  
 ए ॥ १७ ॥ दोनों बहना दीक्षा लीनी है धर दया, भाई निन्ना  
 पंहुही साथे मुगते गया ॥ वेटो 'मरिची' पाम्यो भवतीर ए,  
 चौवीसमा जिनहुवा महावीर ए ॥ १८ ॥ भर्त क्षेत्र सोहे पूनम  
 चंद ए, शोभ रह्या घणा भरत नरेंद्र ए ॥ केहवी यो ऋद्धि पामी  
 अभिराम ए, किण विधि सारीया आतम काम ए ॥ १९ ॥  
 भवनमें मूंदडी-पडत वैरागिया, हाथी घोडा रथ पायडल न्या  
 गिया ॥ केवल उपजावियो भर्त नरेश ए, राजेन्ड थां

दिया उपदष्ट ए ॥ २० ॥ मातपिता सह कुटुंब परिवार  
 ए, कारमों कुटुंब सह अधिर संसार ए ॥ चहरवाजीनी माता  
 ही लाग ए एम जाणी मन आप्यो बैराग ए ॥ २१ ॥ मित्र  
 -मात्र कथा तिणवार ए, बैराग पायों राजा वृद्ध हजार ए ॥  
 छात्रदिया इय गय ऋद्धि परिवार ए ॥ मरत लारे लियो संबम  
 भार ए ॥ २२ ॥ भर्तजी, पूर्व भव पुण्य संभव कियो, पांचसां  
 माघुने पारणो आणी दियो ॥ तिणई साधी एहधी श्रद्ध ए,  
 क्रम स्वपाय किया क्रम सिद्ध ए ॥ २३ ॥ लाख पूर्व तोंई  
 शरित्र पालिया, आत्म दोष अविचार सहुटालिया ॥ उपकार  
 किया ताप्या बहु लाक ए, मास संघार बिराजिया माघ ए  
 ॥ २४ ॥ इसका पुरुषों सांभा पुण्यवत् जोय ए, धर्म कीजा  
 भिन्न हारित हाय ए ॥ सबत् जठार पैतीसमें प्रकाश ए का  
 निक मामन तिषरी घामास ए ॥ २५ ॥ प्रसाद पूज्य कथा  
 जयमछजी तणा, स्वामी रायचदजी उपकार कियो घणा ॥  
 ऋषि आश्रमरण कह ग्रयमें जाब ए, भतेन बंदना बे कर ब्राह्म  
 ए ॥ २६ ॥

### १३—तपका महात्म्य

तप बढा र ममार में ॥ २२ ॥

तप बढार संसार में, जीव उज्यल थावर ॥ क्रम रूप ईंधन  
 दत्त, शिव नगरी सिघाय र ॥ तप० ॥ १ ॥ तपस्पाई रूप  
 पाय घणो द्रुप सुर अपठागरे ॥ श्रद्धि वृद्धि पुत्र सवदा, पायें

लब्धि श्रीकांगरे ॥ तप० ॥ २ ॥ तपस्यासं रोग दूरे टले  
 विघन महु भाज जावेरे ॥ तपस्यासं देव सहाय करे, घर लक्ष्मी  
 चल आवे रे ॥ तप० ॥ ३ ॥ राजा पिण आदर देवे घणों,  
 चावे ज्युषीर नीरोरे ॥ लोक भाषा इणपर कहे, इणरो तप-  
 म्याभे सीरोरे ॥ तप० ॥ ४ ॥ करतां एक नवकारसी, सां वर्ष  
 नरकरा टूटेरे ॥ दश पञ्चकलाणमें नफो घणों, आवागमनसं  
 छटे रे ॥ तप० ॥ ५ ॥ अजानीपण तपस्या करे, तोही निर-  
 फल न जावे रे ॥ ग्यान सहित तपस्या करे, गर्भावास न आवे  
 रे ॥ तप० ॥ ६ ॥ पोते जो तप पूरो हुवे, तेज नहीं पडे मंदो  
 रे ॥ सेचक ऑण माने घणी, मदा वरते आनन्दोरे ॥ तप० ॥  
 ७ ॥ खरो राजानो तप मालनो कोई पुण्यवंत संचे रे ॥  
 चाल्यां तो जाय वैकुंठमें, जातां कोई न पाले रे ॥ तप० ॥ ८ ॥  
 तपस्या तो कीधी महावीरजी, कर्म कठिण सब भागा रे ॥  
 धन्नो मुनीश्वर तप तप्या, सर्वार्थ सिद्ध जाय लागारे ॥ तप० ॥  
 ९ ॥ ब्रैले तो वैले कीनो पारणो, गणधर गौतम स्वामीरे ॥  
 खंधक मुनी तप तप्या हुवा मुक्तरा गामीरे ॥ तप० ॥ १० ॥  
 अर्जुन माली उर धरिया मुनिवर मेघकुमारो रे ॥ राय प्रदेशी  
 तप तप्या, जासी मुक्ति मझारो रे ॥ तप० ॥ ११ ॥ आठ  
 राणी श्रीकृष्ण की, ब्राह्मी सुन्दरी चन्दन बाला रे ॥ तेबीस  
 श्रेणिकरी सुन्दरी, तोड्या कर्मरा जाला रे ॥ १३ ॥ इत्यादिक  
 मुनि तप तप्या, कहुँ कितारा नामो रे ॥ कर्म कठिन दल  
 जीतने, ध्यायो उज्वल ध्यानो रे ॥ १४ ॥ शक्ति मारू तपस्या  
 करो, निश्चय सुख अपारोरे ॥ ऋषि आशकरणीजी इम भणे,  
 जोधाणा शहर मझारो रे ॥ तप० ॥ १६ ॥



## १४—पूज्यगुणाष्टक

पूज्यकनी रामजीरो आप करा, दु ख दौहग सागन दूर  
 हरा ॥ घनघान्य तथा मंदार भरो, घर प्यार हिय भविष्यान  
 धरो ॥ १ ॥ यक्ष राघव भूत अलग आवे, डाकिनी शक्तिनी  
 नही संतावे ॥ ताव तंत्रा नही आवे, पूज्य नाम लिखा छाटा  
 पाये ॥ २ ॥ रावकावमें जाय स्य, दिल ध्यान धन्यां अरि हात  
 टप ॥ तजे करी सबमें तह सप, जो पूज्य तयो मन आप अपे  
 ॥ ३ ॥ सखी विणव बहु लाभ लह, दासिद पादपनो मूल  
 दह ॥ रस रंग सदा पुज रहे, बैठागृहमाही गंग वडे ॥ ४ ॥  
 गमण दूमण अरि दूर टले, गह गूबब इपी तुरत गल ॥ चार  
 चुगल बलि नाही छले, पूज्य नामे मनोरथ माल फल ॥ ५ ॥  
 कपटी भूतारा कपट कर, पछ छल छिद्र चोकर फिर ॥ उण  
 बिरिया याद करे दिबडे रंग भरी न सके पलमाही हर ॥ ६ ॥  
 अन्य मथ मुधा कही कुण आराधे, सदा नाम पूज्यना वे साधे ॥  
 सीलायुत पुत्र कलत्र लाभ, बधुधा बंधमान धनो बाध ॥ ७ ॥  
 गच्छ नायक गुणगण स्वयन गुणा, छाटा जन धिच लगाप  
 मुष्ठा ॥ दुरित घट पुष्प पाध घणा, ' नवमलक निहरो पूज्य  
 नाम तणा ॥ ८ ॥

## १५—दुसरा पूज्यगुणाष्टक

पूज्य कनिरामजीग जापकरा ॥ दर ॥

पूज्य नाम मगां भदिमा मागी, निव ध्यानधरा तुम नरनारी

मती रखे, फिरतो अलख जगायारे ॥ सुणियो० ॥ १२ ॥  
जा, जा, कही शीख तवदीनी, किनको नहीं सुनावो ॥ आय  
सदन धन सब चूँचायो, बावो कर गयो बावो रे ॥ सुनि० ॥  
॥ १३ ॥ मुल्ला फकीर ज्योतिपी जिन्दा, भाव भेरूँका गावे ॥  
अहमंद सबहीको धोके, फिर दारिद्र जोग नहीं जावे रे ॥  
सुनियो० ॥ १४ ॥ इन भव एह फजीती होवे, परभवमें दुःख  
पावे ॥ तो पिण भोले नर नहीं समझे, अन्दर ज्ञान न आवे रे  
॥ सुणियो० ॥ १५ ॥ साल बयाल उगणीसौ कानी, चौदश  
चौमासी चारू ॥ नया नगर हलुकर्मी हितको, वदी ढाल ए  
चारू रे ॥ सुनि० ॥ १६ ॥ रेखराज कहे, सदा सुख चावौ,  
तो इण ते छिटकावो ॥ लाभ हानि कर्मा अनुसारे, धर्म ध्यान  
लय लावो रे ॥ १७ ॥

### १७-श्रावकोंको हितशिक्षा.

( वदू सोले जिन सोवन वरणा, इस चालमें )

दोहा—“ श्रावक नाम धरायके, एवो करे अकाजे ॥

तिणनें समझं श्रद्धता, मनमें आवे लाज ॥”

ते श्रावक किम उतेर पारो ॥ टेरे ॥

एँडा मारे ने धडियो उडावे, सुदरी वद करने दिखावे ॥  
त्यागे नहीं पारकीनारो ॥ ते श्राव० ॥ १ ॥ परनारीने रहे  
तकता, जिम ग्रहणमांही मगता फिरता ॥ वचन वदे अति

य न घाटका, दूषे छ, सतगुरु घाटका, मठ पीषी -बहरबर  
 घाटका, क्याल बना है घाटका ॥ मुनियो० ॥ १ ॥ आठ  
 ध्यान रहे निठ मनमें धर्म ध्यान नहीं सुन ॥ ओ फो भिले अलिवा  
 गलियामि, प्रथम मावका वृक्षर ॥ मुनि॥ १ ॥ अबक मैय्या ! तेजी  
 मारी, मुण खीब हाय गया राजी, धरमें आय कहे मुनो प्यारी  
 कगे रसोई ताबीरे ॥ मुनियो० ॥ २ ॥ केषुनमय करारुं बाजू  
 करदुं पीठी जर्द ॥ भूषण सर्व भतिका भारी, तो बाणीजी मंद  
 र ॥ मुनि० ॥ ३ ॥ मांगा घंटे तार दमावे बाजारुं बिजबावे  
 ॥ इतराईमें मदी हाली, छाने इसकया खावे खी ॥ मुनिया० ॥ ४  
 ॥ दखे कामिनी बाल कृया दीसे बर्दन उदासी ॥ बोस्वो  
 सटक सोलदे गहणो, नही तो छारुं फांसी रे ॥ मुनि० ॥ ५ ॥  
 बाठी शिया पहली में धरन्या, धंगा नही मह चाला ॥ गहना  
 सभ सावक हाथका, इणकी बाट न न्हालो रे ॥ मुनियो० ॥ ६ ॥  
 नैन लालकर बोल्या शटकी, स्वोले छे के नाहीं ॥ धारा बापको  
 नहीं छे गहणो, तंख कठास लाररे ॥ मुनियो० ॥ ७ ॥ ओ  
 मुझसे तू करे जिदगी, तो कूवे पदजाऊ ॥ होय जोदकर बोस्वो  
 प्यारी, बेगोएह छुटाऊ रे ॥ मुनि० ॥ ८ ॥ ज्यों त्यों डली  
 बालियो छाने, अब बोरापे आवे ॥ दूषो द्रुम्य ध्याव अरु दूषो  
 कागो लार लगावे रे ॥ मुनिया० ॥ ९ ॥ इते मुनियो वन आयो  
 अबधु नैन पलफ नहीं स्वोले, फक अक उनसे नहीं छाना,  
 आ बहुवचन ज सोलरे ॥ मुनि० ॥ १० ॥ लपको करकर  
 करे दण्डावा, ओ छुछ वास पठावे ॥ जावे बाजार येहाले आवे  
 गांजा धरस पिलावरे ॥ मुनियो० ॥ ११ ॥ पठक सोल कहे  
 मुनरे धया ॥ माई—दक्ति इकम फरमाया ॥ इतना फक धइक

मती रखे, फिरतो अलख जगायारे ॥ सुणियो० ॥ १२ ॥  
जा, जा, कहीं शीख तवदीनी, किनको नहीं सुनावो ॥ आय  
सदन धन सब चंचायो, वावो कर गयो वावो रे ॥ सुनि० ॥  
॥ १३ ॥ मुल्ला फकीर ज्योतिषी जिन्दा, भाव भेरूका गावे ॥  
अकलमंद सवहीको धोके, फिर दारिद्र जोग नहीं जावे रे ॥  
सुनियो० ॥ १४ ॥ इन भव एह फजीती होवे, परभवमें दुःख  
पावे ॥ तो पिण भोले नर नहीं समझे, अन्दर ज्ञान न आवे रे  
॥ सुणियो० ॥ १५ ॥ साल बयाल उगणीसौ काती, चौदश  
चौमासी चारू ॥ नया नगर हलुकर्मी हितको, वदी ढाल ए  
चारू रे ॥ सुनि० ॥ १६ ॥ रेखराज कहे, सदा सुख चावो,  
तो इण ने छिटकावो ॥ लाभ हानि कर्मा अनुसारे, धर्म ध्यान  
लय लावो रे ॥ १७ ॥

## १७-श्रावकोंको हितशिक्षा.

( वदू सोले जिन सोचन वरणा, इस चालमें )

दोहा—“ श्रावक नाम धरायके, एवा करे अकाज ॥

तिणने समझ श्रद्धता, मनमें आवे लाज ” ॥

ते श्रावक किम उतरे पारो ॥ टेरे ॥

एंडा मारे ने धडियॉ उडावे, सुदरी वद करने दिखावे ॥  
त्यागे नहीं पारकीनारो ॥ ते श्राव० ॥ १ ॥ परनारीने रहे  
तकता, जिम ग्रहणमांही मंगता फिरता ॥ वचन वदे अति

विकारो ॥ २ ॥ सूँक ख्याप ने पेट मरे, दिखीस देखिने बलि  
 करे ॥ लाअ धर्म नीदे सेसारो ॥ ते भावक ॥ १७ ॥ नीर  
 अछाप्यांमांही पडे, भैसा शिम पंसेने रोळ करे ॥ बलि  
 पीवण रो नही परिहारो ॥ ते० ॥ १८ ॥ कंदमूल भस्मे नें तक  
 मूला, बहुबीजा राघ वर होला ॥ बले/वीर भस्मे लट संज्ञता  
 ॥ ते भावक ॥ १९ ॥ अछता कजियां मांही मिळे, कौडी  
 साटे पैवार घळे ॥ ओ उचमरा नही आधारो ॥ ते भाव ॥  
 होकर पीवे ने मेषमांस मस्ये, रात्रि मोमन निशि दिवसे तक  
 सातां २ पदबावे अंधारो ॥ ते० ॥ २० ॥ हुलनी रुदि हंगे  
 तापे, बले म्यल, गुल एक सम कर प्राणे ॥ शिम मदळ किवा  
 रई नर नारो ॥ २१ ॥ ग्राहक मिलियां सस्फी दारिसे, छलबल  
 कर निखरी न्दासे ॥ घूटा घैस करे ॥ केइ अप्पारो ॥ ते०  
 ॥ २२ ॥ कर्मादान करे पनरे, बले, पत्थर फोडामने बिल करे ॥  
 बले ऊँट बलदरो लेवे माडो ॥ ते भावक ॥ २३ ॥ शुगली  
 खाव कडे अछती, परपर बैठे नही साधरती, जाने धर्म ठग  
 शुगलाकारो ॥ ते भावक ॥ २४ ॥ बचन जोडिबरे कर अ  
 तो बोवा वादळ शिम गावतो, लौकनी स्राव नही लिगारो ॥  
 ते भावक ॥ २५ ॥ पर दोष न देखे तिल अितरो, बल  
 अछ ताही आल देवे नितरो, परनिंदारो नही पारो ॥ ते भाव  
 ॥ २६ ॥ नही घुंमठ पबसापरती, तप मूस करे नही छकि  
 मती ॥ दूर पयो साधण लारो ॥ ते० ॥ २७ ॥ देव गुरु  
 धर्म नही छलिया बले भावकामे पावे भुंलिया, पिण अंतरपटे  
 मांही अघारो ॥ ते० ॥ २८ ॥ तत्व तपो न करे निरवो, विष  
 अघर्तो भाव मेव्यो धरणो ॥ किम उतरे भवअल पारो ॥ ते०

श्रावक० ॥ १६ ॥ नितरा देव देवी पूजे, अंतर घटमें नहीं स्रष्टे  
 कैसे हुवे उणरो निस्तारो ॥ ते श्रावक० ॥ १७ ॥ इम सुणने  
 ममता भेटो, एक देव निरंजन शुद्ध भेटो, 'रत्न' कहे सुणो  
 नरनारो ॥ ते श्रावक० ॥ १८ ॥

## १८—हितोपदेश.

( मन मोह्योरे तुगियापुर नगर मुहामणो, इस चालमें )

प्राणी! थारो, आऊखो तूटाने सांधो को नहीं रे ॥ टेर ॥  
 आऊखो तूटाने सांधो को नहीं रे, इम जाणी मत करजो प्रमाद  
 रे ॥ जरा आयाने शरणो को नहीं रे, हिंसादिक छोड्यां हुवे  
 समाध रे ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ ऊंचा चणाया मंदिर मालिया रे,  
 दे दे धरतीमें ऊंडी नीच रे, एक दिन ऊभा छोडी जावसी रे,  
 आगे दुःख सहसी आपरो जीव रे ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ माता  
 पितादि नारी कारणे रे, जे कोई संचे जाडा पाप रे ॥ ते चोर  
 तणी परे झूरसी घणा रे, परभवमें सहसी घणो संताप रे ॥  
 प्राणी० ॥ ३ ॥ युगल्यारो तीन पल्योपम आऊखो रे, लांबी  
 जांरी तीन कोशनी काय रे ॥ कल्पवृक्ष पूरे दश प्रकारेना रे,  
 वादल जेम गया विलाय रे ॥ ४ ॥ चक्रवर्ति ने हलधर केशवा  
 रे, बले इन्द्र कहिए सुरांरा राय रे, ॥ उगी उगीने ते पिणं  
 आयम्या रे, जो जो या अचरज वाली वातरे ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥  
 अथिर संसार जाणी तज निसच्यारे, करता नवकल्पी उग्र विहार  
 रे ॥ भारंड पंखीनी त्याने ओपमा रे, नधरे मुनिममता, मोह  
 लिगार रे ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ ते आचार पाले छे सूधी रीतसूंर,

आपरा उदा सधलो सुघरे ॥ त सुगतमें जासीबग सताषई ॥  
 त्यारी निर्मल लेख्या, रुढी सुघ रे ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ जे जावन  
 घयमें धर्म करे नहीं रे, त्यांस पाछे पिण् करणी भाषे नाय रे ॥  
 से मरण अवसर घणा पिच्छतावसी रे, सोय विचार करा अंतम  
 माय रे ॥ प्राणी० ॥ ८ ॥ जे जीव पढिया विषय प्रमादमें रे,  
 त्यांस धर्म करणी नावे अंतकाल रे ॥ प्राणी० ॥ ९ ॥ ज्या  
 हासी घणारे, पढिला ये सुमोसो, सुरत-संमाल रे ॥ प्राणी० ॥ १०  
 छन्द रूप गध रसने स्पर्श छे रे, अणगमवा ऊपर मत आगे  
 डेप रे ॥ राग मय आणों मन यमता ऊपर रे, अरिहंत बघना  
 सांभो देख रे ॥ प्राणी० ॥ ११ ॥ क्रेषादिक थारो अलया करो  
 रे, ध्यासी दुर्गतिना दातार रे ॥ लोक पाखंडी छे अतिषमा  
 र, ज्याने दूर वज्यां हाव सुधा पार रे ॥ प्राणी० ॥ १२ ॥  
 मृच्छ लया जिम पाका पानडा रे, ज्याने भरतां न लागे काई  
 वार रे ॥ ज्यां दूटे जाऊला, भरतां मनुष्यन, र सोड न दीसे  
 राखण हार रे ॥ प्राणी० ॥ १३ ॥ मात पितादिक ऊभा मेलन  
 रे, परमघमें जासी एकलो आप रे ॥ विछाडिया-पळे मिल्यो  
 दाहिलोरे, कुण् मस आसी बेटा आप रे ॥ प्राणी० ॥ १४ ॥  
 जीवडा अस्सु रया माया विपे रे, मातपितादिक स्त्री-भाय रे,  
 ताणा बडा त्यां रे लाग राह रे, आशामें सुम्हा वस्या जाय रे  
 ॥ प्राणी० ॥ १५ ॥ जीवडो काय छोडे विषय अवसरे रे, मन  
 माहीं चिन्तव अनेक संमाल रे ॥ मेषन बोवन साहो लियो नहीं  
 रे, इम बिल करतो करवाय काल रे ॥ १६ ॥ जीव ता आप्णे  
 का बिन फिर रहूँ रे विषय मरण भागे नहीं जाले घोर रे ॥  
 वन्य मरण सगला जगतमें रे, सुद ता पहीज मोटी खोड रे

॥ प्राणी० ॥ १६ ॥ धन गडियों घरमें, चली लेणो लोकमें रे,  
जाणे पुत्रादिकने देखे सर्व वताय रे ॥ पिण जीभ थाकी नहीं  
आवे बोलणी रे, सगली रहगई मनके माय रे ॥ १७ ॥ काया  
माया छ सवही कारमी रे, कारमों छे सवही परिवार रे ॥ मिल  
रविठजावे वादलनी परे रे, एवो छे सवही अथिर संसार रे  
॥ १८ ॥ काई धीधोने काई करणो अछे रे, घर हाटादिक  
व्याह व्यापार रे ॥ माया मेळूंकरतो फिरे रे, पिण काल  
अचित्यो नाखे मार रे ॥ प्राणी० ॥ १९ ॥ घररा कारज पूरा  
कर नहीं सक्यारे, अधवीच छोड चलयो सहु कोयरे ॥ जे घर  
बंधे खूता रहे सदा रे, ते गया नर भव खोयरे ॥ प्राणी० ॥  
२० ॥ मनुष्य तणो भवे छे अति दोहिलो रे, उत्कृष्टो पांमे  
अनंतो काले रे ॥ अल्प सुखारे कारण वापडा रे, हारे मानव भव  
मूरख बाल रे ॥ प्राणी० ॥ २१ ॥ एवो आऊखो अथिर जाण-  
नेरे, करजो जिनेश्वर भाख्यो धर्म रे ॥ सिद्धिगति जावारी हुवे  
चावना रे, तो दिनर पतला पाडो कर्म रे ॥ २२ ॥ इमकहीं  
कहीने वली कितरो कहूं रे, सगलोही जाणो अथिर संसार रे ॥  
ज्ञान दर्शनने चारित्र विना रे, सार मत जाणो मूल लिंगा रे  
॥ प्राणी० ॥ २३ ॥

## १९-धन्ना मुनि स्तवन.

( ह्याळकी, चालमें )

काकन्दी नगरी भलीस रे, जितशत्रु तिहांराय ॥ वाग वाव-



ही भाविया सर, सुन्दर शोभा काय ॥ देखतही मन झुल्लम  
सरे नैन रखा लुभायर ॥ १ ॥

‘तू सुण ह्यारी जननी, आज्ञा देवे तो संयम आदरू’

मगबत आप सुमोसन्वास रे, घणा मुनि परिवार ॥  
खबर दुई सव शहरमेंसरे, घन्दन चल्या नरनार ॥ घमात्री  
पण आवियासरे, फल बैठा नमस्कार रे ॥ तू सुण० ॥ २ ॥  
मगबत देष देघनामरे, सर्ब खीखां हितकार ॥ नार्पा सुण बैरा  
गिषामरं, जाण्णो अथिर संसार ॥ हाथ जोडने इम कडे सरे  
लेसूं सयम मार रे ॥ तू सुण० ॥ ३ ॥ मिम सुख होबे तिम  
करोसरे, मगवत दियो करमाय ॥ घर आई घणो कडे सरे  
आज्ञा दो मोरी माय ॥ घघन सुणी पुत्र तया सरे माता गये  
मूरछाय ॥ तू सुण० ॥ ४ ॥ चेतलेय माया कडे सरे सुण पुत्र  
मोरी वाम ॥ पकाणकी नानण्णो सरं, छोडीने मत जाय ॥ नैन  
भूरणा हर रखा सरे, रोषती बोली माय रे ॥ ५ ॥

‘तू सुण नानडिया! दीक्षा मत लीजे

म्हाने छोडने ( टेर )

कोमल फल सुभाषणां सरे, ज्यारो करणो लोंच ॥ पांव  
उचराणा चालणा सरं, जो म्हने षणो आलोच ॥ श्रीसकलमं  
सीप८ सर जो म्हन घणोच छोंच रं ॥ तू सुण० ॥ ६ ॥ बाबीस  
परिपट्ट जीतया सरे, करणो उग्र बिहार ॥ घर घर करवी  
गावरी सरे, लेणो निदूषण आहार ॥ दोप ययालीस टालणो  
सरे सहजां दु छ अपार रे ॥ तू सुण ॥ ७ ॥ फोड बचीस  
सोनैबा मर मरिया छे मंशार ॥ सुन्दर रूप सुपाषो सरे साजे

सोवे वत्तीसों नार ॥ हाथ जोडने इम कहे सरे, मत मेलो  
निराधार जी ॥ ८ ॥

“ थे सुणो प्रीतमजी दीक्षा मत लजो  
ह्याने छोडने ( टेर ) ” ॥

महेलां ऊभी कामण्यांस रे, उभी करे पुकार ॥ थे मत  
छोडो साहिवा सरे, मैं छां अवलानार ॥ समय छे अति दोहिलो  
सरे, चलणो खोंडाधार हो, ॥ थे सुणो० ॥ ९ ॥ घर आर्ड  
धन्नो कहै सरे, आज्ञा दो मोरी माय ॥ जन्मे सो जीवे नहीं  
सरे, इम भाख्यो जिनराय ॥ आज्ञा दो मोरी मातजीं सरे, क्षिण  
लाखिणी जाय रे ॥ तू सुण० ॥ १० ॥ सियाले सी सेवणो  
सरे, उन्हालेलू ताप ॥ चौमासे तपस्था करे सरे, तूं छे अति  
सुकुमाल रे ॥ तू सुण० ॥ ११ ॥ वार वार समझावियासरे,  
एक न मानी वात ॥ हाथ जोडने इम कहे सरे, अनुमतिदो  
मोरी मात जी ॥ तूं सुण० ॥ १२ ॥ आज्ञा दीनी मातजी सरे,  
कर मोटे मण्डाण ॥ जाय सूप्या भगवंतने सरे तारो श्रीभग-  
वान ॥ ओ पुत्र वल्लभ घणो सरे लजि श्री वर्धमान हो ॥ १३ ॥

“ थे सुणो जिनवरजी ! दीक्षा अब  
दीजो म्हारा लालने [ टेर ] ॥ ”

माला मोती खोलिया सरे, खोल्या सहु श्रृंगार ॥ पंच मुष्टि  
लुंचन कियो सरे, माता झेल्या खोला मझार ॥ वन्नाजी संयम  
आदन्यो सरे, ज्योड्यो सहु परिवार हो ॥ थे सुणो० ॥ १४ ॥  
बैले बैले पारणो सरे, जाव जीवलगधार ॥ अंतर तो पडेनहीं

सरे अंबिल खसो आहार ॥ नव महीना संग्रम पाण्डिबो करे,  
 करगया खेवो पार हो ॥ ये सुणो० ॥ १५ ॥ शीतार्थ, भीतु  
 मला सरे रत्न पंदर्बी महाराज ॥ जबाहर साल, इममके करे  
 तुम छो तारण महाराज, डाल जोडी प्रभा तपी सरे, उगवीसो  
 वचीस मास हो ॥ १६ ॥

“ ये धन्य घनाजी ! मलोजी दिपायो  
 मारग जेतको ॥ ”

## २०—स्याद्वाद स्वरूप

( आदर जीव इमा गुण आदर, इत चाखें )

स्याद्वाद मत श्रीजिनबरनो ( डेर )

स्याद्वाद मत श्री जिनबरनो, त किम कहिए एकान्तजी ॥  
 मत एकान्त कहे मिथ्यात्वी, साखी सकल सिद्धान्तबी ॥  
 स्याद्वाद० ॥ १ ॥ त्रिपा रूप तिही न रह मुनिबर, सालमें  
 उचराध्यत त्रिचारबी ॥ साधु साध्वी पसे इफहा श्रीठाणां  
 यांग पांच प्रकारबी ॥ स्याद्वाद० ॥ २ ॥ जीव असंख्य कथा

१ श्रीजिनबर स्वका ममा एकान्तवादी नहीं है । अनेक कल्प  
 वादी है । याने अपभारपद—मयामक मार्ग है । किछो बलुको कोइ  
 जगद प्रदण करना चाहिये और वह । बलु किती जगद छोडमी दाम  
 खादिण । भावकय जो सलु भावक, अपनी अज्ञानतासे एकान्त  
 रूपमा करत है वह मिथ्यात्वी है ।

जल टक्के, पन्नवणा सूत्र जिनराजजी ॥ आचारांग मांहे लंघे  
नदीने, मुनिवर विहरण काजजी ॥ स्या० ॥ ३ ॥ पंचम अंगे  
न करे श्रावक, पनरे कर्मादानजी ॥ हल निर्वाह - तणा पिण  
दीसे-सप्तम अंगे क्रिया, परमाणजी ॥ स्या० ॥ ४ ॥ हिंसा न  
करे त्रिविधे मुनिवर, पंचम अंगे जुओ, धीरजी ॥ जिनवर ते  
जूलेश्या ऊपर, शीतल लेश्या मूर्की वीरजी ॥ स्या० ॥ ५ ॥  
महा वेदना हाथ लगायां, वनस्पतिने थाय अंगजी ॥ पढतां  
मुनिवर तेहिज पकडे, ए अर्थ छे आचारांगजी ॥ स्या० ॥ ६ ॥  
उत्तराध्ययने भाख्या मुनिवर, समय मात्र न करे प्रमादजी ॥  
दशवैकालिक त्रीजी पोरसी, नीदतणी कीधी मरजादजी ॥  
स्या० ॥ ७ ॥ अंध भणी पिण अंध न कहवो दशवैकालिक  
ए विधि वादजी ॥ ज्ञाता अंगे जतिय भाख्या नागधीना अव-  
रण वादजी ॥ स्या० ॥ ८ ॥ सूत्रे देव अचृत्ति बोल्या, हवे  
पांचमें ठाणे मनरंगजी ॥ ब्रह्मचर्य तप अति उत्कृष्टो, - देव भणी  
बोल्यो ठाणायांगजी ॥ स्या० ॥ ९ ॥ सात जणासूं मळि  
दीक्षा, सातमेंठाणे ठाणायांगजी ॥ छठे अंगे सात 'सया' सुं  
कोण खोटो, कोण साचो, अंगजी ॥ स्या० ॥ १० ॥ नारी  
सहस्र वत्तीसे ज्ञाता, सुग्रहांग सोले हजारजी ॥ कृष्ण तणी  
अंते उरी भाखी, किम मेलीजे एह प्रकारजी ॥ स्या० ॥ ११ ॥  
कुलधर पनरा जंबूपन्नत्तिमें, समवायंगे कुलधर सातजी ॥ हरि  
चारमा जिन आठमें अंगे, तेरमें चौथे अंग कहात जी ॥ स्या०  
॥ १२ ॥ चरित्र विराधी ज्यू पांचमें अंगे, भवनपति सुर थाय  
जी ॥ ते सुख मालिका छठे अंगे किम दूजे देव लोके कहाय  
जी ॥ स्या० ॥ १३ ॥ सूत्र टीका निर्युक्ति बग्वाणो, चूर्णि, भाष्य

ए मलो पंचजी ॥ पंच कइ तो स मत सांचो, तिज अर्थे मकरा  
 म्बुचञ्जी ॥ स्या० ॥ १४ ॥ जीषाभिगमे अष्टपद्मी, माक्या नार  
 की भीमभवतञ्जी ॥ ओगणोसमे भी उत्तराभ्यसन, मांसर्पिड  
 पाल्या सिद्धान्तञ्जी ॥ स्या० ॥ १५ ॥ इय छेय उपादेय वस्त्राणा  
 तिम उम्सर्ग अन अपवाद जी ॥ त्रिधि चरितानुवाद नर  
 मंस्थित, निधय नय भ्यवहार मर्यादञ्जी ॥ स्या० ॥ १६ ॥ अन  
 कान्त नयवादी भीमिनवर, आगममे इम बालञ्जी ॥ कइ ' भी  
 मार ' समझके परमो भीसिद्धाव रत्न अमोलञ्जी ॥ स्या० ॥ १७ ॥

## २१-सोले जिन स्तवन

( धीनपकार मंत्रञ्जीरो प्यान घरा, इम चाबमे )

बंदू सोलेही जिन सोवन वरणा ( टेर )

श्री ऋषभ आजित संभव स्वामी, बंदू अभिनेदन  
 अंतस्वामी ॥ राग इप दोय छय करणा ॥ १ ॥ सुमति  
 नाथजाने सुपासो, प्रभु सुगत गया मेर्या गर्माबासो ॥  
 मेट विया अनमने मरणा ॥ वंद० ॥ २ ॥ शीतल भेषांस  
 जिन दोर, प्रभु चौदई रात्र रखा जोई ॥ विमल मति निरमल  
 करणा ॥ वंद० ॥ ३ ॥ अनंतनाथ अनंत शानी, ज्याई मनहारी  
 बात नही छानी ॥ घमेनाथञ्जीको ध्यान हिरदे घरणा ॥ वंद०  
 ॥ ४ ॥ छांविनाथ प्रभु साताकारी कुंपुनाथ स्वामीञ्जीरी आवू  
 बलीहारी ॥ अरनाथ आतम उदरणा ॥ वंद० ॥ ५ ॥ महिमो  
 घणी हा नमि नाथ तणी, महापीरञ्जी हुषा शासनरा घणी ॥  
 म भरिया प्रभु घोर घरणा ॥ वंद० ॥ ६ ॥ तीन लोकमे रूप

प्रभु पायो, ऐसो-माथडी पुत्र दूजो नही जायो ॥ चौसठ इंद्र-  
 भेटे चरणा ॥ व० ॥ ७ ॥ शरीर सपदा सुंदर सोहे, निरख-  
 तारा-नयन तुरत मोहे ॥ चतुगंरातो चित्त हरणा ॥ व० ॥ ८ ॥  
 जिग मिग दीप रही देही, ज्यांने सुरनर निरख रखा केई ॥  
 ज्यांरो आंख जाणे अमीय ठरणा ॥ वं० ॥ ९ ॥ पग नखासूं  
 मस्तक तांई, ज्यांरो शरीर वखाण्यो सुत्तर मांही ॥ चारूंही संघ  
 लेवे शरणा ॥ वं० ॥ १० ॥ समुच्चयही अरज सुणो सोळे, ऋषि  
 रायचंदजी आया आपरे ओळे ॥ म्हारी आवागमन दुःख दूरे  
 हरणा ॥ वं० ॥ ११ ॥ संवत् अठारे छत्तीसे वरपे, क्रियो  
 नागोर चौमासो भाव भरसे ॥ ज्यांरो भजन किया भवसायर  
 तिरणा ॥ वंदूं ॥ १२ ॥

## २२—अष्ट जिन स्तवन.

( श्रीनवकार जपो मनरगे, इस चालमें )

उपजे आनंद आठों जिन जपतां ( टेर.)

ग्रह उठी परभाते वंदूं, श्रीपदम प्रभुजीरा पायरीमाई ॥  
 चासुपूज्यजीतो म्हारे मन बसीया, कमीयन राखी कायरीमाई ॥  
 ॥ १ ॥ उपजे आनंद आठों जिन जपतां, आठ कर्म जाय तूट  
 रीमाई सुख संपदने लीला लाधे, रहे भरिया भंडार अखूट  
 रीमाई ॥ उपजे ० ॥ २ ॥ दोनू जिनवर जोड विराजे, हिंगल  
 वरणा लाल रीमाई ॥ तीरथ थापीने करमोने कापी, पाप किया  
 पय माल रीमाई ॥ ३ ॥ चंदा प्रभुजीने सुविधि जिनेश्वर, दाय

हुवा सफद रीमाई ॥ मोर्खी वरणी देदी दीपे, मुझ देखन अधिक  
 चमेद रीमाई ॥ उपजे० ॥ ४ ॥ मालिनाथ जिन पास प्रमु  
 की, नीला मोरनी पांख रीमाई ॥ निरखतारा नयन न घांसे,  
 अमिष ठर ज्यारी आंख रीमाई ॥ उ० ॥ ५ ॥ मुनि सुप्रत  
 जिन नेमि जिनेश्वर, सावल बरग शरीर रीमाई ॥ इद्रास वली  
 अधिक दीपे, दीठां हरण हिवडो हीर रीमाई ॥ उ० ॥ ६ ॥  
 रूप अनापम अम्बल बिराजे, ज्युं हीरा अडिया हेम रीमाई ॥  
 अचरख अमिकी कसबोई, मुझ केहेतां न आव कम रीमाई ॥  
 ठ ॥ ७ ॥ शिवपुर मांही साहेब साहे, हुं नहीं आपुं पूर  
 रीमाई ॥ मुझ बिच महि वस्या परमेश्वर, बरुं उगतो खर रीमाई  
 ॥ उ० ॥ ८ ॥ ए आठो आरेहतारे आगल, अरज कस्त कर  
 वाड रीमाई ॥ रिख रामचंदकी कह झानी झारा, पुरानी  
 सगला कड रीमाई ॥ उ० ॥ ९ ॥ सवत अठाराने बरप छपीस,  
 कियो नागार छहर धीमाम रीमाई ॥ प्रसाद पूव जयमलकी करा,  
 कियो ज्ञानतथा अभ्यास रीमाई ॥ उ० ॥ १० ॥

### २३—भरत बाहुबळी स्तवन

बीरा छ र। गजबकी उतरा, गज बळी केबळ न होसीर ( २२ )

राज तमा अति लाभिया, भरत बाहुबळ संसरे ॥ मूठ  
 उपाही मारवा बाहुबळ प्रतिमुसरे ॥ बीरा० ॥ १ ॥ बंधव  
 गजबकी उतरा, जाझी सुदरी इम मापेरे ॥ अपम जिन  
 अग माकनी बाहुबळ तुम पासेर ॥ बीरा० ॥ २ ॥ सोषकी  
 सयम लिखा, आपो बली अभिमानोर ॥ लघु बंधव बाईं नहीं

काउसग्न रह्या शुभ ध्यानोरे ॥ वी० ॥ ३ ॥ वरप दिवस  
काउसग्न रह्या, बेलडियाँ विंटाणारे ॥ पंखी माला मांडिया,  
शीत तापे सोकाणारे ॥ वी० ॥ ४ ॥ साधवी वंचन सुणी करी,  
चमक्या चित्त मझारोरे ॥ हय गय रथ पायक तज्या, पिण  
चढियो अहंकारोरे ॥ वी० ॥ ५ ॥ वैरागे मन वाळियो, मुक्यो  
निज अभिमानोरे ॥ चरण उठायो वांदेवा, पास्या केवळ  
ज्ञानोरे ॥ वी० ॥ ६ ॥ पहुंता केवळी पारंपदा, वाहुवळी ऋषि  
गयोरे ॥ अजर अमर पदवी लही, समय सुंदर वंदे पायोरे  
॥ वी० ॥ ७ ॥

## २४-धर्मरुचिमुनि स्तवन.

मुनिवर धर्मरुचि रिख वंदूं ( टेर )

चंपा नगर निरोपम सुंदर, जठे धर्म रुचि ऋषि आया ॥  
मास पारणे गुरु आज्ञाले, गोचरिया सिधायाहो ॥ मुनि०  
॥ १ ॥ भव भव पाप निकाचित संचित, दुःकृत दूर निकंदूं  
हो ॥ मुनि० ॥ २ ॥ नीची दृष्टि धरण सिर मोहे, मुनिवर  
गुण भंडारे ॥ भिक्षा अटल करंता आया, नागश्री घर  
द्वारे हो ॥ मु० ॥ ३ ॥ खारो तूंवो जहर हळाहळ, मुनिवरनें  
वेहेराव्वे ॥ सहजे उखरडी आई अमघर, कहो बाहिर कुण  
जावेहो ॥ मु० ॥ ४ ॥ पूरण जाणी पाहो वलीया गुरु आगे  
आई धरीयो ॥ कोण दातार मिल्यो रिख तोने, पूरण पातर  
भरीयो हो ॥ मु० ॥ ५ ॥ नाना करतां मोने वहिराव्यो, भाव



उलट मन औणी ॥ चाखान गुरु निरणम कीघो, जहर इका  
 हळ जाणा हो ॥ सु० ॥ ६ ॥ अखर अमोज कुट्टक सम खारो,  
 सो मुनिबर तू स्वासी ॥ निरवळ काठ जहर इकाहळ, अफाल  
 मरजासी हो ॥ सु० ॥ ७ ॥ आघाले परठणने चाल्वा  
 निरमल ठार मुनि आया ॥ विंदू एक परठिमा ऊपर किठिरी  
 बहु मरजाया हा ॥ ८ ॥ अन्य आहारभी एहवी हिंसा सर्वभी  
 अनरथ जाणी ॥ परम अभय रस भाव उलट घर, किठिरीरि  
 करुणा औंवाहो ॥ ९ ॥ देह पठता दया ओ निपजे, तो माग  
 उपगारो ॥ स्त्रीर स्वाह सम जाणी हा मुनिबर, तत्क्षण करगया  
 आहाराहा ॥ १ ॥ प्रबळ पीढ शरीरमें व्यापी आवण शक्तिज  
 धाकी ॥ पादोगमन क्रियो संघारो, समता दृढता राखी हा ॥  
 ११ ॥ सर्घार्ये सिद्धपहुंवा शुभ जागे, महा रमणीक विमाण ॥  
 चौसठ मणरा माठी लटके, करपीरे परमाण हा ॥ सु ॥ १२ ॥  
 खबर करणने मुनिबर आया रिस्वजी कळज कीघा ॥ विग  
 धिग् इण नागश्रीन, मुनिवरने विप वीचोहो ॥ १३ ॥ हुई  
 फजीतीकम् बहु धाध्या, पडुती नरक हुवारो ॥ घन घन इण  
 घर्म रुधिने, करगया खेमा पारो हा ॥ सु० ॥ १४ ॥ पैसठ  
 साल जोघामा माह, सुखे क्रिया चौमासा ॥ रत्नचंदबी कळ  
 एह मुनिवरना, नामधकी शिव वासा हो ॥ सु ॥ १५ ॥

## २५-विजय मेठ और विजया सेठानीका स्तवन

शुक्ल पक्ष विजया घट शीना सेठ कृष्ण पक्षरो जाणी ॥  
 धन्य धन्य भावक पुण्य प्रगावक, विजय मेठन सेठानी ॥

हिवडे तो-हार श्रृंगार सजी तनु, काम घटा जिम उलसाणी ॥  
 सज श्रृंगार चढी पिउ मंदिर, हेज धणो हिये हरषाणी ॥ ध०  
 तान दिवस मुझ वरत तणाडे; सेठ बोले मधुरी वाणी ॥ वचन  
 सुणी नैणों नीर ढलियो, वदन कमळ गयो बिलखाणी ॥ ध०  
 ॥ २ ॥ पूळे प्रीतम सुण.सुख लीणी, कुण चिंता मनमे आणी ॥  
 शुक्ल पक्ष गुरु मुख व्रत लीनों; तुमे परणो दीजी साणी ॥ ध०  
 ॥ ३ ॥ और नार मुझ वहिन वरावर, धन्य धीरज थारी जाणी  
 ॥ एक्कण शेज हेज अपर बळ; तो पिण मन राख्यो ताणी ॥  
 ध० ॥ ४ ॥ वरपाकाल भजित वन गाजे, चौधारा वरपे पाणी ॥  
 पटक्रुतु वरप द्वादश निरमळ, शील पाळ्यो, जी समता आणी  
 ॥ ध० ॥ ५ ॥ विमळ केवळी करी प्रशंसा, ए दोनोंही उत्तम  
 प्राणी ॥ खबर हुई संयम व्रत लीनो, मोह करम किया धूळ  
 धाणी धी ध० ॥ ६ ॥ पूज्यगुमानचंदजी, गुरु मिलिया, सेठ  
 कथा ज्यां मुख आणी ॥ ऋषि रत्नचंदजी पाय वंदे, केवळ  
 ले गया निर्वाणी ॥ ध० ॥ ७ ॥

### १८-हितोपदेश.

इण काळरो भरोसो, भाईरे को नही, ओ किण बिरियो मॉहे  
 आवे रे ॥ बाळ जवान गिणे नहीं, ओ सर्व भणी गटकावे रे ॥  
 इण० ॥ १ ॥ बाप दादो बैठो रहे, पोतो उठ चलजावे रे ॥ तो  
 पिण धेठा जीवने, धरमरी बात न सुहावे रे ॥ इ० ॥ २ ॥  
 महल मिंदरने माळीया, नदी य निवाणने नाळो रे ॥ सरगने  
 मृत्यु पातालमे, कठेयन छोडे काळो रे ॥ इ० ॥ ३ ॥ घरनायक

चाणी करा, रसा करी मन गर्मिती रे ॥ काळ बचानक ते  
 चल्यां, चौक्यो रहगाइ झिलती रे ॥ इ० ॥ ४ ॥ राग उजवार  
 कारणे, वेद विश्वस्य आवे रे ॥ शेगीन ताजो करे, अशी  
 राबर न पाव रे ॥ इ० ॥ ५ ॥ सुंदर सोढी सारस्वी, मनोहरं  
 महल रसाळो रे ॥ पोढ्या होलिय प्रमद, जठे जेज्व पडुता  
 फळो रे ॥ इ० ॥ ६ ॥ राज करे रज्ज्यामणो, इंद्र जनोपय  
 दीसे रे ॥ वैरा पकड पछाबियो, र्ताग पकडने घीसे रे ॥ इ०  
 ॥ ७ ॥ बळभ बाळक वेस्तने; मांडी माठी आंघा रे ॥ छिनक  
 मोठे खेळता रसा; होय गई निगळा रे ॥ इ० ॥ ८ ॥ मार  
 निरखने परजिया अपहरन उणीहार रे ॥ घुळ कूठ बळतो  
 रसा, ज्यो ऊमी हेला मारे रे ॥ इ० ॥ ९ ॥ खेजार चित्त पुंपुष्ट  
 करी जंबारेत माटी रे ॥ पायडीय खडता पळ्या, खाय न सकिया  
 रोटी रे ॥ इ० ॥ १० ॥ मुर नर इन्दर किजरा, कोई न रह  
 भिडका रे ॥ मुनिवर काळने जीतिया, जिण दिया मुक्तमाई  
 बको रे ॥ इ० ॥ ११ ॥ कितनगद महि सबसण, आया घेस  
 काव्ये रे ॥ रतन कडे मब वीवने, कीजो घमे रसाळा रे ॥  
 इ० ॥ १२ ॥

## २७ हितोपदेश

भूला मन घमरा कोई मम्यो, ममियो दिवसने राव ॥  
 माया रा लोमी प्राणियो मरने दुर्गति जाव ॥ इ० ॥ १ ॥  
 केवना छारूर फडना बाळके, केवना मायने वापे ॥ ओ प्राणी  
 बाणी एकलो, साचे पुण्यच पाप ॥ इ० ॥ २ ॥ भाळा तो

हूँगर जेवडी, मरणो पगल्यारे हेट ॥ वन संचीरे संची कांई  
 करो, करो जिनजीरी भेट ॥ भू० ॥ ३ ॥ उलट नदी मारग  
 चालवो, जायवो पेल्लेरे पार ॥ आगळ नहीं हटवाणियो, सांवळ  
 लीजारे लार ॥ भू० ॥ ४ ॥ मूरख कहे धन मांहरा, ते धन  
 खर्चे न खाय ॥ वस्त्रे विना जाय पोढियो लखपति लंकडोरे  
 मांय ॥ भू० ॥ ५ ॥ धंधो करीरे धन जोडियो, लाखाँ ऊपर  
 फोड ॥ मरणरी वेळा मानवी, लेसी कंदोरो तोड ॥ भू० ॥ ६ ॥  
 लखपति छत्रपति सेहु गया गया लाख वेलाख ॥ गर्व करतारे  
 गोखे वेसता, जळ घळ होय गई राख ॥ भू० ॥ ७ ॥ म्हारोरे  
 म्हारां कर रंघो, थारो नहींरे लिगार ॥ कुण थारो तूं  
 केहेनो, जोवो हियडे विचार ॥ भू० ॥ ८ ॥ मेमद कहे समझो  
 सहू ॥ सांभळ लीजोरे साथ ॥ आपणो आप उचारिया, लेखो  
 साहित हाथ ॥ भू० ॥ ९ ॥

## २८ नामिला पुत्रका स्तवन.

करम न छूटेरे प्राणिया ( टेर )

नामिला पुत्र जाणिए, धनदत्त सेठनो पूत ॥ नटवी देखीने  
 मोहियो, नहीं राख्यो घरनो सुत ॥ करम० ॥ १ ॥ पूर्व नेह  
 विकार ॥ निज कुळ छंडीरे नट थयो, नाणी शरम लिगार ॥  
 क० ॥ २ ॥ एक पुर आव्योरे नाचवा, ऊंचो वांस विशेष ॥  
 तिहां राय आव्योरे जोयवा, मिलियो लोक अनेक ॥ क० ॥

दीप पग पहरीरे पावडी, बांस घट्यो गज गेल ॥ क० ॥ निरै  
 धारा उपर नाचतो, खेले नव नवा खेल ॥ क० ॥ ४ ॥ डोल  
 वमाघेरे जाटधी, गाबे किन्नर साद ॥ पाय वळ घूबरा घम घमे,  
 गाजे अंबर नाद ॥ क० ॥ ५ ॥ तय राजेन्द्र मन चित्तवे, लुब्धो  
 नटघीने साथ ॥ जो नट पढेरे नाचतो, तो नटघी मुष्ट हाथ ॥  
 क० ॥ ६ ॥ दान न आपेर सूपति, नट जाणी नृप बाव ॥  
 हं घन बंधुर रायनो, राय घंछे मुष्ट घाव ॥ क० ॥ ७ ॥ तय  
 तिहां मुनिवर पेखिया, घन घन साधु निराग ॥ भिग् भिग्  
 भिन्यारी जीवने, इम पाम्यो बैराग ॥ क० ॥ ८ ॥ संवर माघेरे  
 बघळी, घयो घयो करम सुपाय ॥ केवळ महिमारे सुर करे  
 सम्प विजय गुण गाय ॥ क० ॥ ९ ॥

## २९ अरणक मुनि स्तवन

अरणक मुनिवर घाण्या गोचरी, तटक दाजे घीशो जी ॥  
 पाय उबराणारे वेरु परबळे, तन मुकमाळ मुनीघात्री ॥ अ०  
 ॥ १ ॥ मुख कुमळानारे मासती पून, ज्युं, ऊमा गोळा हेठोघी  
 ॥ खरी दुपहरारे हीठो एकलो, माघो माननी भीठोघी ॥ अ०  
 ॥ २ ॥ बयल रंगीलीरे नयणा बिंदिया, ऋषि धम्यो तिण  
 ठायजी ॥ दामोने कहे रे जाय उवावळी, स्थितेडीनत्याया  
 जी ॥ अ० ॥ ३ ॥ पाषन कीजे मुल पर आमणो, बहरो  
 मादक सारात्री ॥ नप जावनमेर काया काई इमो सफल  
 करा प्रवठारोभी ॥ अ० ॥ ४ ॥ घेदाबदनीये चारिथ घुकिपो  
 मुण चित्त दिन रावात्रा ॥ एण दिन गोखर रमठो सुगग,

सुख विलसे दिन रातोजी ॥ एक दिन गोखरे रमता सुगटा,  
 तव दिठी निज मातोजी ॥ अ० ॥ ५ ॥ अरणक अरणक कर-  
 ती मा फिरे, गळियाँ गळियाँ मझारोजी ॥ कहो किण दीठारे  
 म्हारो वाळ्डो लारे बहु नर नारोजी ॥ अ० ॥ ६ ॥ तिहांथी  
 उत्तरीरे जननीरे पाय नम्यो, बहु लाज्यो मन मांछोजी ॥ धिग्  
 धिग् ब्रह्म चाग्नि च्चक्रियाँ, जेथी शिवपुर जायोजी ॥ अ० ॥ ७ ॥  
 अगन धुकंतीरे शिल्ला ऊपरे, अरणक अणसण कीधोनी ॥ समय  
 सुदर कहे धन ते मुनिवरु, मन वंडित फल लीधोजी ॥  
 अरणक ॥ ८ ॥

## २४-ढंढणमुनि स्तवन.

ढंढण ऋषिजीने वंदना हूँवारी, उत्कृष्टो अणगाररे हूँवारी लाल  
 ॥ आभिग्रह लीधो एहवो हूँवारी, लवधे लेखं आहाररे हूँवारी लाल  
 ॥ ढ० ॥ १ ॥ दिन प्रते जाचे गोचरी हूँवारी, न मिळे सुझतो  
 भातरे हूँवारी लाल ॥ मूळ न लीजे असुझतो हूँवारी, पिंजर हुय  
 गयो गातरे हूँवारी लाल ॥ ढ० ॥ २ ॥ हरी पूछे श्री नेमने  
 हूँवारी, मुनिवर सहस आठाररे हूँवारी लाल ॥ उत्कृष्टो कुण  
 एहमें हूँवारी, मुझने कहो किरताररे हूँवारी लाल ॥ ढ० ॥ ३ ॥  
 ढंढण अधिको दाखियो हूँवारी, श्रीमुख नेम जिणंदरे हूँवारी  
 लाल ॥ कृष्ण उमायो वॉदवां हूँवारी, धन जादव कुलचंदरे  
 हूँवारी लाल ॥ ढ० ॥ ४ ॥ गळियारे मुनिवर मिल्या हूँवारी,  
 वांघां कृष्ण नरेशरे हूँवारी लाल ॥ कोईक गोयापति देखने

ह्वारी, उपना माष विद्युपरे ह्वारी लाल ॥ ६० ॥ ५ ॥-सुझ  
 पर भायो सायुजी! ह्वारी, पहरा मोदक अमिलापर ह्वारी  
 लाल ॥ वहरने पाठा फिन्पा ह्वारी, आया प्रसुजीन पातर  
 ह्वारी लाल ॥ ६१ ॥ सुझ लघमे मोदक मिल्पा ह्वारी, सुझन  
 ऊहा फिरपाळरे ह्वारी लाल ॥ लघघ नहीं ओ मछवाहरी ह्वारी,  
 श्रीपति लघघ निहाळर ह्वारी लाल ॥ ६२ ॥ ७ ॥ तो सुझने कद्रप  
 नई ह्वारी, चाल्या परठण ठोररे ह्वारी लाल ॥ इव निहाळ  
 जायने ह्वारी सुन्पा कम कठारे ह्वारी लाल ॥ ६३ ॥ ८ ॥  
 आई सुधी भावा ह्वारी उपनो केषल घान रे ह्वारी लाल ॥  
 ठठण रिख सुत्ते गया ह्वारी, कडे अिनहपे सुवाणर ह्वारी  
 लाल ॥ ६४ ॥ ९ ॥

### ३०-कामदेव श्रावक स्तवन

श्रावक शोबीरनो उपानो घामीजी ॥ ( टेर )

एरु दिन इद्र प्रशसियोजी, मरि य समा र मौय ॥ वढताई  
 काम देवनी काई देव न मक चलाय ॥ श्रावक ॥ १ ॥ अरघ्यो  
 नहीं एरु ववताधी रूप पिछाच पणाय ॥ काम देव श्रावक  
 कनजा, आया पौपघ शाळार मौय ॥ श्रावक ॥ २ ॥ रूप  
 पिशाचना दखनवी, बुन्पा नहीं रे लिगार ॥ बाण्यो विध्याती  
 दवताजा सिमा शुद्ध मन ध्यान लगाय ॥ ३ ॥ मा  
 मा रे-कामदेवजी, घोन कळपे नहींछे कय ॥ चरिा घमज ठा  
 उणा पिण हूँ ठोडास ताय ॥ ४ ॥ श्रायीनो रूप बैक्रम  
 कियानी पिशाच पणा किया दूर ॥ पौपघ घाजामे आयनेजी,  
 पाळ घवन कर ॥ ५ ॥ मनमार्ह नहीं कंपियोजी, श्रायी

मूँडमें झाल ॥ पौषध शाळा वारे लाइनेजी, दियो आकाशे उछाल  
 ॥ श्रावक० ॥ ६ ॥ दंत खंडमें झालनेजी, कांवळनी परे रोळ  
 उग्र वेदना उपनीजी, नही चळियो ध्यान अडोळ ॥ श्रा० ॥  
 ७ ॥ गजपणो तज सर्प भयोजी, काव्ये महा विकराळ ॥ डंक  
 दियो कामदेवनेजी, क्रोधी महा चंडाळ ॥ ८ ॥ अतुळ वेदना  
 उपनीजी, चळियो नही, तिळमात ॥ सुर तिहां प्रकट थयोजी  
 देव रूप साक्षात ॥ श्रा० ॥ ९ ॥ कर जोडीने इम कहेजी,  
 थारां सुरपति किगाहें बलाग ॥ म्हे नहिं सरध्यों मूढमतिजी  
 थाने उपसर्ग दीनो आण ॥ १० ॥ तन मन कर चळिया नही  
 जी, थें धर्म पायो परमाण ॥ खमजो अपराध ते माहरोजी, इम  
 कही गयो निज थान ॥ ११ ॥ वीर जिणंद समोसन्याजी,  
 कामदेव बंदण जाय ॥ वीर कहे उपसर्ग दियोत्री, तोने देव  
 मिथ्याती आय ॥ १२ ॥ हों सामी सहु साचछेजी, तद समण  
 समणी बुलाय ॥ घर वैठा उपसर्ग सह्योजी, इम परशंसे जिन-  
 राय ॥ १३ ॥ वीस वरप लग पाळियाजी, श्रावकना व्रत वार  
 पहले सर्गे उपनाजी, चव जासी भव पार ॥ १४ ॥ आ दृढ-  
 ताई देखनेजी, पाळो श्रावक धर्म ॥ कामदेव श्रावकनी परेजी  
 थें पांमो शिव सुख पर्म ॥ १५ ॥ मरुधर देशसूं आयनेजी,  
 जैपुर कियोहै चौमास ॥ अष्टादश छियासीयेजी, रिख कुशाल  
 चंदजी कियो प्रकाश ॥ श्रावक० ॥ १६ ॥



## ३२—चार शरणा

हिरद धारीये हो मवियण, मंगलिक शरणा च्यार [ टेर ]

पोहो ठठी नित समरीजेहा, मवियण मंगलिक शरणा च्यार  
 ॥ आपदा टले संपदा मिले हो, मवियण, दालतना दावार ॥  
 हि० ॥ १ ॥ अरिईत सिद्ध साधु तणा हो, म० ॥ केवठी  
 मपित धरम ॥ ए चारूं जपतां थकाहो ॥ म० ॥ तूटे आर्द्ध  
 करम ॥ हि० ॥ २ ॥ ए शरणा सुखकारीयाहो ॥ म० ॥  
 ए शरणा भगलिक ॥ ए शरणा उचम कयाहो ॥ म० ॥ ए शरणा  
 तप सीख ॥ हि० ॥ ३ ॥ सुखसाता धरते पपीहा ॥ म० ॥ अ  
 ध्याव नरनार ॥ परमत्र आतां जीवन हा ॥ म० ॥ एह तणा  
 आचार ॥ हि ॥ ४ ॥ डाकग साकण भूतणी हो ॥ म० ॥  
 सिंह चिधान सर ॥ वरी दुश्मम खोरटाहो ॥ म० ॥ रहे सदाही  
 दूर ॥ हि० ॥ ५ ॥ निसदिन याने धावजाहो ॥ म० ॥ पांमे  
 परम आनद ॥ कमी नही किम्प बातरी हो ॥ म० ॥ सेव करे  
 सुर इन्द्र ॥ हि० ॥ ६ ॥ गेले घाटे चाळतांहा ॥ म० ॥ रात  
 दिवस मझार ॥ गांभो नगरा विशरतांहा ॥ म० ॥ विधन निधा  
 रण हार ॥ हि० ॥ ७ ॥ इण सरिखा शरणां नही हा ॥ म० ॥  
 इम सरिखी नही नाव ॥ इण सरिखो मत्र नही हा ॥ म० ॥  
 जपतां वाचे धाव ॥ हि ॥ ८ ॥ राखा शरणारी आसवाहो ॥  
 म० ॥ नेहा न आभे रोग ॥ धरते आनंद जीवनेहो ॥ म० ॥  
 एह तणो सजाग ॥ हि० ॥ ९ ॥ मन चित्या मनोरथ फले हो  
 ॥ म० ॥ निभे फल निवाण ॥ कमी नही देयलोकमें हो ॥ म०  
 मुक्ति तणा फल वाण ॥ हि० ॥ १० ॥ सबस अठारे पापभेहो

॥ भ० ॥ पाली शेखेकाळ ॥ रिख चोधमलजी इम कहेहो ॥  
भ० ॥ सुणजो बालगोपाळ ॥ हि० ॥ ११ ॥

### ३३-सती चंदनवालाका स्तवन.

धन धन श्री चंदन वाळा [ टेर ]

श्री दधिवाहन पुत्री जाणी, जिणरी माता धारणी राणी ॥  
भणे गुणने रूप रसाला, धन धन श्रीचंदण वाळा ॥ १ ॥  
अपछरा गुण जाणे इंद्रानी, तिणहूँ पिण रूप अधिको जाणी ॥  
देही दिपे दीपक जिम कमला ॥ ध० ॥ २ ॥ चंपा लूटीने सती  
वांधी गई, जठे सेठ धनोए मोल लूही ॥ जोवो जोर करमरा  
चाला ॥ ध० ॥ ३ ॥ मूला मस्तक मूडीने दुःख दीनो, सती  
भोंयरा मांहे तेलो कौनो, सेठ आवीने काढी ततकाला ॥ ध०  
॥ ४ ॥ जाई भूने वाकुला उडदना, कोई साधु आवे तो देऊं  
भाव घणा ॥ भूख तृपाने देही सुकमाला ॥ ध० ॥ ५ ॥ वीर  
जिणंद निजराँ दीठा, सतीरे रोम रोम लाग़ा मीठा ॥ सामे  
जोय रही उजियाला ॥ ध० ॥ ६ ॥ तेरे बोल अधूरा जाणी,  
सतीरे आंख्या मांहे न दीसे पाणी ॥ वीर पाछा फिरगया तत-  
काला ॥ ध० ॥ ७ ॥ मे पूरव भव पापज करिया, वीर आया  
आँगण पाछाजी फिरिया ॥ नैण नीर वहे जिम परनाला ॥ ध०  
॥ ८ ॥ श्री वीर जिणंद केवळ पाया, जठे सती भणी देवता  
लाया ॥ संजम लेई छोड्यो जंजाला ॥ ध० ॥ ९ ॥ सती छत्तिसि  
हजारोरी हुई गुरणी, सती उत्कृष्टी कीधी करणी । मेव्या

मिथ्यास्ततप्यो ज्ञाता ॥ घं० ॥ १० ॥ भीनीर विमल वस्त्रा  
 कीर्षो, जठे देवता आय उच्छ्रय कीर्षो ॥ हाय कंकण यत्  
 मोतीरी माला ॥ घं० ॥ ११ ॥ जठ देवता तर्पी दुदुमि  
 धात्रे, आकाशा मीही अवर गात्रे ॥ पंच द्रव्य वरण्या विष  
 वाग ॥ घं० ॥ १२ ॥ पूज्य गुमानवदधी प्रसादे जोडी अपता  
 तृ करमौग कोडी ॥ रतनवदधी डाल जोडी रसाला ॥ १३ ॥

### ३४-चित्तसभूतका स्तवन

बधव भाल मानोहो [ टेर ]

चित्त कहे मकरायने, कल्लु दिल्लमहि आपोहो ॥ पूरव मवरी  
 प्रीतडी, तुमे मूल न आपोहो ॥ बं० ॥ १ ॥ कस्तवारीरा सुत  
 ज्युं, मांघो दे औणोहो ॥ जाति समरम दानधी, पूरव मव  
 आपोहो ॥ घं० ॥ २ ॥ देस दसायण राजा घरे, पहले मव  
 दासाहा ॥ बीज मव कालिंजरे, यया मृग धन वासा हा ॥ ३ ॥  
 तीज मव वंगी छटे, आप ईसला हुंताहा ॥ चात्रे मव धंजळरे  
 घर जन्म्या पूता हा ॥ ४ ॥ चित्त समूत दोनू जणा, गुण  
 बहुला पायाहा ॥ शरय आषा आपणे, तिय संबित पढायाहो  
 ॥ ५ ॥ राजा नगरीचा करविया, आपी मरण्या मडीयाहो ॥ धन  
 महि गुरु उपदेशयी आपी घर छंटीयाहो ॥ ६ ॥ संजम ते  
 स्वप्न्य करी, लक्ष्म घारी हुंताहो ॥ गांभी नगरी विघरता,  
 दाधिनापुर पडुवाहो ॥ ७ ॥ निघाषि ब्राह्मण ओळख्या, नगरी  
 धा काड्याहो ॥ क्षेप घट्या पडु जणा, सधारा ठायाहो ॥ ८ ॥

धूवो ये कीधो लब्धिथी, नगरी भय पायाहो ॥ चक्रवर्ति निज  
 परिवारसँ आवी तुरत खमायाहो ॥ ९ ॥ रत्नाराणी रायनी,  
 आवी शीश नमायाहो ॥ पग पूंज्या केशांथकी थारे मन भाया  
 हो ॥ १० ॥ नियाणो तुमे फियो, तपनो फल हाय्योहो ॥ म्हे  
 थाने बंधन वरजियो, तुमे नार्ही विचाय्योहो ॥ ११ ॥ ललनी  
 गुलनी विमानमें, भव पांचमें थयाहो ॥ तुम तिहांथी चवी  
 करी, कैपिलापुर आयाहो ॥ १२ ॥ हमे तिहांथी चवी करी,  
 गोथापति थयाहो ॥ संयसभार लेई करी, तोसँ मिलणने आया  
 हो ॥ १३ ॥ चक्रवर्ति पदवी थें लीवी, ऋद्धि सगळी पाईहो ॥  
 कीधो सोही पाभियो, हिवे कमिय न काईही ॥ १४ ॥ समरथ  
 पदवी पाभिया, हिवे जनम सुधारोहो ॥ संसारना सुख कारिमा  
 विषया रस निवारोहो ॥ १५ ॥ राय कहे सुणो साधुजी, कछु  
 और वतावोहो ॥ आ ऋद्धि तो छंढे नहीं, पछे थें पिछतावोहो  
 ॥ १६ ॥ थे आया म्हारा राजमें, नरभव सुख माणोहो ॥ साध  
 पूर्णा मांही छे किसो, नित मांगने खाणोहो ॥ १७ ॥ जित्त  
 कहे सुणो रायजी, इसडी किम जाणेहो ॥ म्हे ऋद्धि तो छोडी  
 घणी, गिणती कुण आणेहो ॥ वं० ॥ १८ ॥ हुं आयो  
 थाने कणने आ ऋद्धि तो तुमे त्यागोहो ॥ वैरागे मन वालने  
 धर्म मारग लागोहो ॥ १९ ॥ भिन्न भिन्न भाव कह्या घणा,  
 नहीं आवे वैरागेहो ॥ भारी करमा जीवडा, ते किण विघ्न जागे  
 हो ॥ २० ॥ नियाणो तुमे कियो, पडू खंडज केराहो ॥ इण  
 कर्णसँ जाणजो, थारां नरकमें डेराहो ॥ २१ ॥ पांचू भव  
 भेळा किया, आपे दोनुं भाईहो ॥ हिवे मिळणां छे दोहिलो,

मिथ्याघतणार जाला ॥ घ० ॥ १० ॥ घीवीर जिभद वास्वा  
 कीषा, अठ दवता आय उच्छ्व फाधो ॥ हाथ कंकज गत  
 मोतीरी माला ॥ घ० ॥ ११ ॥ अठ देवता तर्फी इदुमि  
 वाज, आकाशा मांही अबर गात्रे ॥ पच द्रव्य वरप्या तिष  
 वारा ॥ घ० ॥ १२ ॥ पूज्य गुमानवदबी प्रसादे जोडी जपता  
 त्ते वरमौंगी कोडी ॥ रतनचदजी डाल जोडी रसाला ॥ १३ ॥

### ३४-चित्तसभूतका स्तवन

बघव बाल मानाहा [ टर ]

चित्त कह प्रभारावन, कष्ट दिलमहि आणोहो ॥ पूरव मबरी  
 प्रीतडी, तुमे मूल न जाणाहो ॥ घ० ॥ १ ॥ फतबारीरा मूत  
 ज्यु, सांधो द ओणोहो ॥ जाति संमरम ज्ञानर्षी, पूरव मव  
 नाणाहा ॥ घ० ॥ २ ॥ दश दमायण राजा घर, पदत मव  
 दासाहो ॥ बीज मव फालिंजरे, धया मृग बन वासा हा ॥ ३ ॥  
 त्रिज मव गंगा तट, आप हंसला हुंताहा ॥ चौथे मव खंडालर  
 पर जन्म्या पूता हा ॥ ४ ॥ चित्त सभूत दोर्न जणा, गुण  
 पट्टला पायाहा ॥ अरुण आसा आपण, तिष पदित पढायाहो  
 ॥ ५ ॥ राजा नगराथा फादिमा, आपो मरणा मधीयाहा ॥ बन  
 मां गुन उपदग्यी धापां घर उर्नीयाहा ॥ ६ ॥ संभव स  
 पन्दा वग, लज्ज घारी हुंताहा ॥ गांधी नगरों विधरता,  
 टिनापुर पट्टाहो ॥ ७ ॥ निमूयि प्राक्षण ओळग्या, नगरी  
 पणाला ॥ काप धर्या पट्ट जणा, मघारा गवाहो ॥ ८ ॥

घणा ए माय, चुँग्धा मातारा थान ॥ वृत्त हुवो जीवडोजी  
 अधिक आरोग्या धान ॥ ए माता० ॥ ९ ॥ चारित्र छे जाया  
 दोहिलोजी चारित्र खांडानी धार ॥ विन अपराधे झूजगोजी ॥  
 औषध नहीं है लिगार ॥ रे जाया तु० ॥ १० ॥ चारित्र छे  
 मातासोहिलोजी, चारित्र सुखनीजी खान ॥ चौदेही राजू लोकें  
 नाजी, फेरा टाळणहार ॥ ए माता० ॥ ११ ॥ सियाळे सी  
 लागसीजी, उनाळे लूरे वाय ॥ चौमासे मैला कापडाजी, ए  
 दुःख सह्यो न जाय ॥ रे जाया० ॥ १२ ॥ वनमें छे एक मृग  
 लोजी, कुणकरे उणरीजी सार ॥ मृगनी परे विचरसूंजी, एक-  
 लडो अणगार ॥ ए माता० ॥ १३ ॥ मातावचन ले निसन्याजी  
 मृगा पुत्र कुमार ॥ पंचमहाव्रत आदच्या, जी, लीधो संयम  
 धार ॥ ए माता० ॥ १४ ॥ एक मासनी सलेखनाजी, उपनो  
 केवल ज्ञान ॥ कर्म खपाय मुक्ते गयाजी ज्यांरो लीजे नित  
 प्रतिनाम ॥ ए माता० ॥ १५ ॥

### ३६—पांचमा आकारा स्तवन.

पहिले पद अरिहत जाणी, ज्यांरो भजन करो भवियण प्राणी  
 ॥ ज्यांरा नामथकी जपजयकारे, ॥ १ ॥ पूरो सुख नहीं पांचमे आरे  
 [ टेर ] हिवे जीव पचेरे घणो, कोई पार नहींरे दुःख तणो  
 ॥ तेरे तिणभा लागी रह्या लारे ॥ पू० ॥ २ ॥ नितरो नित  
 गोंवडे जावे, वली माथे भार उठाई लावे ॥ नित नित पेटभरे  
 जिवारे ॥ पू० ॥ ३ ॥ देश विदेशमें नित भमे, वली आलस

बिम परभत राई हो ॥ २२ ॥ ब्रह्मदत्त पशुतो नरक सप्तमी,  
 विच मुक्ति मझारीहो ॥ कर जोही कवियण करे, जाबागमन  
 निवारीहो ॥ पंचन० ॥ २३ ॥

### ३५-मृगा पुत्रका स्तवन

सुगरीष नगर मुहामणोजी, राजा बळमद्र नामे ॥ वस  
 पर राणी मृगाधतीजी, सप्त नंदन गुणधाम ॥ १ ॥ ए माता  
 विष्ण साखीपीरे जाय [ टेर ] एक दिन बैठा गोखुटेजी,  
 राण्यारे परिवार ॥ सीस दाजेने रवि तप जी, दिवे दीठा  
 अणभार ॥ ए माता० ॥ २ ॥ मुनि देखि भव सामन्योजी,  
 मन बसिपोर घराग ॥ हरप घरीने सठियाजी, आगा  
 माताधीरे पाव ॥ ३ ॥ ए जननी अनुमति होमारी माव  
 ( २२ ) तु मुकमाळ मुहामणोजा मोगवा रासारना मोग ॥  
 पौवन पप पाठी पढ अब, आदरबो तुमे मोग ॥ ४ ॥ रे जाया  
 तुजविन घटी न मुदाय [ टेर ] पाव पलकरी स्वपरी नही ए  
 माव करे वाळको जी साज ॥ फाळ भजाप्यो ले घलेजी, ग्यु  
 तितर पर धाम ॥ ५ ॥ ए माता विष्ण साखीपीरे जाय [ टेर ]  
 ग्लन बहित घर आंगणाची, तूं सुदर अपठार ॥ मोटा कुसुनी  
 उपनीजी, काई छाटा निरधार ॥ रे जाया० ॥ ६ ॥ पादीगर  
 पादी रचे ए माव विष्णोमे सळज घाम ॥ ग्यु सुमारनी, संप  
 दाधी देखुठटा विल जाय ॥ ए ॥ ७ ॥ पिलंग पयरने पोढ  
 पाजी नू मोगी भवर रयाळ ॥ कनक फधाळ विमणोजी,  
 फांपलदापरे आदर ॥ वासा० ॥ ८ ॥ मापर जळ पी या

घणा ए माय, चुंग्या मातारा थान ॥ तृप्त हुवो जीवडोजी  
 अधिक आरोग्या धान ॥ ए माता० ॥ ९ ॥ चारित्र छे जाया  
 दोहिलोजी चारित्र खांडानी धार ॥ त्रिन अपराधे झूजणोजी ॥  
 औषध नहीं है लिगार ॥ रे जाया तु० ॥ १० ॥ चारित्र छे  
 मातासोहिलोजी, चारित्र सुखनीजी खान ॥ चौदेही राजू लोकें  
 नाजी, फेरा टाळणहार ॥ ए माता० ॥ ११ ॥ सियाळे सी  
 लागसीजी, उनाळे लूरे वाय ॥ चौमामे मैला कापडाजी, ए  
 दुःख सह्यो न जाय ॥ रे जाया० ॥ १२ ॥ वनमें छे एक मृग  
 लोजी, कुणकरे उणरीजी सार ॥ मृगनी परे विचरसूंजी, एक-  
 लडो अणगार ॥ ए माता० ॥ १३ ॥ मातावचन ले निसन्याजी  
 मृगा पुत्र कुमार ॥ पंचमहाव्रत आदच्या, जी, लीधो संयम  
 भार ॥ ए माता० ॥ १४ ॥ एक मासनी सलेखनाजी, उपनो  
 केवल ज्ञान ॥ कर्म खपाय मुक्ते गयाजी ज्यांरो लीजे नित  
 प्रतिनाम ॥ ए माता० ॥ १५ ॥

### ३६-पांचमा आकारा स्तवन.

पहिले पद अरिहत जाणी, ज्यांरो भजन करो भवियण प्राणी  
 ॥ ज्यांरो नामथकीं जपजयकारे, ॥ १ ॥ पूरो सुख नहीं पांचमे ओर  
 [ टेर ] हिवे जीव पचेरे घणो, कोई पार नहींरे दुःख तणो  
 ॥ तेरे तिणगा लागी रखा लारे ॥ पू० ॥ २ ॥ नितरो नित  
 गोंवडे जावे, वली माथे भार उठाई लावे ॥ नित नित पेटभरे  
 जिवारे ॥ पू० ॥ ३ ॥ देश विदेशमें नित भमे, वली आलस



सेती दिन गमे-॥ वली आमीने सागी शहराँ मारे ॥ पू० ॥१॥  
 कियहीकने यमिजमाही तोटो, इम जाणीन दु ख लागो मोटा  
 मले रात दिवस छलबल पाहे ॥ पू० ॥ ५ ॥ क्णिणन यमिजम  
 नफ्रेणं घणो, पिण साच लाभ्वारे पुत्रः तपो ॥ पुत्र हुसी वा  
 नाम रेयी सार ॥ पू० ॥ ६ ॥ पुत्र तपो तो सुख फलियो,  
 पिण पाडोसी खाटा मिलियो ॥ च लेणायत लागो लारे ॥ पू०  
 ॥ ७ ॥ पाडोसीनी दृष्टि नीकी, पिण घरमें नारी, काली कीकी  
 ॥ वा रात दिवस छासी घाले ॥ पू० ॥ ८ ॥ दिने नारी मक्का इइ  
 पुष्प जोगे, पिण दहीने आप घेयो रोणे ॥ फेहा फुण्गलाने  
 छलबल पाहे ॥ पू० ॥ ९ ॥ देहीमे सब सातारे, पाई, पिण  
 घरमें येथां घणारे बाई ॥ तिणरी तो चिंता घणारे साले ॥ पू०  
 ॥ १० ॥ ससारमे छ दुःख घना, कोई रात्र कजबने घन तथा  
 ॥ एक एक रे लागे लारे ॥ पू ॥ ११ ॥ एहवा जाणीरे धर्म  
 करा, वली समतारस मन महि घरो ॥ पूज जयमलजी कहे ए  
 सुख सारे ॥ पू ॥ १२ ॥

### ३७-हितोपदेश

दुलम ता मानव मब पामा ते किम जाषो हार [ टेर ]  
 नव घाटीमहि मटकत आयो, पाम्यो नरमब सार ॥ खेहने, बंधे  
 देवता, जाषा ते किम जाषो हार ॥ से किन जाषो हार  
 जीवाजी त किम जाषो हार ॥ दु ॥ १ ॥ घन दौलत  
 म्हादि संपदा पाई पाम्यो भाग रमाक ॥ माह माषा महि मूल  
 रया, जीषा नई लीषी क्णत संपाक ॥ नही लिषी घूरत सं

भाळ, जीवाजी, नही लिवो सरत संभाळ ॥ दु० ॥ २ ॥ काया  
 तो थांगी कारमी दीसे, दीसे जिन धर्मसार ॥ आळखो जातां  
 वार न लाणे, चेतो क्युनी गिवार ॥ चेतो क्युनी गिवार,  
 जीवाजी चेतो, क्युनी गिवार ॥ दु० ॥ ३ ॥ योवन वय मांहे धंधो  
 लागो लागो रमणीरे लार ॥ धन कमायने दौलत जोडी, नही  
 कीनो धर्म लिगार ॥ नही कीनो धर्म लिगार, जीवाजी नही  
 कीनो धर्म लिगार ॥ दु० ॥ ४ ॥ जरा आवेने योवन जावे,  
 जावे, इंद्रियाँ विकार ॥ धर्म किया विन हाथ घसोला, परभव  
 खासो मार ॥ परभव खासो मार, जीवाजी परभव खासो मार  
 ॥ ५ ॥ हाथामें कडाने कानामें मोती, गले सोवनकी माल ॥  
 धर्म किया विन एह जीवाजी, आभरणछे सहुभार ॥ आभरणछे  
 सहुभार जीवाजी, आभरणछे सहुभार ॥ दु० ॥ ६ ॥ ए जग  
 हें सत्र स्वारथ केरो, तेरो नहीरे लिगार ॥ वारवार सतगुरु  
 समझावे, ल्यो तुमे संयम भार ॥ ल्यो तुमे संयम भार,  
 जीवाजी ल्यो तुमे संयम भार ॥ दु० ॥ ७ ॥ संजम लेईने  
 कर्म खपावो, पाभो केंवळ ज्ञान ॥ निरमळ हुयने मोक्ष सिधावो  
 ओछे साचो ज्ञान ॥ ओछे साचो ज्ञान, जीवाजी ओछे साचो  
 ज्ञान ॥ ८ ॥ संवत अठारे ने वरष गुण्यासी, हरकर्नासवजी  
 उछास ॥ चेत वदि सातम शाहपुरामें, कीनो ज्ञान प्रकाश ॥  
 कीनो ज्ञान प्रकाश, जीवाजी कीनो ज्ञान प्रकाश ॥ दु० ॥ ९ ॥

## ३८-धन्नामुनि स्तवन

धन करणीहो धन राजरी [ टेर ]

धन्नाजी रिस्म मन चित्तये, तप करणों तूटी इमतणी करके  
 ॥ श्री वीर जिनंदन पूजने, आशाले सवारो वियो ठायके ॥१॥  
 प्रह ठठी घांघा श्री वीरने, श्रीजिन आशा दिवी फरमायके ॥  
 विमल गिरि बेवर सग, चाल्या समसठ साधु स्वमायके ॥ २०  
 ॥ २ ॥ ठायो संघारो एक मासनो यवर प्रसुजीरे पासे आयके  
 ॥ मंडठपगरज सहु छंपने, गौतम पूछे झीछ नमायके ॥ २१ ॥  
 तप तापिया यहू आकरा, कही स्वामी वासा किहां वाय लीयके  
 नागर तेसीसारो आठदो, नव महीनामें सर्भार्भसिद्धके ॥ ३॥  
 महाविदेह श्रेष्ठमाहि सिद्ध हुसी, विस्तार नवमा अगरे मांयके ॥  
 शिव सुख साध पदपी लही, आसकरणजो मुनि गुण गायके  
 ॥ ५ संवत अठार वरप गुणमत्, वैश्यास बदि पक्षरे मांयके ॥  
 भिसलपुरमें गुण गाविया, पूज रायचदजीरे प्रसायके ॥ ६ ॥  
 ओछोजी शकरो में कयो, तो मुझ विठ्ठाधि दुफट होयके ॥  
 पुदि अनुसार गुण गाविया, छत्रने अनु सारे वायके ॥७०॥७॥

## ३९-हितोपदेश

पुत्र सुकृत पुण्यकरोने मानवरो भय पाया ॥ आरज श्रेष्ठ  
 उचम कुलमितिया, पली निरागी कया ॥ १ ॥ अर धने जाग  
 मिलियो छर, तूं ले जिनशरीग नाम सुधाना ओग

मिलियो छे रे ( टेर ) पूरी इंद्रियाँ लांबो आऊखो, वली  
 साधुकी सेवा ॥ सुणवा जोग निल्योरे प्राणी वाणी अमृत  
 मेवा ॥ अब थाने जोग ० ॥ २ ॥ आठ बोलरो टाणो मिलियो,  
 नही आई सरधा सेंठी ॥ कृगुरु कुदेव तपी कर संगत, कुबुध  
 हियामें पेठी ० अब ० ॥ ३ ॥ आ देही थारी भस्मज होसी, काई  
 चंदनसूं चरची ॥ दान शील तप भावना भाजो, लारे  
 लीजो खरचो ॥ अ० ॥ ४ ॥ चार प्राहरका लेणा देणा, चार  
 प्रहरका घाटा ॥ आठ प्रहर जब वीतगसा, तब आया मुदलमें  
 तोटा ॥ अ० ॥ ५ ॥ बीसा तीसा भया पचासा, लग्या निशाणां  
 नेडा ॥ करना होय तो कर ले प्राणी, हुवा बडा अंधेरा ॥  
 अ० ॥ ६ ॥ रात दिवस तूं बंधो करतो, जिनजीरो नाम न  
 लेतो ॥ तेरा सिरपर काल भमे छे, बंध नगारा देतो ॥ अ० ॥  
 ७ ॥ मात पिता भाई सुत बंधव, हुवा स्वारथी मेळा ॥ दिन  
 चार देखतां जासी, जिम हटवाडा मेळा ॥ अ० ॥ ८ ॥ साच  
 झूठ कर जगने ठगिया, माल पराया खाया ॥ अणचित्तवियो  
 आयो आऊखो, धरी रही सब माया ॥ अ० ॥ ९ ॥ साचा  
 सद्गुरु कदे न सुमन्या, जे सुमन्या जे खोटा ॥ आदी  
 अनादी फिन्यो रलतो, भया जंगलमें गोटा ॥ अ० ॥ १० ॥  
 माया ममता सर्वा भेटकर, जिन धरम करवा ठूको ॥ कहे  
 साधुजी सुणो भविकु जीव, ओ अबसर मत चूको ॥ अ० ॥ ११ ॥  
 सतगुरु सीखा दीयामें धारो, कुबुधि कुमति नीवारो ॥ चारवार  
 सतगुरु समझावे, काया कारज सारो ॥ अ० ॥ १२ ॥ करो  
 सासाधिक पोपा पडिकमणा, रहो समगतमें सेंठा ॥ दिन दिन  
 चलना नेडा आया, किते भरोसे बैठा ॥ अ० ॥ १३ ॥ दान

घरम ये कदे नही कीनो, मन समता नही आभी ॥ आठिसा  
जाता वार न लागे, जिम अबलीमि पाणी ॥ अ० ॥ १४ ॥

### ४०-दिवाळीका स्तवन

मजन करो भगवतना, भगवत गौतम स्वामि ॥ तरण

धारण बग प्रगटिया, लीजो नित प्रति नाम ॥ १ ॥ दिवाळी

दिन मोटकन, रसो घेरमव सीर ॥ गौतम केवळ पामिया,

मुक्ति गया महाधीर ॥ २ ॥ दिवाळीरे दिन लोको, जरा मत

करो पाप ॥ निदा विकथा परिहरो, करो खिनवरो जाप ॥ ३ ॥

सामायिक पोपा करा, पबिकम पो दोय काल ॥ इम आत्मने

उदरो छठो मत करो बजाल ॥ ४ ॥ नव मछिने नव लछी

दश अठारे राय ॥ वीर स्वाधी पासे आपने, पोपा दीघा ठाय

॥ ५ ॥ काती बदि आमावस्या, टाळीयाजी आत्म दाप ॥

भव जीवाने तारने, भीभीरजी पहुँता मोक्ष ॥ ६ ॥ देव देवि

तिहा आविया, लागी जिग मिग न्योत ॥ वली विशेष बहु

थयो रतन तपो उद्योत ॥ ७ ॥ देवभमण प्रतिषोषवा, गया

गौतम स्वाम ॥ वीर मुक्ति गया आसन, आव्या पाया ठाम

॥ ८ ॥ मोह कुडुंशन टालन, घ्यायाजी शुक्लम घ्यान ॥

अनत पणे घ्याया इसा, पाया कवळ ध्यान ॥ ९ ॥ माष नग

रना दायक, भगवत थी महाधीर ॥ गौतम लख तणा घनी

रसो गर्भस सीर ॥ १ ॥ तिण कारण मगळेक दिन, माटो

नाभो नाळ ॥ आरम सगळो छोडने, निरमळ छीत्र पाळ ॥

११ ॥ वार वार भिनखा जनम, पामसी नहीरे गिवार ॥ धरम  
 ध्यान मन आदरो, विषय विवाद निवारं ॥ १२ ॥ जीवदया  
 जतन करो, मतकरो छकायनी घात ॥ नवपद जाप जपो,  
 भलो, मोटी दिवाळीनी रात ॥ १३ ॥ कायारूप दया देवरी,  
 ज्ञान रूप ओ देव ॥ जीवन मोक्ष उजालरी, करो सेव नित  
 मेव ॥ १४ ॥ धीरज मति करो धूपनी, तपकर अगरज खेव  
 ॥ सरंधा पूरी ज्ञान जलथकी, इम जोईजो जिनदेव ॥ १५ ॥  
 दयारूपी दिवला करी, मेव गुप्त पिण वाट ॥ समकित जोत  
 उजांजने, मिथ्यात अंधेरो काट ॥ १६ ॥ संवर रूपकर  
 ढांकणी, ज्ञानरूप ओ तेल ॥ आठुई करम प्रजालने, अज्ञान  
 अंधेरो टेल ॥ १७ ॥ काया हाट उजालने, ज्ञान वस्तु मांही  
 सार भविर्जाग्रह कावियण जले, नफो पर उपगार ॥ १८ ॥  
 अवलीगत संसारनी, धन लिळमीरे काज ॥ डचकारा करतां  
 थका, भेटे कुडुंवा लाज ॥ १९ ॥ डचकारा करतां थकां ग्रह-  
 घोया सहु फिर जाय ॥ लिळमी इम कीथा थका, नही पैशे  
 घर माँय ॥ २० ॥ भजन श्री जिनराजनो, गावो सदा चित्त  
 लाय ॥ जिन कीनो जुग ए इम सहु, आरंभ उथाय ॥ २१ ॥  
 श्री सीमंदिर आदि देवजी, जघन्य तीर्थकर वास ॥ अढाई द्वीप  
 में प्रगटिया, जैवंता जगदीश ॥ २२ ॥ हिंस्यासुं देव राजी  
 नही इसी भरोसे मत भूल ॥ साचे मन नवपद जपो, इच्छा  
 पूरण मूल ॥ २२ ॥ दुःख किणही देनो नहीं, प्रेमरा वचन सामो  
 भाल ॥ जिनवरजीना गुण गावतों, मोक्ष पोहोंचो तत्काल  
 ॥ २४ ॥ दान शील तप भावना, कर मन शुधज ठाय ॥ ज्ञान  
 दरसण चारित्र भलो, एहसुं आपा चलय ॥ २५ ॥ इण भव

दोष भेदसू पूजो जिनवर राय ॥ नचा मनमें धारने, जिन  
 चरणा भिष लाय ॥ २६ ॥ स्त्रीपण घोवण मांडला, खीगारा  
 करो-जवन ॥ मवजल मांहे ममता थकां पाम्पो मीनखा बनम  
 ॥ २७ ॥ मजन करा भगवतना, जिन थारा सुषरे काज ॥  
 काल बनतो दोडिलो, अमसर ठीनो आज ॥ २८ ॥ कजा  
 रूप हवेली-आ, तपस्या कर ठाडियाल ॥ शुभ व्रत करा डोरुपो  
 आदरे मव पार ॥ २९ ॥ स्त्रिया रूपी खाजा करो, घां पृथ  
 मरपूर ॥ तप सम भैदो गाळने, बांधो मोठीचूर ॥ ३० ॥ व्रत  
 गुरु वचन सीमळावा, करजो जिनवर सेव ॥ मुनि मनोहर इम  
 मंभे, जिन वंदू नित मेव ॥ ३१ ॥

### ४१-श्रावकका कर्तव्य

श्रावक तू ऊठ प्रमात, चार घडी ले पिछलो रात ॥ मनमें  
 सुमरे भीनवकार, ज्यु पामें मवसावर पार ॥ १ ॥ कवण दस  
 कवण गुड घरम, कवण हमारे छे कुल करम ॥ कवण हमारा  
 छे ध्यवधाय, पहरो वितवजे मनभाय ॥ २ ॥ सामाधिक  
 लीजे मन शुभ घरम तणी हिजे घरमे बुध ॥ पठिकमथो कर  
 रमणी तणो, पाठिक आलोवे आपणो ॥ ३ ॥ काया धगत करे  
 पचस्वाण, सखी पाळे जिनवर आज ॥ मजजे गुणजे स्तवन  
 सहाय, जिणहूँती निसतारो धाय ॥ ४ ॥ वितारे नित चवद नेम  
 पाले खीप दया ते सीम ॥ गुरुने मुख लीजे भास्वणी, घरम  
 न ले एक घडी ॥ ५ ॥ वारु शुभ करजे ध्यानार, हट्टा

अंधकारो परिहार ॥ मतभरे कंडी केहनी शाख, कुडासंसक-  
 धन मत भाख ॥ ६ ॥ परभाते उठ गुरु वंदन जाय, सुणे  
 वखाण सवे चितलाय ॥ निर दूपण मूझतो आहार, साधुने दीजे  
 सुविचार ॥७॥ सामी वळल करजे वणो, मगपण मोटो सामी  
 तणो ॥ दुःस्त्रिया हीणा दीना देख, करजे तास दया सुविशेष  
 ॥ ८ ॥ घर अनुसार दीजे दान, मोटासं मत करे अभिमान ॥  
 अनंत काय कहिये वत्तीस, अभक्ष वावीसे विसवा वीस ॥ ९ ॥  
 केवळियो भाख्या छे इमे, काचा केवला फल मत जीमे ॥  
 छाणा इंधण चुल्ल जेय, जोया विन ते पापज होय ॥ १० ॥  
 धीनी परे वावरजे नीर, अणगल नीरमे न धोवे चीर ॥ वारे  
 वत सुधा पालजे, अतिचार सगला टालजे ॥ ११ ॥ कव्या  
 पनरे करमादान, पापतणी परिहरजे खाण ॥ रात्रे भोजननो  
 बहु दोष, जाणीने करजे संतोष ॥ १२ ॥ सात्रु सोजी लोहने  
 गुली, मधु धान मत वेचे वली ॥ वळ मत कगवे रागने  
 रीस, दूपण घणा कव्या जगदीश ॥ १३ ॥ पाणी गालजे वे वे  
 चार, अनगळ पीधा दोष अपार ॥ जीवाणीरा करजे जतनो  
 पातिक टाली करजे पुण्य ॥ १४ ॥ समकित शुध हिये राख-  
 जे, बोल विचारीने भाखजे ॥ उत्तम ठामे खरचे वित्त, पर  
 उपकार करे शुभचित्त ॥ १५ ॥ तेल तक्र घृत दूधने दही,  
 उंघाडा मत मेले सही ॥ पांचे तिथ म करे आरंभ, पाले शील  
 तजे मन दंभ ॥ १६ ॥ दिवसतगो आलोवे पाप, जिम  
 भांजे सगळो संताप ॥ आठूं करम पातला, भव भावना भांजे  
 आमला ॥ १७ ॥ वारुं लहिण अमर विमान, जिम पामे शिव,  
 पुरनो थान ॥ कीर्ति हर्ष कहे सनेह, श्रावकरी करणी छे एह ॥ १८ ॥



## ४२-पद्मावती आराधना

द्विवे राणी पद्मावती, जीवरास सुभावे ॥ बाण पणो अम  
 दोहिला, इष वस्त्र आवे ॥ १ ॥ सं सुप्त मिच्छानि दुष्कं ॥  
 अग्निहवनी सासु, मे में जीव विराधिया, घौराधी लाख ॥ तं०  
 ॥ २ ॥ सात लाख पृथिवी तणा, साते अपकाव ॥ सात  
 लाख तेउकायना, सात वलि बाय ॥ ते० ॥ ३ ॥ दस प्रत्येक  
 वनस्पति, साधारण भार ॥ मे ते चौरिंद्री जीवना, घे घे  
 सासु बिचार ॥ तं० ॥ ४ ॥ दबता तिर्यंघ नारकी, चार चार  
 प्रकली ॥ चौदे लाख मनुष्यना, ए लाख घौन्याधी ॥ तं०  
 ॥ ५ ॥ इण मव परमवे सेविया, मे में पाप अठार ॥ त्रिविध  
 त्रिविध करी परिहरू, दुर्गतिना दातार ॥ ते० ॥ ६ ॥ हिंसा  
 कीधी जीवनी, घौन्या मृपा घाद ॥ दोष अदचा दानना,  
 मैधुनन उन्नाद ॥ ते० ॥ ७ ॥ परिग्रह मेरयो कारमो, कीधो  
 क्रोध विधेप ॥ मान माया साम में किया, वली रागने इप ॥  
 ते० ॥ ८ ॥ कलह करी जीव दुहण्या, दीघा कूडा कलक ॥ निंदा  
 कीधी पारकी, रति भरति निशक ॥ तं० ॥ ९ ॥ वाडी कीधी  
 चोतरं कीधो बापण मोमो ॥ कुगुरु कूदव कुघेर्मनो, मलो  
 आप्यो मरोसा ॥ तं० ॥ १० ॥ खाटीकन मव में किया, जीव  
 नानाविध घात ॥ पिडी मारन मव चिडकला ॥ माप्या दिनने  
 रात ॥ तं० ॥ ११ ॥ काजी सुखान मवे, पडी मत्र कठोर ॥  
 जीव जनेक मवे किया ॥ कीघा पाप अपार ॥ ते० ॥ १२ ॥  
 मडी मारन मव माळला सावया जल घात ॥ धावर मील  
 कोडी मवे, ॥ मृग पाण्या पस ॥ ते ॥ १३ ॥

कोटवालने भवे में किया ॥ आकरा कर दंड ॥ चंदीवान  
 मराविया, कोरडा छडी दंड ॥ ते० ॥ १४ ॥ परमाधामीने  
 भवे दीधा नारकी दुःख ॥ छेदन भेदन वेदना ॥ ताडण नही  
 सुख ॥ ते० ॥ १५ ॥ कुंभारते भव में किया, न्याव पचाव्या  
 ॥ तेरी भवे तिल पीलिषा, पापे पिड भराव्या ॥ ते०  
 ॥ १६ ॥ हाली भवे हल खेडिया, फाड्या पृथ्वीना पेट ॥  
 सडनिदाण घणा किया, दीधी बलद चपेट ॥ ते० ॥ १७ ॥  
 मालीने भवे रोफिया, नानाविध वृक्ष ॥ मूल पत्र फल फूलना,  
 लागा पाप ते लक्ष ॥ ते० ॥ १८ ॥ भार वाईयाने भवे, भन्या  
 अधिका भार ॥ पीठे कीडा पड्या, दया नाणी लिगार ॥  
 ते० ॥ १९ ॥ छीपाने भवे छेतन्या, कीधा रंग उल्लास ॥ अग्नि  
 आरंभ कीधा घगा, धातुवर्दि अभ्यास ॥ ते० ॥ २० ॥ शूर  
 पणे रण झंझता, मान्या माणस वृद ॥ मदिग, मांस माखण  
 मख्या खाधा मूलने कंद ॥ ते० ॥ २१ ॥ खाण खणावी  
 धातुनी, पाणी उलंच्या ॥ आरंभ किया अतिघणा, पोते  
 पापज संच्या ॥ ते० ॥ २२ ॥ करम अप्पार किया बली, घरने  
 दव दीधा ॥ कसम खाधा वीतरागना, कूडा कौलज कीधा  
 ॥ ते० ॥ २३ ॥ विल्ली भवे उंदरगल्या, गिलोरी हत्यारी ॥  
 मूठ गंमार तणे भवे, मै जूवा लीखा मारी ॥ ते० ॥ २४ ॥  
 भडभुंजा तणे भवे, एकेंद्री जीव ॥ जुवार चणा बहु सेकीया  
 पाडंता रीव ॥ ते० ॥ २५ ॥ खांडण पसिण गारना, आरंभ  
 अनेक ॥ रांधण इंधण अग्निना, कीधा पाप अनेक ॥ ते० ॥  
 २६ ॥ विकथा चार कीधीवली, सेच्या पांच प्रमादि ॥ इष्ट  
 वियोग पडाविया, रुदनने विपवाद ॥ ते० ॥ २७ ॥

माधु अन भावक तणा, प्रव लेने मांग्या ॥ मूल अने  
 उत्तर तणा, मूळ दूषण स्ताव्या ॥ ते० ॥ २८ ॥ सांप विष्णू  
 सिंह चितरा, विक्राने समलि ॥ हिंसक जाव तणे मर्षे, हिंता  
 कीधी सपलि ॥ ते० ॥ २९ ॥ सुखावर्द्धी दूषण पक्षा, बली  
 गभे गळाव्या ॥ जीवागी ढोली पणी, क्षीलमत भगाव्या  
 ॥ ते० ॥ ३० ॥ भव अनत ममता थका कीधी देह संवष ॥  
 त्रिविध त्रिविध करी बोसरू, तिणष्ट प्रतिबंध ॥ त० ॥ ३१ ॥  
 भव अनत ममता थका, कीषा कृदुष संवष ॥ त्रिविध त्रिविध  
 करी बोसरू, तिणष्ट प्रतिबंध ॥ त० ॥ ३२ ॥ इण्णरे इहमर्षे  
 परमर्षे, कीषा पाप अज्ञत्र ॥ त्रिविध त्रिविध करी बोसरू,  
 करू अन्म पवित्र ॥ ते० ॥ ३३ ॥ इण्ण निष ले आराधना,  
 माने करसे खेह ॥ समय सुदर कहे पापथी, इह भव छूटसे तेह ॥  
 ते० ॥ ३४ ॥

### ४३-श्रीमहावीरजीका स्तवन

सिद्धारथ कुल दीपक भव, त्रससादे गणीधीरा नंद ॥  
 कोमल कपन करण शरीर, मन धलित पूरुष महाधीर ॥ १ ॥  
 कृपानाथधीरे करुणा पणी, सुप्त साधो भावो क्षासभरा पणी  
 ॥ त्रिभुवननाथधी आळ सुय शीर ॥ मन ॥ २ ॥ अनेत बळी  
 तप दुकर किआ, करमौने दाशामय दिया ॥ अमसम देमने  
 विमाधीर ॥ ३ ॥ वैशाले सुद दशमी साय, मसुधी पाम्या  
 केवल ज्ञान ॥ सायर जैसा हुवा गभीर ॥ ४ ॥ समोसरथ

सुणजो अवकार, जोजन धाणी अमृत धार ॥ दीठा हरषे हियडो  
 हीर ॥ ५ ॥ चम्पार्लीसो चेला क्रिया, एकण दिनमें महाव्रत  
 दिया ॥ गौतम सारिखा हुवा वजीर ॥ ६ ॥ चिंतामणि चिंता  
 चक्रचूर. दोखी दुशमण न्हासे दूर ॥ दिन दिन बंधे संपदा  
 सीर ॥ ७ ॥ पलक करे प्रभुजीरो ध्यान, पग पग प्रगटे पुण्य  
 निधानि ॥ वचन मीठा जिन भिसरी खीर ॥ ८ ॥ चिंतामण  
 जिनवरजीरो जाप, कौड भवारा काट पाय ॥ राग शोग बलि  
 न्हासे दूर ॥ ९ ॥ तुम नामे भवसाधर तरे ॥ तुम नामे सवकारज  
 सेरे ॥ ऋद्ध सिद्ध पामे हीर चीर ॥ १० ॥ पावापुरीमें मुक्ते  
 गयो, रिख रायचंदजी कहे करजो मया ॥ पाँचावो भोय भव  
 जल तीर ॥ ११ ॥ संवत अठारे छत्तीसे जाण, मेडते शहर  
 कियो गुण ग्राम ॥ छंकावोना प्रभुजी पीर ॥ मन० ॥ १२ ॥

## ४३--हितोपदेश.

जीवा तूं तो भोलोरे प्राणी ! हम रूलियो संसार [ टेर ]

मोह मिथ्यात्वकी नाँदमें जीवा, स्रतो काल अनंत ॥ भव  
 भव माहे भटेकियो जीवा, ते सांभल विरतत ॥ जीवा तू०  
 ॥ १ ॥ अनन्त हुवा केवली जीवा, उत्कृष्ट ज्ञानी अगाध ॥  
 इण भवथी लेखो लेवे, थारी कौईन वतावे आद ॥ जीवा० ॥  
 २ ॥ पृथ्वी पानी अग्निमें, जीवा, चौथी वायुकाय ॥ ए एकेकी  
 कायमें जीवा, काल असंख्यातो जाय ॥ जीवा० ॥ ३ ॥  
 पंचमी काय वनस्पति जीवा, साधारण प्रत्येक ॥ साधारण

में तू वस्त्रोंजीवा, ते विवरो तूं दत्त ॥ १ ॥ छई अप्रनीगोदमें  
 जोषा, धेणी असंख्या आय ॥ असंख्याता प्रतर कक्षा जीवा,  
 गाला असंख्या प्रमाण ॥ ५ ॥ एक एक गोला मध्ये, जीवा,  
 असंख्याता क्षीर ॥ एक क्षीरमें खोवडा जीवा, अनन्त कक्षा  
 महाबोर ॥ ६ ॥ तिण माईसू अनतडा, जीवा, मोख जाव  
 प्रतिकाल ॥ एक क्षीर स्याली न हुव जीवा, जा भीते अनतो  
 काल ॥ ७ ॥ एक एक अमध्यसंग, जीवा, भव्य अनता हांप  
 ॥ वळे विद्यप तू तेडना, जीवा, अन्म मरण तू भोय ॥ ८ ॥  
 दोय बडी क्कधीमध्ये जीवा, पैसठ सहस्र क्षतपच ॥ छरीस  
 अभिका जागिरे जीवा ए करमांनी खेव ॥ ९ ॥ छेदन मेहन  
 ताडना जीवा, नरक सही बहुवार ॥ तिण सेतीनीगोदमें जीवा,  
 अनत गुणी सुविचार ॥ १० ॥ एकेन्त्रीची निकली जीवा,  
 इन्त्री पाम्यो दोय ॥ तष पुन्याई तेहधी जीवा, अनन्त गुणी  
 तष शाय ॥ ११ ॥ इम तेन्त्री घौरिन्त्री जीवा, दोय २ छाक  
 हे बात ॥ दुःख दीठा ससारना जीवा, सुमतां अक्षरअ बात ॥  
 ॥ १२ ॥ अठपर धळपर खबरू जीवा, उरपर सुमपर याव ॥  
 ताप क्षीत ठिरसा सही जीवा दुःख पतावे फौन ॥ १३ ॥  
 इम रडपदतां जावड जीवा पाम्यो नर अवतार ॥ गर्भाभासे  
 दुःख सखो जीवा, त जाणे करतार ॥ १४ ॥ मस्तक तां इठो  
 हुयो जाश, ऊपर हुषा पाय ॥ आंभ्या गळ मूठो निहु जीवा,  
 ग्या विष्टा घरमांय ॥ १५ ॥ पिता वीर्ये माता रुधिर जीवा,  
 ए तें लोवो आहार ॥ भूळगयो अन्म्यां पळे जीवा, क्षमी करे  
 इमार ॥ १६ ॥ आठ क्रोड सुई लालकर जीवा, क्षपि रू  
 मांय तिण पेदमर्थी अठगुणी जीवा, गर्भवातमें घाम ॥ १७ ॥

क्रोड गुणी वेदन जन्मतां, जीवा, मरतां क्रोडा क्रोड ॥ जन्म  
 मरणनी जीवनें जीवा, जाणजो मोटा खोड ॥ १८ ॥ देश अना-  
 रज ऊपनो जीवा, इन्द्रो हीर्णा थाय ॥ आऊखो ओछो हुवे  
 जीवा, धर्म कियो किम जाय ॥ १९ ॥ कदा च नरभव पामि-  
 यो, जीवा, उत्तम कुल अवतार ॥ देहो निरोगी पायने जीवा,  
 योही खोयो जमवार ॥ २० ॥ ठग फासीगर चोरटा जीवा, धीवर  
 कसाई जात ॥ उपज उपज तूं नही मूवो जीवा इसी नरही  
 कोई जात ॥ २१ ॥ चोदेही राजू लोकमें जीवा, जन्म मरणनो  
 जोड ॥ बालाग्र मात्र जिवी, जीवा, नहीं रही खोली ठोड  
 ॥ २२ ॥ कदेहीक जीव राजा थया जीवा, हस्तीवध असवार ॥  
 कदेहीक कर्मने वशे जीवा, नमिल्यो अन्न उधार ॥ जीवा तूं०  
 ॥ २३ ॥ इम संसार भमतां थकां जीवा, पामी सामग्री सार  
 ॥ आ देनी छिटकायने जीवा, जाय जमारो हार ॥ २४ ॥  
 खोटा देवज सरधिया जीवा, लागो कुगुरां केड ॥ खोटो धर्मज  
 आदच्यो, जीवा, चहुँगति कीधा फेर ॥ २५ ॥ कबहु जीव  
 नरकां गयो, जीवा, कबहु हुवो देव ॥ पुण्य पाप बहु भोगव्या  
 जीवा, न गई मिथ्यात्वनी टेव ॥ २६ ॥ आघाने वले मुंहपति  
 जीवा, वार अनन्ती लीध ॥ साची सरधा वाहिरो जीवा,  
 थारो कारज एक न भिद्ध ॥ २७ ॥ चारू ज्ञान गमायने जीवा  
 नरक सातमी जाय चौदे पूर्व परहरीजीवा, पडे निगोदरे मांय ॥  
 २८ ॥ भगवंत धर्म पायां पछे जीवा, योही न जावे फोक ॥  
 कदाचित् पडवाई हुवे, जीवा, तो अर्ध पुदगलमें मोक्ष ॥ २९ ॥  
 स्रक्ष्मने वादर पणे जीवा, मिली वर्गणा सात ॥ एक पुद्रल  
 परावर्तनी, जीवा, झीजी वणी छे जात ॥ ३० ॥ पाप आलोई

बापणा शीवा, आश्रव नाला रोक ॥ जाये अर्ध पुद्गल विभे  
 जीवा, अनन्त चौबीसो मोक्ष ॥ ३१ ॥ अर्नता जीब माध गया  
 बीया, टाली आतम दोष ॥ नहीं गया नेहा<sup>१</sup> सोवसी जीवा,  
 एक मूलाना मोक्ष ॥ ३२ ॥ एवा मांभ सुणी करी जीवा, सरघा  
 ओई नाभ ॥ ज्युं आयो ज्यु ही गेयो जीवा, लरा चौरासी मांभ  
 ॥ ३३ ॥ केई उषम नेर चौतया जीवा, अर्णो अधिर संसार ॥  
 साधो मार्ग सरधन जीवा, पढुसो ह्येकि मरार ॥ ३४ ॥ दान  
 शील तप भाषना जीवा, पाछ रास्यो प्रेम ॥ ज्यु सुस्त पायो  
 साधता ज्ञिया, पूज्य अयमलबी फदे एम ॥ जीवा तू ॥ ३६ ॥

## ४४—पापोंकी आलोचना:

( धर सुणा मरी विनया, इस चाबमे )

पे कर जोधी विनबूझी, सुण स्याभी सुवदीत ॥ १

दूध कपट मूकी करीजी बाठ कहे ए पवित ॥ २ ॥

‘ विनेश्वर विनतही अबघार ( डेर ) ’

तू सपरथ त्रिसुवन घगी जी, सुझने दुस्तर तार ॥ भिन०  
 ॥ २ ॥ मत्र सागर भमतां यक्षांकी, दीठा दुग्ग अनत ॥ माग  
 मयाग पामियामा, भय भजन भगवंत ॥ ३ ॥ अ दुग्ग मांअ  
 आपमाप्री तेन कहिय दुग्ग ॥ पर दुग्ग भजन तू सही जी  
 गवरुने या मुग्ग ॥ ४ ॥ जालापण लीपां पठे जी, बीबमरुद

संसार ॥ निर्गुण पणे बहुविध लियोजी, भेष अनन्तीवार ॥५॥  
 दुखमी काले दोहिलोजी सूधो गुरु संयोग ॥ परमार्थ पूछेनहीं  
 जी, गडर प्रवाही लोग ॥ ६ ॥ में तुम आगल आपणाजी,  
 पाप आलोंऊं आज ॥ भायत आगल बोलतांजी, बालकनेकिसी  
 लाज ॥ ७ ॥ जाण अजाण पणे करीजी, बोल्या उत्सृत्र बाल  
 ॥ रत्नक ग उडावतांजी, हाच्यो जन्म निटाल ॥ ८ ॥ भगवंत  
 भाष्यो ते किंहांजी, किहां मुझ करणी एह ॥ गज पाखर, खर  
 किम सहेजी, सबल विमासण तेह ॥ ९ ॥ आप प्ररूपं आक-  
 रोजी जाणे लोक महंत ॥ पिण नकरुं प्रमादियोजी, मा साहस  
 दृष्टांत ॥ १० ॥ जाणूं उत्कृष्टी करूंजी, उदित करू विहार ॥  
 धीरज जीव धरेनहींजी, पोत बहुल संसार ॥ ११ ॥ सहज  
 पड्यो ए आपणोजी, जगमे भूंडी वात, परनिंदा करतां थकांजी,  
 जात्रे दिन ने रात ॥ १२ ॥ क्रिया करतां दोहिलोजी, आळस  
 आपे जीव ॥ धर्म पखे धंधे पड्योजी, नरकां करसी नीव  
 ॥ १३ ॥ अंगहंता गुण को कहेजी तो हरखूं निशदीस ॥ कोहि-  
 तशीख भली कहेजी, तो आणूं मन रीस ॥ १४ ॥ वादभणी  
 विद्या भणूंजी, पर रंजन उपदेश ॥ संवेग धरूं परबंचनाजी,  
 किम संसार तिरेल? ॥ १५ ॥ सूत्र सिद्धान्त व्याख्यानमेंजी,  
 सुणतां कर्म विपाक ॥ क्षिण एक मनमें उपजेजी मुझ मर्कट  
 वैराग ॥ १६ ॥ त्रिविध २ कर उच्चरूंजी, भगवंत तुम हजूर ॥  
 वार २ भाजू बलीजी, छुटकवारो दूर ॥ १७ ॥ वचन दोष  
 व्यापक घणाजी दाख्या अनरथ दण्ड ॥ कूड कपट बहु केल-  
 वीजी, व्रत कीना शतखण्ड ॥ १८ ॥ अण दीधो लीजे तृणोजी  
 तांही अदत्ता दान ॥ ते दूषण लागा घणाजी, गिणतां न आवें-



ज्ञान, ॥ १९ ॥-चंचल जीव रहे, नहीं जी, राधा, रमणीय ॥  
 काम विटवन सी, फूँजी, त्रास जाने स्वरूप ॥ २० ॥ माम  
 मृतवामे पयोजी, कीन्ने अधिके लोभ ॥ परिग्रह, मरयो, कर  
 मोही, न प्री सयम छोम ॥ २१ ॥ इयमत्र, परमव दुह्याजी  
 जीव चौरासाठाल ॥ ते सुम मिच्छामि दुकडजी, मगवत, ते रि  
 शाख ॥ २२ ॥ अम भाष, रहे शायतोजी, प्रगट अठरा पाप ॥  
 न में सख्या ते दिवजी, बल यत्नान्दारा प्राप ॥ २३ ॥ ॥ ॥  
 आधार छे एतलोजी, सरदइणा छे शुद्ध ॥ अिनधम भीठे  
 मन गमेजी, तिम आकरने हू ॥ २४ ॥ तं प्रति तू मति  
 घणीजी तू साद्विष सुदब ॥ अण धरु छिर ताहरीजी, भन, २  
 तोरी सेत्र ॥ २५ ॥ आळ सफल दिन मारिरोजी, भेव्या अणम  
 सिनन्द ॥ समय सुदर बावळ मणेजी आपी मन, आनंद ॥ २६ ॥

## ४४-मोक्ष स्थान वर्णन

( शिव शक्ति गवयक्षा वदना, इस भाषमें )

गौतम स्वामा पूछा करो विनय करी छीष्ट नमाम प्रभु ॥  
 अविचल स्थानक में सुण्या, कया कर मोक्षिताय प्रभु श्री ॥

“ शिवपुर नगर सुज्ञानणा ( टर ) ”

आठरम अलगा कन्या, सान्या आतम काळ, प्रभुजी ॥ इत्य  
 ससारना दु स धरि, रक्षा छे ते सुण ठाम, प्रभुमी ॥ २ ॥  
 पीर करे उर्ध्व ठाकने, मुक्ति शिला तिगठाम हा गातम ॥

स्वर्ग छाईसां ऊपरे, तिगगछे वारा नाम, हो गौतम ॥ ३ ॥  
 लाख पैतालिम जोयण, लंघीने पहुनी जाण हो गौतम ॥  
 आठ-योजन जाडी विचमे छेहडे पतली अधिक बखाण, हो  
 गौतम ॥ ४ ॥ उज्जल हार भोत्यां तणो, गौ दुग्ध जल बखाण  
 हो गौतम ॥ तिगसूं अधिकी उजली, समा छत्रने संठाण हो  
 गौतम ॥ ५ ॥ अर्जुन सोनामे दीपती, घटारी मठारी जाण हो  
 गौतम ॥ किरुट विचाले निर्मली, सुहांली अधिक बखाण हो  
 गौतम ॥ ६ ॥ शिला उल्लंघ ऊंचा गया, अधर रत्ना विराज  
 हो गौतम ॥ अलोकसू जाइ अड्या, सान्या ले आतम काज  
 हो गौतम ॥ ७ ॥ जठे जन्म नहीं; मरणो नहीं, नहीं जरा  
 नहीं राग हो गौतम ॥ वैर नहीं, मंत्री नहीं, नहीं संयोग नहीं  
 धियोग हो गौतम ॥ ८ ॥ भूख नहीं, तिरपा नहीं, नहीं हर्ष  
 नहीं शोक हो गौतम ॥ कर्म नहीं, काया नहीं, नहीं विषय  
 रस भोग हो गौतम ॥ ९ ॥ शब्द रूप गंध, रस नहीं, नहीं स्पर्श नहीं,  
 वेद हो गौतम ॥ बोले नहीं चाले नहीं, मूल न कोई खेद, हा  
 गौतम ॥ १० ॥ ग्राम नगर एका नहीं, नहीं वस्ती, नहीं  
 उजाड हो गौतम ॥ काल तिहां वरते नहीं, नहीं सत दिवस  
 तिथि वार, हो गौतम ॥ ११ ॥ राजा नहीं, प्रजा नहीं, नहीं  
 ठाकर, नहीं दास, हो गौतम ॥ मुगतमे गुरु चेलो नहीं, नहीं  
 लोड बडाई तास हो गौतम ॥ १२ ॥ अनन्त सुखांमं झूल रखा,  
 अरुणी ज्योतिप्रकाश हो गौतम ॥ सषलांरा सुख शाश्वता  
 सषला अविचल वास हो गौतम ॥ १३ ॥ अनन्ता सिद्ध  
 मुगते गया, वले अनन्ता जासी हो गौतम ॥ आगे जायमा  
 रूधी नहीं, ज्योतमे ज्योत समासी हो गौतम ॥ १४ ॥ केवल

ज्ञानकर सहित छे, केवल दर्शन पास हो गौतम ॥ शायक  
समाहित दीपता, करेयन रहे चदास हो गौतम ॥ १५ ॥  
सिद्ध स्वरूप कई आलस, भाणे मन धैराग हो गौतम, शिव  
रमणी बगावरे, पामे सुख अगाध हो गौतम ॥ शिव पुर ० ॥ १६ ॥

### ४५-रहनेमि स्तवन

दोहा—सासन नायक समरिण, मनबलित सुमदाव ॥  
राजल इकाविसी कहैं, सुगजो शिव लगाव ॥ १ ॥  
शिव बलिया रहनेमिनो, देखी राजल रूप ॥  
दे दयान्तम राखियो, पडता, मजजठ रूप ॥ २ ॥

( हिरदे भारीजे, हो मरियण, मंगलिक शरणाचार, इस जाठमे )

राज मति इणपुर कहे हो मुनिवर मन बलियो तू घेर ॥  
बोडा सुस्वरि कारण हो मुनिवर, क्यों पडे अंधारे ॥ १ ॥  
' सुगुणा साधुणी हो मुनिवर, मन बलियो तू घेर ( डेर )  
पाँच महाव्रत आव पा हो मुनिवर मरु जितगेमार ॥ धमि  
पारी बडाकरे हो मुनिवर, किंगू चारो जगमार ॥ २ ॥ धैरागे  
मन बाधनेहो मुनिवर, लीनो संयममार ॥ अष कायर माव  
बयूं करो, हो मुनिवर, देख पार्ध नार ॥ ३ ॥ सीचो मार्ग  
छोदने हो मुनिवर, उभडिमें मत जाय ॥ असृत मोहन चाखने  
हो मुनिवर, इकस खाव बलाय ॥ ४ ॥ गज असपारी छोदने

हो मुनिवर, खर ऊपर मत वैस ॥ स्वर्ग तणा सुख छोडने  
 हो मुनिवर, पाताले मत पैस ॥ ५ ॥ चदन बाल करे  
 कोयला हो मुनिवर, आंघो काट वचूल ॥ कुण वाहे घर आप-  
 णे हो मुनिवर. किमहुसी थारो खल ॥ ६ ॥ घर २ जास्यो  
 गौचरी हो मुनिवर, देखसो सुंदर नार ॥ हडनामा वृपनी परे  
 हो मुनिवर, घणो उठायो भार ॥ ७ ॥ वमियांरी वांछा करे  
 हो मुनिवर, गंधण कुल मत होय ॥ रत्न चिंतामणि पायने हो  
 मुनिवर, काच साटे मत खोय ॥ ८ ॥ कुल मोटो आपां तणो  
 हो मुनिवर, तिण सांभो मत जोय ॥ काम भोगने वंछता हो  
 मुनिवर, भलो न कहसी लोय ॥ ९ ॥ ग्वाल भंडारी सारसा  
 हो मुनिवर, हमाल उठावे भार ॥ वोज्ज मजूरी अरथिया, हो  
 मुनिवर, नही माल शिरदार ॥ १० ॥ रूप घणो नान्या तणो  
 हो मुनिवर, वस्त्रने श्रृंगार ॥ देख २ मन डोलसो हो मुनिवर  
 कुण कहसी अणगार ॥ ११ ॥ मन गमता इन्द्र्यो तणा हो  
 मुनिवर, सुख बिलसे घरमांथ ॥ ज्यांसेती न्यारा हुवे हो मुनि-  
 वर, ते त्यागी कहिवाय ॥ १२ ॥ आवे वैश्रमण देवता हो  
 मुनिवर, नळ कूबरनी जात ॥ सुपनांमें वंछं नही हो मुनिवर,  
 थारी भिक्तीयक बात ॥ १३ ॥ जिहां तिहां तूं विचरसी हो  
 मुनिवर, नंगरीने बलि गाम ॥ स्त्री देखी मन डोलसी हो  
 मुनिवर, नारी नरगनो ठाम ॥ १४ ॥ सहु सरिसा नर नहीं  
 हो मुनिवर, सहु सरसी नहीं नार ॥ केई भलाने केशभूंडा हो  
 मुनिवर, चलयो जाय संसार ॥ १५ ॥ ब्राह्मी सुन्दरी बहनडी  
 हो मुनिवर, सतियांमें सिरदार ॥ करणी करी चित्त निर्मली  
 हो मुनिवर, नाम लियो निस्तार ॥ १६ ॥ तीर्थकर बाबीसमा

हो मुनिवर, अंगमें मोटा सौम्य ॥ भारतमें तुझे निरखी ॥  
 मुनिवर बखव सामी जाय ॥ १७ ॥ समी कृष्णारी बेसुधी,  
 हो मुनिवर, समी दुखोरी खान ॥ करणी करो विस निभती  
 हो मुनिवर, कसो हमारो मान ॥ १८ ॥ वचन सुनी गंधक  
 तणा हो मुनिवर, दियो ठिकार्ये आम ॥ धर्म धन्य तू मोटा  
 मेरी हो मुनिवर माधी तू राखी मुझ मीम ॥ १९ ॥ ए दोन  
 उत्तम हुबा हो मुनिवर, पायो कवठे धान ॥ कर्म स्वपाय मुनि  
 स्थी गयी हो मुनिवर, नामे सुख निधान ॥ २० ॥ सबै  
 भठरि भोवने, हो मुनिवर, भोवण मास मसार ॥ ऋषि बोधि  
 भलेकी निनवे हो मुनिवर, श्रीम पिशाच उदार ॥ सुगुणो २१

## ४६-श्रीमदिर जिन स्तवन

श्रीमदिर स्वामिने प्रणम्य, चरणां शीघ्रं मगध ॥ अपितना  
 गुण मुखे गीतां भव भवना दुःख खामनी ॥ १ ॥

“ ह चरणां शीघ्रं नैमाके श्री, भी मंदिरं जिनार्य ॥  
 मूढ विनतडी अंधचोरोजी, तारो तारो चारोजी, सैसार लगेछे  
 गारोजी, वैराग रगे छे प्यारी जी हे किमकरचरणे भाऊ  
 श्री भीमदिरं जिनार्ये [ टेर ]

स्त्रिय मिग ज्योत त्रिय मिग दीपि, बचन करणी कार्य ॥  
 घामठ इन्द्र करे तुम रोना, गुरमरे छागे पाप ओ ॥ ह चरणां •  
 ॥ २ ॥ दिवदा मे बलि हर्म पणी छे, दर्शन करे तिली भार

॥ पिण आडि पर्वत वहेतो नदियो, मोसू नही अवायजी ॥ ३० ॥  
 देव मित्र एसी नहो दीस प्रमाणधे ले जाय ॥ इण भवमे  
 आयो नही जाये जो करू क्रोड उपायजी ॥ ४ ॥ वचन तुहारा  
 सुतर माही, चालू तहत न्याय ॥ शील रथ उपर वसीने धर्म  
 ध्वज लटकाय जी ॥ ५ ॥ काम कटारी कसकर वांधू, सुत  
 बाण चढाय ॥ काम क्रोध दो गदन मासू, इमकर दर्शन पाय  
 जी ॥ ६ ॥ साधु श्री दौलत रामजी, ज्याने शीश नमाय ॥  
 सवते अठारे वर्षे त्रैपने, जयपुरमे गुण गाय जी ॥ ७ ॥

## ४८- कर्मोकी विचित्रता.

रे प्राणी कर्म समो नही, कोई ॥ टेर ॥

देव दानव, तीर्थकर गणधर, हरि हलधर नर सबला ॥  
 कर्म तणे वश सुख दुख भुगत्या, सबल थया महा निबलारे,  
 ॥ प्र० ॥ १ ॥ कीधा कर्म ते विन भोगविया, छुटकारो नही  
 होई रे ॥ प्र० ॥ २ ॥ आदीश्वरजी आहार ने पांम्यो, वर्ष  
 दिवस रखा भूखा ॥ श्री महावीरजीने कर्म विटव्या उपना  
 ब्राह्मणी कूखीरे ॥ ३ ॥ साठ सहस्र सुत ठावे दविया, जोध  
 जवान कुमर जैसा ॥ सागर हुवा पुत्र दुग्ध दुखियो, कर्म तणा  
 फल एसा रे ॥ ४ ॥ बत्तीस सहस्र देगनी साहिवो, चक्रा सनत  
 कुमारो ॥ सालह रोग शरीरमे उपना, कर्म तणो फल खारोरे  
 ॥ ५ ॥ सभुचुनामे आठमो चक्री, करमा सायरमे नाख्यो ॥

सोलह सइस यहु ऊमा देखे, तो पिब कोब न राख्यो रेखा ॥  
 ॥ ६ ॥ लूनी लक्ष्म सावन नगरी, लक्ष्मण रावण माण्यो, एक  
 लक्ष्मि सब जग जीत्यो, कम सती पिब हान्योरे ॥ ७ ॥  
 लक्ष्मण राम महाबलवता, हारी सत्यवतो सोता ॥ बारह बरष  
 लग वनमें भभियां, बतक करडा बीतारे ॥ ८ ॥ छपन कोट  
 यादवनो स्वामी, कृष्ण महा बलवत जानी ॥ अटरी महि सूपो  
 एकलो, मिलियो नहीं तिहां पायीरे ॥ ९ ॥ पांचू पांडव महा  
 बलवता, हारी द्रोपदा नारी, बारह बरष लग वनके पाही,  
 भभिया जम भिस्वारीरे ॥ १० ॥ सती क्षिरोमणि द्रोपदा  
 कहिय, विण सम नारी न कोई ॥ पांच पुरुपनी, दुई नारी,  
 पूर्य कर्म कमाईरे ॥ ११ ॥ पद्मखण्ड साहिब ब्रह्मदत्त बक्री  
 विषया रसमें औघो ॥ इम आषी ऊँठो आलोघो, कर्म कोई  
 मती बांधोरे ॥ प्रा० ॥ १२ ॥ दधि बाइन राज्ञानी बेटी, बार्ह  
 चन्दन बाला ॥ चौपद् ज्यू चौहटामें विक्रयी, कर्म उणा ७  
 खालारे ॥ प्रा० ॥ १३ ॥ कम हेरान लिया हरचंदने बची  
 वारा दे राखी ॥ पारह बरष लग माभे माण्यो, नाच ठग  
 पर पानीरे ॥ प्रा० ॥ १४ ॥ समकित्तवारी, धेभिक राजा,  
 कौभिक विघोरे दोघो ॥ घरमी पुरुयनि कर्म पकामा, कर  
 मांडू और न कीधोरे ॥ प्रा० ॥ १५ ॥ चन्दन राजा मत्तयागिरी  
 राणी, पटा सापर नीरा ॥ बारह बरष लग वनमें भभिया,  
 पमा ६ कर्मोरा तीरोरे ॥ प्रा० ॥ १६ ॥ मण रधा सती  
 ठगम कीषा जुग पाहुनी नारा ॥ आषी रावरा वनमें निकली  
 वन्म्या नभिमारा ॥ प्रा० ॥ १७ ॥ इत्यादिक बहु  
 कम दिग्ग्या, बात्र कर्मोरा बाधा ॥ प्राणि हरष कर्मोरा

बीलें, नामो नमो कर्म राजारे ॥ प्राणी० ॥ १७ ॥

## ४९--शालिभद्र स्तवन.

राजगृही नगरी मझारोजी, विणजारा देशावर सारोजी, इण  
विणजजी, रत्न कंबल ले आवियाजी ॥ १ ॥ लाख लाखनी  
वस्तु लाखिणी, ए वस्तु छे अति झीणी; कांई परिमलजी; गढ  
मढ मंदिर परिहरीजी ॥ २ ॥ पूछे गामने चोतरे, लोक मिल्या  
विध विध परे, जई पूछ्योजी, शालिभन्द्रने मंदिरेजी ॥ ३ ॥  
सेठानी सुमद्रा निरखेजी, रत्न कंबल ले परखेजी ॥ ले पहुं-  
चाडेजी, शालिभद्रे मंदिरेजी ॥ ४ ॥ तेडाव्यो भंडारीजी,  
वीस लाख निरधारीजी ॥ गिणदीजोजी, एने घर पहुंचाडजो  
जी ॥ ५ ॥ राणी कहे सुणो राजाजी, आपणो राज किस काजा  
जी ॥ मुझ काजेजी, एक न लीधी लोवडीजी ॥ ६ ॥ सुण, हो  
चेलगा राणीजी ! एह बातमें जाणीजी ॥ पीछाणीजी, ए वातनो  
अचभो घणोजी, ॥ ७ ॥ दातण तो जव करसंजी, शालिभद्र  
मुख जोखेजी ॥ श्रृंगारोजी, गज रथ घोडा पालखीजी ॥ ८ ॥  
आगल कुंतल हींचावता, पाछल पात्रनचावता ॥ राय श्रेणि-  
कजी, शालिभद्र घर आवियाजी ॥ ९ ॥ पहले भुवने पगदियो  
राजा मनमें चमकियो ॥ कांई जोज्योजी, ए घरतो चाकरतणा  
जी ॥ १० ॥ दूजे भुवने पग दियो, राजा मनमें चमकियो ॥  
कांई जोज्योजी, ए घर तो सेवक तणाजी ॥ ११ ॥ तीजे  
भुवने पग दियो, राजा मनमें चमकियो ॥ कांई जोज्योजी, ए



पर ता दासी तषाजी ॥ १० ॥ चाँये झुवने बग दिवा, राऊ  
 मनमे चमकिया ॥ काँई खोज्याजी, ए पर तो सेठां तषाजी  
 ॥ १३ ॥ राय भेगिकनी मुद्रिका, खोबाई खोल करे जीका ॥  
 माधभद्राजी, थाल मरी सब लावियाजी ॥ १४ ॥ बागो बास  
 मोरा नंदजी, फिय घृता आनन्दजी ॥ काँई आमणजी, भेगिक  
 राय पधारियाजी ॥ १५ ॥ हूँ नहीं आणूं माता मौलमें, हूँ नहीं  
 आणूं माता तालमें ॥ तुम लीजाजी, मिम तुमने सुख उपजेजी  
 ॥ १६ ॥ पहिले तुम पूकता नहीं तो अब पूओ तुम काँई  
 ॥ मोरी माताजी, हूँ नहीं आणूं विगजमेंजी ॥ १७ ॥ राब  
 किराणा लीजाजी, सुंद मांग्या दाम दीसोजी ॥ नाजा खुका  
 यीजी, मंडारा छे नासदाजी ॥ १८ ॥ बलती माता इन कइ  
 सासी नन्दन सहे ॥ सुजो पुत्रजी, भेगिक राय पधारियाजी  
 ॥ १९ ॥ खणमें करे ओ राखियो, खणमें करे बेराखियो ॥ काँई  
 सणमाजी, न्याय अन्याय करे सहीजा ॥ २० ॥ पूर्वे सुकृत  
 नहीं कीचा, सुपात्रे दान नहीं दीचा ॥ सुस माधेजी, इष्टपण  
 पहवा नाथ छे जी ॥ २१ ॥ अब सो करणी करमूजी, पच  
 विपम परिहरखेजी ॥ पाठी सयमजी, नाथ सनाथ थमू सहा  
 जी ॥ २२ ॥ इन्दुबत् अग तेखजी, सहने आब हेजर्ज ॥ नम्प  
 शिख लगजी, अंगोपांग छोमे चवाजी ॥ २३ ॥ मुक्ताफल  
 मिम चलकेजी, काने कुण्डल झलकेजी ॥ राय भेगिक जी,  
 आलिमद्र खोले छियोजी ॥ २४ ॥ राभा कहे सुजो माताजी,  
 तुम कुमर सुख आताजी ॥ दिवे एहनेजी, पाछो मदिर माक  
 लाजी ॥ २५ ॥ आलिमद्र निजपर आयाजी, राभा भेगिक  
 घरे सिभावाजी ॥ पछे आलिमद्रजी, पिताकरे मनमें पचीजी

॥ २३ ॥ श्री जिननो धर्म आदरूं मोहमायाने परिहरूं ॥ हूँ  
 छांड़ंजी, गज रथ घोडा पालखीजी ॥ २७ ॥ सुणने माता  
 विलखेजी, नारी सगली तरसेजी ॥ तिण वेलांजी, अशाता  
 पाम्या घणीजी ॥ २८ ॥ मात पिताने भ्रातजी, सुहु आल  
 पंपालनी वातजी ॥ इण जगमेंजी, स्वारथना सहु सगाजी ॥ २९ ॥  
 हंस विना जिम सरवरिया, पियु विना जिम मदिरया ॥ मोह  
 वशजी, उच्चाट एम करे घणोजी ॥ ३० ॥ सर्व नीर अमूल्य  
 जो, कचोले तेल फूलेळजी ॥ शाह धन्नेजी, शरीर समारण  
 मांडियोजी ॥ ३१ ॥ धन्नाघर सुभद्रा नारीजी, वैठी महल  
 मझारीजी, ॥ समारंतांजी, एकज आंखूं खेरियोजी ॥ ३२ ॥  
 गौभद्र शेठनी वैटडी, भद्रा तांरी मावडी ॥ सुण सुन्दरजी,  
 तें किम आंखूं खेरियाजी ॥ ३३ ॥ शालिभद्रनी बैनडली,  
 बत्तीसभो जायॉरी नणदडली ॥ तो तारेजी, शा मोट रोवू पड्यो  
 जी ॥ ३४ ॥ जगमें एकज भाई मांह रे, संयम लेवा मनकरे  
 ॥ नारी एऊ एकजी, दिन दिन प्रत्ये परिहरेजी ॥ ३५ ॥  
 ए तो मित्र कायरूं, शुले संयम भायरूं ॥ जीभडलीजी, मुख  
 मायानी जुदी जागवीजी ॥ ३६ ॥ कहवो तो घणो सोहिलो,  
 पण करवो अति दोहिलो ॥ सुणो स्वामीजी, एहवी ऋद्धि कुण  
 परिहरेजी ॥ ३७ ॥ कहवो तो घणो सोहिलो, पण करवो अति  
 दोहिलो, सुण सुन्दरजी, आजथी त्यागी तुझनेजी ॥ ३८ ॥  
 चोटी आंवोडो वालीने, शाह धन्नो उख्या चालीने ॥ कांई  
 आन्व्याजी, शालिभद्रने मंदिरेजी ॥ ४० ॥ उठो मित्र कायरूं,  
 संयम लहिये भायरूं ॥ आपण दोष जणजी, संयम शुद्ध आ-

राधियत्री ॥ ४१ ॥ श्यामिन्द्र वैरागिया श्रद्धे घना अति  
 स्मरिण्या ॥ दोनों रागियाजी, श्री धारसमीये आशिया जी  
 ॥ ४२ ॥ सयस मारग लीनोजी; तपश्शामे मन भीनोजी ॥  
 धा घनाजी, मास स्वमण करे पारयाजी ॥ ४३ ॥ तप करी  
 देहन गाढाजी, दूषण सगसा टाली जी ॥ धमार गिरीजी,  
 ऊपर अमसण आठन्मोजी ॥ ४४ ॥ चढत परिषामे सोबजी,  
 फाल करिने मोमजी ॥ देषगठिमोजी, - अनुत्तर विमाने ऊपना  
 जी ॥ ४५ ॥ सुर सुखने तिहां भागरी, त्यांची देव दोनूवणी  
 ॥ विदेहजी, मनुष्यपणा ते पामसेजी ॥ ४६ ॥ सुषो मंसस  
 आदरी, सकल कर्मने दस करी ॥ लही केषरजी, माध्व गतिने  
 पामसेजी ॥ ४७ ॥ दान तथा फल देखोजी, धर्या श्यामिन्द्र  
 पखोजी नही लेखोजी, अतुल सुख तिहां पामसेजी ॥ ४८ ॥  
 इम जाणी सुपात्रने पोपोजी, त्रिम वेगे पामो मोषोजी ॥ नही  
 घोकाजी, कदे जीमने उपजजी ॥ ४९ ॥ उत्तमना गुण गावे जी,  
 मन बधित सुख पावजी ॥ फहे कविजनजी, भोतावन सुमे  
 सामनाजी ॥ ५० ॥

## ५०- चारों गतिमें जानेवालेके लक्षण

( भाषक मुनिवर बरुवा गोबरी, इस चारों )

आरभ करतार जीव धरै नहीं, मद्य मांसना कर आहारोजी  
 ॥ पात करे यधन्दि? शीवनी धन मेलण तुष्या अपाराजी ॥

ए चार प्रकारे जीव जाय नरकमां ॥ १ ॥ कूड कपटने छल-  
 मया करे, बोले मूसा वायो जी ॥ कूडा तोला रे कूडा मापला  
 खोटा लेख लिखायो जी ॥ ए चार प्रकारे जीव जाय तिर्यचमां  
 ॥ २ ॥ सरल स्वभाविक मदिक परिणामी, विनयतणा गुण  
 आयोजी ॥ दया भाव राखे दिलमां, मत्सर नही घट मांयो जी ॥  
 ए चार प्रकारे जीव जाय मनुष्यमां ॥ ३ ॥ सराग पणथी पाले  
 साधुपणो, श्रावकना व्रत वारोजी ॥ अज्ञान कष्ट अकाम नि-  
 र्जरा, तिणसूं सुर अवतारोजी ॥ ए चार प्रकारे जीव जाय  
 देवमां ॥ ४ ॥ ज्ञान थी जाणे जाव अजीवने, श्रद्धासे समकित  
 आवेजी ॥ चारित्र रोर रे नवा कर्म आवतां, तपे पूर्वना कर्म  
 खपावेजी ॥ ए चार प्रकारे जीव जाय मोक्षमां ॥ ५ ॥

### ५१--गज सुकमाल स्तवन.

श्रीजिन आयाहो सोरठ देश मभार, द्वारावती हो नगरी भली  
 ॥ श्री जिन वंधा हो, कुंअर गज सुकमाल वाणी सुणीने वरा-  
 गिया ॥ १ ॥ माई, मैं तो वंधा ए, तारण तिरखरी जहाज,  
 अमीय समानी वाणी मै सुणी ॥ माई, मैं तो जाण्यो ए, ओ  
 संसार असार स्यारधीयो जगमे सहु ॥ २ ॥ अनुमति दीजे हो  
 लेसूं संजमभार, वचन चितारो पूरव भवतणा ॥ वचा, तूं तो  
 भोलोरे, संजम खांडानी धार, बाईस परिपह सहणा जाया  
 दोहिला ॥ ३ ॥ माई, म्हारो कालज ए नही गिणोवार तिवार,  
 क्या जाणूं अम्मा किणविध आवसी ॥ अनुमति दीधीहो,

लीधो मयमभार करकाउमगा पनमें गया ॥ ४ ॥ साजल  
 प्राधख हा दोठा गज मुकमाल, कोप कियो छ मुनिवर उर  
 ॥ धर विशुभे हा, बांधो भागनी पाल, खर अगिरा मन्त्र  
 मेलिया ॥ ५ ॥ ममता आयो हा, ध्यायो निर्मल ध्यान, कर  
 निकारित पिबला धय किय ॥ पाम्या पाम्या हा पाम्या करन  
 भान, कर्म लपाइ मुनि मुक्त गया ॥ ६ ॥ ए गुख गांवा हा  
 मारठ दश मभार कर ओठी गतना भयें ॥ ७ ॥

## ५० गजल-विना रघुनाथको देखे इस चालमें

उठा जिन धमक प्रेमी, नाम महावीर ले ल करः धत्राया  
 मघकी सेवा, नाम महावीर ले ले कर ॥ १ ॥ तुम्हें ईबनिया  
 लाजिम, तन मन धन तीनोंका नौछावर धम प करडा, नाम  
 महावीर ले ले कर ॥ २ ॥ दु म्ब माचन माचदाता,  
 पद धरिहत नृप का द करत उत्प्राइस सेवा, नाम महावीर ले  
 ले कर ॥ ३ ॥ शिवसुंदर पुष्पमाला, कर कमलों में ले उमी  
 पहनाया मध नवकका नाम महावीर ले ले कर ॥ ४ ॥ दुलम  
 नर जन्मका पाना, आय भूमि उजम कुलमें, अपूष लामको  
 लवो नाम महावीर ले ले कर ॥ ५ ॥ सीर जिसको तीपैकर वे  
 विरस ठारस धम जिममें, करा गुख ग्राम चित्त मनने, नाम  
 महावीर ले ले कर ॥ ६ ॥ थापमल कहे सुना सजन, सठा  
 मुखकी यहा कृप्री, शाय जायो शिवपुरमें, नाम महावीर ले ले  
 कर ॥ ७ ॥ ६ ॥

## ५३ गजल-चाल पूर्ववत्.

शुभाशुभ जो किया तुमने, वे ही अब पेश आते हैं, कभी नीचा दिखाते हैं कभी ऊंचा बनाते हैं ॥ टेक ॥ आश्रव हिंसा असत्य चोरी, भोग ममत्वमें राचे; कर्म बन्धनका यही कारण गुरु प्रगट जताते हैं ॥ १ ॥ कर्म मत बंधना कोई कर्म सैतान हैं जहांमें, अवतार श्रीराम लक्ष्मणको उठा जंगल ले जाते हैं ॥ २ ॥ त्रिखंडी नाथ जो माधव, थे यादु वंश के भानू जरद कुमारके जरीयें पांवमें बाण खाते हैं ॥ ३ ॥ सत्यधारी हरिश्चन्द्र को, चंडालके घर ले जाते हैं पतिव्रता सती तारा, से ये पानी भरते हैं ॥ ४ ॥ कभी तो नर्क के अंदर जाते स्तंभ कराते हैं कभी सुर लोक के अन्दर ताज शिरपर सजाते हैं ॥ ५ ॥ अजब लीला कर्मकी है, कथन करनेमें नहीं आती ॥ राजा नलको दम-यन्ति से जुदाई ये कराते हैं ॥ ६ ॥ कथे यों चौथमल बाणी, अरे सुन लीजो भव प्राणी भजो तुम देव निर्वाणी कर्म सर्व भाव जाते हैं ॥ शु० ॥ ७ ॥

## ५३ गजल-चाल पूर्ववत्.

सज्जन तुम नेकी कर लेना, हमेशा नेकीपर रहना, सज्जन चन्द रोज का जीना, इसीपर ध्यान कर लेना ( टेक ) सज्जन तेरा तात और भाई मिले मतलेवसे आई, धर्म परलोकमें सहाई इसीको साथमें लेना ॥ १ ॥ सज्जन तेरे घरमें सुंदर नार रात दिन करतां उससे प्यार; मगर आती नहीं ये लार, यही

सत्युरुपोंका है फइना ॥२॥ मज्जन तुन्हे युमान्से खजोर राज्य धन  
 फौजका है और घर आखीर ॥ ता जाना छेड यहाँ दिन चार  
 ह रहेना ॥ ३ ॥ मज्जन ये सद्गुरु धार्षी, कगे शुभ शुभ सुख  
 दानी, चौधमल कह सुन प्राखी यही सुना यही देना ॥ ४ ॥

### ५४ गजल-वाल पूर्ववत्

सज्जन तरी लज्ज वाती बुख मुसे विचार, आता है, य नहीं  
 बक्त सोनेका लाम क्यो, नहीं कमावा है ॥ टेक ॥ साह राजा  
 साह राना साहे दा बादशाह वजीर साहे दा श्रेष्ठी, साह कार-  
 यही कितोका न खता है ॥ १ ॥ क्या माता पिता न्याती, क्या  
 धनमाल और हाथी, क्या तरे सगक साथी, साथमें कउन आता  
 है ॥ २ ॥ समय अमून्य जाता है क्यो किसको सतावा है राज  
 तू क्यो न आता है जहाँका भूट नाता है ॥ ३ ॥ मजी पापाख  
 तन प्यारे वै धग्गी फिर सारे, ल दिन शरख बा सार साथमल  
 यो वेताता है ॥ ४ ॥

### ५५ गजल पूर्ववत्

कवज कर सा जवानी फो, जवानी ता दिवानी है, फल  
 पैदा कर फल में खरापीकी निशानी है ॥ टेक ॥ यही तारीफ  
 और वदनाम, नका बदी कराती है, कमानमें उदानमें, यही  
 सुखिया जवानी है ॥ १ ॥ बढ है जोश जय इनका उम फिर ।

कुल्ल-नहीं सझे, गर्क रहे एश असरत में जमानेकी घुमानी है  
 ॥ २ ॥ अगर हो दोस्तकी सुंदर, चाहे हो बन्धुकी प्यारी; भले  
 विधवा कुमारी-हो नही आती गिलानी है ॥ ३ ॥ सकल श्रृं-  
 गार कीडाका, चतुरताका यही गृह है, सोदाई और खुदाईमें  
 नहीं कोई इस के सानी है ॥ ४ ॥ लगे नहीं दिल प्रधु अन्दर  
 सदाही घूमता रहे वे, करे निर्लज तजे मर्याद, कई रोगोंकि  
 खानी है ॥ ५ ॥ मेणरया के लिये मणि रथ, करा है कत्तल  
 भाई को; पटु ललितान्न पुरुषोंकी, कराई इसने हाना है ॥ ६ ॥  
 युवानी रूप बगीके, जुता है अश्व मन चंचल, ज्ञान लगामसे  
 रोको, दोधमलकी यह वाणी है ॥ ७ ॥

### ५६-गजल-चाल पूर्ववत्.

सकल संसारको जानो, सराय जैसा उतारा है, मुसाफिर  
 छोड़ दे गफलत, रेनभरका गुजारा है ॥ टुक ॥ थोड़ीसी  
 जिन्दगी खातिर बनाई बागमें कोठी, कोई पूछे तो कहे ऐसे  
 मकां यह तो हमारा है ॥ १ ॥ सजी पोशाख लगा ईतर, बैठ  
 बगी या मोटरमें, घुमाता तूं गुरूरीसे, कोल अपना विसारा  
 है ॥ २ ॥ कमाने के लिये आया, सदर बाजार आलिममें तू,  
 लेटर बक्स को भर ले, यहां व्यापार सारा है ॥ ३ ॥ हजारों  
 चादशाह वजीर, सेठ सरदार आ आके, कम जादा बसेरा ले  
 चले गये बेशुमारा है ॥ ४ ॥ सदा ही यहीं पर रहना, तैं ऐसी  
 छावनी छाई, मगर यह कुंचका हरदम, साफ बजता नकारा है



॥ ५ कहां धेणिक नृप कौणिक कहां है भूपति विक्रम, बात  
है आव सक रोशन, किया जिसने सुचारु है ॥ ६ ॥ परोपकार  
का करके, सखावत का मजा लेला; चौधमल कहे मुनो मित्रा,  
मला इसमें तुम्हारा है ॥ ७ ॥

### ५७ गजल-वाल दिल जानसे फिदा हूँ

कहती है भूमि भारत, अरे सुपुत्रो उठ कर, इस फूटके  
मिग ठो, अरे सुपुत्रो उठ कर ॥ १ ॥ अविद्या, झूठ, चोरी,  
हिंसा इगम बेहद ॥ इन्हें देखत निकालो अरे सुपुत्रो उठ  
कर ॥ कहती ॥ १ ॥ करके समायें, ऐसी सब भ्राता कौ बुला  
कर खीर नीरसे मिला तुम ॥ अरे सुपुत्रो उठ कर ॥ २ ॥  
लाम्बों मरे हैं भूखे, स्वदेशी तुम्हारे प्यारे, कर गौर उन्हें बचा  
लो अरे सुपुत्रो उठकर ॥ २ ॥ मर लिय पूर्वज करतें ये प्राण  
नाँछाव , इतिहास का तो पढलो ॥ अरे सुपुत्रो उठकर ॥ ३ ॥  
आतिशबाशी रबी छुगिबात्र धध कर क, अनाथालयको खाला  
अरे सुपुत्रो उठ कर ॥ ५ ॥ इछ समाप्त जाति, और आत्मा  
की सबा, तुम अल्दी स पजा ला अरे सुपुत्रो उठकर ॥ ६ ॥  
कह चौधमल मित्रा मुग्दार वन को छाडो, बनो उत्साही बाता  
॥ अरे सुपुत्रो उठकर ॥ ७ ॥

## ५८ गजल-चाल अरे रावण तूं धमकी दिखाता किसे

दिल अपनेमें सोचो जरा तो सनम, यह दगा तो किसीका सगा ही नहीं, लो यहां पर भी उसको न चैन पडे और बहिस्त-में उसको जगह ही नहीं ॥ टेक ॥ अब्बल तो रावणने करके दगा, सती सीताको लेकर लंक गया, मुफ्त में लंक सोने की गई, और ऐश तो हाथ लगा ही नहीं ॥ दि० ॥ १ ॥ देखो कंस ने कृष्ण को मारन को, किया दगा जाने है तमाम, उसी कृष्णने कंस को मार लिया, हुवा कोई शरीर सगाही नहीं ॥ २ ॥ फिर धब्बल सेठने करके दगा, श्रीपालको मारन ऊंचा चढा, पांव फसलके सेठ धब्बलही मरा, श्रीपाल तो डरके भगाही नहीं ॥ ३ ॥ दाम नखासे करके दगा, वह श्वशुर शेठ खुदही मरा, चौथमल कहे दिल पाक रखो, यह सगा तो किसीका दगा ही नहीं ॥ ४ ॥

## ५९ गजल या हसीना बस मदीना करबलामें तूं न जा इस चालमें.

अरे प्यारो मत विगाडो, दीन दुनिया वास्ते, नेक नसीहत मान लो तुम दीन दुनिया वास्ते ॥ अ० ॥ रहम करना हर जानपर, इन्सानका यह फर्ज है, दिल सताके मत विगाडो, दीन दुनिया वास्ते ॥ २ ॥ इन्साफ पर रखो निगाह, रिश-वत का खाना छोड दो, झूठी गवाह भर मत विगाडो, दीन दुनिया वास्ते ॥ अ० ॥ ३ ॥ माल और औलाद हरगिज

साथ में आते नहीं, हिरम करके मत बिगाड़ो, दीन दुनिया वास्त ॥ ४ ॥ हुसन सदा रहता नहीं, दरियाके माफिक आ रहा, बिना करके मत बिगाड़ो दीन दुनिया वास्त ॥ ५ ॥ एक पैस के लय तू सुदाकी खाता कसम, लालचमें आकर मत बिगाड़ो दीन दुनिया वास्त ॥ ६ ॥ अगर दिल दुश्मियार है ता, जुलम स अब बाज आ, नशा करके मत बिगाड़ो दीन दुनिया वास्त ॥ ७ ॥ दीनको बिसने बिगाड़ा, वो इन्सानही हैवान है, चौपमल करे मत बिगाड़ो, दीन दुनिया वास्त ॥ ८ ॥

## ६० गजल-चाल पूर्ववत्

इस्म पहले अरे दिसा, इसका गरम बाजार है, आलियों की हाथीमें कई सठे सादार है ॥ १ ॥ बिस समानमें लिले पडे उसका बितारा सभ है, मिस देश में बिद्या हुनर वह देख ही गुलवार है ॥ २ ॥ रिबान, हाकिम, मफमरी, बकिल बेरिस्तर घने, बदालत इस इस्मकी दुनिया करे दुश्मियार है ॥ ३ ॥ इस्मसे अफल घटे, और अहसे आने प्रमु सत्य शठ दानों केवलका यही सभरबेदार है ॥ ४ ॥ बिन इस्मक इवान और, हैवान में कपा फर्के है, गौर कत देखो बरा फक्त इस्मकीही यहार है ॥ ५ ॥ पद को पढाओ इस्मका गुलना खेठाना छोड़ दो, कई चौपमउ मित्रा गुनो, नगीदुन हमारी सार है ॥ ६ ॥

## ६१. गजल चाल पूर्ववत्.

आकड़तेके लिये तुझको, धर्मध्याना चाहिये, दिन रातमें  
 तुझे दो घड़ी, सत्संगमें आना चाहिये ॥ टेक ॥ दुर्लभ मिला  
 नरका जन्म जिसे न गमाना चाहिये जिस लिये पेदा हुआ, वो  
 फर्ज वजाना चाहिये ॥ १ ॥ मोह नीन्दमें सोता पडा, उसको  
 उठाना चाहिये, जागता सोता रहे, जिसे क्या जगाना चाहिये  
 ॥२॥ गौर लके मालका, किसे ना दवाना चाहिये, कर जाल  
 कोई मसकानको, कभी न फसाना चाहिये ॥ ३॥ चन्द्ररोजका  
 मुकाम है, यहां ना लुभाना चाहिये, सामान नेकीका बांधके  
 संगमें जाना चाहिये ॥ ४ ॥ निशि भोजन अभक्ष है तुझको न  
 खाना चाहिये, चौथमल की नभीहतको दिलमें लाना  
 चाहिये ॥ ५ ॥

## ६२ गजल सत्संगपर.

लाखों पापी तिरगए, सत्संगके परतापसे । छिनमें वेडापार  
 है, सत्संगके परतापसे ॥ टेक ॥ सत्संगका ढरिया भरा, कोई  
 न्हाले इसमें आनके । कटजाय, तनके पाप सब, सत्संगके पर-  
 तापसे ॥ १ ॥ लोहका सुवर्ण बने, पारमके परसंगसे । लटकी  
 शंखरी होती है, सत्संगके परतापसे ॥ २ ॥ राजा परदेशी हुआ  
 कर खूननें रदते भरे । उपदेश सुन ज्ञानी हुआ, सत्संगके पर-  
 तापसे ॥ ३ ॥ संयति राजा शिकारी, हिरनके मारा था तीर ।  
 राज्य तज साधु हुआ, सत्संगके परतापसे ॥ ४ ॥ अर्जुन माल-

फारने, मनुष्यकी इत्याकरी । छे मासमें मुक्ति गवा सत्सङ्गके  
 परतापसे ॥ ५ ॥ एलायषी एक चोर था जेविक नाशायुषी  
 । कार्य सिद्ध उनका हुआ, सत्सङ्गके परतापसे ॥ ६ ॥ सत्सङ्ग-  
 की महिमा बड़ी, है दीन दुनिया कीधरमें । चाबजल करे हा  
 मला, सत्सङ्गके परतापसे ॥ ७ ॥

### ६३ गजल-नेक नसीहतपर ।

बाल पूर्ववत्

।

दिल सवाना नहीं रहा, यह खुदाका फरमान है । खात  
 इबादत के लिये पैदा हुआ इन्सान है ॥ १ ॥ दिल बड़ी है  
 बीज जनि खाठक दखा बख्तम । दिल गया तो क्या रहा ।  
 बूढ़ा तो वह स्मथान है ॥ २ ॥ शुल्म तो करता उसे, हा फिम  
 मी यहाँ पर दे सभा । मुआक हरगिज हाता नहीं, कानूनके  
 दरम्यान है ॥ ३ ॥ अस अपनी जाको आराम तो प्यारा  
 मग, एस गैरोंका समझ तु क्यों बना नादान है ॥ ४ ॥ नेकी  
 का बढठा नक है, यह हुरानमें लिखा सका । मत बदीपर कस  
 कमर तु, क्यों हुआ धैरमात है ॥ ५ ॥ बे गुप्तगु दाजलमें,  
 गिरफ्तार सा हागा मही । नहीं गिनती है यहाँपर, राजा या  
 दीवान है ॥ ६ ॥ पेटकर तु तख्तपर गरीबोंकी सुने नहीं सुनी ।  
 फरिश्त वही पीठत, होता बड़ा हरान है ॥ ७ ॥ गले कयतिल  
 क पही, पहराया लक धुरा । इन्सान हाके नहीं गिनी बड़ा  
 यदना कार जान है ॥ ८ ॥ रहमको लाके मरा तु, सख्त

दिलको छोडदे । चौथमरु कहे हां भला, जो इस तरफ कुछ  
ध्यान है ॥ ८ ॥

## ६४ गजल-गरूर [ मान ] निषेधपर ।

चाल पूर्वपत्

सदा यहां रहना नहीं तूं, मान करना छोडदे । शहनशाह  
भी नहीं रहे तूं मान करना छोडदे ॥ १ ॥ जैसे खिले हैं फूल  
गुल्शन में, अजीजो दखलो । आदिर तो वह कुम्हलायगा, तूं  
मान करना छोडदे ॥ २ ॥ नूर से वे पूर थे, लाखों उठाते  
हुक्म को । सो खाक में वे मिल गये, तूं मान करना छोडदे  
॥ ३ ॥ परशु ने क्षत्री हने, शम्भूमने मारा उसे । शम्भूमभी  
यहां नहीं रहा, तूं मान करना छोडदे ॥ ४ ॥ कंस जरासंध-  
को, श्री कृष्णने मारा सही । फिर जर्दने उनको हना, तूं मान  
करना छोडदे ॥ ५ ॥ रावणसे इन्दर दवा, लक्ष्मणने रावणको  
हना । न वह रहा, न वह रहा, तूं मान करना छोडदे ॥ ६ ॥  
रघ्वका हुक्म माना नहीं, अजाजिल काफिर बन गया । शैतान  
सब उसको कहे, तूं मान करना छोडदे ॥ ७ ॥ गुरुके प्रसादसे  
कहे, चौथमल प्यारेसुनो । आजिजी सब में है बडी, तूं मान  
करना छोडदे ॥ ८ ॥

# ६५ गजल गोस्त [ मास ], निषेधपर

घाल पूर्ववत्

सख्य दिल हो जायगा तू, गोस्त खाना छोड़दे । रहम  
 फिर रहवा नहीं तू, गास्त खाना छोड़दे ॥ १ ॥ जो रहम  
 दिलमें न रह, ता रहेनान फिर रहवा हे कव, । प्रह इस्तर फिर  
 कुछ नहीं तू, गोस्त खाना छोड़दे ॥ २ ॥ जिस चीजस नफ  
 प्रो फते, बस ही गोस्तक्य पैदाश है । प्रह पाक फिर कंस हुआ  
 तू गोस, खाना छुड़द ॥ ३ ॥ गौ, बक्रे पैर मैसा, लाखों  
 कुं कउ गणु । दूध दही मईगा हुआ तू गोस्त खाना छोड़दे  
 ॥ ४ ॥ दूध में टाकद, षडी, बृह गोस्तके द्वीपी नहीं । पूँके  
 कोश, बाकुरोसे गास्त खाना छोड़दे ॥ ५ ॥ गास्त खोर बेबा  
 नका चिन्ह, मिठवा नहीं इन्सानमें, । नेक स्वादी प्रव इन तू  
 गोस्त, खाना छोड़दे ॥ ६ ॥ कुरानके मन्दिर, लिखा, सुराक  
 आदमक लिपे । वेदा किमा गेहें मेवा, तू गोस्त खाना छोड़दे  
 ॥ ७ ॥ कजल हैवातातक बिना, गास्त, कहा कैसे, मिले । क  
 विल निजास पाता नहीं, तू गोस्त खाना छोड़द ॥ ८ ॥ बैन  
 सप्रने चीचभे, गहानीरक्य फरमान है । जिस ज़ाबाती नफ आ व  
 गोस्त खाना छोड़दे ॥ ९ ॥ जिसका मांस खाता यहाँ, बस  
 उसको यहाँपर खायगा । मनुस्त्रीमा कइगए, तू गोस्त खाना  
 छोड़दे ॥ १० ॥ नफ हरतीव नहीं मरे, फिर । इषादव होती  
 कहां । चौधमलकी मान नीहत, गास्त खाना छोड़द ॥ १० ॥

## ६६-गजल शराव निषेधपर.

चाल पूर्ववत्

अकल भ्रष्ट होती पलकमें, शरावके परतापसे । लाखो घर गारत हुए [ वरवाद हुए ], शरावके परतापसे ॥ १ ॥ शरावी शोख महा बुरा, खुदकी खबर रहती नहीं । जाना कहां जावे कहां, शरावके परतापसे ॥ १ ॥ इज्जत और दानिशमंदी, जिस पर दे पानी फिरा । धनवान कई निर्धन बने, शरावके परतापसे ॥ २ ॥ बकते २ हँस पडे और, चौकके फिर रो उठे । बेहोश हो हथियार ले, शरावके परतापसे ॥ ३ ॥ चलते २ गिर पडे, कपडा हटा निर्लज्ज बने । मखिखये भिनक गूँह पर करे, शरावके परतापसे ॥ ४ ॥ जेवर को लेवे खोल लुच्चे, ले जेवसे पैसे निकाल । कुत्ते देवे मूत मुह पर, शरावके परतापसे ॥ ७ ॥ इन्सानको करते अदल जो, हजारकी रक्षा करें । खुदकी रक्षा नहीं बने, शरावके परतापसे ॥ ५ ॥ कम उमरमें मर गये, कई राज्य राजोका गया । वादवोंका बया हुआ इस, शरावके परतापसे ॥ ७ ॥ नशेसे पागल बने, पुलिशमी लेवे पकड । कानूनसे मिलती सजा, शरावके परतापसे ॥ ८ ॥ आठ आने बह कमावे, खर्च रुपयेका करे । चौरीको फिर बह करे शराव के परतापसे ॥ ९ ॥ जैन वैष्णव मुसलमान, अंजीलमेभी है मना । कई रोगी बनगये, शरावके परतापसे ॥ १० ॥ चौथ-मल कहे छोडदे तूं, मानले प्यारे अजीज । आराम कोई पाता नहीं, शरावके परतापसे ॥ ११ ॥



## ६७ गजल-परनार निषेधपर

शाल पूर्ववत्

लाखों कामी पिट चुके, परनारक परसगस । मुनिराज ~~क~~  
 सब बचा, परनारके परसगस ॥ ८ ॥ दीपककी लो रूपा  
 पढ़ पतंग मरता है सही । ऐस कामी कूट मरे, परनारक पर  
 संगस ॥ ९ ॥ पर नारका जो हुन ई मानो आधिक दुख  
 सा । तन घन सब को हामते, परनार क परसगस ॥ १० ॥  
 मूठे निवाल पर हुमाना, इन्सानको लाजिम नहीं । मुजा  
 गर्मीस सब, परनारके परसंगसे ॥ ११ ॥ चारुसा सचाष्टुबी  
 कानूनमें, लिखा ठफा । सजा हाकिमम मिल, परनारक परस  
 गसे ॥ १२ ॥ जैन सुधोमें-मना, मनुस्मृति देखलो कुरान बा  
 बलमें लिखा परनारके परसगसे ॥ १३ ॥ राषक फीषक मार  
 गए, द्रौपदी सीताके बामते । मखीरथ मर नक गया, परनारक  
 परसगसे ॥ १४ ॥ जहर बुझी तलवारसु अबन मुन्जिम बढ  
 कारन । इजरत अहीपर बहारकी परनारक परसगस ॥ १५ ॥  
 कृष्णक कुता कान्ता, कत्ल नर नर को करे । पलमें मोहव्यत  
 टूटती । परनारक परसगसे ॥ १६ ॥ किमलिये पेदा हुआ, अय  
 पहया कृष्ण साँध तू । कदे बाँधमस अथ सब कर, परनारक  
 परसगस ॥ १७ ॥

## ६८ गजल ( वद सोवत निषेधपर. )

चाल पूर्ववत्

अगर चाहे आराम तो जाहिलकी सोवत छोडदे । मानले  
 नसीहत मेरी, जाहिलकी सोवत छोडदे ॥ १ ॥ अगर अकर्म-  
 द है, होशियार जो है तू दिला । भूलके अखत्यार मत कर,  
 जाहिलकी सोवत छोडदे ॥ २ ॥ 'जाहिलसे' मिलता मत रहे,  
 मानिद शक्कर सारके । भाग मुआफिक तीरके, जाहिलकी  
 सोवत छोडदे ॥ ३ ॥ दुश्मनभी अकर्मद बेहतर, होवे 'जाहिल'  
 दोस्तके । परहेजगारी है भली, जाहिल की सोवत छोडदे  
 ॥ ४ ॥ फैलवद के जाहिलोंमें, नेकी तो मिलती नही । सिवा  
 कोलवदके नहीं सुने, जाहिल की सोवत छोडदे ॥ ५ ॥ रहम  
 दिलका पाकपन, इबादतभी तर्क हो । ईमानभी जावे विगड  
 जाहिलकी सोवत छोडदे ॥ ६ ॥ जाहिल तो आखिर ऐ दिला,  
 दोजखके अन्दर जायगा । नेक आकवत कम चने, जाहिलकी  
 सोवत छोडदे ॥ ७ ॥ नशा पीना जुल्म करना, लडना लेना  
 नौदका । गरूर आदत जाहिलोंकी, जाहिलकी सोवत छोडदे  
 ॥ ८ ॥ जाहिलपनकी दवा मियां, लुकमानके घरमें नही ।  
 मिविल सर्जनके हाथ क्या, जाहिलकी सोवत छोडदे ॥ ९ ॥  
 गुरुके प्रसादसे कहे चौथमल तूं कर निगाह । आलिमकी  
 सोवत कर सदा, जाहिलकी सोवत छोडदे ॥ १० ॥

## ६९ गजल [ कुसप ] फूट निषेधपर

चाल पूषवत्

लास्यो घर गारत हुए, इस फूटक परतापसे । सम्प गवा  
 इस दशम, इस फूटक परतापस ॥ २२ ॥ इन्म हुन्नर इमान  
 इजत, इमददो मइ कर विटा । हिसक पूत फरभा धन, इस  
 फूटके परतापस ॥ १ ॥ जहां सम्प वहां सम्पति, जहां फूट  
 वहां सम्प फहां । अजब सीला होगइ इस फूटक परतापसे  
 ॥ २ ॥ मोइताज टोलतमन्द हुए कइ राज्य राजोफा गया ।  
 इडिया बरबाद हुआ, इस फूटक परतापस ॥ ३ ॥ पकी फूट  
 रायणक घर, माइ बिमीपण जुटा हुआ । म्वाक राधम हागम  
 इस फूटक परतापस ॥ ४ ॥ माइ कौरव पांडवोंमें, युद्ध कराया  
 फूटने । बहल कुंवर कर्मणिक छडे इस फूटक परतापसे ॥ ५ ॥  
 पृथ्वीराज चौहान अयधन्द क लडाई हा गइ । आ राज्य  
 यवनोंने किया, इस फूटके परतापस ॥ ६ ॥ फूट जातिमें पुत्री  
 लूट दुश्मन दी मधा टूट गये सब कायद, इस फूटक परताप  
 स ॥ ७ ॥ सम्पमें ओ फायद, कइ जानते इन्सान है । मगर  
 खुदर्ष नहीं मिट, इस फूटक परतापस ॥ ८ ॥ एक दुबास  
 मिता ता श्रीख होता है गरम । आपस में राय लेत नहीं, इस  
 फूटक परतापस ॥ ९ ॥ मब मुत्कोकामी सिरताज, मारत  
 होणा फिर । अब अजाजों बाब आआ, फूटके परतापस ॥ १० ॥  
 चायमज कइ नव अवानो, सम्प अन्दीस करा । धन धमकी  
 कर रबा हो, इस फूटक परतापस ॥ ११ ॥

## ७० गजल खामोशपर,

चाल पूर्ववत्

महावीरका फरमान है, खामोश बेहतर चीज है । दिल पाक रखनेके लिये खामोश बेहतर चीज है ॥ टेर ॥ शांति कहां चाहे क्षमा, और गम भी इसका नाम है । दोस्त जहां तेरा बने. खामोश बेहतर चीज है ॥ १ ॥ जोश खाके विजली दरियाबके अदर पडी, नुकसान कुछ होता नहीं, खामोश बेहतर चीज है ॥ २ ॥ खामोश खजर देखकर, दुश्मनकी ताकत न चले । बिन कापके पावक जैसे, खामोश बेहतर चीज है ॥ २ ॥ तपमें ऋषि युद्धमें हरी, श्रेष्ठ वैश्रमण दानमें । अरिहंतोंकी यह वीरता, खामोश बेहतर चीज है ॥ ४ ॥ खामोश कर श्रीरामने, वनवाम का रास्तालिया । गजसुकमालने केवल लिया, खामोश बेहतर चीज है ॥ ५ ॥ खामोशसे राजा परदेशी, स्वर्गके अन्दर गया । खंधक मुनि मुक्ति गये, खामोश बेहतर चीज है ॥ ६ ॥ ज्ञान ध्यान तप दया, और सर्व गुणकी खान है । तारीफ फैले मुल्कमें, खामोश बेहतर चीज है ॥ ७ ॥ पाप होवे भस्म जैसे, शीतसे सब्जी जले । चौथमल कहे ऐ दिला खामोश बेहतर चीज है ॥ ८ ॥

## ७१ गजल उपदेशपर.

आकवतके चास्ते कहना हमारा फर्ज है । मर्जी तुम्हारी मानना, कहना हमारा फर्ज है ॥ टेर ॥ मुसाफिर खानेमें आक

गहूर करना छाड़टे । नेकी करले ऐ सनम कहना हमारा फज है  
 ॥ २ ॥ किसका बसीला है वहाँ, दिलमें जरा तू गौर कर । व  
 यादमें उसक रहे, कहना हमारा फज है ॥ ३ ॥ अदब करले तू  
 बहोंफा, अहसानकर कोई और पर । रहम दिलमें ला जरा,  
 कहना हमारा फज है ॥ ४ ॥ देता नसीहत शौचमल, करल  
 शबादत जियस । चार दिनका दुरन है, कहना हमारा फज है ॥ ५ ॥

## मराठी भापाके कुछ पद

### ७२ प्रभुस्तुति

आधी नमित्तो मी आदिनाथ त्रिनेश्वर राया सोळा मद  
 मन्सरता मोम आगि ही माया ॥ प्रभुमाठी सिद्धवा तुनु  
 आपुलीकाया ॥ नका साईं प्याम मनाथा, तुझां, तो तारी हो ।  
 आधीं ० ॥ १ ॥ काय कळेस जमुनि बापा ! या संसार मय  
 झाटा प्रपंच मायाथा हा पसारा ॥ असा स्वप्नामध्ये मिलल  
 राज्य कारभारा, जागे हाठानि पाहतां कोठे नस तो चारा ॥  
 प्रभुचरणीं ठवा प्रीति, तुझा ता तारी हा ॥ आधीं ० ॥ २ ॥  
 घमश्रायापगती प्रम मदा ठवावे, असे सांगल आपल मुद  
 तम वतावे पापी द्वेष लोकांमधी भिठानि चालावे ॥ प्रभु  
 तुम्हां मां, तारी हा ॥ आधीं ॥ ३ ॥ या ज्ञात प्रभुचे नाम  
 न्येदित प्यावे, हे भजनामृत सधे जनांनीं प्यावे, हे अहंका  
 गे मूठ हू एकपे ॥ प्रभु तुझां ता, तारी हो ॥ ४ ॥  
 तपि गोकुण हा भक्त असे प्रभु याथा, देखनि सद्वृत्ति नाव

करी विघ्नाचा, मम हृदयामध्ये वास असो प्रभु माचा, ॥ प्रभु-  
तुह्यां, तो, तारी हो ॥ आर्धा० ॥ ५ ॥

### ७३ प्रभुस्तुति.

( योर तुझे उपकार आई योर० इस चालमे )

देव जिनेश्वर हो, वंदूं देव जिनेश्वर हो ॥ टेर ॥  
देव जिनेश्वर, तो परमेश्वर, सकलां सुखकर हो ॥ १ ॥ हरि-  
हर ब्रह्मादिक तुज सारे, नमितो सुरेश्वर हो ॥ २ ॥ गणधर  
मुनिवर सेवति नित्यही, ध्यान निरंतर हो ॥ ३ ॥ वालदास  
प्रभु नम्रुनि मांगतो, तोडि भवांतर हो ॥ देव० ॥ ४ ॥

### ७४ हितोपदेश.

[ वनजाराकी चालमे. ]

मोड मना अविचार, धरी सारासार विचार ॥ टेर ॥  
दुबुद्धि महा विपरीत, सवे क्रोधादिक अघटीत ॥ देतील दुःख  
अनिवार ॥ धरी० ॥ सद्बुद्धि जर्गो उत्तम, वरी विवेकावरी  
प्रेम ॥ सुख शांति तथा आधार ॥ धरी० ॥ २ ॥ घे निवडून  
भारें मार, जिन नाम सत्य आधार, करी वालदास निरधार ॥  
धरी० ॥ ३ ॥

## ७५ हितोपदेश

[ यात्र माट मधुनिनबा शारद, इस सालमें ]

दुर्मिळ नरजन्म असा लाघुनिनगा, हाय तुवां विफल असा  
दबडिला नय ॥ टेर ॥

गेला किसी सांग ईश चिंतनी? घ्येय कवण ठविलेंस सांग  
निख मनी; थमसि काय मिळविभ्याम दिवस यामिनी, भोगा  
विष काय अन्य देशि उचरा ॥ दुर्मिळ० ॥ १ ॥ दस किंवा  
धनमगुर वैभवाजनी, टोळे खण नव रमा काम सवनी, जवि  
चार घोर काय, अस सांग याहुनी, मानुनि केवि सुषा प्राशि  
मी गरा ॥ दुर्मिळ० ॥ २ ॥ भोग नखे रोग घोर दधी आपदा  
सोहनि हेवि, चिर्धी ठवा जिनपदा, अर्पी ओ चिर सुखदा  
माख सपदा, दशात्रय वंदि तथा शुचि गुणाकरा ॥ ४ ॥

## ७६ हितशिक्षा

( कावगीके काव्य )

सुख माट हिरसे ग्ददू झांची संगति घरू नका, नरडहाला  
बडनि घाण्या! दुष्ट वासा घरू नको ॥ टेर ॥

भंगी खगी बटकी सटकी झांच्या मरगांत बसू नका,  
विफट घाट बडिवाट नमाधी घापट मार्गी सोडू नका संसारा  
मधी पंस आपुला टगाव मटवस फिरू नका परघन परना  
वास याहुनि विष ब्रम् इ दे नरो जीं नत्रता सदा असावी,

राग कोणावर धरूं कनो, नास्तिकपणांत शिरुनि जनाचा बोल  
 आपणा घेउं नको. भले भलाई कर कांही पण अधर्ममार्गी  
 शिरूं नको ॥

[ चाल ] माय बापावर रुसूं नको, दूर एकला बसूं नको,  
 व्यवहरामधि फसूं नको, कधीं रिकामां असूं नको, ॥ नर दे०  
 ॥ १ ॥ वर्म काढूनि शरमायाला उणे कोणाला बोलूं नको,  
 बुडवाया दुसऱ्याचा धंधा करुनि हेवा भटूं नको, मी, मोठा  
 शहाणा, धनाढ्याहि, गर्व भार हा वाहूं नको, एकाहुनि एकचढी  
 जगा मधि, थोर पणाला मिरवु नको, हिमायतीच्या बळें गरिव  
 गुरिवाला तूं घुरकाउं नको, दो दिवसाची जाइल सत्ता अपयश  
 माथा घेउं नको, बहुत कर्ज बाजार हाउनि, बोज आपला दवडूं  
 नको, स्नेहासाठीं पदरमोडकर परंतु जामिन होउं नको ॥

[ चाल ] विडा पैजाचा उचलू नको, उणी तराजू तोलूं  
 नको, गहाण कोणाचा डुबवूं नको, असल्यावर भीख मारूं  
 नको, नसल्यावर सांगणें कशाला गांव तुम्हा भिड धरूं नको  
 ॥ नर दे० ॥ २ ॥ उगीच निंदा स्तुति कोणाची, स्वहिता साठीं  
 करूं नको, वरी खुशामत शहाण्याचीही, मूर्खाची ती मैत्री  
 नको, कष्टाची बरि भाकरी, तुपसाखरेची चोरी नको, आल्या  
 अतिथि मुठभर द्यावा, मांगेंपुढें पाहूं नको, दिली मिथवि  
 देवानें तीतचि मानी सुख कधिं विटूं नको, असल्या गांठी  
 धन संचयकर, सत्कार्या व्यय हटू नको, आतां तुझेही गोष्ट  
 सांगतो, सत्कार्या ओसरूं नको, सत्कीर्ति नौवतीचा डंका  
 गाजें मग शंकाच नको ॥



[ श्वाल ] सुविधाग फातरू नको सदसगत अंतरू नको,  
 इताला अनुमरू नको, प्रसु भजना बिस्मरू नको, ग बशाम  
 अनत फदीचे फटक मांगे पुढे सरू नको ॥ नर ईशा० ॥ ३ ॥

## ७७ हितोपदेश

( धाव पाव भट मठा मामिम्नना, इस शार्द्व )

कष्ट दत्ता फार दृष्ट विषय वामना, इष्य पुत्र, भू, कतर  
 सब यातना ॥ टेर ॥

पाहे क्लेश होते किती ध्या घनाजना रात्र दिवस काढ  
 जीष इष्य रचना, नष्ट आइयादि कष्ट तैचि द मना, आदि  
 अंता दू ख दइ हो घनपया ॥ कष्ट० ॥ १ ॥ हाठ, मांम  
 स्नापू रक्त, याचि बनबिली प्रायदाकि चलिज प्राण एक  
 पाहली, मूड नरे तचि सुखद सुखति मानिली तीस इष्यत  
 खेद्रमुखी हरिण लोचना ॥ २ ॥ खिस होती आइ पाप लंब न  
 आइला, जन्मन्यावरीदि दू ख दइ तंपावला, रोग युक्त म्यसन  
 मक्त मूड आइला, पुत्र जन्म दु'ग्य दार भय किती अना ॥  
 कष्ट० ॥ २ ॥ नाग मर फग खाला पडली साउली, मूषकमी  
 जगे मुग्गद थड लागली, प्राण हारि होय धीध ती नय्य मली  
 न ग विषय मुम्न होइ त मना ॥ ४ ॥ हाठ पाहूनि  
 पा'न पान पायल, तेचि प्राण प्राप्त होय विषयगुर ते

जवली सुख अमूनि चित्त दूर धांवतें, सांगतसे कृष्णसूत निज  
सुहजना ॥ कष्ट० ॥ ५ ॥

## ७८ जंबूजीका स्तवन.

[ जिल्लाकी चालमें ]

जंबू कह्यो मानले रे जाया ! मत ले संयम भार ॥ टेर ॥  
राजगृही ना वासियाजी, जंबू नाम कुमार ॥ ऋषभदत्तनाडा  
कराजी, भद्रा मात उदार ॥ जंबू० ॥ १ ॥ सुधर्मा स्वामि  
पधारियाजी, राजगृही के मांय ॥ कोणिक वंदन चालियोजी,  
जंबू वंदनने जाय ॥ जंबू० ॥ २ ॥ भगवत वाणी वागरीजी,  
चरषे अमृतधार ॥ वाणी सुण वैरागियाजी, जाण्यो अथिर  
संसार ॥ ॥ ३ ॥ घर आई माता कनेजी, वादें वारंवार ॥  
आज्ञा दो मोरी माताजीरे, लेखूं संयम भार ॥ ४ ॥ ए आठों-  
ही कामगीरे जंबू, अपछग्ने उणिहार ॥ परणीने किम परिहरो  
जंबू, किणविध निकले जमवार ॥ ५ ॥ ए आठोंही कामगीरे  
जाया, तुझ विन विलखों थाय ॥ रभिया ठभिया विन नहींरे  
जाया, यांरो वदन कमल कुमलाय ॥ ६ ॥ मतिहीगो कोई  
मानवी ए माता, मिथ्या मति भरपूर ॥ रूप रमणी सं सचतां  
ए माता, होवे सुरगति दूर ॥ ७ ॥

माता ह्योरी सांभलो ए जननी, लेखूं संयम भार ॥ टेर ॥  
पाल पोस मोटो किया जंबू, इम किम दो छिटकाय ॥  
भात पिता मेलो जीवतां जंबू, थाने दय्य नहीं आवे काय.

लालु चौरामी योनिना ष माता, जीव कथा छ अनक ॥ ८६ ॥  
 मगनीरं दया पालसू ए माता, आणी विश विवेक ॥ ९ ॥  
 ज्युं आशाने लाकडा र जाया, तू मूस प्राण आचार ॥  
 तुमबिन भारो कुठ शूना रे, आया, अननी गे रास जमार १० ॥  
 रत्नजडितका पिअरा ए माता, मूवा ता जाय फद ॥  
 काम माग तुंसारना ए माता शानी पताया मूटा घट ॥ ११ ॥  
 पांन महायत प लना रे जाया, मेरू जितनो मार ॥  
 दाप थयालीस गालनर जाया लेमा मूसतो आहार ॥ १२ ॥  
 पथमहायत पालसू र माता थलयुं खाडनी धार ॥  
 दोप थयालीस गालरू ए माता, लेमू सुसतो आहार ॥ १३ ॥  
 मयम मारम ग्राहेजो र जवू, करण्यो उग्र विहार ॥  
 धिण अपराध धूणार जवू, नहो ह सुख लिंगार ॥ १४ ॥  
 चद्र विना किसी आदनी र आया ताराबिन रात ज्यो अचार ॥  
 कत विना कित्ता कामिणीरे आया, मूर वारंवार ॥ १५ ॥  
 मात पिठा मेल्यो मिन्धो माता मिलियो अनती धार ॥  
 तारग समरथ का नहीं, ए माता, पुत्र पोता परिवार ॥ १६ ॥  
 टीपक विना मंदिर कामा र जेम् पूत्र विना परिवार ॥  
 बीर विना किसी बेनहीर जेम् मूर वार तिघोर ॥ १७ ॥  
 माहमती करो मोरी मातत्री ष माता मोह किया थये कम ॥  
 शक मताप शम थयू फरा ष माता करः जिनजाग धम ॥ १८ ॥  
 ए आठोही कामणी र जाया, मुख मिलमा मवार ॥  
 अन्न वन पाठी पल्याग अयू लीका समम मार ॥ १९ ॥  
 ए आठोहा कामणीर माता, समझाई फरा एक रात ॥  
 जिनजाग धम आउण्या ष माता मयम लयी धार माथ ॥ २० ॥

मात पिताने तारियारे, जंबू, तारी छे आठोंही नार, सास्र सु-  
सराने तारीया रेजंबू. ताच्या प्रभन आदि परिवार ॥ २१ ॥  
जंबू भला चेतियारे, जाया भल लीधो संयम भार ॥ टेर ॥  
पांचसौ सत्ताईम जणासूं जंबू, लीधो संयम भार ॥ ग्याग्रह  
जीव मुक्ते गया जंबू, वर्त्या जयजयकार ॥ जंबू०॥ २२ ॥

## ७९ नेमिनाथजीकी जान.

( लावणी चालमें. )

नेमजीकी जानवनी भारी, देखनको आवे नरनारी ॥ टेर ॥  
बहुतसे घोडे और हाथी, मनुष्यकी गिनती नहीं आती ॥  
ऊँटपर ध्वजा जो फरती, धमकसे धरती थरती ॥  
समुद्र विजयजीके लाडले, नेम कुवरजी नाम ॥  
राजलदेको आये परनवा, उग्रसेनके धाम ॥  
प्रसन्न भई नगरी सब सारी, ॥ नेमजीकी० ॥ १ ॥  
कसंबल बागा अतिभारी, कानमें कुंडल छवि न्यारी ॥  
किलंगी तुरा, सुखकारी । माल, गल मोतियनकी डारी ॥  
काने कुंडल झिंगमिगे, शीश मुकुट सुखकार ॥  
करोड भानुकी वनी ओपमा, शोभा-अधिक-अपार ॥  
वाजरहे बाजे टकसारी ॥ नेमजीकी० ॥ २ ॥  
छूटे रहे होका सरनाई, ब्याहमें आये बंडे भाई ॥  
झरोखे राजल दे आई, जानको देखत सुखपाई ॥  
उग्रसेनजी देखके, मनमें करे चिंचार ॥  
बहुत जीवको करी एकठा, वाडा भन्या अपार ॥

करी सभ भोजनकी त्यारी ॥ नेमजीकी० ॥ ३ ॥

नमजी तौरणपर आयं, पशु जीव सभही कुरलाये ॥

नेमजी घचन यह फरमाये, पशुजीव काहेको छाये ॥

इनको भोजन होयगा, जान वास्ते येह ॥

‘ यह घचन सुन नेमजी, ब्यरहर कपी देह ॥ ’

भावसे चढगये गिरनारी ॥ नेमजीकी० ॥ ४ ॥

पीछेसे राजल द आई, हाथ फिर पकड़यो हे माई ॥

कहाँ तू जाब मोरी जाई और घरहरू सुखदाई ॥

मर तो घर एकही, होगय नम कुमार ॥

और घर बांधूं नहीं करोठ करो उचार ॥

दीक्षा फिर राजुलने घारी ॥ नेमजीकी ॥ ५ ॥

महली सभही समझाये, हिय राजलक नहीं भाव ॥

जगत सभ झूठो दरमावे, मेरे मन नेमफवर भाव ॥

ताब्या कंकण डोरडा, ताब्यो नवसर हार ॥

काबल टीकी पानसुपारी, छाब्यो सभ सिखमार ॥

करा अथ सयमकी त्यारी ॥ नेमजीकी ॥ ६ ॥

तज्या सभ सोल सिखगारा, आभूपभ रत्नजडित सारा ॥

लग मोहे सफही सुखखारा छेढकर चली सब परिवारा ॥

मात पिता परिवारको तजतां न सागी चार ॥

रइनेमा समझायक जाय सही गिरनार ॥

भूरतो छोठी मा प्यारी ॥ नेमजीकी० ॥ ७ ॥

ददा दिठ पशुवनकी आई त्याग अथ कीतो छिनमांटी ॥

।मिनिगिरनार जाई पशुके घचन छुडभाई ॥

नेम, राजल गिरनारपे, कीनो अविचल ध्यान ॥

'नवलमल' यह करी लावणी, उपनो केवल ज्ञान ॥

जिन्होंकी-क्रिया बुद्ध-सारी ॥ नेमजीकीं० ॥ ८ ॥

## ८० पार्श्वजिन स्तवन.

( तावडा धामो पडाजारे, इस गीतकी चालमें ).

काज तिद्ध करदो मेरारे, तेवीसमा, जिनराज, काज सिद्ध  
करदो मेरारे ॥ टेरे ॥

काशी देश वणारसी नगरी, अश्वसेन तिहांराय ॥ वामा  
राणी है गुण खानी, जिनके कूंखे आय ॥ लिया है जन्म शुभ  
बेलारे ॥ तेवीसमा० ॥ १ ॥ मात पिता मन हरखिया सरे  
पास्या सुख सवाय ॥ इन्द्रादिक मिल महोत्सव कीनों, मेरु  
पर्वत ले जाय ॥ गावतां गीत घनेरारे ॥ तेवीसमा० ॥ २ ॥  
एक दिवस गंगाजीपे आया, माताजीके लार ॥ नाग नागणी  
जलतां देख्या, तापसके दरवार ॥ लोक बहु हो रह्या भेलारे ॥  
तेवीसमा० ॥ ३ ॥ कोण नाग जलता लकडमें, हमको आंख  
दिखाय ॥ तत्र प्रभु लकड फोड बताया, देखे दुनियां आय ॥  
वृथा है तपना तेरारे ॥ तेवीसमा० ॥ ४ ॥ नाग नागिणी  
चाहिर काढ्या, मैल्या स्पर्ग मझार ॥ धरणेन्द्र पद्मावती हुआ,  
सुण्यो मंत्र नवकार ॥ उठालिया तापस डेरारे ॥ तेवीसमा० ॥  
५ ॥ कमठमर हुआ मेघमाली, प्रभुजी हुए अणगार ॥ मेह  
वरपायो प्रभु नहीं चलिया, रचियो फेद अपार ॥ कमठ मन  
हुआ अच्छेरारे ॥ तेवीसमा० ॥ ६ ॥ धरणेन्द्र पद्मावती आया

करी सब भोजनकी तयारी ॥ नमजाकी ० ॥ ३ ॥  
 नेमजी तोरणपर आये, पशु जीव सपटी डुरलाय ॥  
 नमजी घघन यह फरमाय, पशुजीव काहेका लाये ॥  
 इनको भावन हायगा, जान चास्ते येह ॥  
 ' यह घघन सुन नेमजी, ब्यरइन कर्पी देह ॥  
 भावसे चढगये गिरनारी ॥ नेमजीकी ॥ ४ ॥  
 पीछसे राजल द आई, हाथ फिर पकड्या है माई ॥  
 फर्दा तू जाव मोरी जाई और थरहत्ते सुखदाई ॥  
 मर ता घर एकही, हागय नम कुमार ॥  
 और घर बांधूं नहीं फगड फग उरघार ॥  
 दीक्षा फिर राजुलन घारी ॥ नमजीकी ० ॥ ५ ॥  
 मइली सबही समझाव, हिय राजलख नहीं भाव ॥  
 जगत सब सूठो दरमाव, मरे मन नेमफवर भाव ॥  
 घोष्या ककण डारडा, घोष्या नथसर हार ॥  
 काजल टीकी पानसुपारी, घोष्या सब सिखगार ॥  
 करो अब संयमकी तयारी ॥ नेमजीकी ॥ ६ ॥  
 तज्या सय सोल सिखगारा, आभूषण रत्नजडित सारा ॥  
 लग मोहे सकही सुखखारा छेडकर बली सब परिवारा ॥  
 मात पिता परिवारको, सबतां न लागी धार ॥  
 रहनेमी समझायक जाय चढी गिरनार ॥  
 मूरती घोडी मा प्यारी ॥ नेमजीकी ० ॥ ७ ॥  
 दया दिल पशुवनकी आई त्याग अब कीनो छिनमांही ॥  
 नमिजिनगिरनारे जाई, पशुके वंघन छुडबाई ॥

नेम, राजल गिरनारपे, कीनो अविचल ध्यान ॥

‘नवलमल’ यह करी लावणी, उपनो केवल ज्ञान ॥

जिन्होंकी-क्रिया बुद्ध-सारी ॥ नेमजीकीं० ॥ ८ ॥

## ८० पार्श्वजिन स्तवन.

( तावडा धामो पडाजारे, इस गीतकी चालमें )

काज तिद्ध करदो मेरारे, तेवीसमा, जिनराज, काज सिद्ध  
करदो मेरारे ॥ टेरे ॥

काशी देश वणारसी नगरी, अश्वसेन तिहांराय ॥ वामा  
राणी है गुण खानी, जिनके कूंखे आय ॥ लिया है जन्म शुभ  
बेलारे ॥ तेवीसमा० ॥ १ ॥ मात पिता मन हरखिया सरे  
पाम्या सुख सवाय ॥ इन्द्रादिक मिल महोत्सव कीनों, मेरु  
पर्वत ले जाय ॥ गावतां गीत घनेरारे ॥ तेवीसमा० ॥ २ ॥  
एक दिवस गंगार्जीपे आया, माताजीके लार ॥ नाग नागणी  
जलतां देख्या, तापसके दरवार ॥ लोक बहु हो रखा भेलारे ॥  
तेवीसमा० ॥ ३ ॥ कोण नाग जलता लकडमें, हमको आंख  
दिखाय ॥ तव प्रभु लकड फोड बताया, देखे दुनियां आया ॥  
चृथा है तपना तेरारे ॥ तेवीसमा० ॥ ४ ॥ नाग नागिणी  
चाहिर काढ्या, मेल्या स्मर्ग मझार ॥ धरणेन्द्र पद्मावती हुआ,  
सुण्यो मंत्र नवकार ॥ उठालिया तापस डेरारे ॥ तेवीसमा० ॥  
५ ॥ कमठमर हुआ मेघमाली, प्रभुजी हुए अणगार ॥ मेह  
वरपायो प्रभु नहीं चलिषा, रचिषो फेड अपार ॥ कमठ मन  
हुआ अन्डेशो ॥ तेवीसमा० ॥ ६ ॥ धरणेन्द्र पद्मावती आया



आमण अघर उठाम ॥ उपसर्ग टारयो प्रभुबीका, आया त्रिब  
 दिश जाम ॥ गावता गुण प्रभुकेरोर ॥ सेवीसमा० ॥ ७ ॥  
 पार्श्व कवल पामिया सुरे, तीरंथ थांप्या पार ॥ साधु सार्थी  
 भाषक भाविका, इणमै फरकन लिगार ॥ अगतमै क्रिया उध  
 रार, ५ सेवीसमा० ॥ ८ ॥ नाग नागिखी तिम तुम तांबा,  
 तिम प्रभु हमको सार ॥ हिमंतरामस्तुत कनी रामकी, अर्धी सा  
 अपभार मिटादो भव भव फेरारे ॥ सेवीसमा० ॥ ९ ॥

## ८१ दशारणभद्रराजा स्तवन

( 'कंकणीका बेल्लेमें, )

वीर जिन बंदन हो आया, दशारण भद्र बड़ेरायां ॥ टेर १०  
 पचान्या वीर जिनद भारी, दशारण नंगरीके भारी ॥  
 मुनीधर चौदे सहस्र तारी, मखिका छपीस हजारी ॥  
 समवशरण देवी रच्यो, बैठो भी जिनराज ॥  
 इन्द्र इन्द्राणी सेवाकरे, पाम्या हर्य उछास ॥ वीर० ॥ ११ ॥  
 सुवर रामेन्द्र मजी लागी, वीर जिन आय उठन्या वागी ॥  
 जाईयो दर्शनक कामे करूं सज्जाई बहु साजे ॥  
 हाथी, घोडा, रथ पालखी पापदलारे परिवार ॥  
 माई, बेटा उमराव, अंतेउर सबको लीघालार ॥ वीर ॥ १२ ॥  
 अठारह सहस्र गज गाजे घुडला लख चौबीस छाजे ॥  
 एकरीस सहस्र रथ बोली, पालखी एक सहस्र मोहती ॥  
 हाथी घूमै घुडला हिसे रथ को सणकार ॥

पायदल मुखके आगले, बोले जयजयकार ॥ वीर० ॥ ३ ॥  
 पांचसौ अंते उर लारे, करत है नव नव सिंगारै ॥  
 हरिया रत्नजडित गहणा, वाजतां वाजंत्री वयणा ॥  
 छत्र चामर हुलावता, चाल्या मध्य बाजार ॥  
 राय आपको आढम्बर देखी, गर्व कन्यो तिणवार ॥ वी० ४ ॥  
 स्वर्गसे इन्द्रभी आया, भेटिया श्रीजिनका पाया ॥  
 जानसे सर्व बात जाणी, दशारण भद्र बडो मानी ॥  
 मान उतारण कारणे, इन्द्र दियो अदेश ॥  
 एक ऐरावत ऐसो लावो, ज्युं गले गर्व विशेष ॥ ५ ॥  
 त्रौसठ सहस्र गज छाजे, गगनवीच ऊभाही गाजे ॥  
 एकैकको ऐसो रूप आयो, सुणतां आश्चर्य पायो ॥  
 एक एकके मुख पांचसौ, मुख मुखपे आठदन्त ॥  
 दंत दंत आठ वावड़ी, जिणमें कमल महंत ॥ वीर० ॥ ६ ॥  
 पांखड़ी लाख लाख ज्यांके, नाटक पडे बत्तीस ताके ॥  
 इन्द्रको इन्द्रासन सोहे, कर्णिका ऊपर मन मोहे ॥  
 जिणपर इन्द्र विराजिया, लारे सहु परिवार ॥  
 दशारण भद्रजी देखके, गर्व गल्यो तिणवार ॥ ७ ॥  
 चिंतत अपने दिलमांही, बडाई किसविध रहे भाई ॥  
 इन्द्रस जीतूं मैं नाहीं, करु उपाय कठा ताई ॥  
 अवसर देख संयम लियो, दशारण भद्र नरेन्द्र ॥  
 तुरत आई उतावलो, पगे लाग्यो शक्रेन्द्र ॥ वीर० ॥ ८ ॥  
 इन्द्र इस मुनिवरसे बोले, नहीं कोई आपतणे तोले ॥  
 और तो शक्ति घणी म्हारे, देवतो दीक्षा नहीं धारे ॥

घन्बहो मुनिरायजी, तुम राख्यो मान असब ॥  
 बार बार गुख गावता, इंद्र गया गहनके मध्य ॥ ० ॥  
 मुनीश्वर सयम श्रुद्धपाले दाप सहु आठमका गल ॥  
 मिनाया जन्म मरण करा आठमा अटल हुमा तेरा ॥  
 गुरु देव प्रसादसे, सुणजो भविष्य शोक ॥  
 जो फरखी साथी करो ता मिलसे सगला शोक ॥ १० ॥  
 सबत उगणीसौ सोहे, साल तेतीसकी मन मोहे ॥  
 आसोज बुदि पंचम गुरुवारी, गाबे हीरालाल हितकारी ॥  
 दश हाडोतीके बिपे, कोटो मोटो शहर ॥  
 चौमासो कियो रामपुरामें चार संतकी लेर ॥ वीर ॥ ११ ॥

## ८२ डिंगरी ।

( स्याङ्की पाठमें )

मरी अदालत प्रभुकी कीबिए, जिन घासन नायक, मुक्ति  
 मानेकी डिंगरी कीबिए ॥ टेर० ॥  
 खुद घेतन मुर्द बना है, आठों कम मुराला ॥  
 दावा ' रास्ता मुक्ति मागका घौसा देकर टालाजी ॥ १ ॥  
 'तप' कागत्र इस्ताप मंगाया, लेखन समा विचारी ॥  
 मन्दाव ध्यान मज्जून बनाकर अभी आन गुजारीजी ॥ २ ॥  
 म जाठा था मुक्ति मारगमें, कमौने आ घेरा ॥  
 भावा देकर गह मूलाया, छट्टलिया सब डेराजी ॥ ३ ॥  
 पदुत रराव किया कमौने, चौरासीके मारी ॥

दुःख अनंता पाया मैंने, अंतपार कछु नाहीं जी ॥ ४ ॥

सबे मिले, दकील कानूनी, पंचमहाव्रतधारी ॥

सूत्र देख मैं सोदा कीना, तब मैं अरजी डारी जी ॥ ५ ॥

पांचों समिति, तीनों गुप्ति, ये आठों गवाह बुलाओ ॥

शील अग्रेसर बडा चौधरी, उनको पूछ मंगाओ जी ॥ १७ ॥

आठ मुदाले हाजिर, ऊभे, मोह मुखत्यार बुलाये ॥

चार कषाय और आठों मदको, साथ गवाहमें लायेजी ॥ ८ ॥

हमने नहीं भरमाया इसको, यह मेरे घर आया ॥

करजा लेकर हमसे खाया, ऐसा फरेब रचायाजी ॥ ९ ॥

विषय भोगमें रमिया चेतन, घाटा नफ्त नहीं जाना ॥

करजदार जब लारे लागे, तब लागा पछताना जी ॥ १० ॥

हाजिर खडे गवाह हमारे, पूछिए हाल जो सारा ॥

बिना लिये करजा चेतनसे, कैसे करें किनाराजी ॥ ११ ॥

चेतन कहे अदालत मांही, सुनो शासन सिरदार ॥

इमानदार है गवाह हमारे, जाने सब संसारजी ॥ १२ ॥

मैं चैतन अनाथ प्रभुजी, कर्मोवश हुआ भारे ॥

जीव अनन्ते राह चलतेको, लूट चौरासामें डारेजी ॥ १३ ॥

बडे बडे पंडित इन लूटे, ऐसा दम बताया ॥

धर्म कहा और पाप कराया, ऐसा करज चढायाजी ॥ १४ ॥

हिंसामांहीं धर्म बताया, तपस्या सेती डिंगाया, ॥

इन्द्री सुखमें मगन बनाया, झूठा जाल फैलायाजी ॥ १५ ॥

ऐसा करो इन्साफ प्रभुजी, अपील होने नहीं पावे ॥

घन्महो मुनिरायजी, तुम राख्यो मान अखड ॥  
 बार बार गुख गावतो, इंद्र गया गगनक मध्य ॥ ९ ॥  
 मुनीश्वर सयम शुद्धपाले दाप सहु आत्मका टास ॥  
 मिटाया जन्म मरण फेरा आत्मा अटल हुआ तेरा ॥  
 गुरु देव प्रसादसे, सुगजो मत्रियण श्लोक ॥  
 ओ करखी साची करो तो मित्तसे सगला थोक ॥ १० ॥  
 संवत ठगणीसौ सोहे, साल तेसीसकी मन मोहे ॥  
 आसोज सुदि पंचम गुरुवारी, गावे हीरालाल हितकारी ॥  
 देश हाबोतीके विषे, कोटो मोटो शहर ॥  
 चामासो किषो रामपुरामें चार सतकी लेर ॥ ११ ॥

## ८२ डिंगरी ।

( क्वाबकी चाबमें )

मरी अदालत प्रसुधी कीबिए, जिन आसन नाबक, मुक्ति  
 जानेकी डिंगरी दीबिए ॥ १ ॥  
 खुद चेतन मुद्दे बना है, आठों कर्म मुदास्ता ॥  
 दावा ' रास्ता मुक्ति मार्गेकर धौखा देकर टाखाजी ॥ १ ॥  
 ' तप ' कागज इस्टोप मंगाया, लेखून धमा बिचारी ॥  
 मन्दाब ध्यान मधमून बनाकर अर्धी आन गुजारीजी ॥ २ ॥  
 म दाता या मुक्ति मारगमें, कर्मोने आ पेरा ॥  
 धौखा देकर राह मुलाया, सुटलिया सब डेराजी ॥ ३ ॥  
 पटुत रराज किया कर्मोने, बौरासीके पाही ॥

दुःख अनन्ता पाया मैंने, अंतपार कछु नहीं जी ॥ ४ ॥  
सच्चे मिले, दकील कानूनी, पंचमहाव्रतधारी ॥  
सत्र देख मैं सोदा कीना, तब मैं अरजी डारी जी ॥ ५ ॥  
पांचों समिति, तीनों गुप्ति, ये आठों गवाह बुलाओ ॥  
शील अग्रेसर बडा चाँधरी, उनको पूछ मंगाओ जी ॥ १७ ॥  
आठ मुद्दाले हाजिर, ऊभे, मोह मुखत्यार बुलाये ॥  
चार कपाय और आठों मदको, साथ गवाहमें लायेजी ॥ ८ ॥  
हमने नहीं भरमाया इसको, यह मेरे घर आया ॥  
करजा लेकर हमसे खाया, ऐसा फरेव रचायाजी ॥ ९ ॥  
विषय भोगमें रमिया चेतन, घाटा नफा नहीं जाना ॥  
करजदार जब लारे लागे, तब लाग़ा पछताना जी ॥ १० ॥  
हाजिर खडे गवाह हमारे, पूछिए दाल जो सारा ॥  
बिना लिये करजा चेतनसे, कैसे करें किनाराजी ॥ ११ ॥  
चेतन कहे अदालत मांही, सुनो शासन सिरदार ॥  
इमानदार है गवाह हमारे, जाने सब संसारजी ॥ १२ ॥  
मैं चेतन अनाथ प्रभुजी, कर्मोविश हुआ भारे ॥  
जीव अनन्ते राह चलतेको, लूट चौरासीमें डारेजी ॥ १३ ॥  
बडे बडे पंडित इन लूटे, ऐसा दम बताया ॥  
धर्म कहा और पाप कराया, ऐसा करज चढायाजी ॥ १४ ॥  
हिंसामांहीं धर्म बताया, तपस्या सेती डिगाया, ॥  
इन्द्री सुखमें मगन बनाया, झूठा जाल फैलायाजी ॥ १५ ॥  
ऐसा करो इन्साफ़ प्रभुजी, अपील होने नहीं पावे ॥

इलुकर्मी चेतन हो जावे, जन्म मरण मिटजावेजी ॥ १६ ॥ -  
ज्ञान दर्शन करी मुन्सफरी, दोनोंको समझाया ॥

चेतनकी बिगरी करदीनी, - कर्मोंका करज बतायाजी ॥ १७ ॥  
असल करज जो था कर्मोंका, चेतन सेती दिलाया ॥

शुद्ध संयम जब कीनी जमानत, आगेका दू ख मिटायाजी ॥ १८ ॥  
आश्रय छाड सम्बरको धारा तपस्यामें चित्त लायो ॥

बस्ती करज अदा कर चेतन, सीधा मुक्तिमें आवीजी ॥ १९ ॥  
शुद्ध संयम जब बना जमानत, चेतन बिगरी पाई ॥

कागण शुद्धि दृष्टमी दिन मगल, उगणीसौ आठामाईजी ॥ २० ॥

## श्री पार्श्वनाथ स्वामीका छंद

[ छोटक शृण ]

अप अर्ष अग नायक पार्श्वजिनं । प्रखटाखिल मानव देव  
गण ॥ जिन शायन मंडन पार्श्व जयो तुम दर्श-बेख  
आनंद मया ॥ १ ॥ अश्वमेन कुलांघर मालुनिसे नब इल  
शरीर हरित प्रतिम, धरणेन्द्र मुसेबित-पादयुग, अरात्मासुर  
कांति सदा सुमय ॥ २ ॥ निज रूप-विनिर्दिष्ट रंम पति,  
पदना धुति शारद साम्भमति ॥ नयनायुज दिस विशाब्जरा,  
निलकुमुम मभिम नासा प्रवरा ॥ ३ ॥ रत्नसूतकंद समान  
मदा, दशनशक्ति अनार कलि सुसदा ॥ अचरारुण चिट्टम  
ग पन अप पुरपादासी पार्श्वजिनं ॥ ४ ॥ अतिचारु मुकुट

मस्तक दीपे काने कुंडल रवि शशि जोपे ॥ तुझ महिमा महि  
 मंडळ गाजे, नित पंच शब्द वाजा वाजे ॥ ५ ॥ सुर किन्नर  
 विद्याधर आवे, नर नारी तारा गुण गावे ॥ तुझने सेवे चोसठ  
 इंद्र सदा, तुझ नामे नावे कष्ट कदा ॥ ६ ॥ जे सेवे तुझने भाव  
 घणे नव निधि थाय घर तेह तणे ॥ अडवडिया तूं आधार  
 कळो, समरथ साहिव में आज लहो ॥ ७ ॥ दुखियाने सुख-  
 दायक तूं दाखे, अशरणे शरणे तूं राखे ॥ तुम नामे संकट  
 विकट टळे, विडिया व्हाला आय मिळे ॥ ८ ॥ नटविट लंपट  
 दूरे नामे, तुझ नामें चोर चुगलत्रासे ॥ रण राऊल जय  
 तुझ नाम थकी सघळे आगळ तुझ सेव थकी ॥ ९ ॥ यक्ष  
 राक्षस किन्नर सत्री उरगा, करी केसरी दावानळ विहगा ॥  
 वध बंधन भय सघळा जावे, जे एकमने तुझने ध्यावे ॥ १० ॥  
 भूत प्रेत पिशाच छळी न सके, जगदीश तवा भिध जाप थके  
 ॥ महोटा जोटींग रहे दूरे, दैत्यादिकना तूं मद चूरे ॥ ११ ॥  
 डायणि सायणि जाय हटकी, भगवंत थाय तुझ भजन थकी  
 ॥ कपटी तुझ नाम लिया कंपे, दुरजन मुखथी जीजी जंपे  
 ॥ १२ ॥ मानी मच्छराळा मुह मोडे, ते पण आगळथी कर-  
 जोडे ॥ दुरमुख दुष्टादिक तूंही दमे, तुझ नामे म्होटा मलेच्छ  
 नमे ॥ १३ ॥ तुझ नामें माने नृप सघळा, तुझ जश उज्वळ  
 जिम चंद्रकळा ॥ तुझ नामे पामे ऋद्धि घणी, जय जय जगदी-  
 श्वर त्रिजगधणी ॥ १४ ॥ चिंतामणि काम सत्री पामे, हय  
 गय रथ पायक तुझ नामें ॥ जनपद ठकुराई तूं आपे, दुर्जन  
 जननां दारिद्र कापे ॥ १५ ॥ निर्धनने तूं धनवान् करे, तूं तूंठयो  
 कोठार भंडार भरे ॥ घर पुत्र कलत्र परिवार घणो, ते सह



हलकामीं चेतन हो जावे, जन्म मरण मिटजावेजी ॥ १६ ॥  
 ज्ञान दर्शन करी मुन्सफो, दोनोंको समझाया ॥  
 चतनकी डिगरी करदीनी, कर्मोका करज बतायाजी ॥ १७ ॥  
 असल करज जो था कर्मोका, चेतन सेवी दिलाया ॥  
 शुद्ध समय जब कीनी जमानत, आगेका हु ख मिटयाजी १८  
 आभर छाट सम्बरको धारो, तपस्यामें चित लाषो ॥  
 बल्दी करज अदा कर चेतन, सीषा श्रुक्तिमें जावोजी ॥ २० ॥  
 शुद्ध समय जब बना जमानत, चतन डिगरी पाई ॥  
 सागण शुद्धि देखी दिन मगल, उगणीसो आठामांहीसी ॥ २१ ॥

## श्री पार्श्वनाथ स्वामीका छंद

[ छोटक वृत्त ]

जम जम जग नायक पार्श्वजिनं, प्रख्याखिल मानव देव  
 गण ॥ जिन शामन मंडन पार्श्व जसो तुम दर्श देल  
 आनंद भया ॥ १ ॥ अश्वमेन हृत्वावरमानुनिर्म नव हल  
 शरीर हरित प्रतिम, धरणेन्द्र सुसेवित पादयुगं, मर मासुर  
 कांति मदा सुम ॥ २ ॥ निज रूप-निनिर्जित रंम पति,  
 पदनो धुति तारद साम्भमति ॥ नपनांशुज दिस विशाखतरा,  
 निलकुपुम सन्निभ नामा प्रवरा ॥ ३ ॥ रमनामृतकंद समान  
 मदा, दयनामलि अगार करति सुगदा ॥ अघराक्य विष्टम  
 ग्य पन जप पुरपादासी पार्श्वजिन ॥ ४ ॥ अविचारु मुकुट

हित कामी ॥ २७ ॥ करुणाकर ठाकुर तूं हारो, निशिवासर  
 नाम जपूं थारो ॥ सेवक घूं परम कृपा करजो, वालेशर बंछित  
 फळ देज्यो ॥ २८ ॥ जिनरात्र सदा तूं जयकारी, तुम्ह सति  
 अति मोहनगारी ॥ मुगत महल में तूं राज, त्रिभुवन  
 ठकुगई तुझ छाजे ॥ २९ ॥ इम भाव भले जिनवर गायो, वामा  
 सुत देखी वहु सुख पायो ॥ रवि शशि मुनि संवत्सर रंगे;  
 जय देव सूरिमां गी सुख रंगे ॥ ३० ॥ जय पुरुपादाणी पार्श्व प्रभो,  
 सकळार्थ समिहित देहि प्रभो ॥ बुध हर्ष रुचि विजयाय मुदा,  
 तव लखि रुचि मुख थाय सदा ॥ ३१ ॥

## ८३ श्रीपार्श्वनाथ स्वामीका छंद.

आपणे घर वेठां लील करो, निज पुत्र कलत्र सैं प्रेम धरो  
 ॥ तुमे देश देशांतर कांई ढोडो. नित्यपास जपो श्री जिन  
 रूडो ॥ १ ॥ मनबंधित सघळां काज सरे, शिर ऊपर छत्र  
 चामर ढले, कलमळ आगळ चाले घोडो ॥ नित्य० ॥ २ ॥  
 भूत प्रेत दैत्य पिशाच बळी, सायणि ने डायणि जाय टळी ॥  
 छळ छिद्र न कोई लागे जोरो ॥ नित्य० ॥ ३ ॥ एकांतर ताव  
 सियोढाहु, आपध विण जाये क्षण मांहु ॥ नवि दूखे मांथुं  
 पग गोडो ॥ नि० ॥ ४ ॥ कंठ माळ गड गुंबड सवळा, तस  
 उदर रोग टळे सगळा ॥ पीडा न करे फिन गळ फोडो ॥ नि०  
 ॥ ५ ॥ जागतो तिर्थकर पास पहु, एम जाणे सघळो जगत  
 सह ॥ ततक्षण अशुम कर्म तोडो ॥ नित्य० ॥ ६ ॥ पास

महिमा तुम्ह नाम तपो ॥१६॥ माखि मणिक मोता रत्न बहवा,  
 मोवन भूपण बहु सुषुठ घटया ॥ बळी पाहरण नवरग व  
 यथा, तुम नाम नविरहे काई मणा ॥ १७ ॥ बैरी विरुभा  
 नवि चाकि मक, बळी खोर खुगल मनया चमक ॥ एव  
 छिद्र कदा केहना नलग, जिनराज सदा तुम्ह च्योति जग  
 ॥ १८ ॥ ठग ठाकुर साविथरहर कंफ, पांम्वही पण का नवि  
 फरक । लुगारादिक महु नामी जाये, मारग तुम्ह अपवा जय  
 याये ॥ १९ ॥ जड मूरस जे मति हीन यळी, अमान तिमिर  
 तस जाय बळी ॥ तुम्ह समरणपी बासा थाण पंडित पद पामी  
 पूजाण ॥ २० ॥ स्वस खांमी स्वमन पीडा नास, दुरयळ मुख  
 दीन पर्थु श्रासे ॥ गठ गुवळ कुए जिक मबळा, तुम्ह जाप राग  
 ममे सपळा ॥ २१ ॥ गहिला गुगा बहिर य जिके; तुम्ह ध्यान  
 गत दुःख थाय तिक ॥ वनु कांति कळा सुविश्रय वधे तुम्ह  
 समरण हूँ नवनिधि सधे ॥ २२ ॥ करि केसरी आरक्षण बध  
 मया बळ जळण जळोदर अष्ट मया ॥ रांगण पमुहा सधी  
 जाय टळी, तुम्ह नामे पामे रंगरळी ॥ २३ ॥ ॐ न्ही ॐ ह्रीं  
 श्रीं पार्शनमो नमिऊण अपता हुए दमा ॥ शितामणि मत्र  
 जिक ध्याय, तिण घर दिन दिन दोलत थावे ॥ २४ ॥  
 त्रिकरण शुद्ध ज अराध, तस मस कीर्ति जगमा वावे ॥ बळी  
 कामित काम सध साध, समिहित शितामणि तुम्ह लावे ॥ २५ ॥  
 मद मन्दर मनधी दूर तस, भगवंत मलीपर जड मज ॥ तत  
 पर कामळा फिडोल करे, बळिराग्य रमणि बहु लीला भर  
 ॥ २६ ॥ मय पारफ तारक हूँ थावा सखन मन गति शक्ति  
 नो दाता ॥ मात ताव सहादर हूँ स्वामी । शिब दाबक नाबक

हित कामी ॥ २७ ॥ करुणाकर ठाकुर तूं ह्यारो, निशिवासर  
 नाम जपूं थारो ॥ सेवक घूं परम कृपा करजो, वालेशर वांछित  
 फल देज्यो ॥ २८ ॥ जिनराज सदा तूं जयकारी, तुम्ह सृति  
 अति मोहनगारी ॥ सुगत महल मे तूं राज, त्रिभुवन  
 ठकुराई तुझ छाजे ॥ २९ ॥ इम भान भले जिनवर गायो, वामा  
 सुत देखी बहु सुख पायो ॥ रवि शशि मुनि संवत्सर रंगे;  
 जय देव सूरिमांजी सुरस संगे ॥ ३० ॥ जय पुरुपादाणी पार्श्व प्रभो,  
 सकळार्थ समिहित देहि त्रिमो ॥ बुध हर्ष रुचि विजयाय मुदा,  
 तव लखि रुचि मुख थाय मदा ॥ ३१ ॥

### ८३ श्रीपार्श्वनाथ स्वामीका छंद.

आपणे घर वेठां लील करो, निज पुत्र कलत्र सूं प्रेम धरो  
 ॥ तुझे देश देशांतर कांई दोडो. नित्यपास जयो श्री जिन  
 खुडो ॥ १ ॥ मनवंछित सघळां काज सरे, शिर ऊपर छत्र  
 चामर ढले, कलमल आगळ चाले घोडो ॥ नित्य० ॥ २ ॥  
 भूत प्रेत दैत्य पिशाच वळी, सायणि ने डायणि जाय टळी ॥  
 छळ छिद्र न कोई लागे जोरो ॥ नित्य० ॥ ३ ॥ एकांतर ताव  
 सियोदाहु, आंषध विण जाये क्षण मांहु ॥ नवि दूखे मांथुं  
 पग गोडो ॥ नि० ॥ ४ ॥ कंठ माळ गड गुंघड सवळा, तस  
 उदर रोग टळे सगळा ॥ पीडा न करे फिन गळ फोडो ॥ नि०  
 ॥ ५ ॥ जागतो तिर्थकर पास पहु, एम जाणे सघळो जगत  
 सहु ॥ ततक्षण अशुम कर्म तोडो ॥ नित्य० ॥ ६ ॥ पास

वाणारसी पुरा नगरी, तिहां उदया जिनवर उदय करी ॥  
समय सुदर करे कर जाडो ॥ नित्य० ॥ ७ ॥

### ८४ श्रीशांतिनाथ स्वामीका छंद

शारद मास नभुं शिरनामी, हुं गुख गाठं त्रिसुवनके स्वामी  
॥ शांति शांति अपे सब कोई, ते पर शांति सदा सुख हार्ई  
॥१॥ शांति जपीन कीजे कामा, साही काम हुवं अमिरामा  
॥ शांति जपी परदेश सिघाब, ते कुशळे कमळा सेई भाष  
॥ २ ॥ गर्भ थकी प्रभु मारि निवारी, शांतिजी नाम दिया  
हितकारी ॥ जे नर शांति तथा गुण गावे, श्रद्धि अशिरी ठ  
नर पावे ॥ ३ ॥ जे नरकु प्रभु शांति सहाई ते नरकुं कहु  
आरवि नाही ॥ जो कहु बंछि सोही पूर हु ख दारिद्र मिथ्या  
मति घरे ॥ ४ ॥ अलख निरजन ज्योत प्रकाशी, घटघट अतर  
क प्रभु पासी ॥ स्वामी स्वरूप कहुं नाव जाय कहतां मुक्त  
मन अचरज थाय ॥ ५ ॥ डार दिये सबही हथियास, जित्वा  
माह तथा दळ सारा ॥ नाग वजी शिवधं रग राघो, रात्र  
तज्या पण साहिव साघो ॥ ६ ॥ महा बळवंत कर्हीज देवा,  
कुडर कुंपुन एक हणवा ॥ श्रद्धि सबळ प्रभु पास लहीजे मिथ्या  
आहारी नाम फहीज ॥ ७ ॥ निंदक पुजकहु सम भायक, पण  
सषकहु हे सुख दापक ॥ तजी परिग्रह हुवा भगनायक, नाम  
अतिथि सच मिदि लयक ॥ ८ ॥ शत्रु मित्र सप चित्त गखी  
अ नाम दय अहित मखीज ॥ सकळ जीव हितपंत कहीज,  
सयक जागी मशएद दीज ॥ ९ ॥ मायर जैसा दोत गंभीरा

दूषण एक न मांहे शरीरा, मेरु अचळ जिम अंतर जामी, पण  
 न रहे प्रभु एकण ठामी ॥ १० ॥ लोक कहे जिनजी सब  
 देखे, पण सुपनो प्रभु क्वहु न पेखे ॥ रीस विना वाचीश  
 परासा, सेना जीती ते जगदीशा ॥ ११ ॥ मान विना जग  
 आण मनाई, माया विना शिवसूं लय लाई, लोभ विना गुण  
 राशि ग्रहिजे, भिक्षु भात्रे त्रिगडो सेविजे ॥ १२ ॥ निर्ग्रथपणे  
 शिर द्धत्र धरावे, नाम यति पण चमर दुळावे ॥ अभयदान  
 दाता सुख कारण, आगळ चक्र चले अरिदारण ॥ १३ ॥  
 श्रीजिनराज दयाळ भणीजे, कर्म सर्वाको मूळ खणीजे ॥ चउ-  
 विह संघ तरिथ थापे, लच्छी दणी देखे नवि आपे ॥ १४ ॥  
 विनयवंत भगवंत कहावे, नांहे कीसीकूं शीश नमावे ॥ अकं-  
 चनको विरुद धरावे, पण सौवन पद पंकज ठावे ॥ १५ ॥  
 राग नहीं पण सेवक तारे, द्वेष नहीं निगुणा संग वारे ॥ तजी  
 आरंभ निज आतम व्यावे, शिव रमणीको साथ चलावे ॥ १६ ॥  
 तेरी महिमा अद्भुत कहिए, तेरा गुणको पार न लहिए ॥ तूं  
 प्रभु समस्थ साहेन, मेरा, हुं मन मोहन सेवक तेरा ॥ १७ ॥  
 तूरे त्रिलोक तणो प्रतिपाळ, हुंरे अनाथ ने तूरे दयाळ ॥ तूं  
 शरणागत राखन धीरा, तूं प्रभु तारक छे वड वीरा ॥ १८ ॥  
 तूही समो वड भागज पायो, तो मेरो काज चढ्योरे सवायो ॥  
 कर जोडी प्रभु वीनवुं, तमद्वं, करो कृपा जिनवरजी अमद्वं  
 ॥ १९ ॥ जनम मरणना भय त्रिवारो, भव सागरथी पार  
 उतारो ॥ श्रीहृत्थिणापुर मंडळ सोहे, त्यां श्री शांति सदा  
 मन मोहे ॥ २० ॥ पद्म सागर गुरुराय पसाया, श्रीगुण

सागरक मन माया ॥ जे नर नारी एक वित गावे, ते मन  
चांछित निषय पावे ॥ २१ ॥ इति ॥

### ८५ श्री गौतम स्वामीका छंद

वीर त्रिणशर करा शिष्य, गौतम नाम अथा निशादिश्र ॥  
वां कीजे गौतमनो ध्यान, तो घर विलसे नवे निधान ॥ १ ॥  
गौतम नामे गिरिबर षडे, मन वदित हियडे सुपजे गौतम  
नामै नावे राग, गौतम नामें सर्व संयोग ॥ २ ॥ जे बरी बिरु-  
आ र्वकडा, तस नामें नावे हुकडा ॥ मूठ प्रेत नवि मंडें प्राड  
त गौतमना करूं पखाण ॥ ३ ॥ गौतम नामें निर्मळ काप,  
गौतम नामें वांघे आय ॥ गौतम जिनशासन छिणगार, गौतम  
नामें अयजयंकर ॥ ४ ॥ झाळ दाळ सुरठा घूत गोळ, मन  
बडित कापडे संवोळ ॥ घर सुपरणी निर्मळ वित, गौतम  
नाम पुत्र विनीत ॥ ५ ॥ गौतम उग्यो अविचळ माळ  
गौतम नाम अथा अग जाग ॥ म्हाटा मंदिर मरू समान,  
गौतम नाम सफळ विमाण ॥ ६ ॥ घर मर्यगळ पाढानी जोड  
घारु पढोषे वद्विम काळ ॥ महियळ माने मोटा राय आ तुठ  
गौतमना पाय ॥ ७ ॥ गौतम प्रजम्या पतिक टळे, उचम नर  
नी मगत मळ ॥ गौतम नामें निर्मळ ज्ञान गौतम नामें वाध  
पान ॥ ८ ॥ पुणवयत अरुघारो सहु, गुरु गौतमना गुण छे  
चहु ॥ समय सुट्टर नहे करजाळ, गौतम तुठ संपति कोड ॥ ९ ॥

## ८६ श्री सोले सतीका छंद.

आदि आदि जिनवर वंदी, सफल मनोरथ कीजिए ॥  
 प्रभाते उठी मंगलिक कामे, सोले सतीना नाम लीजिए ॥ १ ॥  
 बालकुमारी जगहितकारी, ब्राम्ही भरतनी बेनडीए ॥ घट घट  
 व्यापक अक्षर रूपे, सोळ सतीमां जे वडीए ॥ २ ॥ बाहुबळ  
 भगिनी सतीय शिरोमणी, सुदरी नामें ऋषभ सुताए ॥ अंक  
 स्वरूपी त्रिभुवन मांहे, जेह अनोपम गुण जुताए ॥ ३ ॥  
 चंदन बाळा बाळपणेथी, शीयळवती शुद्ध श्राविकाए ॥ अड-  
 दना बाकुळा वीर प्रतिलाभ्या, केवळ लह्यो व्रत भाविकाए  
 ॥ ४ ॥ उग्रमेन धुया धारिणी नंदनी, राजेमती नेम वल्लभा ए  
 जोवन वेपे कामने जीन्यो, संजम लई देव वल्लभाए ॥ ५ ॥  
 पंच भरतारी पांडव नारी, द्रुपद तनया वखाणीए ॥ एकसौ  
 आठे चीर पुराणा शीयळ महिमा तस जाणीये ए ॥ ६ ॥  
 दशरथ नृपनी नारी निरुपम, कौसल्या कुळ चंद्रिकाए शीयळ  
 सलुणी राम जनेता, पुण्य तणी प्रनाळिकाए ॥ ७ ॥ कौसंधिक  
 ठामे संतानिक नामे, राज्य करे रंग राजियो ए ॥ तस घर  
 घरणी मृगावती सती, सुर भुवने जश गाजियो ए ॥ ८ ॥  
 सुळशा साची शीयळ न काची, राची नहीं विषया रसेए ॥  
 मुखडो जोतां पाप पलाए, नाम लेतां मन उल्लसे ए ॥ ९ ॥  
 राम रघुवंशी तेहनी कामिनी, जनकसुता सीता सतीए ॥ जग  
 सहु जाणी धीज करंता, अनळ शीतळ थयो शीयळथी ए ॥  
 १० ॥ सुरनर वंदित शीयळ अखंडित शिवा शिव पद गाम-  
 नीए । जेहने नामे निर्मळ थए, वलीहारी तस नामनी ए  
 ॥ ११ ॥ कांचे तातणे चालणी चांधी, कुआथकी जळ काढीयुं



ए ॥ कसंफ उतारवा सतीय सुमद्रा, स्वपा बार उवाठीषु ए ॥  
 ॥ १२ ॥ हस्तीनागपुरे पांडु रायनी, कुता नामे कामिनी ए ॥  
 पांडव माता दसे दशरानी वेहन पावित्रता पधिर्नी ए ॥ १३ ॥  
 श्रीळ्वती नामे श्रीळ्वत धारिणी, त्रिनिधे तहने वंदीषे ए ॥  
 नाम जपता पातिक ज्ञाए ॥ दर्शणे दुरित निकंदी ए ॥ १४ ॥  
 निपघा नगरी नळ नरींदनी दमयती तप गेहनी ए ॥  
 सफट पढता श्रीयळ्व रास्युं त्रिमुत्रन कीर्ति अहनी ए ॥ १५ ॥  
 अनग अजीता जग जन पूजीता, पुफपुलाने प्रमावती ए ॥  
 विश्व विख्याता कर्मित दाता, सोळ्वी सती पद्मावती ए ॥  
 १६ ॥ धीरे माखी भाखे साखी; उदय रतन माखे मुदा ए ॥  
 पोडगतां जे नर मणसे, ते लसे सुख सपदा ए ॥ १७ ॥

## ८७ श्री नवकारका छंद प्रारभ

( दादा )

यद्धित पूर विविध पर, श्री जिनशासन सार ॥ निश्च श्री  
 नवकार नित जपतां जय जयकार ॥ १ ॥ अठसठ अक्षर  
 अधिक फळ नवपद नय निधान ॥ वीतराग स्व मुख वद,  
 परपरमष्टि प्रधान ॥ २ ॥ एकज अक्षर एकज चित्त, समया  
 मपति धाय ॥ सचित सागर साठनां, पातिक दूर पळाय ॥ ३ ॥  
 मकळ मंत्र शिर मुकट माणि, सद्गुरु माणित मार ॥ सा  
 मयियां मन शुद्ध नित मपिण नवकार ॥ ४ ॥

( छंद हाटकी. )

नवकार थकी-श्रीपाळ नरेसर, पाम्यो राज्य प्रसिद्ध ॥  
 श्मशान विषे शिव नाम कुमरनो, सोचन पुरिसो सिद्ध ॥ नव  
 लाख जपंतां नरक निवारे, पामे भवनो पार ॥ सो भवियां  
 भक्ते; चोखे चित्त, नित जपिए नवकार ॥ १ ॥ बांधी बड-  
 शाखा शिके वेसी, हेठळ कुंड हुताश ॥ तस्करने मंत्र, समर्प्यो  
 श्रावके, ऊड्यो-ते आकाश ॥ विधि रीत जप्यो विपधर,  
 विष टाळे-टाळे अमृत-धार ॥ सो० ॥ २ ॥ धीजोरा कारण  
 राय महावळ, व्यंतर दुष्ट विरोध ॥ जेणे नवकारे हत्या टाळी,  
 पाम्यां यक्ष प्रतिबोध नव लाख जपंतां थाये जिनवर, इसो  
 छे अधिकार ॥ सो० ॥ ३ ॥ पल्लीपति शीख्यो मुनिवर पासे,  
 महामंत्र मन शुद्ध ॥ परभव ते राजसिंह पृथ्वीपति, पाम्यो  
 परीगळ ऋद्ध ॥ ए मंत्र थकी अमरापुर प्होंच्यो, चारुदत्त  
 सुषिचार ॥ सो० ॥ ४ ॥ संन्यासी काशी तप साधंतो, पंचा-  
 ग्नि परजाळ ॥ दीठो श्री पास कुमारे पन्नग, अधवलतो ते  
 टाळ ॥ संभळाव्यो श्री नवकारस्त्रयं मुख, इंद्रभुवन अवतार  
 ॥ सो० ॥ ५ ॥ मन शुद्धे जपतां मयणासुंदरी, पामी प्रिय  
 संयोग ॥ इण ध्यानं कष्ट टळ्युं उंवरनुं. रक्तपित्तनो रोग ॥  
 निश्चेस्त्र जपतां नवनिधि थाये, धर्मतणो आधार ॥ सो० ॥ ६ ॥  
 घटमांही कृष्ण भुजगंम घाल्यो, घरणी करवा घात ॥ परमेष्टि  
 प्रभावे, हार फूलतो वसुधामांही विख्यात ॥ कवळावतीये  
 पिंगळ कीधे, पापतणो परिहार ॥ सो० ॥ ७ ॥ गयणांगण  
 जाती राखी ग्रहीने, पाडी बाण-प्रहार ॥ पद पंच सुगंता  
 पांडुपति घर, ते थई कुंता नार ॥ ए मंत्र अमुलक महिमा मं-

ए ॥ कलक उतारवा सतीय सुभद्रा, यथा धार उभाठीयु ॥  
 ॥ १२ ॥ हस्तीनागपुरे पांडु रायनी, कृता नामे कामिनी ए ॥  
 पांडव माता दसे दशरानी, बेहन पातिव्रता पद्मिनी ए ॥ १३ ॥  
 श्रीळ्वती नामे श्रीळ्वरुष भारिणी, त्रिभिधे रहने वर्दीय ए ॥  
 नाम अपता पातिक जाए ॥ दर्शणे दुरित निकडी ए ॥ १४ ॥  
 निपचा नगरी नळ नरीदनी दमपती तसु गेहनी ए ॥  
 सकट पठतां श्रीमळ्व रासुं त्रिभुवन कीर्ति बेहनी ए ॥ १५ ॥  
 अनग अजीवा अग जन पूजीता, पुफुसुलाने प्रमानती ए ॥  
 विश्व विख्याता कर्मित दाता, सौळ्मी रुती पचावती ए ॥  
 १६ ॥ धीरे मास्त्री शास्त्रे साखी; उदय रतन मास्त्रे मुदा ए ॥  
 पोठगतां जे नर मणसे, ते लेखे मुख सपदा ए ॥ १७ ॥

## ८७ श्री नवकारका छंद प्रारंभ

( दादा )

यद्विष पुर विविध पर, भी विनशासन सार ॥ निध भी  
 नवकार नित सपतां जय अयकार ॥ १ ॥ अठसठ अक्षर  
 अधिक करु नवपद नवे निधान ॥ धीतराग स्व मुख बट,  
 पत्रपगमति प्रधान ॥ २ ॥ एकत्र अधर एकत्र चित्त, समर्था  
 मपति धाप ॥ सधिन सागर सावनी, पातिक दूर पळ्यय ॥ ३ ॥  
 मकरु मंत्र शिर मुकूट माणि, मद्गुरु माणित सार ॥ सा  
 मविषां मन शुद्धि तित तपिण नवकार ॥ ४ ॥

## ८८ श्री शांतिनाथका छंद.

नगर हथिणापुर अति रे भलो, जिहां जन्म्या तीर्थकर  
 त्रिभुंन तिलो ॥ राय परुष्यो जैन खरो, श्री शांति जिनेश्वर  
 शांति करो ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्ध थकीरे चवी, तव  
 देश नगरमां शांति हवी ॥ शांतिजी नाम दियो सखरो  
 श्री शांति० ॥ २ ॥ विश्वसेन पिता अचिरा रे माया, जेणे  
 चौदे सुपन महोटां रे पाया ॥ जनम्या, तीर्थकर अमिय झरो,  
 श्री शांति ॥ ३ ॥ छप्पन कुमारिका उल्लास घणो, जेणे  
 जनम महोच्छ्रव कर्यो कुमर तणो ॥ चौसठ इंद्र आवी कळश  
 भरो, श्री शांति० ॥ ४ ॥ फेर भणावी बहोतेर कळा, जेणे सहस्र  
 चौसठ परणी महिला ॥ छेखंड साध्या एणीय परो, श्री शां-  
 ति० ॥ ५ ॥ सहस्र पंचोतेर वरस कह्या, चक्रवर्तिपणे घर  
 वास रह्या ॥ पळें मिटाई दियो सगळो झगडो, श्री शांति०  
 ॥ ६ ॥ एक सहस्र पुरुष साथे शिक्षा, श्रीजिनवरजीए, लीधी  
 दीक्षा ॥ पळे सुर नर आवी पाय पडो, श्री शांति० ॥ ७ ॥  
 एक मास लगे छदमस्थ रह्या, शुदि पोष नवमी दिन केवळ  
 लह्या ॥ भरणी नक्षत्र प्रभात खरो, श्री शांति० ॥ ८ ॥  
 प्रभुए मोहजाळ सवि कापी, चतुर्विध संघ तीरथ थापी ॥  
 चौथो दूसम सूसम आरो, श्री शांति० ॥ ९ ॥ वासठ सहस-  
 मुनिराज थया, वळी सहस्र नव्यासी हुई आजियां ॥ प्रभु ता  
 रोने वळी आप तरो, श्री शांति० ॥ १० ॥ दोय लाख नेवु  
 सहस्र श्रावक गुणी, त्रण लाख त्याशी सहस्र श्राविका सुणी ॥  
 और चतुर्विध संघ खरो, श्री शांति० ॥ ११ ॥ चार हजार  
 उहिनाणि जति, वळी त्रणशे हुवा त्रिपुलमति ॥ नेवु गणधरनो

दिर, मषदुःख मंत्रनहार ॥सो०॥ ८ ॥ कषळ न सबळ कहर  
 काड्या, शुकट पांचसौ मान ॥ दीधे नवकार गया दबताक  
 विसस अमर विमान ॥ ए मत्र धर्मी संपति वसुधा तळे, वि  
 लसे अंन विहार ॥ सो० ॥ ९ ॥ आगे चौबीशी हुई अनंती  
 होसे धार अनंत ॥ नवकार तयी कोई आदि न जावे इम  
 माखे अरिहंत ॥ पूरव दिशि चारे आदि प्रपये, समर्था संपति  
 सार ॥ सो० ॥ १ ॥ परमेष्टि सुर पद ते पक्ष पामं, जं कृत्  
 कर्म कठोर ॥ पुंढरगिरि ऊपर प्रतक्ष पेस्प्यो, माखधर न एक  
 मोर ॥ सडगुरुने सन्मुख विधि समरता, सफळजनम संसार ॥  
 सा० ॥ ११ ॥ शूळीकारोपण तस्कर क्रीधो, लोहसरा पर  
 सिद्ध ॥ तिहां शेठे नवकार मुखाध्या, पाम्यो अमरनी अद्द ॥  
 शेठेन धर आधी विघ्न निवार्या, सुर करी मनोहार ॥ सो० ॥  
 ॥ १२ ॥ पंच परमेष्टि ज्ञानत्र पक्ष, पक्ष दान चारित्र ॥ पक्ष  
 सङ्गसाय महाव्रत पक्ष, पंच सुमति समकित ॥ पक्ष प्रमाद  
 विषय तबो पक्ष, पाळो पंचाधार ॥ सा० ॥ १३ ॥

### ( कळशा छप्पय )

नित अपिण नवकार, सार सपति सुखदायक ॥ शुद्ध मंत्र  
 ण शाश्वतो, इम अये श्री अगनायक ॥ श्री अरिहंत सुखिद,  
 शुद्ध आधाय मर्षात्रे ॥ श्री उवग्मम सुसाधु, पक्ष परमेष्टि  
 पुष्पीजे ॥ नवकार सार ससार अे, कृशळसाम बाधक करे ॥  
 एक विच आराधता विविध अ्द्वि बलित ठे ॥ १४ ॥

## ८८ श्री शांतिनाथका छंद.

नगर हथिणापुर अति रे भलो, जिहां जन्म्या तिर्यंकर  
 त्रिभुन तिलो ॥ राय परुप्यो जैन खरो, श्री शांति जिनेश्वर  
 शांति करो ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्ध थकीरे चवी, तव  
 देश नगरमां शांति हवी ॥ शांतिजी नाम दियो सखरो  
 श्री शांति० ॥ २ ॥ विश्वसेन पिता अचिरा रे माया, जेणे  
 चौदे सुपन महोटां रे पाया ॥ जनम्या, तिर्यंकर अमिय झरो,  
 श्री शांति ॥ ३ ॥ छप्पन कुमारिका उल्लास घणो, जेणे  
 जनम महोच्छव कयो कुमर तणो ॥ चोसठ इंद्र आवी कळश  
 भरो, श्री शांति० ॥ ४ ॥ फेर भणावी व्होतेर कळा, जेणे सहस्र  
 चौसठ परणी महिला ॥ छेखंड साध्या एणीय परो, श्री शां-  
 ति० ॥ ५ ॥ सहस्र पंचोतेर वरस कह्या, चक्रवर्तिपणे घर  
 वास रह्या ॥ पळे मिटाई दियो सगळो झगडो, श्री शांति०  
 ॥ ६ ॥ एक सहस्र पुरुष साथे शिक्षा, श्रीजिनवरजीए लीधी  
 दीक्षा ॥ पळे सुर नर आवी पाय पडो, श्री शांति० ॥ ७ ॥  
 एक मास लगे छदमस्थ रह्या, शुदि पोप नवमी दिन केवळ  
 लह्या ॥ भरणी नक्षत्र प्रभात खरो, श्री शांति० ॥ ८ ॥  
 प्रभुए मोहजाळ सवि कापी, चतुर्विध संघ तीरथ थापी ॥  
 चौथो दूसम सूसम आरो, श्री शांति० ॥ ९ ॥ चासठ सहस-  
 मुनिराज थया, वळी सहस्र नव्यासी हुई आजियां ॥ प्रभु ता  
 रोने वळी आप तरो, श्री शांति० ॥ १० ॥ दोय लाख नेवु  
 सहस्र थावक गुणी, त्रण लाख त्याशी सहस्र श्राविका सुणी ॥  
 और चतुर्विध संघ खरो, श्री शांति० ॥ ११ ॥ चार हजार  
 उहिनाणि जति, वळी त्रणशे हुवा त्रिपुलमति ॥ नेवु गणधरनो

पाप हरो भी शांति० ॥ १२ ॥ चार हजार पुण्यसौ रे कसा  
 मुनि केवल सहीने मुगति गया ॥ छ हजार मुनिवैक्रम हरो,  
 भी शांति० ॥ १३ ॥ चोलीसौ वादी मारी, वदी आठसौ  
 चौद पूरवपारी ॥ आठ करमब जाई लडो, भी शांति० ॥  
 १४ ॥ नवपदवी मोटी रे कही, बेणै एकग मवमां छ  
 लही ॥ ऐमो भरियो पुण्य वडो, भी शांति० ॥ १५ ॥ पा  
 या लाख कुमर साधपणे वळि अंधलाख वरस रखा रान्यपणे ॥  
 एक लाख वरपनो सर्व घडो, भी शांति० ॥ १६ ॥ चाळीस  
 धनुष ऊंची रे देही, वळि हेमधरगी उपमारे कही ॥ इठ  
 दिख दरिवाय ठरो, भी शांति० ॥ १७ ॥ जो नाम धरावो  
 गावक भति, तो अनाचार सेवो रे मवी ॥ परमव सेवी  
 काई डरा, भी शांति० ॥ १८ ॥ त्रिभिध त्रिभिधे जीव मतिरे  
 हया, ए उपदेश छे जिनराज तयो ॥ मार्ग वसाभ्यो छद  
 खरा, भी शांति० ॥ १९ ॥ आ जीव रायते रंक ययो वळि  
 नरक निगोदमां बहुरे रखा ॥ रडवडियो निम गेद दडो, भी  
 शांति० ॥ २० ॥ चार गतिनां र दु ख कथां, भीवे अनती  
 अनति वार लमां ॥ पधी रखा निम तल घडा, भी शांति० ॥  
 २१ ॥ महा सहित तुम तप तपो, मय्य जीवो सुदु तुम  
 जाय जया ॥ मार्ग मळया छे निपट खरो भी शांति० ॥  
 २२ ॥ संभारा एक मास तया, सम्पेवशिखर सिद्ध ठाम  
 मया ॥ नवमां मुनिसुं मुगति यरा, भी शांति० ॥ २३ ॥  
 मृग लछन सेती ध्यान रखा, भी शांति विनधर मुगति यया ॥  
 पठ पठ दियो मया जन्म मरा; भी शांति० ॥ २४ ॥ तुम  
 नाम लिया सवि काज मरे, तुम नाम मुगति मरेल मर ॥

तुम नामे शुभ भंडार भरो, श्री शांति० ॥ २६ ॥ ऋषि  
जयमलजीए एह विनति कही, प्रभु तोरा गुणनो पार नहीं ॥  
मुक्त भव भवना दुःख दूर हरो, श्री शांति० ॥ २७ ॥ इति ॥

## ८९ श्री शांतिनाथ स्वामीका छंद.

शांतिनाथजीको कीजे जाप, क्रोड भवानां वाटे पाप ॥ शां-  
तिजिनेश्वर म्होटा देव, सुरनर सारे जेहनी सेव ॥ १ ॥ दुःख-  
दारिद्र जावे दूर सुख संपति पामे भरपूर ॥ ठग फांसींगर जावे  
भाग, बळती होवे शीतळ आग ॥ २ ॥ राजलोकमां कीर्ति  
घणी, शांति जिनेश्वर माथे धणी ॥ जो ध्यावे प्रभुजीनुं ध्यान,  
राजा देव अधिको मान ॥ ३ ॥ गडगुंबड पीडा मिट जाय,  
देखी दुश्मन लागे पाय ॥ सघळो भाग्यो मननो भर्म, पाम्या  
समाकित काट्या कर्म ॥ ४ ॥ सुणो प्रभु मोरी अरदास, हुं  
सेवक तुमे पूरो आश ॥ मुक्तमन चिंतित कारज करो, चिंता  
आरति विघ्न ज हरो ॥ ५ ॥ मेटो म्हारा आळ, जंजाळ, प्रभु  
मुझने तूं नयण निहांळ ॥ आपनी कीर्ति ठामो ठाम, प्रभु  
सुधारो म्हारा काम ॥ ६ ॥ जो नर नित्य प्रभुजीने रटे; मोत्या विद  
फूला कटे ॥ चेप लावण दोनों झड जाय, विण औपध कट  
जावे हांय ॥ ७ ॥ शांतिनाथना नामथी आंख्या निर्मल थाय,  
धुन्ध पटळ जाला कट जाय ॥ कमळो पिल्यो झड झड पडे, शांति  
जिनेश्वर शाता करे ॥ ८ ॥ गरमी व्याधि मिटावे रोग, सयण  
मित्रनो मिळे संयोग ॥ एहवा देव न दीसे और, नहीं चाले दुश्मन  
को जोर ॥ ९ ॥ छंटारा स्रव जावे नास, दुर्जन मिट होवे



निजदास ॥ शांतिनाथनी कीर्ति बखी, कृपा करो तुमे प्रियजन  
 बखी ॥ १० ॥ अरज करूछ जोडी हाथ आपछ नहीं बाँ  
 काने। वात ॥ देखी रक्षा झपोते आप, काटो प्रभुजी म्हारा  
 पाप ॥ ११ ॥ मुस मन स्थिति करिये काज राखो प्रभुजी  
 म्हारी लाज ॥ तुम सम जग माँही नहीं कोय, तुम मजबानी  
 शाता होय ॥ १२ ॥ तुम पास चले नहीं मरकी रोग, ता  
 तेजरो नाँखो सोइ ॥ मरी भिटारि कोधी प्रभु शीत तुम गु  
 णनो नहीं आब अंत ॥ १३ ॥ तुमने समरे साधु सती तुमने  
 समरे जोगी जती ॥ काटा संकट राखो मान, अविषय पदना  
 भापा स्थान ॥ १४ ॥ संवत अठार चौराणु जाय, देश मा  
 ऊवो अधिक बखान ॥ शहर जायरा चैतर मास, हु प्रभु तुम  
 चरणाँकोदास ॥ १५ ॥ श्रुपि रघुनाथजी कीचो छद, काटा  
 प्रभुजी म्हारा फद ॥ हु जोऊ प्रभुजीनी वाट, मुस आरति  
 चिता सगलीकाट ॥ १६ ॥

## १० वही साधु वदना

नम्र अनत चौबीसी, श्रुपमादिक महावीर; आय क्षेत्रमा  
 गली घर्मनीसीर ॥ १ ॥ महा अतुलबलीनर, शूरवार ने  
 गोर तीर्थ प्रवचानी पदोत्या मजबल सीर ॥ २ ॥ श्रीमंथर  
 अमुख जषय सीधकर धीस; छे बहीडीपमा, जयवता -अग  
 रस ॥ ३ ॥ एक सौने सिधर, उत्कृष्टा पदे जगदीश; धन  
 काटाप्रभुजी, जेहन नमाऊँ धीस ॥ ४ ॥ कवली होय कोडी

उत्कृष्टा नव क्रोड मुनि दोगसहस्र कोडी, उत्कृष्टा नव सहस्र  
 क्रोड ॥ ५ ॥ विचरे विदेहे, महोटा तपस्वी घोर, भावे करी  
 वंदू, टाले भवनी खोड ॥ ६ ॥ चोवीसौ जिननना सघळा ए  
 गणधार; चोढेसौने वावन, ते प्रणमूं सुखकार ॥ ७ ॥ जिन  
 शाशन नायक, धन्य श्री वीर जिगंद; गौतमादिक गणधर  
 वर्त्ताव्यो आण्ट ॥ ८ ॥ श्री ऋपभंदवना भरतादिक सौ पूत;  
 जिनमत दीपावी, सघळा मोक्ष पहुंत ॥ १० ॥ श्री भरतेश्वरना,  
 हुवा पाटाधर आठ, आदित्य जगादिक, पहोंत्या शिवपुर वाट ॥  
 ॥ ११ ॥ श्री जिन अतरना, हुवा पाट असंख्य; मुनि मुक्ति  
 पहोंत्या, टाली कर्मनो वक ॥ १२ ॥ धन्य कपिल मुनिवर,  
 नीम नमूं अणगार; जेणे ततक्षण त्याग्यो, सहस्र रमणी परि  
 वार ॥ १३ ॥ मुनिवर हरकेशीचित मुनीश्वर सार, शुद्ध सयम  
 पाली, पाम्या भवनो पार ॥ १४ ॥ वली इखुकार राजा, घर  
 कमळावती नार; भगु ने जसा तहनां दोग कुमार ॥ १५ ॥  
 छहां छति रिद्धि छांडीने, लीधो संयम भार; इम अल्पकालमां  
 पाम्या मोक्षद्वार ॥ १६ ॥ वली संजती राजा, हिरण आहिडे  
 जाय; मुनिवर गद भाली, आण्यो मारग ठाय ॥ १७ ॥ चा-  
 रित्र लेईने, भेट्या गुरुना पाय; धत्री राज ऋपीश्वर; चर्चा  
 करी चित्त लाय ॥ १८ ॥ वळी दशे चक्रवर्ति, राज्य रमणी  
 ऋद्धि छोड; दशे मुक्ति पहात्या, कुलने सोभाचहोड ॥ १९ ॥  
 इण अवसर्पिणीमां, आठ राम गया मोक्ष बलभद्र मुनीश्वर,  
 गया, पंचमें देवलोक ॥ २० ॥ दशार्णभद्र राजा, वीर-वांधा  
 धरी मान; पळे इंद्र हठायो, दियो छकाय अभेदान ॥ २१ ॥  
 करकंडु प्रमुख, चारे प्रत्येक बोध, मुनि मुक्ति पहोंत्या, जत्या

निजदाम ॥ शांतिनाथनी कीर्ति घणी, कृपा करो तुम त्रिभुवन  
 वशी ॥ १० ॥ अरख करूँ जोही हाथ आपस नहीं हारि  
 कर्नि वात ॥ देखी रक्षा स्र, पासे आप, काट्य प्रभुजी म्हारा  
 पाप ॥ ११ ॥ मुख मन चींति करिये काज राखा प्रभुजी  
 म्हारी लाव ॥ तुम मम जग माही नहीं कोय, तुम मजवाबी  
 शाता होय ॥ १२ ॥ तुम पास चले नहीं मरकी राग, ठार  
 तजगं नाखा वाङ् ॥ मरी भिटारि कोधी प्रभु झंठ तुम गु  
 णना नहीं भाष अंत ॥ १३ ॥ तुमने समरे साधु सती तुमने  
 समर बोगी जती ॥ काटो संकट राखो मान, अविषज पदनो  
 आपो म्यान ॥ १४ ॥ सवत अठारे चोरारु जाय, देत्र मा  
 ऊवो अधिक बखाण ॥ शहर जावरा चैउर भास, हुं प्रभु तुम  
 चरणांकादास ॥ १५ ॥ अपि रघुनाथजी कीषो छद, काटो  
 प्रभुजी म्हारा पंद ॥ हु जोऊ प्रभुजीनी वाट, मुख आरि  
 चिता सगलीकाट ॥ १६ ॥

## १० वडी माधु वदना

नम्र पनत चांभीमी, अथमादिक महावीर; आर्य  
 गाली घर्षनीसीर ॥ १ ॥ महा अतुलपत्नीनर, अ  
 थार तीर्थ प्रवर्षावी पहोत्मा भवजल तीर ॥ २ ॥  
 पुर अथन्य तीर्थकर पाम; छे अर्धाद्वीपमा, जपर्य  
 तन ॥ ३ ॥ एक सौन भिचर, उन्कृष्टा पद जगदी  
 दाटाप्रभुजी, अहन नमाऊं शीश ॥ ४ ॥ कपली द

बीजां पणं मुनिवर, भगवतीमां अधिकार ॥ ३८ ॥ श्रेणिकना  
 वेटा' मोटा मुनिर मेघ; तजी आठ अंतेउरी, आण्यो मन  
 संवेग ॥ ३९ ॥ वरिपें व्रत लेईने, बांधी तपनी तेग; गया  
 विजय विमाने, चवि लेसे शिव वेग ॥ ४० ॥ धन्य थावर्चा  
 पुत्र, तजी वत्तीसे नार; तेनी साथे निकल्या, पुरुष एक हजार ॥  
 ॥ ४१ ॥ सुकदेव संन्यासी, एक सहस्र शिष्य लार; पंचसयस्रं  
 सेलक, लीधो संयमभार ॥ ४२ ॥ सर्व सहस्र अढाई, घणा  
 जीवोंने तार; पुंडरगिरी ऊपर, कियो पादोपगमन संथार ॥ ४३ ॥  
 आरार्थिक हुईने, कीधो खेवो पार; हुवा मोटा मुनिवर, नाम  
 लिया निस्तार ॥ ४४ ॥ धन्य जिनपाल मुनिवर, दोय धनावा  
 साध; गया प्रथम देवलोके, मोक्ष जासे आराध ॥ ४५ ॥ श्री  
 मल्लिनाथना छे मित्त, महाबल प्रमुख मुनिराय; सर्वे मुक्ति सि-  
 द्धाव्या मोटी पदवी पाय ॥ ४६ ॥ बलि जितशत्रुराजा, सुबुद्धि  
 नामें प्रधान, पोते चारित्र लेईने, पाम्या मोक्ष निधान ॥ ४७ ॥  
 धन्य तेतली मुनिवर, दियो छकाय अभेदान; पोटिला प्रतिबो-  
 ध्या, पाम्या केवलज्ञान ॥ ४८ ॥ धन्य पांचो पांडव, तजी  
 द्रौपदी नार, स्थिरवरनी पासे, लीधो संयम भार ॥ ४९ ॥  
 श्री नेमिबंदननो, एहवो अभीग्रह कीध; मास मासखमण तप,  
 शत्रुंजय जई सिद्ध ॥ ५० ॥ धर्मघोष तणा शिष्य, धर्मरुचि  
 अणगार; किडियोनी करुणा, आणी दया अपार ॥ ५१ ॥  
 कडवा तुंबानो कीधो सघळो आहार; सर्वार्थसिद्ध पहोंत्या,  
 चवि लेसे भवपार ॥ ५२ ॥ बली पुंडरिक राजा, कुंडरिक  
 डिगियो जाण; पोते चारित्र लेईने, न घाली धर्ममा हाण ॥  
 ॥ ५३ ॥ सर्वार्थसिद्ध पहोंत्या, चवि लेसे निर्वाण; श्री ज्ञाता-

कर्म महा जोष ॥ २२ ॥ घन्य महोटा मुनिवर, मृगापुत्र उ  
 गाण; मुनिवर अनापी, वीत्या रागने रीत ॥ २३ ॥ बली  
 समुद्रपाल मुनि, राजिमति रहनेम; केशीने गौतम, पाम्या  
 शिवपुर शैम ॥ २४ ॥ घन्य विजयघोष मुनि, जमघाप बली  
 जाण; श्री गर्गाचार्य, पहोत्या छ निर्वाण ॥ २५ ॥ श्री उव  
 राध्यमनमां, जिनवरे कर्मा वस्त्राण; शुद्ध मनसे ध्यावा, मनसे  
 धीरज आण ॥ २६ ॥ बली खदक सन्यासी, गम्यो गांतम  
 स्नह; महाधीर समीप पष महाव्रत लेह ॥ २७ ॥ तप कठिब  
 फरीने, शोसी अपणी दह; गया अध्युत देवलोके, शवी ठस  
 मव छेह ॥ २८ ॥ बली ऋषमदघ मुनि, शेठ सुदर्शन सार;  
 शिवराज श्रुपाश्वर, घन्य गांगय अखगार ॥ २९ ॥ शुद्ध  
 संयम पाली, पाम्या केवल सार; ए चारे मुनिवर, पहोत्या  
 मोघ मझार ॥ ३० ॥ भगवतनी मासा, घन्य घन्य सती  
 देवानठा; बली सती अयेति, छेड दिया घरफदा ॥ ३१ ॥  
 सती मुक्ति पहोत्यां, बली ते धीरनी नंद; महा सती सुदर्शना  
 पणी सतिपोना वृंद ॥ ३२ ॥ बली कार्तिक शेठे, पडिमा  
 बही शूरवीर; अम्या मोरा उपर, सापस बळ्ठी खीर ॥ ३३ ॥  
 पछे चारिब लीघो, मथी एक सहस्र आठ धीर; मरी दुबा  
 शक्रेद्र, शपी लम मव तीर ॥ ३४ ॥ बली राय उदायन,  
 दियो माणेजने राव; पठी चारिब लईने, साया आठम करज ॥  
 ॥ ३५ ॥ गंगदत्तमुनि आर्याद तरणतारख जहाज; कुशल  
 मुनि राह दिया पणान माज ॥ ३६ ॥ घन्य मुनक्षत्र मुनि  
 पर, मवानुभूति अणगार; आराधिव हईने, गया दयलाक  
 मझार ॥ ३७ ॥ श्रुतिमुक्ति जाम, बली सिद्ध मनीश्वर सार;

बीजां पण मुनिवर, भगवतीमां अधिकार ॥ ३८ ॥ श्रेणिकना  
 चेटा मोटा मुनिर मेघ; तर्जी आठ अंतेउरी, आण्यो मन  
 संवेग ॥ ३९ ॥ वरिपें व्रत लेईने, वोंधी तपनी तेग; गया  
 विजय विमाने, चवि लेसे शिव वेग ॥ ४० ॥ धन्य थावर्चा  
 पुत्र, तर्जी वचीसे नार; तेनी साथे निकल्या, पुरुष एक हजार ॥  
 ॥ ४१ ॥ सुकदेव संन्यासी, एक सहस्र शिष्य लार; पंचसयसं  
 सेलक, लीधो संयमभार ॥ ४२ ॥ सर्व सहस्र अर्ढाई, घणा  
 जीवोंने तार; पुंडरगिरी ऊपर, कियो पादोपगमन संथार ॥ ४३ ॥  
 आराधिक हुईने, कीधो खेवो पार; हुवा मोटा मुनिवर, नाम  
 लिया निस्तार ॥ ४४ ॥ धन्य जिनपाल मुनिवर, दौंय धनावा  
 साध; गया प्रथम देवलोके, मोक्ष जासे आराध ॥ ४५ ॥ श्री  
 मल्लिनाथना छे मित्त, महाबल प्रष्टुखं मुनिराय; सर्वे मुक्ति सि-  
 द्धाव्या मोटी पदवी पाय ॥ ४६ ॥ बलि जितशत्रुराजा, सुबुद्धि  
 नामें प्रधान, पोते चारित्र लेईने, पाम्या मोक्ष निधान ॥ ४७ ॥  
 धन्य तेतली मुनिवर, दियो छकाय अभेदान; पोटिला प्रतिबो-  
 ध्या, पाम्या केवलज्ञान ॥ ४८ ॥ धन्य पांचो पांडव, तर्जी  
 द्रौपदी नार, स्थिरवरनी पासे, लीधो संयम भार ॥ ४९ ॥  
 श्री नेमिवंदननो, एहवो अभीग्रह कीध; मास मासखमण तप,  
 शशुंजय जई सिद्ध ॥ ५० ॥ धर्मघोष तणा शिष्य, धर्मरुचि  
 अणगार; किडियोनी करुणा, आणी दया अपार ॥ ५१ ॥  
 कडवा तुंवानो कीधो सघळो आहार; सर्वार्थसिद्ध पहोंत्या,  
 चवि लेसे भवपार ॥ ५२ ॥ वली पुंडरिंक राजा, कुंडरिंक  
 डिगीयो जाण; पोते चारित्र लेईने, न घाली धर्ममा हाण ॥  
 ॥ ५३ ॥ सर्वार्थसिद्ध पहोंत्या, चवि लेसे निर्वाण; श्री ज्ञाता-

सप्रमां, जिनवर कन्मा वस्त्राण ॥ ५४ ॥ गौतमादिक कुमर,  
 सगा अठारे आत; मधं अघक विष्णु सुत, भारणी ज्वारी  
 मात ॥ ५५ ॥ तजी आठ अठउरी, काटी दाधानी बात; पा  
 रिख लेईने, कीषा मुक्तिनो साय ॥ ५६ ॥ श्री अनेक सेनाद  
 क, छहो सहोदर माय; वसुदेवना नंदन, देवकी ज्वारी माव  
 ॥ ५७ ॥ महिलपुर नगरी, नाग गाहावई जाण; मुलसा पर  
 नधिया, सांमली नंमिनी पाय ॥ ५८ ॥ तजी पत्रीस बत्रीस  
 प्रीतउरा, निकलिया छिटकाय, नल कुबेर समाखा, भेटया आ  
 नेमिना पाय ॥ ५९ ॥ करी छठ छठ पारणां, मनमें बैराम  
 लाय; एक मास मयार मुक्ति बिराज्या जाय ॥ ६० ॥ बली  
 ठारण मारण, सुमुख दुमुख मुनिराय; बली कुमर अनाघट,  
 गया मुक्तिगढ़ मांय ॥ ६१ ॥ धन्य वसुदेवना नंदन, धन्य  
 धन्य गजसुकुमाल; रूप अति सुदर, कक्षाबत पय बाल ॥ ६२  
 श्री नेमि समीप, छोब्यो मोह बजाल; मिथुनी पडिया गया  
 मछाख महाफाल ॥ ६३ ॥ देखी सामिल कोप्या, मस्तक  
 पांघी पाल; खेरना खीरा, शिर ठधिया असराळ ॥ ६४ ॥  
 मुनि नवर न खंडी, भेटो मननी झाल ॥ परपिह सहीन, मु  
 क्ति गया वतकाल ॥ ६५ ॥ धन्य आली मयाठी उबबाला  
 दिक साभ; सांभनें प्रद्युमन, अनिठ्ठ साधु भगाय ॥ ६६ ॥  
 बली सचनेमि दहनेमि, करवी कीषी बाद; दशे मुनि जगत  
 पडोत्पा, जिनवर बचन आराय ॥ ६७ ॥ धन्य अर्जुनमाती,  
 कर्षो कदाग्रह दूर; बीरपे वत सईने, सत्यवादी दुबा शूर ॥  
 ॥ ६८ ॥ करी छठ छठ पारखा; धमा करी मरपूर, छे मानां  
 मांही, कम किया चकचूर ॥ ६९ ॥ कुमर अइसुत, दंठा

गौतम स्वाम; सुणी वीरनी वाणी, कीर्धो उत्तम काम ॥७०॥  
 चारित्र लेईने, पहोंत्या शिवपुर ठाम, धर आदि मकाई, अंत  
 अलक्ष मुनि नाम ॥ ७१ ॥ बळी कृष्णरायनी, अग्रमहिषी  
 आठ; पुत्र बहु दोग, संच्या पुण्यना ठाठ ॥ ७२ ॥ यादवकुल  
 सतियां टाळी दुःख उच्चाट, पहोंत्या शिवपुरमें, ए छे सूत्रनो  
 पाठ ॥ ७३ ॥ श्रेणिकनी राणी कालियादिक दश जाण,  
 दशे पुत्र वियोगे, सांभळी वीरनी वाण ॥ ७४ ॥ चंदनवालापे  
 संजम लेई हुवा जाण; तप करी देह झोंसी, पहोंत्या छे  
 निर्वाण ॥ ७५ ॥ नंदादिक तेरे, श्रेणिक नृपनी नार; सघळी  
 चंदनवालापे, लीधो संजम भार ॥ ७६ ॥ एक मास संथारे,  
 पहोंत्या मुक्ति मझार; ए नेत्रु जणानो, अंतगडमां अधिकार  
 ॥ ७७ ॥ श्रेणिकना वेटा जालियादिक तेवीस; वीरपे व्रत  
 लेईने, पाल्यो विश्वावीस ॥ ७८ ॥ तप कठिन करीने, पूरी  
 मन जगीश, देवलोके पहोंत्या, मोक्ष जासे तज रीस ॥७९॥  
 काकंदिनो धन्नो, तजी वलीसे नार; महावीर समीपे, लीधो  
 संजम भार ॥ ८० ॥ करी छठ छठ पारणां, आयंत्रिल उछित  
 अहार; श्री वीरे वखाण्या, धन्य धन्नो अणगार ॥ ८१ ॥  
 एक मास संथारे; सर्वार्थासिद्ध पहोंत; महाविदेह क्षेत्रमां करशो  
 भवनो अंत ॥ ८२ ॥ धन्नानी रीते, हुवा नवेही संत; श्री अनु-  
 चरोववाइमां, भांखी गया भगवंत ॥ ८३ ॥ सुबाहु प्रमुख  
 पांच पांचसौ नार; तजी वीरपे लीध्यां, पंच महाव्रत सार ॥  
 ॥ ८४ ॥ चारित्र लेईने, पाल्यो निरतिचार, देवलोके पहोंत्या-  
 सुखविपाके अधिकार ॥ ८५ ॥ श्रेणिकना पौत्रा, पौमादिक  
 हुवा दश, वीरपे व्रत लेईने, वाढयो देहनो कस ॥ ८६ ॥



समय आराधी, देवलोकमां जई वश, महाविदेह क्षेत्रमां, मो  
 क्ष जास लेई अश ॥ ८७ ॥ वलमत्रना नदन, निपघादिक हुषा  
 बार; तजी पचास पचास; अते उरी त्याय दियो संसार ॥ ८८ ॥  
 सुहु नेमि समीप, शार महाप्रत लीघा; स्वार्थसिद्धि पहोत्सा,  
 होते विदेह सिद्ध ॥ ८९ ॥ बभौ ने शालिमत्र मुनीशरोनी  
 वाड, नारीना बघन ततक्षय नास्यां तोड ॥ ९० ॥ परकुडुर  
 कपालो, बन कंभननी क्रोड, भास भास खमख तप, टाळस  
 मवनी खाड ॥ ९१ ॥ श्रीसुधर्मास्वामीना शिष्य, धन्य धन्य  
 जेवुस्थाम; तजी आठ अंतउरी मातापिता धन धाम ॥ ९२ ॥  
 प्रमाणादिक तारा, पहोत्या शिवपुर ठाम, सूत्र प्रवर्तनी, जग  
 मां राख्यु नाम ॥ ९३ ॥ धन्य डडष्य मुनिवर कुण्णरायना  
 नंद, शुद्ध अमिग्रह पाली टाली दिया मन फल ॥ ९४ ॥  
 वली खंभक अपिनी, देह उतारी खाल, परीपह सहाने, मब  
 फेरा दिया टाळ ॥ ९५ ॥ वली खंभक अपिना, हुषा पांषसां  
 शिष्य घाशीमां विन्या, मुक्ति गया तजी रीस ॥ ९६ ॥  
 मशुतिविद्वय शिष्य मद्रबाहु मुनिराय; चौंटे पूरवपारी,  
 चद्रगुप्त आणयो ठाय ॥ ९७ ॥ बळी आर्द्रकुमार मुनि स्पू  
 लीमद्र नेदिपण अराजिक अहमुषो मुनिशरोनी श्रेष्ठ ॥ ९८ ॥  
 धार्षाते जिनना मुनिवर, सम्प्या अठावीस साल; उपर सहस्र  
 अडतालीस, सूत्र परंपरा माख ॥ ९९ ॥ कोई उत्तम बांधो,  
 मूढ जयणा राख; उभाडे मुख सोन्यां पाप लाग इम भाख ॥  
 ॥ १०० ॥ धन्य मरुदेवी माता, ध्याया निर्मळ ध्यान; गज  
 हादे पाया निर्मळ केपलमान ॥ १०१ ॥ धन्य आदशरनी पुत्री  
 प्राप्ती सुंदरी होय, धारिख लेईन, मुक्ति गयां सिद्ध होय ॥ १०२ ॥

चौबीसे जिननी बडी शिष्यणी चौबीस; सती मुक्ति पहुँत्यां  
 पूरी मन जगीस ॥ १०३ ॥ चौबीसे जिननी, सर्व साधवी  
 सार, अडता नीस लाख ने आठसौ सित्तर हजार ॥ १०४ ॥  
 चेडानी पुत्री, राखी धर्मसुं श्रीत; राजेमति विजया, मृगावती  
 सुविनीत ॥ १०५ ॥ पद्मावती मयणरेहा, द्रोपदी दमयंती  
 सीत; इत्यादिक सतियां, गई जमारो जीत ॥ १०६ ॥ चो-  
 बीसे जिनना साधु साधवी सार; गथा मोक्ष देवलोके हृदय  
 राखो धार ॥ १०७ ॥ इण अढीद्वीपमां, घरडा तपस्वी बाल;  
 शुद्ध पंच महाव्रत धारी, नमो नमो त्रि काल ॥ १०८ ॥  
 ए जतियो सतियोनां, लीजे नित प्रति नामः शुद्धे मन ध्यावो,  
 एह तरणनां ठाम ॥ १०९ ॥ ए जतियो सतियांसुं, राखो  
 उज्वल भाव; एम कहे ऋषि जयमलजी, एह ज तरणनो दाव ॥  
 ॥ ११० ॥ संवत अठारेने, वरप सातो सिरदार; गढ़ जोलो-  
 रमां एह कखो अधिकार ॥ १११ ॥

## ११ भक्तामर स्तोत्र ।

—

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-मुद्योतकं ढलितपापतमोवि-  
 त्तानम् ॥ सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-बालंबनं भवजले  
 पततां जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-  
 दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः  
 स्तोष्ये किलाहमपितं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २ ॥ बुद्ध्या विनापि  
 त्रिबुधार्चितपादपीठ, स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् ॥

ध्वम आराधी, देवलोकवां जई वश, महाविदेह धर्ममा, मो  
 छ जासे लेह अश ॥ ८७ ॥ बलमद्रना नंदन, निपवादिह दुवा  
 बार; तजी पचास पचाम; अते उरी त्याच दियो संसार ॥ ८८ ॥  
 सहु नेमि समीपे, चार महाप्रत तीघा; स्वार्थसिद्धि पहात्या,  
 हासे विदेह सिद्ध ॥ ८९ ॥ घमो ने शालिमद्र मुनीश्वरानी  
 जाड, नारीना वधन ततक्षय नास्यां तोड ॥ ९० ॥ घरकुडुव  
 कषात्तो घन कषननी क्रोड, मास मास स्वमय तप, टाळस  
 मवनी खाड ॥ ९१ ॥ श्रीसुधर्मास्वामीना शिष्य, घन्य घन्य  
 अशुस्वाम; तजी आठ अंतउरी मातापिता घन घाम ॥ ९२ ॥  
 प्रभावादिह तारा, पहात्या शिवपुर ठाम, सूत्र प्रवर्तावी, जम  
 मां रास्युं नाम ॥ ९३ ॥ घन्य डडम मुनिवर कुम्भरायना  
 नंद, मुद्र अमिग्रह पाली टाली दियो मज फड ॥ ९४ ॥  
 वली खंचक अपिनी, देह उतारी खाल, परीपह सहीने, मज  
 फरा दिया टाळ ॥ ९५ ॥ वली खंचक अपिना, दुवा पांचसां  
 शिष्य घाखीमां पिण्या, मुक्ति गया तजी रीस ॥ ९६ ॥  
 संसृतिविजय शिष्य मद्रबाहु मुनिराय; चौदे पूरवधारी,  
 चद्रगुप्त आयया ठाय ॥ ९७ ॥ वळी आर्द्रकुमार मुनि स्थ  
 लीमद्र नदिपख अराजेक अइमुत्तो मुनिश्वरोनी भल ॥ ९८ ॥  
 घोषीसे जिनना मुनिवर, सख्या अठावीस स्यास; उपर. सहस्र  
 अडतालीस सूत्र परपरा मास ॥ ९९ ॥ कोई उचम वांचो,  
 मूढ अयणा रास; उघाढे मुख बोण्यां पाप लागे इम मांस ॥  
 ॥ १०० ॥ घन्य मस्तेधी माता, ध्यायो निर्मळ ध्यान; गज  
 हाद पापा निर्मळ केवलघान ॥ १०१ ॥ घन्य आदश्वरनी पुत्री  
 प्राप्ती मुंदरी दोय; चारिख लेहने मुक्ति गयां सिद्ध होया ॥ १०२ ॥

रग्नेत्रहारि, नि शेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् ॥ विंशं कलंक-  
 मलिनं क निशाकरस्य, यद्वासरे भवति पांडुपलाशकल्पम्  
 ॥ १३ ॥ संपूर्णमंडलशशांककलात्रलाप-शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं  
 तव लंघयन्ति ॥ ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं, कस्तान्निवा-  
 स्यति संचरतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिद-  
 शांगनाभिर्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ॥ कल्पांतका-  
 लमरुता चलिताचलेन, किं मंदराद्रिशिखरं चलितं कदाचित्  
 ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्तिरपवर्भिततैलपूरः, कृत्स्न जगत्त्रयमिदं  
 प्रकटीकरोषि ॥ गम्यो न जातु मरुता चलताचलानां, दीपोऽ-  
 परस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥ नास्तं कदाचिदुपया-  
 सिन राहुगम्यः, स्पष्टीकरोषि सहस्रा युगपज्जगन्ति ॥ नांभो-  
 धरोदरनिरुद्धमहाप्रभातः, सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्रलोके  
 ॥ १७ ॥ नित्योदयं दलितमोहमहांधकारं, गम्यंनराहुवदनस्य  
 न वारिदानाम् ॥ विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पमकांति, विद्यो-  
 तयज्जगदपूर्वशशांकविंशम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु शशिनाहि  
 विवस्वता वा. युष्मन्मुखेंदुदालितेषु तमस्सु नाथ ॥ निष्पन्नशा-  
 लिवनशालिनि जीवलोके, कार्यं कियञ्जलधरैर्जलभारनम्रैः  
 ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं, नैव तथा  
 हरिहरादेषु नाप्रकेषु ॥ तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,  
 नैव-तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरि-  
 हरादय एव दृष्टा, दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ॥ किंवीक्षि-  
 तेन भवता भुवि येन नान्यः, कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांत-  
 रेऽपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्, नान्या  
 सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ॥ सर्वा दिशो दधति भानु सहस्र

धाल विहाय जलसंस्थितमिदुर्बिष मन्व कश्चिदति अनः सहसा  
 ग्रहीतुम् ॥ ३ ॥ धर्तुं गुणान् गुणसमुद्र क्षशांकर्कातान् कल  
 क्षम सुगुरुप्रतिभोऽपिषुदया ॥ कल्यांतकालपवनोद्धतनक  
 चक्र को वा तरीतुमलमंषुनिधिं सुजाम्बाम् ॥ ४ ॥ साष्ट  
 तयापि तत्र मक्तिषधान्मुनीश, कर्तुं स्वयविगतशक्तिरपि प्रवृत्त ॥  
 प्रीत्यात्मधीर्बमदिचार्गसृगा मृगेद्रं, नाम्येति किं निखाक्षिशोः  
 परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥ अल्पभुत भुतवर्ता परिहासधाम, नञ्  
 क्तिरेव मुखरी कुरुते बन्धान्माम् ॥ यत्कोकिल किल मर्षा  
 मधुर विरौति तत्परुचाप्रकालिकानिर्करकडंतु ॥ ६ ॥ त्वस्स  
 सूत्रेण भवसंततिषभिषदं, पापं क्षयात्क्षयमुपैति शरीरभाषाम्  
 ॥ आर्कातलाकमलिनीलमशपमाष्टु घृयाशुमिभामिषावर्भम  
 कारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति नाय तव सस्तवन मेयेद मारभ्यते तनु  
 वियापि तत्र प्रमाणात् ॥ श्वेता हरिभ्यति सता नलिनदिलेपु,  
 मुक्ताफलधुतिमुपैति नन्दर्षिदुः ॥ ८ ॥ आस्तां तव स्ववन  
 मस्तसमस्तदोष, त्वत्सर्कषापि जगतां दुरितानि इति ॥ इ  
 महस्राकिरण कुरुत प्रभव, पद्माकरेषुजलक्षानि विक्राश्रभांभि  
 ॥ ९ ॥ नात्यवृष्टवं सुवनभूषणभूत नाव भूतैर्गुणैर्भुविमर्षत  
 ममिषुवत ॥ तुल्या मवति भवतो ननु तेन किं वा, भूत्या  
 भित्तं य इह नात्मसमं कराति ॥ १ ॥ इष्ट्वा भवतमनिमेप  
 विलोकनीयं, नान्यत्र तापमुपयाति अस्व षड्भु ॥ पीत्यापय  
 शक्तिरपुतिदुग्धासिंधो, धारं अल अलनिबराक्षितुं क इच्छेत्  
 ॥ ११ ॥ ये श्रोतरागरुधिभिः परमाशुभिस्त्वं, निर्मापितस्त्रि  
 मुबनैकऽलाममूत ॥ तावंत एष खलुतेऽप्यशवः पृथिव्यां,  
 यत्ते समानमपः नहि रूपमस्ति ॥ १२ ॥ बर्तकं क-ते सुरनरा

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः, पद्मानि तत्र विबुधाः परि-  
 कल्पयन्ति ॥३२॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूजिनेन्द्र, धर्मोपदेश-  
 विधौ न यथा परस्य ॥ यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतांधकारा,  
 तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ॥ ३३ ॥ श्रयोत्तन्मदा-  
 विलविलोलकपोलमूल-मत्तभ्रमद्भ्रमरनादिवृद्धकोपम् ॥ ऐरा-  
 वताभमिभंमुद्धतमापतंतं, दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रिता-  
 नाम् ॥ ३४ ॥ भिन्नेभकुंभगलदुज्ज्वलशोणिताक्त-मुक्ताफल-  
 प्रकरभूषितभूमिभाग ॥ वद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,  
 नाक्रामति क्रमयुगाचलसांश्रितं ते ॥ ३५ ॥ कल्पांतकालपवनो  
 द्धतवह्निकल्पं, दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्फुल्लिङ्गम् ॥ विश्वं  
 जिघत्सुमिव संमुखमापतंतं, त्वन्नाम कीर्तन जलं शमयत्यशेषम्  
 ॥ ३६ ॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकंठनालं, क्रोधोद्धतं फणिनमु-  
 त्फणमापतंतम् ॥ आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशंक-स्त्वन्नाम  
 नागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ३७ ॥ बलगत्तरंगगजगर्जितभी-  
 मनाद-मार्जा बलं बलवतामपि भूषतीनाम् ॥ उद्यद्दिवाकरमयू-  
 शिखापविद्धं, त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदाहृषति ॥ ३८ ॥  
 कुंताग्रभिरुगजशोणितवारिवाह-वेगावतारतरणातुरयोधभीमे ॥  
 युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा-स्त्वत्पादपंकजवनाश्रयिणो  
 लभन्ते ॥ ३९ ॥ अंभोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र, पाठीनपीठ-  
 भयदोल्बणवाडवाग्रौ ॥ रंगत्तरंगशिखरिथतयानपात्रा-स्त्रासं  
 विहाय भवत स्मरणाद् व्रजन्ति ॥ ४० ॥ उद्भूतभीषणजलो-  
 दरभारभ्रुगा, शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ॥ त्वत्पा-  
 दपंकजरजोऽमृतदग्धदेहा, मर्त्या भवन्ति रुकरध्वज तुल्यरूपाः  
 ॥ ४१ ॥ आपादकंठमुरुशृंखलबोष्टितांगा, गाढं बृहन्निगडको-

रश्मि, प्राच्येव दिग्जनयतिस्फुरदद्भुजालम् ॥ २२ ॥ त्वामाम  
 नति ध्रुव परम पुमांस मादि यवर्णममल तमस परस्तात् ॥  
 त्वामेष सम्यगुपलम्य जयति मृत्यु नान्य शिव शिवपदस्य  
 मुनीत्र पथा ॥ २३ ॥ त्वामभ्यय विष्णुमार्चित्यमसंख्यमाद्य  
 ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनगर्हेत्तुम् ॥ यागीश्वर विदितयोगमनेकमक  
 ज्ञानस्वरूपममलं प्रवर्द्धति सतः ॥ २४ ॥ शुद्धस्त्वमेव विष्णुषा  
 र्चितबुद्धि बाधात्, त्वं शकरोऽसि भुवनत्रयशकरत्वात् ॥  
 भातासि धीर शिवमार्गविधेर्बिधानात्, व्यक्त त्वमेव मगबन्  
 पुरुषोत्तमोऽसि ॥ २५ ॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्चिहराय नाथ,  
 तुभ्यं नमः क्षितितलामल भूषणाय ॥ तुभ्यं नमस्त्रिजगत  
 परमेश्वराय, तुभ्यं नमो जिनमबोदधिज्ञापणाय ॥ २६ ॥ का  
 विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै स्त्वं सभितो निरवकाशतया  
 हुनीत्र ॥ दोषैरुपाशुषिविधाभयजातगैव, स्वमातरेऽपि न  
 कदापिदपीधितोऽसि ॥ २७ ॥ उच्चैरशोकठरुसंधितमुन्मथूत-  
 मामाति रूपममल भवतो निर्वातम् ॥ स्पष्टोल्लसत्किरणमस्तत  
 मो वितान बिंब रघोरेव पयाभरपार्थवदि ॥ २८ ॥ सिंहासने  
 मणिमपूषुशिक्षाषिषिष्रे, विभ्राजत तव वपु कनकाभदातम् ॥  
 बिंब निषङ्गिलसदंशु उतावितानं तुंगोदसाद्रिशिरसधि सहस्र  
 रमः ॥ २९ ॥ कुंदावदातफलचामरचारुशोभं, विभ्राजते तव  
 वपु कस्तुभातकांतम् ॥ उद्यच्छांकशुषिनिर्जरवारिधार-शुभं  
 स्तं सुरगिरेरिवशातकौमम् ॥ ३० ॥ छत्रत्रयं तव विमाविश  
 शांककांत-शुभं स्थितं स्पगितमासुकरप्रतापम् ॥ भुक्ताफलप्र  
 फलजातविष्णुदशोभं प्रग्यापयात्रिजगत परमेश्वरत्वम् ॥ ३१ ॥  
 तदितरेऽनवर्यं कथपुत्रकांति-पर्युल्लसत्सुमयुस्त्रिशिरामिरामौ ॥

# लेख संग्रह.

बचाओ बचाओ जल्दी-बचाओ इस डूबती  
हुई जातिको जल्दीसे बचाओ ।

## ऐ कौम उठ ।

ऐ कौम जाग अब तेरे सोनेके दिन गये ।  
मखमलके तकिये और बिजौनों के दिन गये ॥  
मुँह हाथ आठ नव बजे धोनेके दिन गये ।  
वो खिल्लवतें वो मेहफिलें होनेके दिन गये ॥  
वो किससे मिट गये, वो जमाना बदल गया ।  
वो वक्त हो चुका है, वो साया भी ढल गया ॥  
देखो तो गैर कौमोंने क्या पाया पाया है ।  
जो हो न सकताथा वोही करके दिखाया है ॥  
रहे रहे कर अपना पांव, कहां तक बढ़ाया है ?  
उठता न था जो बोझ, वह सर पर उठाया है ॥  
अब नाम है तो उनका है, इज्जत तो उनकी है ।  
हशमत्त्व है गर तो उनकी हुकूमत तो उनकी है ॥  
उजड़ी हुई जो वस्ती है, आबाद कीजिए ।  
उठिए जरा सी हिम्मतो इमदाद कीजिए ॥  
भूले हुए फिसानेको फिर याद कीजिए ।



टिनिष्टजपा ॥ स्वस्नाममस्त्रमनिश मनुजा स्मरंत ; तप  
 स्वयं विगतबधमया मर्षति ॥ ४२ ॥ मत्तद्विपेद्रमृगराजदधान  
 लाडि-मग्रामचारिधिमहोदरबंधनोच्छम् ॥ तस्याष्ट नाशहृपयाति  
 भय भियव, यस्तावकं स्तवामिम मतिमानधीत ॥ ४३ ॥ स्ता  
 प्रस्रजं तप सिनेद्र गुषैर्निबद्धा, भक्त्या मया रश्चिरवर्णाविधिने  
 पुष्पाम् ॥ घसे अनो य इह कंडगवामजस्रं, त मानतुगमवशा  
 नमूर्पति लक्ष्मी ॥ ४४ ॥ इति भक्त्यामरस्तात्रं ॥



घाले ( लडकियोंके मां, बाप, भाई, नाना, काका, मामा, आदि ) खास तोरण पर व्याहके खास दिन या तिथि पर अड कर रुपये वसूल करते हैं, नहीं दिये जाते हैं तो वरात ( जान ) को वापिस ही लौटना पडता है, क्या यह बात जातिके गौरवको घटाने वाली कुछ कम है? यदि तुम इस बातको झूठ मानते हो तो मैं एक ही नहीं, सैकड़ों उदाहरण उसके तुम्हारे सामने रख सकता हूँ । रुपये भी कुछ कम नहीं लिये जाते हैं; १५-१५-२०-२०-२५-२५ हजार तक कीमत आ पहुंची है, दो तीन हजार तो कोई हिसाबमें भी नहीं पकडते है । कहो, गरीबोंका अब क्या होना है? वह तुम्हारे नाम को रोते हैं, रात दिन मनही मन तुम्हें दुराशीश देते हैं, इससे तुम्हारी अवश्य दुर्गति होनेवाली है; क्योंकि तुम जातिमें लीडर ( अग्रसर ) मुखिया कहलाते हो; सर पंच बजते हो; फिर अपना कर्तव्य समझकर इसका कुछ भी प्रबन्ध नहीं करते हो । जातिके गरीबोंकी इस समय बड़ी नाजुक स्थिति है । वे विचारें, तुमही बताओ कि ८-८-१०-१०-१५-१५ हजार रुपये व्याहके लिए कहाँसे लावें? और कैसे वे गृहस्थी बनें? कैसे अपना जीवन सुखसे व्यतीत करें? कैसे सदाचारी बने रहें । “ अपने जाति भाइयोंके खूनके पीनेवालो ” मस्त हुए क्यों पडे हो? मुझे मालूम है तुम स्वयं दुराचारी हो इससे तुम अपने जाति भाइयोंको भी दुराचारी बनाना चाहते होगे किन्तु इस पापका प्रायश्चित एक दिन तुमको अवश्य करना पडेगा । अरे, फिर देखो, इस लडकीके रुपये लेनेके रियाजसे सैकड़ों नहीं हजारों भाई जातिमें कुंवारे बैठे हुए है ।

याषद अइद ह मुझे, आजाद कीबिए ॥  
 तालीमको दोमदद मी, इश्वरके वास्ते ।  
 चप्पे लगादो इश्वरी, नैयाके बाम्भ ॥  
 ( इसलामसे )

आ आसवाल जातिके लीबरो !

क्या तुम्हें अभी तक मालूम नहीं है कि—हम क्या कर रहे हैं और क्या करना चाहिए? क्या तुम लोगोंका यही कर्त्तव्य है कि जिस जातिमें तुम पैदा हुए हो उसकी दुर्दशा अपन नश्रीसे देखना? उसे मिट्टीमें मिलाने देना? उसके सुधारके लिए उनकी उन्नतिके लिए कुछ भी प्रयत्न नहीं करना, हाथ पांव तक न हिलाना? उसे यों ही मरने देना? उसकी चिकित्साके लिए—उसके सब रोग मिटानेके लिए तैयार नहीं होना? आगा आँखें खालो, जरा चारों ओर नजर उठा कर ता देखा कि क्या हो रहा है? देखा, आज इस आसवाल जातिमें कन्याधिक्रयका बाजार बहुत बड़ा चढ़ा है। हजारों दुर्घटनाएँ प्रति दिन इसके प्रतापसे सुननेमें आती हैं। हजारों जाति माइयोंको हमस तेग किये जात ह कड़ी ही निर्लेज्जता—और पेशमीके गाय रूप लिय जात है। लोगोंने कन्या विक्रयको एक राग व्यापार—आर्थानिक मान रक्त्ता है, पहले तो यह कड़ी गुप्त रीतिमें होता रहता था, मगर अब तो यह माफ चौद मंदानमें मयक सामने होन लगा है, कृपया सुन

घाले ( लडकियोंके मां, बाप, भाई, नाना, काका, मामा, आदि ) खास तोरण पर व्याहके खास दिन या तिथि पर अड कर रुपये वसूल करते हैं, नहीं दिये जाते हैं तो वरात ( जान ) को बापिस ही लौटना पडता है, क्या यह बात जातिके गौरवको घटाने वाली कुछ कम है? यदि तुम इस बातको झूठ मानते हो तो मैं एक ही नहीं, सैकड़ों उदाहरण इसके तुम्हारे सामने रख सकता हूं। रुपये भी कुछ कम नहीं लिये जाते हैं; १५-१५-२०-२०-२५-२५ हजार तक कीमत आ पहुंची है, दो तीन हजार तो कोई हिसाबमें भी नहीं पकडते है। कहो, गरीबोंका अब क्या होना है? वह तुम्हारे नाम को रोते है, रात दिन मनही मन तुम्हें दुराशीश देते हैं, इससे तुम्हारी अवश्य दुर्गति होनेवाली है; क्योंकि तुम जातिमें लीडर ( अग्रसर ) मुखिया कहलाते हो; सर पंच बजते हो; फिर अपना कर्तव्य समझकर इसका कुछ भी प्रबन्ध नहीं करते हो। जातिके गरीबोंकी इस समय बड़ी नाजुक स्थिति है। वे विचारे, तुमही बताओ कि ८-८-१०-१०-१५-१५ हजार रुपये व्याहके लिए कहाँसे लावें? और कैसे वे गृहस्थी बनें? कैसे अपना जीवन सुखसे व्यतीत करें? कैसे सदाचारी बने रहे। “ अपने जाति भाइयोंके खूनके पीनेवालो ” मस्त हुए क्यों पडे हो? मुझे मालूम है तुम स्वयं दुर्गचारी हो इससे तुम अपने जाति भाइयोंको भी दुराचारी बनाना चाहते होगे किन्तु इस पापका प्रायश्चित एक दिन तुमको अवश्य करना पडेगा। अरे, फिर देखो, इस लडकीके रुपये लेनेके रिवाजसे सैकड़ा नहीं हजारों भाई जातिमें कुंवारे बंठे हुए है।

हजारों रणदुर्ये पडे हुए हैं। इस जातिकी जन संख्या भी प्रतिदिन घटती जा रही है। इस राखसी रिवाजसे अब बूढ़ विवाहन भी खूब जार पकड़ा है। २२३३४४ ब्याह (बरन) लेने पर, साठ २ सत्तर २, अस्सी २ बर्रोंके हो जाने पर, २-२ ३ ३ लडके लडकियों, पोत, पोतियोंके होने पर भी बूढ़ मजसे १०-१२ वर्षकी लडकीके साथ ब्याह लगाते हैं और उनके अवस्थाक हिसाबसे देखी जावे तो बटीके बराबर होती है। आगे वे बूढ़ थोड़ा ही समयमें मर जाते हैं, पीछे यह विधारी रहती है औपनाबस्थामें आती है तब ग्राम: नार्थ, ब्राह्मण, नौकर-चाकर, मुसलमान आदि नीच जातियोंस वा अपने ही बरवालोंसे शवसुर, खेठ, दधर, माइ, बट आदिकोंस छुप २ कुर्म करती है। जब गर्भ रह जाता है तब सर कार तक न्याय पहुँचता है फिर तुम उसे जातिके बाहर डालते हो। फिर वह भतोभष्ट ततोभष्ट होकर बेशमा बनकर रहती है। या किनीके साथ चली जाती है। अगर कितने ही काल तक वे बूढ़ महाराज जीते भी रहते होंगे ता भी क्या हुआ? कहां? १२ १३ १४ १५ वर्षकी कन्या और कहां ६०-७०-८० वर्षके बूढ़े वर महात्मा। क्या उनसे उसकी कामाधि शांत हो सकती है? हरगिज नहीं। फिर यह क्या करती है? ध्यमिषार! स्पष्ट छब्दोंमें कई तो [ यदि-तुम ध्यमिषारमें नहीं समझत हो तां ] औरोंसे अपनी कामाधि शान्द फनवाठी है। इससे क्या हाता है? प्रथम तो परम पवित्र श्रीलाघतवा गंग होता है दूसरा गर्भ रहने पर बर्खर्शकर औ जादू फेदा होती है। अन्तिमें आगे य अधन बर्भका, कर्मको,

बूढ़े बड़ोंके नामको डुवा देती है । क्या इस प्रकार बुरे रिवाजको भी तुम मिटाना नहीं चाहते हो ? धिक्कार ! धिक्कार !! धिक्कार !!!

## बाल्यविवाह ।

इसी प्रकार तुम्हारी जातिमें बाल्यविवाह भी प्रतिदिन हजारोंकी संख्यामें होता है । कई बेजोड विवाह भी होते हैं । देखो, बाल्यविवाहसे क्या अनर्थ हो रहा है—लडके लडकियोंका बचपनमें ही विवाह कर देनेसे शीघ्र ही वे वीर्यहीन हो जाते हैं । उनके शरीरका सगठन मजबूत और सुन्दर नहीं होने पाता, वे वीर्यकी कमीसे निस्तेज, कान्तिहीन बुद्धिहीन निरुत्साही होकर रहते हैं, उनमें न तो व्यावहारिक कामोंको करनेकी ठीक शक्ति रहती है और न धार्मिक कामोंको । वे एक मुर्देकी तरह संसारमें जीते हैं, उनका जीवन संसारमें भाररूप रहता है इस बाल्य विवाह आदि दुष्कर्मोंसे ही आज समाजमें लाखों मनुष्य वीर्य दुर्बलताकी प्रबल बीमारीसे मर रहे हैं । क्षय, दम, मंदाग्नि, बद्धकोष्ठ आदि अनेक रोगोंके शिकार बने हुए हैं, ऐसे लोगोंकी जो सन्तान होती है वह भी प्रायः उपर्युक्त गुणोंकी धारक ही होती है । यही कारण [ बाल्यविवाह ही ] है कि आज समाजमें कोई नररत्न पैदा नहीं होता, कोई भाग्यशाली जन्म नहीं लेता, जो इस इबती हुई जातिकी व धर्मकी नावको पार लगा दे । समाजको एक-चार तो फिर ऊंचा ला दे—समाजकी बुराइयोंको सर्वथा मिटा दे; समाजको सुखी नीरोगी दिव्य, पतिव्रत बना कर रखदे । इस बाल्य विवाहसे ही हजारों लडकोंकी अकाल मृत्यु होती

हैं और बिघनाएँ घड़ती हैं । कहाँ तक इससे होनेवाली हानि योंको गिनाऊँ ? गिनाना मेरी शक्ति का बाहर है । बस इतना ही याद रखो कि बालविवाहनें समाजकी जड़को निर्मूल कर दिया है । यह अनकानेक अनर्थोंकी खान है ।

अब बेजोड़ विवाहका लीजिए । इस बेजोड़ विवाहसे समाजमें अविश्वस्यता ज्यादा ज्यादा बढ़ता हुआ चला जा रहा है । दुर्गति का मार्ग साफसीधा हो रहा है । पुरुषोंका एकपत्नी व्रत और स्त्रियोंका पतिव्रत व्रत टूट रहा है । इत्यादि कई बड़ी कुरीतियाँ तुम्हारे समाजमें भर गई हैं । अरे महानुभावों, तुम लोग जाग्रत क्यों नहीं होते हो ! हम तुम्हें बार २ पुकार-रू २ कर कर रहे हैं, मान आओ । और इन कुरीतियोंका मिटा देनेके लिए एकदम तैयार हो जाओ । अब विलम्बका काल नहीं है । थोड़ा बहुत भी स्वार्थ त्याग करो, जातिकी भलाईकी ओर ध्यान दो ।



**ओ ओसवाल जातिके भनाओ !**

तुम क्या कर रहे हो ! तुम अपने धनकी व्यर्थ क्यों लुटा रहे हो ! ओसर मौसर ब्याह शादियोंमें रथिडियों नचानेमें, आतिशबाजीके उठानेमें, कई तरहकी फिजूल खर्चोंमें आवश्यकताके ऊपरान्त हम धनका धुआँ क्यों उठा रहे हो ! अर देरों तुम लोग नाना प्रकारके दुष्कर्मोंस इस धनको पैदा करत हो और फिर इसका धुरे कामोंमें ही-नरकादि गतियोंका बंध बांधनेमें ही व्यय करते हो यह हमें पढ़ा हुआ है । एसा

करना तुम्हें हरगिज लाजिम नहीं नहीं है । इस धनसे तुम चाहे तो हजारों पाठशालाएँ, खुल सकती है, हजारों, अनाथालय बन सकते हैं, हजारों विधवाश्रम तैयार हो सकते हैं, सैकड़ों गुरुकुल खुल सकते हैं । हजारों प्राणिसंरक्षणी संस्थाएँ बन सकती हैं, लाखों जीवोंको अभयदान दिया जा सकता है । हजारों, धर्मशालाएँ, जातीय संस्थाएँ चल सकती हैं । हजारों धर्मोपकरण, लाखों प्रबंधन छपकर संसारमें बाँटे जा सकते हैं । इस धनसे मोक्ष तक मिल सकती है [ जो मिलना सबसे कठिन है ] और तो क्या कहे ? परन्तु भाइयो, तुम इस धनका दुरुपयोग कर रहे हो यह देख मेरा हृदय बड़ा ही संतप्त है । धनका सदुपयोग करना सखि । जात्युन्नति व धर्मोन्नतिमें इस धनको लगाओ जिससे तुम इस जन्म और परजन्ममें सुखी होओ ।

\* \* \* \*

ओ असिवाल जातिके विद्वानो ! तथा कुछ लिख पढ़नेवाले भाइयो ! !

तुम गुप चुप क्यों बैठे हो ? उठो अपनी शक्तिको प्रगट करो । तुमने जो महान् परिश्रम करके ज्ञान प्राप्त किया है उससे समाजका कल्याण करो । समाजको सबे सुखका मार्ग बतलाओ अपने जातिसहोदरोंको ज्ञान दान दो, भूल हुआओंको फिर मार्ग पर लाओ । उनके कल्याणके लिये तन मनसे परिश्रम करो । तुम जितने जातिमें पढ़े लिखे हो सब एकमत होकर परस्पर की इर्ष्याकी त्याग कर बड़े जोर शोर से चारों



ओर जात्युन्नतिका आंदोलन मचाओ । धूमर विभाम मत लो, तुम्हें चाहे कोई मला कड़े चाहे घुरा; तुम अपन कतव्य करते जाओ, अपन दृढ नियम पर दृटे रहो, विशल्लित मत हाओ । हर अगह अपने २ मापमों लेखों द्वारा समाजसे सचेत करतेही रहो । तुम अपनी आबाजको बन्द मत करो; विघाते हा रहो; चाहे कोई सुने या न सुने । मैं विश्वासक साथ कहता हू कि—इस प्रकार के निरन्तर प्रयत्न से २५-५० वर्षोंमें इस आतिका अक्षय अञ्छा रूपान्तर हो जायगा । यह सुधर जायगी, फिरसे यह उन्नत होगी, फिरसे इसका तेज चारों ओर फमकने लग जायगा ।

\* \* \* \* \*

ओ ओसवाल आतीक गरीबो !

तुम मी कुछ करसकते हो या नहीं? मेरा ता सिद्धान्त है कि—तुम सबसे ज्यादा कार्य कर सकते हो । हाँ, तुम्हारे पास आर्थिक बल नहीं है यह मैं जानता हूँ तो मी क्या दुआ; तुम्हारे लिए मी कई कार्य पड़े हुए हैं उन्हें तुम करो । तुम आतीक वर्षोंमें धन नहीं दे सकते हो तो मत दो । परन्तु शरीरमें कुछ जाति सेवा बमाना स्वीकार करो, स्वयं मेवक बनो, धर्ममें एक, दो महीना जाति सेवाका कार्य किया करो । अपनी अपनी आतीक संस्थाओं में जाकर रहा करो । धार्मिक संस्थाओंमें रहा करो । मंत्र, पठार्क निरीक्षक, उपदेशक आदिका कार्य किया करो । अपन ग्रान्तोंमें घूम २ कर समाएँ क्या है ? उन्नति क्या है ?

सुधार क्या है ? समाजकी हालत क्या है ? इत्यादि लोगोंको समझाते रहो । दूतोंसे संस्थाओंको द्रव्यकी मदद भी दिलाते रहो । संस्थाओंके प्रस्तावोंका-ठहरावोंका सर्वत्र प्रचार करते रहो । अपने जाति भाइयोंको हर काममें-रोगावस्थामें-दुःखावस्थामें मदद पहुँचाते रहो । उनसे प्रेम करते रहो, वात्सल्य भाव बतलाते रहो ।

तुम यों मत समझो कि-हम गरीब हैं क्या कर सकते हैं जो कुछ करेंगे हमारी जातिके धनाढ्यही करेंगे हम तो बहुत छोटे हैं । नहीं, भाइयों, तुम्हारा समुदाय सबसे बड़ा है, धनाढ्योंका समुदाय थोड़ा है । तुम सब एक होकर जो कार्य करने लगोगे उसमें धनाढ्योंको शामिल होनाही पडेगा । तुम्हारे बिना उनका कार्य एक पल भर भी नहीं चल सकता । वे धनाढ्य, और बड़े हैं तो तुम्हारे पीछे ही हैं । जिस दिन वे तुमसे अलग होंगे उस दिन उनकी मिट्टी खराब होनेमें कोई सन्देह नहीं है । क्या मजाल है कि तुम्हारे बिना उनका सब कारोबार चल सके ? क्या तुम अपने देश या विलायतके मजूर पक्षको नहीं जानते हो, उनका मत सबसे ज्यादा रहता है । और वे कई कार्य कर रहे हैं । उठो, तुम्हारे करने योग्य कार्योंका विचार कर उनके करनेमें लगे ।

\*     \*     \*     \*

ओ ओसवाल जातिके धर्मगुरुओ-साधुओ !  
 तुममें भी कुछ दम है या नहीं ? तुममें भी कुछ शक्ति है या नहीं ? क्या तुम समाजकी रोटियोंको खा खा कर व्यर्थ

ओर जात्युत्पत्तिका आंदोलन मचाओ । अक्षर विभ्रम मत लो, तुम्हें चाहे कोई मला कोई चाहे पुरा; तुम अपन कर्तव्य करते जाओ, अपने दृढ़ निश्चय पर इटे रहो, विचलित मत हाओ । हर जगह अपने २ मापनों लेखों द्वारा समाज को सचेत करतेशी रहो । तुम अपनी आवाजको बन्द मत करो; चिन्नाते हो रहो; चाहे कोई सुने या न सुने । मैं विश्वासक साथ कहता हू कि—इस प्रकार के निरन्तर प्रयत्न से २५-५० वर्षोंमें इस जातिका अवश्य अन्धकार रूपान्तर हो जायगा । यह सुधर जायगी, फिरसे यह उभर होगी, फिरसे इसका तेज धारों ओर धमकने लग जायगा ।

\* \* \* \* \*

ओ आसवाल जाठीक गरीबो !

तुम भी कुछ करसकते हो या नहीं ? मेरा तो सिद्धान्त है कि—तुम सबसे ज्यादा कार्य कर सकते हो । हाँ, तुम्हारे पास आर्थिक बल नहीं है यह मैं जानता हूँ तो भी क्या हुआ; तुम्हारे लिए भी कई कार्य पड़े हुए हैं उन्हें तुम करो । तुम जातीय क्रयोंमें धन नहीं दे सकते हा तो मत दो । परन्तु शरीरमें कुछ जाति सेवा बजाना स्वीकार करो, स्वयं मेवक बनो, वर्षभरमें एक, दो महीना जाति सेवाकर काम किया करो । अपनी अपनी जातीय संस्थाओं में बाँधत रहा करा धार्मिक संस्थाओंमें रहा करा । मैनजर, रडाके निरोधक, उपवेशक आदिका काम किया करा । अपन प्रान्तोंमें घूम २ कर सभाएँ क्या है ? उभति क्या है ?

सुधार क्या है ? समाजकी हालत क्या है ? इत्यादि लोगोंको समझाते रहो । दूसरोंसे संस्थाओंको द्रव्यकी मदद भी दिलाते रहो । संस्थाओंके प्रस्तावोंका-ठहरावोंका सर्वत्र प्रचार करते रहो । अपने जाति भाइयोंको हर काममें-रोगावस्थामें-दुःखावस्थामें मदद पहुँचाते रहो । उनसे प्रेम करते रहो, वात्सल्य भाव बतलाते रहो ।

तुम यों मत समझो कि-हम गरीब हैं क्या कर सकते हैं जो कुछ करेंगे हमारी जातिके धनाढ्यही करेंगे हम तो बहुत छोटे हैं । नहीं, भाइयों, तुम्हारा समुदाय सबसे बड़ा है, धनाढ्योंका समुदाय थोड़ा है । तुम सब एक होकर जो कार्य करने लगोगे उसमें धनाढ्योंको शामिल होनाही पड़ेगा । तुम्हारे बिना उनका कार्य एक पल भर भी नहीं चल सकता । वे धनाढ्य, और बड़े हैं तो तुम्हारे पीछे ही हैं । जिस दिन वे तुमसे अलग होंगे उस दिन उनकी मिट्टी खराब होनेमें कोई सन्देह नहीं है । क्या मजाल है कि तुम्हारे बिना उनका सब कारोवार चल सके ? क्या तुम अपने देश या विलायतके मजूर पक्षको नहीं जानते हो, उनका मत सबसे ज्यादा रहता है । और वे कई कार्य कर रहे हैं । उठो, तुम्हारे करने योग्य कार्योंका विचार कर उनके करनेमें लगे ।

\* \* \* \* \*

ओ ओसवाल जातिके धर्मगुरुओं-साधुओं !

तुममें भी कुछ दम है या नहीं ? तुममें भी कुछ शक्ति है या नहीं ? क्या तुम समाजकी रोटियोंको खा खा कर व्यर्थ

हराम'ही करते रहोगे या क्रुद्ध कर दिखलाओगे ? और सोचो तुमने गुरुपद धारण किया है; गुरुओंके क्या रू कावे होते है उनको तो जग याद करो, क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजकी दुर्दशाको अपने नज़ासे देखते रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि समाजको अज्ञानताके कीचड़में पड़ा रहने देना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है समाजकी कुरीतियोंको न इटाना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाज सुधारके कामोंमें पाप बतलाना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि अपनी र पूजा प्रतिष्ठा प्रशंसा कराने में ही लगे रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि सप्रदायों क झगड़ोंमें पड़े रहना और हमारे, भाइयोंको परस्पर लडाते रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजको समयानुकूल शिक्षा न देना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है समाज पर अपवित्रता और मूर्खताका फलक चढाते रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजके अनाथ बच्चोंका, निराधार विधवाओंका, निस्सहाय भाइयोंको नष्ट भ्रष्ट होने देना ? उनके लिए अनाथाश्रम, गुरुकुल विधवाश्रम आदि स्थापित नहीं करवाना ! यदि ये कार्य तुम्हार नहीं है तो तुम इनके विपरीत प्रयत्न क्यों नहीं करते हा ?



ओ महात्माओं !

तुमही लोगोंकी छापरेवाहीसे समाजका अघ वर्तन हुआ है ! तुमही लोगोंकी अज्ञानतासे समाज भी आज अज्ञान हुआ

हैं। तुमही लोगोंके मलीन विचारोंसे सभाजमेंभी मलीन विचार प्रगट हुए हैं। तुमही लोगोंकी फूटसे समाजमें भी आज इसका प्रबल प्रकोप दिखाई देता है। जो कुछ समाज व धर्म की हानि हो रही है उन सबका मुख्य कारण आपही लोग हैं। समाज और धर्म तुम्हारेही आश्रित रहा हुआ है। इसलिए तुम्हें अपने कर्तव्य पहचानने चाहिए। और समयकी ओर ध्यान दे कार्य करने चाहिए। सभी कार्य, सभी नियम, सभी प्रथाएँ हरएक समयमें एकसे लाभदायक नहीं हो सकते। समय समयमें उनमें परिवर्तन करनेकी आवश्यकता हुआ करती है। जिस समाजके मुखिया, संचालक, धर्मगुरु ऐसा नहीं करते है वे अन्तमें पछताते हैं, सब खो बैठते है।

आप लोग कहेंगे कि “ हमें ये बातें मत कहिए; हम तो अपनी आत्मोन्नति कर रहे हैं, हमने इसी लिए चारित्र्य लिया है। ” महात्माओ ! ये कहना आपका गिन विचारका है, जैसा आत्मोन्नति करना आपका कर्तव्य है वैसा समाजोन्नति, समाजकी भलाई बुराईकी ओर भी ध्यान देना आपका कर्तव्य है। आत्मोन्नति और समाजका सुचारु रूपसे संचालन करते रहना इसी लिए आपका जन्म है। यदि ऐसा नहीं है तो धर्मोपदेश करनेकी क्या जरूरत है ? चेला चेली मूँडनेकी क्या जरूरत है ? एक ग्रामसे दूसरे ग्राम घूमते रहनेकी क्या जरूरत है ? पुस्तक पन्ना आदि धर्मोपकरण रखनेकी क्या जरूरत है ? आत्मोन्नति तो मौनव्रत धारण कर एकान्तमें—वनों, पहाड़ों, जंगलों आदिमें रहनेसे भी हो सकती है। सांप्रत समयमें आप लोगोंके पीछे कई प्रकारके—प्रापञ्चिक कार्य लगे हुए देखे जाते

हरामें ही करते रहोगे या कुछ कर दिखलाओगे ? और तोर्षा तुमने गुरुपद धारण किया है ! गुरुओंके क्या २ कार्य होते हैं उनको तो ज़रो याद करो, क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजकी दुर्दशाको धपने नज़ामे देखते रहना ? क्या गुरुओंके यही कार्य है कि समाजको अज्ञानताके फीचडमें पंढा रहने देना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है समाजकी कुरीतियोंको न हटाना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाज सुधारके क्रममें पाप बतलाना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि अपनी २ पूजा प्रतिष्ठा इत्यादि कराने में ही लग्न रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि संप्रदायों के झगडोंमें पड़े रहना और हमारे, माइयोंको परस्पर खडाते रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजको समयानुकूल शिक्षा न देना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है समाज पर अपवित्रता और मूर्खताका कलंक खडाते रहना ? क्या गुरुओंका यही कार्य है कि समाजके अनाथ बच्चोंको, निराधार विधवाओंको, निस्सहाय माइयोंको नष्ट भ्रष्ट होने देना ! ठनक लिए अनाथालय, गुरुकुल विषवाभम भादि स्थापित नहीं करवाना ' यदि ये कार्य तुम्हार नहीं है ता तुम इनके विपरीत प्रयत्न क्यों नहीं करते हा ?

• • • •  
 ओ महात्माओं !

तुमही लोगोंकी लापरवाहीसे समाजका अन्न पतन हुआ है । तुमही लोगोंकी अज्ञानतासे समाज में अन्न अज्ञान हुआ

# एकासे लाभ.

‘एका’ शब्दका अर्थ यह होता है कि सम्प अर्थात् संसारमें सम्पसे रहना परमोत्तम बात है। सम्पसे बड़े बड़े कार्य सिद्ध होते हैं। यदि सम्पको ही उन्नतिका जन्मस्थान मानकर मुनि, श्रावक, देशनिवासी, अन्य बंधु सम्पकी ओर विशेष ध्यान दें तो निःसन्देह समझ लेना चाहिये कि—अब हमारी वा हमारी जाति वा हमारे समाज वा हमारे देशकी उन्नति होना कुछ दूर नहीं है। देखिये! ‘प्रशिया’ हिंदुस्थानके छोटे हिस्सेसे भी छोटा हिस्सा है। परन्तु वही प्रशिया विद्या और सम्पके प्रतापसे जर्मनीकी शोभाको बढ़ा रहा है। इसलिये ऐसा उत्तम सम्प, जो कि हरतरहका उपकार करनेवाला और हर प्रकारसे प्रशंसाका बढ़ानेवाला है उसकी तरफ ध्यान न देना मानो हमारा दुर्भाग्य है!! सम्प करतेसमय पहिले थोडा परिश्रम पडता है परन्तु अन्तमें उस सम्पसे रस मिलता है, लाभ प्राप्त होता है। उससे क्या क्या परिणाम निकलते हैं इसको आप स्वतः जानने लगेंगे—इसके कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। सच्चा सम्प वही है कि—जो प्रतिकूलतासे भी अनुकूलताका काम लेवे, हानिकारकको भी लाभकारक बनावे और विपत्तिका फल सम्पत्तिरूपमें दिखावे। अस्तु! यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो हमारा धर्म सब धर्मोंसे पवित्र और ऊंचा है, इस धर्मको प्रथमसेही



हैं वे फिर क्यों हैं ? उन्हें भी छाड़कर रहिए । भ्रगर, साधुओं, ये सब तुझारी वहानेवाजी है—आत्मोन्नति का मार्ग ही है । तुमसे न तो पूरी आत्मोन्नति ही बन जाती है और न समाजोन्नति घमोन्नति ही । मैं इस बातको नहीं मानता । आत्मोन्नति का अर्थ ही है । मार्ग तो खुदा ही है । क्या चारित्र्य (साधु होकर) लेकर परस्पर लड़ना लड़ाना आत्मोन्नति है ? क्या तुम उस साधुका आहार मत दो, उसे बन्दना नमस्कार मत करो वे साधु-साधु नहीं है, तू मेरा भावक है, 'हमारे साधुओंके पास मत आ, इस प्रकार कहते रहनेका नाम आत्मोन्नति है ? क्या एकही पुरमात्माके अनुयायी होकर भिन्न भिन्न प्ररूपका प्रवर्तना रखना आत्मोन्नति है ? क्या रागद्वेषके फामों में रातदिन कैसे रहना आत्मोन्नति है ? क्या क्रोध, लज्जा, मानमाया, मोहके रखनेका नाम आत्मोन्नति है ? छोड़ दो, इन आत्मोन्नतिके डोंगको छोड़ दो । या सच्ची आत्मोन्नति दिखाओ या हमार कवनपर ध्यान दो और समयानुकूल आत्मोन्नति समाजोन्नति दोनों करत रहो । या दानोंही तुमसे नही सके तो समाजोन्नतिकी विरोध करना छोड़ दो । गुपगुप देखत रहा कि क्या क्या होता है, अमाना क्या २ रंग बदलता है । किम तरह करनपास करत है, देखत रहा । तटस्थ हो जाओ ।

यदि हमारी बातें तुम्हें प्रसन्द ह तो इस कृपया ही आत्मोन्नतिकी नैयाको पार लगाओ !

संवत्सरी एक होगी ? हमारे श्रावक शिष्यगण शतिला, गधा, रोड़ी, कुंभारका चाक, कुगुरु कुदेव कुधर्मका पूजन नमन करना त्यागेंगे ? कन्याविक्रय आदि कुप्रथाओंका काला मुंह करेंगे ? भोजक [ सेवक ] लोक जो जैन होकर जैनमार्गपर आरुढ नहीं हैं इनका भी कभी विचार करेंगे ? जैनियोंकी एक कॉन्फरन्स सभा, पचायत, होंगी ? लोकागच्छीय यति जो अपनी समाचारा छोडकर विपरीत व्यवहार कर रहे हैं वे भी कभी फिर अपनी असली समाचारीको पकडकर चलेंगे ? जैनियोंके घरोंमें जैन विधिसे संस्कार होंगे ? सत्यनारायण, गणेशचतुर्थी चांद्रायण व्रत आदि मिथ्यात्वियोंके निर्माण कियेहुए व्रतोंके फन्दसे छूटेंगे ? परम पवित्र एक नमस्कार मंत्रको स्थिर चित्तसे ध्यावेंगे ? उसका महत्त्व समझेंगे ? जैन श्वेतांबर, दिगंबर, मंदिरमार्गी, स्थानकवासी, तेरह पन्थी, चौदह पन्थी, बीस पन्थी तारण पन्थी आठ कोटि, छ कोटि, नवकोटि इत्यादि शाखाओंका भी कभी प्रलय ( विनाश ) होगा ?

परन्तु यह सब उपयुक्त अभिलाषाएँ हमें स्वभवत् दिखती हैं क्यों कि कुसम्प ( फूट ) महाराजने हमारे यहां जवर जंमाव ( डेरा ) डाला है—यहां तक कि—कोई कहता है स्थानकवासी झूठा, कोई कहता है मंदिर मर्गी । कोई कहता है दिगम्बर, और कोई कहता है श्वेतांबर झूठा । कोई कहता है हम गर्मजल अझी कृत्य नहीं करते तो कोई कहता है हम धावन नहीं लेते । कोई कहता है हम स्थानकमें नहीं ठहरते, कोई कहता है हम दुकानोंमें नहीं रहते । कोई कहता है हम साबुनसे वस्त्र नहीं प्रक्षालन करते, कोई कहता है मैले वस्त्र रखनेसे प्राधायित्त आना

राजा महाराज स्वीकार करते आये हैं। जितने शीर्षकर, मुनि इस धर्ममें हुए हैं वे सब प्रायः राजवंशीय क्षत्री थे और अब भी जो जैन भावक हैं उनका जन्म भी राजवंशसे है और कुछ समय पहले यह धर्म सम्पूर्ण आर्यावर्तमें विराजमान था। और इस धर्मके तत्त्व भी इतने गहन और स्याद्वाक्यशैलीयुक्त हैं कि—बड़े बड़े विद्वान भी (स्वामी शंकराचार्य जैसे) बिना जैनगुरुके क्या मजाल है कि—समाप्तकर रहस्य घटा सकें।

इस धर्मके जो साधु उपदेशक हैं—उनकी दिनचर्या रात्रि चर्या मुनिवृत्तिके नियम आदि हमारे धीर मगधानने इस प्रकार बताया है कि उस सुताधिक चलनेसे साधु किसीको अप्रिय और दुःखदायी मान्य न हो। परन्तु महा शोक है कि जब यह धर्म ऐसा शुद्ध, निष्पक्षपाती है, तब इसकी यह दशा क्यों कि आज हिंदुस्थानमें ३१ करोड़ मनुष्य रहते हैं जिनमें जैन धर्मानुयायी जन (जैन नाम धरानेवाले) सिर्फ बारह ही लाख हाय! हाय! आज यह शब्द लिखते मेरी सेहतनी धर धर कांपती है और मेरे नेत्रोंमें अश्रुधारा (पचास करोड़ जैन थे आज १२ लाख तक नौबत आ गुधरी इससे) बहती है और मेरी पाठीमेंसे धार-धार यह उद्गार निकलते हैं कि हे शासन नायक देव! हमारे धर्मकाभी कभी उदय होगा? हमारी एक ही फलनी एक ही रहनी एकही आचार विचार एकही वेध एकही आदेश उपदेश एकही गच्छ एक ही समुदाय एक ही आचार्य होंगे? हम सब जैन्यानि परस्पर अति प्रमत्त हाथसे हाथ मिलाकर मिलेंगे? एक नमः धत्कर आचार विचारका संस्थापन करगे? और वो ५५ दिन आगगा कि पक्षी

एका [ सम्प ] वही है, संगति वही है और मित्रता वही है, जब हमारे विचार आपसे और आपके विचार हमसे अच्छे प्रकार एक हो जायें क्योंकि जहां सुमति है वहां सम्पत्ति है, जहां सुमति नहीं वहां सम्पत्ति भी नहीं के तुल्य है, इस लिये एका करना परमोत्तम और परमावश्यकिय है ।

अब सम्पके विषयमें कुछ थोड़ेसे उदाहरण देकर इस लेख को समाप्त करूंगा:—

( १ ) देखो ! जिस घरमें चार भाई हैं और वे एकही जगह एकही विचार-सम्पसे रहते हैं और कार्य करते हैं तो संसारमें उसकी वाहवाही [ शोभा ]-होती है, इज्जत बढ़ती है, “ बंधी भूठी लाखकी ” कहावतके अनुसार लक्ष्मीकी शतगुणी झलक दीखती है, बैरी दुश्मन भी डरता रहता है, क्योंकि वह ऐसा विचारता है कि मैं अकेला हूँ और ये चार हैं, इनसे कभी फतह नहीं पाऊंगा यदि वेही भाई अलग अलग हो जाय तो लोग भी नाम रखने लगते हैं, इज्जतमें कमी आ जाती है, लक्ष्मीका भी भ्रम खुल जाता है, शत्रुभी सबल हो जाता है, इत्यादि बहुतसे दुःख उठाने पड़ते हैं ।

( २ ) जो शाक तरकारी बनाई जाती है उसमें यदि लोण मिर्च मसाले न डाले जाय तो वह स्वादिष्ट नहीं होती है । और जो उसमें भी अच्छी तरह लोण मिर्च आदि पदार्थ डाल कर बनाई जाय तो अधिक स्वादवाली होगी, और खानेके समय ठीक प्रतीत होगी । इसी तरह आप भी सब मिलकर रहेंगे, कार्य करेंगे तो जनसमाजको विशेष प्रिय और अच्छे लगेगे ।

है। काह एकही रैनमे दो-बार प्रतिक्षण करता है। काह कायोत्सर्गमे ४।८।१६।२।४० लोगस्तका ध्यान करता है। काह चार हा लागम्मका ध्यान करता है। काह उदयतिथि मानता है और काह अस्ततिथि। काह करता है साधुओंका टिकट लिफाके रखना, और कागज चिट्ठी लेख बगैरह लिखना और छपाना चाहिये, काह कहता है नहीं काह कोई साधु पक्की मवत्सरी मम्बन्धी खमठ खामखा अर्थात् धमा याचना भी नहीं करते है। यदि कहीं अकस्मात् एकमे दूसरा साधु भागमें दाखपह तो एक सौकदम, और दूसरा दोमा कदम दूर भागता है। अब कहिये! अब हमारे धर्मकी यह स्थिति है वह हमारी मनेच्छाएँ आकाशके पुष्पवत् नहीं हैं ता और क्या है!

हे समाजके नेताया! पूज्यपाद मुनिवरा! आचार्यों! धर्म सरक्षको! धर्मोपदेशको! धर्मगुरुया! आध्यात्मिको! मागधा संस्कृतके ज्ञाताओ! विद्वन्नाके धमाण्डियो! उक्तिके श्रेष्ठको! समाज सुधारको! (मेरे बचन आपको अवश्य कटु लगेंगे यह मैं मली भाँति जानता हूँ परन्तु 'बुरे छगत सिखा बचन मनमें सोचहु आप। कहुही औपधि बिन पिसे, मिटत न तन का ताप' यही बात मनमें लाकर कहता हूँ) यदि आप उक्त बातोंकी मतमदता नहीं मिट्ययोग तो आपका धर्मका बहुतसा ता नाश हो गया है, और किंचित् मात्र शेष रहा है जो भी अजर ही कालमें हो आयगा। मैं आपका नम्र कटु दोनों प्रकारके वाक्य प्रहार दता हूँ, यदि द्वितीय बेदकी सत्ता [पुरुषार्थ] आपमें प्रस्तुत हो तो उठा! कमर बांधो! धर्म [संघ] हानेक लिए घोर परिश्रम करो! जयही ये व्याधियाँ दूर होंगी!

# धनका सदुपयोग ।

धनोपयोगः सत्पात्रे यस्यैवास्ति स पण्डितः ।

गुरुशुश्रूषणे चायुः चित्तं सज्ज्ञानचिन्तने ॥

साम्प्रतमें अपने जैनसमाजकी जितनी धार्मिक संस्थाएँ हैं उनको श्रीमन्तोंकी ओरसे जितना उदार आश्रय मिलना चाहिये उतना विलकुल न मिलनेसे द्रव्यके अभावसे वे अच्छी अच्छी समाजोन्नतिकारक संस्थाएँ बराबर नहीं चलती हैं; सबव यह है कि—जो धनसम्पन्न श्रावक है उनमेंसे बहुतसे ऐसे हैं कि समाजके हितके विषयमें पूर्णरूपतः चिन्तारहित हैं ।

समाजके बारेमें मनुष्योंके मनमें चिन्ता, वात्सल्य, हितबुद्धि, ममत्त्व और निष्कपट प्रेम जागृत रहनेसे धर्मकी, जातिकी और देशकी उन्नति हो सकती है ।

वर्तमान कालमें समाजसुधारके लिये किन बातोंकी आवश्यकता है ? और समाजकी उन्नतिके लिये क्या क्या करना श्रेष्ठ है ? सुधार किस रीतिसे होगा ? ऐसे ऐसे उपाय विचारने सोचने देखनेकी अत्यन्त जरूरत है । इस प्रकार विचार जब हमारे धनाढ्य श्रावक करेंगे तभी बड़ी बड़ी बोर्डिंगें खुलेंगी, जीवदया प्रचारक संस्थाएँ स्थापित होंगी, कई साप्ताहिक पाक्षिक मासिकपत्र हमें पढ़नेको मिलेंगे, और शास्त्रसभा, अनाथाश्रम, प्रशसनीय पुस्तकालय, स्कॉलरशिप—फंड प्रगट होंगे ।

( ३ ) बन्दर पशु कितन छोट होते हैं परन्तु जब व एका कर आ पडत हैं तय बडे बडे बलवान् मनुष्योंको परास्त कर टत ड ।

( ४ ) कृषा खत किसी कामका नहीं हैं परन्तु उसका बहुतस तार इकठफर रस्सी बना ली जाय तो जबरदस्त हावी भी बंध सकता है; और भी कई कार्य उससे होते हैं ।

( ५ ) जिम राज्यमें एका है वह राज्य बहुत दिनोंतक निरकता है ।

( ६ ) बहुमत मरकागमी मंजूर करती है ।

[ ७ ] एका कर व्यापार करनेस अतिशय लाभ मिलता है । देखो ! राला अदर्स और रेलव कंपनियोंको ।

इन उपर्युक्त उदाहरणोंस जाय जान गये होंगे कि एकासे क्या लाभ है । फिर एकवार याद दिलाता हूं कि एका [सम्प कीजिये, कुसम्पको दुर मगाइये । इत्यलम् ।

—धुनि परमानन्द जैन ।

जोरी खाली हो जाती है और हाथमें तंगी आ जाती है ।  
हाय हाय कैसा अन्याय है !

विवाहमें पान सुपारीमें जितने पैसे व्यर्थ व्यय करते हैं  
उतने यदि धार्मिक फंडमें अलग निकालें तो प्रतिवर्ष हजारों  
रुपये इकट्ठे होना कुछ बड़ी बात नहीं है ।

हे धनाढ्य श्रावको ! विचार करो !! विचार करो !! अ-  
पने समाजकी उन्नति करनेमें जब तुमहीं मदद न दोगे तो  
दूसरा कौन देगा ? समाज सुधारकी तरफ नजर भी नहीं कर-  
ते हो, यह कितना अन्धेरे है !

मारवाड [ राजपूताना ] में जोधपुर, बीकानेर, नागौर,  
नयाशहर, ( व्यावर ) पाली वगैरह शहरोंमें हमारे स्थान-  
कवासी श्रावकोंका बडा जोरशोर है, जिनमें अभीतक एक  
भी अच्छी धार्मिक संस्था नहीं खुली है । हाय अफसोस !  
अफसोस !!

यह भूल किसकी है ? हमारी; क्योंकि हम साधु लोग  
श्रावकोंको सन्मार्गमें धन व्यय करनेका उपदेश नहीं करते  
हैं जिनसे हमारे प्रायः मारवाडी श्रावक पापके कामोंमें  
“ सर्वेगुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ” पैसे, जैसी चीजको फजूल  
उडाते हैं ।

मूर्तिपूजक भाई पैसोंका पत्थर करते हैं, प्रतिवर्ष लाखों रुपये  
बड़ी बड़ी पूजा, प्रतिष्ठा, नये नये मन्दिर बनाने आदि कार्योंमें  
चरबाद करते हैं, परन्तु हमारे कंजूस श्रावकोंसे तो वे सुधरे हुए हैं,  
क्यों कि, दिन दिन उपर्युक्त कामोंको घटाते हैं, लाखों रुपयों-



श्रावक घनी होकर अबतक लक्ष्मीको सत्कृत्य, लांछोप योगी कर्य, जाति और धर्मोद्धार करनमें व्यग्र रह अन्तःसकल करने और सद्गति मिलन का मार्ग नहीं खोलेंगे तबतक वे नामधारी ही श्रावक हैं! धनमें गरीबोंके दुःख दूर किए जाते हैं, विद्यावृद्धिका साधन उत्पन्न किया जाता है, अन्ध अन्ध उपर्युक्त समाजोन्नतिक कर्य चलते हैं और पुण्यका शुभ बन्धन पड़ता है, तब ऐसे 'सत्कर्मोंमें धनका मदुपपाय करना क्या अच्छा नहीं है?

पाठकवर्ग! हमारे मारवाडी अनी जितने फजूल कामोंमें धनकी पूल करते हैं वे कमी करके उसमेंसे यदि चाहा हिस्सा भी समाजोन्नतिकी सस्याओंमें मदद देना शुरू करें तो जैन प्रजाकी १५ वषके अन्दर अन्दर उन्नति हो सकती है।

श्रावक महानुभाव! ऐसे ऐसे श्रावक देखनमें आते हैं जो धनवान् होकर भी कान्फरन्सका पाषला फण्ड देनेमें इन्कार करते हैं। कोई धार्मिक कर्यमें मदद मांगता है तो मुहक रंग बदलकर गरीबी पताते हैं, हर दाब उपावमें हाथमें तगी कड़कर छूट जाते हैं।

लडक लडकियोंकी शादीमें शक्तिव बाहर भी कर्य करके मंडप बनाना, हंडियां शुभर झुंझाना, किटसनके वीपक लगाना गटियां नथाना, सबके घाबनोंको हखारों रुपये-सुटाना, रूडी बडी इमारतें बनवाना, मोटार साईकल लेना इत्यादि ए म एस पापक कामोंमें तो हमारे मारवाडी श्रावकोंके हाथ पाए पब हो जाते हैं। केवल पुण्यके मार्गमें पैसा देनास वि

जोरी खाली हो जाती है और हाथमें तंगी आ जाती है ।  
हाय हाय कैसा अन्याय है !

“विवाहमें पान सुपारीमें जितने पैसे व्यर्थ व्यय करते हैं उतने यदि धार्मिक फंडमें अलग निकालें तो प्रतिवर्ष हजारों रुपये इकट्ठे होना कुछ बड़ी बात नहीं है ।

हे धनाढ्य श्रावको ! विचार करो !! विचार करो !! अपने समाजकी उन्नति करनेमें जब तुमहीं मदद न दोगे तो दूसरा कौन देगा ? समाज सुधारकी तरफ नजर भी नहीं करते हो, यह कितना अन्धेर है !

मारवाड [ राजपूताना ] में जोधपुर, बीकानेर, नागोर, नयाशहर, ( व्यावर ) पाली वगैरह शहरोंमें हमारे स्थान-कवासी श्रावकोंका बड़ा जोरशोर है, जिनमें अभीतक एक भी अच्छी धार्मिक संस्था नहीं खुली है । हाय अफसोस ! अफसोस !!

यह भूल किसकी है ? हमारी; क्योंकि हम साधु लोग श्रावकोंको सन्मार्गमें धन व्यय करनेका उपदेश नहीं करते हैं जिनसे हमारे प्रायः मारवाडी श्रावक पापके कामोंमें “ सर्वेगुणाः काश्चनमाश्रयन्ति ” पैसे, जैसी चीजको फजूल उडाते हैं ।

मूर्तिपूजक भाई पैसोंका पत्थर करते हैं, प्रतिवर्ष लाखों रुपये बड़ी बड़ी पूजा, प्रतिष्ठा, नये नये मन्दिर बनवाने आदि कार्योंमें बरवाद करते हैं, परन्तु हमारे कंजूस श्रावकोंसे तो वे सुधरे हुए हैं, क्यों कि दिन दिन उपर्युक्त कामोंको घटाते हैं, लाखों रुपयों-

का स्वर्ण मन्दिरोंका निभाकर मी हर साल (५००००) रुपये अपने धर्मगुरुओंकी मर्यादा लगाते हैं। जैन स्थानकवासियो! जागा! जागो! सब धर्मवाले अपने अपने समाजकी उन्नति कर रहे हैं। ऐसे शान्तशील न्यायपरायण वृद्धि गवर्नमेंट सरकारके समयमें अगर आस्युभति, धर्मोभति नहीं करोगे तो फिर कब करोगे?

वर्षमान समयमें जिन बातोंकी खामी है उनको दूर करो। अच्छे अच्छे शहरोंमें और गांवोंमें जातिके धातक, बालिकाओंको सुलभ रीतिमें धार्मिक और लौकिक शिक्षण मिले एसी संस्थाएँ स्थापित करो। गरीब विधवाओंका पोषण करने के लिये जो जो फंड हैं उनमें द्रव्यकी सहायता दो। जो बिरादरीमें हानिकारक रिवाज चलते हैं उनको बन्द करो। हर रोज़ किसी भी धार्मिक छ्वातेमें पार्स, पैसा, आना खया जैसी पैदाइश और शक्ति हो तदनुसार अलग निकालनेका प्रण करा।

जैन भाइयो! आप इस बातको तो विशारो कि—जिन नगर या गांवमें स्वधार्मिकोंके १०० घर हैं वे एका [सम्भ] करके अपने अपने घरमें वा दुकानमें एक धर्मदा पेटी लगाकर नित्य एक पैसा डालें तो वर्षमें ५॥२॥) पेटीमें जमा हो आते हैं सो परके ५६२॥) रुप, और इन ५६२॥ रुपमें एक अच्छी जैन पाठशाला चल सकती है एह साथ ५॥२॥) दाना मक्का काठिन मालूम होता है इसलिये, धीरे धीरे यह पुण्यसंघय गरीबस गरीब भावक मी कर सकता है।

मारवाड़ राजपूतानमें एम्स वर्ड शहर और गांव हैं कि जहाँ

स्थानकवासी श्रावकोंके सौ सौ दो दो सौ तीन तीन सौके लूपर घर है, वहाँ जैनपाठशाला स्थापित करनेमें क्या जोर पडता है? नहीं, नहीं. जैन पाठशाला खुलनेसे स्थानकवासियोंकी उन्नति हो जायगी ।

‘ वाह ! वाह !! क्यों ठट्टे करते हो ? । ( श्रावक ) ‘ ओ हो, आप सच्ची कहनी भूल गये ’ ( मुनि ) ‘ क्यों ? ’ ( श्रावक ) ‘ अर्जी महाराज ! जैन शालामें लडके लडकियां कच्चा पानी पियें. उनका पाप चिप जाय । ’ ( मुनि ) ‘ ओह ! चडे धर्मात्मा. !! पाप काहेका चिपता है, पैसे लगते हैं । ’

भाइयो ! एक ही दिनमें हजारों रुपयोंकी राख करके सगे हुएके पीछे जातिभोजन देनेमें आप बड़ी नामवरी मानते हो ’ परन्तु जरा खयाल करो कि—जितने रुपये मुखतों, [ औसर ] में खर्च करना विचारते हो उन रुपयोंको मां बापोंके नामसे अलग निकालकर सेठ साहूकारोंमें जमा कराके व्याजसे जो रुपये उत्पन्न हों उनको समाजसुधारमें लगानेसे कैसा लाभ मिले ? कैसा नाम हो ?—पाठके स्वयंविचार करें ।

घरमेंसे फजूल खर्च घटाकर समाजकी हीनावस्था जिस गतिसे दूर हो सके उसी काममें धनका सदुपयोग करां । मासिक, पाथिक, साप्ताहिक पत्रोंमेंसे समाजसुधारके लेख अच्छी तरहसे पढ़कर अपने घरवालोंको और गृहछेवालोंको सुनाकर अंमलमें लानेकी कोशिश करो जिनसे धनका सदुपयोग करनेका मार्ग भालूम होगा ।

समाजहितैषी लेख पढ़ या सुनकर ऐसा मत कहो कि, बहुत चकते हैं, कौन सुनता है, क्या होता है ? कागज काले करते हैं,

ये बड़े घर्माहमा समाज सुधारक उठे हैं इत्यादि । --

जिनके मुँहसे ऐसे ऐसे उपर्युक्त शब्द निकलने लगे उनमें विधाधिवेक विचार और उदारताकी न्यूनता समझ लेना ।

इस लेखक सारांश यह है कि घनका सदुपयोग करना सीखिये ! सीखिये !!

अब एक छोटासा पद लिखकर इस लेखका पूर्ण करता हूँ :-

### ( गजल कव्वाली । )

अब तो ता बाबू हुरियार, घनका धुआँ उठाने वाले ( टेक )

निज धर्म कर्मको छोड़, कर कुछ फपट बन तोड़,  
महा मिहनतसे घन जोड़, मानो मिट्टीमें मिसलानेवाले ॥ १ ॥ अब०

ओ है सावित्री नन्दार, नहीं करते उनकी सार,  
जा भसते कृप्य मुरार उनका पैसा लुटानेवाले ॥ २ ॥ अब०

फानी गाली ऊँची आवाज, तुम्हारी गाती नारी-समाज,  
नहीं धाती है तुमका स्राज रंजियोंको नधानेवाले ॥ ३ ॥

जमन अमेरिका जपान, कैसे देश हुए घनधान  
जिनका बचि कर्मी जमान, विदेशी बैच बजानवाले ॥ ४ ॥

तुम किसके हो सन्तान, कर हो इतिहास बाँचकर ज्ञान,  
जैनी हो जाओ बलवान उलम' नाम धरानेवाले ॥ ५ ॥

( मुनिसे )

कम से कम चार चार इस लेख को पढिये ।

# एक नई योजना.

• सुधारका राम-बाण-उपाय.

सैकड़ों वर्षों का कार्य एक वर्षमें समाप्त ।

जरासी हिम्मत, मिहनत और समाज हित की भावना  
की जरूरत है ।

यह बात-समाज के प्रत्येक व्यक्ति को भली भाँति ज्ञात  
होगी कि-जैन समाज में 'सुधार' का आन्दोलन लग भग  
२५-३० वर्षों से चला आ रहा है । इस के लिये-आज तक  
कई संस्थाओं, कॉन्फरन्सों और कई समाचार-पत्रों का जन्म  
हो चुका । और कई जन्म ले ले कर मर भी गये । और कई  
विद्यमान भी हैं । सर्वों ने अपना २ बल दिखाया-महासभा-  
ओं-कॉन्फरन्सों-अधिवेशनों-महाधिवेशनों ने भर भर कर  
रंग उड़ाया, समाचारपत्रोंने जनता को नरम गरम बातें कहकर  
अपने कलेजे की आह ठण्डी की, उपदेशकों ने बक बक  
अपनी जवानको दुखाली, लेखकों के लेख लिखते २  
हाथ थक गये-पर, समाज अभी तक ज्योंकी त्यों बनी हुई है।  
ध्यान से सिंहावलोकन किया जाता है तो स्पष्ट दिखाई देता  
है कि सिवाय 'सुधार' की पुकार के आज तक अणु-मात्र  
भी उद्देश्य सिद्धि न हुआ ।

“इसका मूल कारण क्या है।” इस पर मैं कई बार विचार कर चुका हूँ। आज तक मेरे विचार और सामाजिक अनुभव से अपने हृदय में मुझे यही उत्तर मिला कि—अध्यात्मिक—इस समाज—अवर्णित क—इस समाज के अधःपतन का मार्ग—हमारे साधु हैं—जो कि आज तो दार्द्री हजार की संख्या में मौजूद हैं आत्मोन्नति का ढोंग लिये संसार में फिर रहे हैं—जिन से न तो आत्मोन्नति ही बनती है और न परापकार, इस लिए व समाज पर भार रूप है, लोगों को तो उपदेश करते हैं कि क्रोध मान, माया, लोभ, राग, द्वेष को छोड़ो पर उन के हृदय में उक्त छहों ही विकार लज्जालय भर हुए हैं। मैं जो यह लाइनें ऊपर लिख आया हूँ—इसे पाठक अध्यात्म सत्य २ समझें क्यों कि—जो कुछ—मैं कहता हूँ वह अनुभव सिद्ध ही कहता हूँ न कि—किसी का कही, सुनी। अब अस्तौ विषय और कहने का सागीश यह है कि—जिन का समाज पर असर है समाज जिन का तरण तारण समझता है; जिनके मुँह—आत्मोन्नति के ढोंगों पर—पर समाज तन, मन और धन न्याय-छावर करता है समाज का जिनपर अधः विश्वास है वे तो इस के हितके लिये कुछ भी नहीं करते हैं। करते हैं—समाज का हानि का काम; बताते हैं, अपनी मान, प्रतिष्ठा, श्रमा महिमा आदि बढ़ाने के काम। काहिए, मधुओ? अब समाज सुधार कैसे हो ?

अगर कोई—मेरे बंसा—सुत्र व्यक्ति, उन महात्माओं—तरण

\* उदाहरण के लिए देखना हो तो देखिये पूज्य परमियों के हाथों या कि किग्रहाण में थक रहे हैं।

तारण की जहाजों-दयावतारों और आत्मोन्नति का पुच्छल्ला लटकाये हुए फिरनेवाले बहुरूपियों से कहे कि-आप इन आत्मोन्नति के ढोंगों को थोड़ी देर के लिए दर रख 'समाज सुधार' के कार्य में लागिए तो उत्तर देते हैं-"इस प्रपंच (समाज सुधार) में हमें क्या काम? हम तो साधु हैं। आत्मोन्नति के-लिए [ उनके आत्मोन्नति का अर्थ यह है कि समाज को ठगने के लिए और उसका सर्वस्व लूटनेके लिए ) संसार छोडा है; यह तो पाप का कार्य है; जो साधु इस काम में पडते हैं, वह साधु, साधु नहीं हैं (मेरे ख्याल से जो इस काम को नहीं करते हैं वह, साधु साधु नहीं हैं) आदि आदि कई प्रकार का ढोंगी उत्तर हमें मिलता है। परन्तु महान् खेद और घृणा का विषय है कि-क्या उनको अपने कार्यों की-अपने उन प्रपंचों की स्मृति नहीं है-जो बडे उत्साह और बडेप्रेम से किये जाते हैं और उनको प्रपंच दिखाई नहीं देते हैं मैं उन से पूछता हूं कि-क्या पूज्य पदवियों की लडाई प्रपंच नहीं है? क्या जिस क्षेत्रमें चौमासा किया जाता है वहां पत्रिका छपा २ कर भेज २ हजारों लोक बुलाए जाते हैं और आठ दिन पर्यूपण में-असंख्य जीवों का संहार किया जाता है, प्रपंच नहीं है! क्या छछ और आछ के आगार से दो २ तीन २ चार २ महीना की तपस्या कर पत्रिका भेज २ जन समूह इकठा किया जाता है प्रपंच नहीं है! क्या चेला और चेलियों के वास्ते जो सैकड़ों छल, कपट, दंभ किये जाते हैं प्रपंच नहीं है? क्या वह मेरा क्षेत्र और यह तेरा, कइना प्रपंच नहीं है? क्या आचार और विचार की भिन्नता



दिखलाना प्रपञ्च नहीं है ? क्या आँ मारवाड़, मालवा आदि में देशी और परदेशी साधुओं का मानापमान किया जाता है— अर्थात् परदेशी साधुओं के भावक देशी साधुओं का और देशी साधुओं के भावक परदेशी साधुओं को परस्पर बंदना नमस्कार—आहार, वस्त्र पात्र स्नानक आदि नहीं देते हैं, प्रपञ्च नहीं है ? कहीं तक लिखूँ और कहूँ एसी प्रापञ्चिक बात अन्वयतर सैकड़ों बातें हैं जिन का हमारा साधु बड़ हर्ष और आनन्द पूर्वक करत करत है । और जहाँ समाज सुधार के लिए उन्हें कहा जाता है वहाँ यह प्रापञ्चिक काय है साधु के लिए [ हय ] “ त्याज्य है ” यह कह कर छूट जाते हैं घुप हा जात है, मौन ग्रहण कर लेते हैं । दखा, पाठकों ! आप के साधुओं का स्वार्थीपना ! मतलबीपना !! और समाजघातकपना !!! क्या आप ऐसी ही का साधु कहते हैं गुरु मानते हैं ? मैं तो यह कहूँगा कि ऐसे साधुओं से वा अगर समाज सदा के लिये निस्साधु हो तो अच्छा है ।

खैर, अब मैं उसी विषय फिर आता हूँ—जिसका हेडिंग आप आरम्भ में देख चुके हैं ।

यहाँ तक तो कुछ बातें आज कल के साधुओं की वर्तमान परिस्थिति पर कही । पर अब सुधारका मार्ग क्या है ?—कैसा शीघ्र सुधार हो सकता है—और यह कार्य किस ढंग से किया जाय ? आदि आदि बतलाना चाहता हूँ सुनिचे —

आपके समाज के दो, ठाई—इज्जार साधु हैं, यह मैं पहले ही कह चुका हूँ । वे सभी फिरन ( भूमने ) वाले हैं, प्रत्येक

देश प्रत्येक प्रान्त--प्रत्येक तालुका में-प्रति वर्ष-अलग २ चातुर्मास करते हैं। उनका यह कर्तव्य है कि-प्रत्येक साधु-जिस तालुके में चातुर्मास करें उस तालुका के धनिकों को पहिले एक जगह बुलावें। और उनको समाज सुधार का विषय समझाते हुए, उनकी सम्मति मे उनके दस्ताक्षरों से-"तालुका सभा" की आमन्त्रण पत्रिका निकलवावें।" जब तालुका के सब लोग आचुके तब ये विषय उनके सामने रखें कि-

( १ ) प्रत्येक तालुका में पाठशाला का आवश्यकता.

( २ ) कन्या विक्रय से हानि,

( ३ ) बाल्य विवाह से हानि,

( ४ ) वृद्ध विवाह से हानि,

( ५ ) जाति के-अनाथों विधवाओं के पालन पोषण की

आवश्यकता,

इन पांच विषयोंपर उन्हें उपदेश करें। और धनिकों की मदद तथा अपने साधुत्वके प्रताप से इस प्रकार लेखी ठहराव [ प्रबन्ध ] करादे -

[ १ ] एक तालुका पाठशाला खोल दी जाय,

[ २ ] हम लोग कन्या विक्रय नहीं करेंगे अगर कोई बहुतही गरीब होने के कारण कन्या विक्रय करना चाहें तो-हजार-रुपये-तक कर सकेगा। जो यह काम लाचारीसे करेगा-उसके यहाँ-शुकर न गल सकेगी और पंच जीमने न जायंगे। और जो हजार से ऊपर कन्या विक्रय करेगा-वह जाति बाहर होगा अथवा इतना रुपया दण्ड देना होगा।"

[ ३ ] तरह वर्ष के पहले लड़की का और अठराह-वर्ष के पहले लड़के का कोई विवाह नहीं कर सकेगा ।

[ ४ ] ३५-सषा ४० वर्ष के बाद कोई शादी नहीं कर सकेगा । अगर कोई किसी कारण से करना चाहे तो पंचों की अनुमति से कर सकना । अन्यथा नहीं ।

[ ५ ] तालुका के गरीबों अनाथों, माई बहिनों के लिये एक फण्ड रक्खा जाए और उसके द्वारा उनके पालन पोषण की व्यवस्था की जाय ।

शेष, फिर जा जो उस तालुका के लिये उचित दिखें-व प्रबंध किये जाय ।

इस प्रकार ठहराव एक कागजपर लिखकर उसपर उन तालुका के प्रत्येक व्यक्तियों की सही लेनेका-कार्य किया जाय ता-में दृढ प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हू- ' सैकड़ों वर्षों का कार्य एकही वर्ष में समाप्त हो जाय । '

जब एक तालुका में यह सुधार हो जाय तब वह साधु- उस तालुका का छाड़ कर दूसरे तालुका में प्रवेश करें (जाय) और वहां भी उपयुक्त आन्दोलन [ हल चल ] मचाना शुरू करे ।

\* \* \* \* \*

बंभुभा ।

यह कार्य [ सुधार का कार्य ] हमारे दो ड़ाई हजार साधुओं के द्वारा सहज ही में थोड़े खर्चमें थोड़ी मिहनत से और थोड़ीसा समाज हितकी भावना दिखमें लान ही में पूरा हो

सकता है । और कई-वर्षोंकी ममाज सुधार की पुकार कई मभाओं, संस्थाओं और समाचार पत्रों की मांग पूरी हो सकती है । इममें आपको व आपके उन साधु महात्माओं का क्या नुकसान है, जो करने के लिये आनाकानी करेंगे ? पर बात यह है कि-आपका अपने साधुओं को जगाना चाहिए । इस विषय के लिए उनको आग्रह पूर्वक कहना चाहिए, मैं जैन-पथ-प्रदर्शक, जैन जगत् और कान्फरन्स प्रकाश पत्र के सम्पादकों में भी-निवेदन करता हूँ कि-प्यारो, समाज सुधारके ठेकेदारो ? आप लोग भी-इस विषयपर अपनी २ लेखनी को जरा कष्ट दें । समय की आवश्यकता को पहचाने । जिस विषयकी पत्रों में आन्दोलन करनेकी जरूरत है जिसके जागृत होनेपर ही सुधार का आधार है, उस विषयको प्रथम हाथ में लें ।" इसके अतिरिक्त-आप लोग चाहें उतना महा भारत ( उद्योग ) मचावेंगे तो भी कुछ न होगा । इसे आप निश्चय समझिए । पर, यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि-इस के लिए एक, दो, साधुओं से कुछ न होगा । प्रायः सबको तैयार करना चाहिए ।

अब मैं-अपने साधुओं को फिर कुछ कह कर इस लेख को समाप्त करूँगा:—

ओ जैन जाति के धर्म गुरुओं-साधुओ, उठो, आंखें खोलो और मेरी उपर्युक्त योजना पर ध्यान दो; कुछ कर दिखाओ अरे, सोंचो, तुमने गुरुपद धारण किया है गुरुओं के क्या २ कार्य होते हैं उनकी जरा याद करो । क्या गुरुओं का यही कार्य है कि-समाजको अज्ञानता के कीचडमें पड़े रहने देना ?

क्या गुरुओंका यही कार्य है कि—समाज की दुर्दशा का अपन नेत्रों से देखत रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज की कुरातियों का इतना ? क्या गुरुओं का यही कृतव्य है कि—समाज सुधार के कामों में पाप बतलाना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—अपनी २ पूजा प्रतिष्ठा स्थापना कराने में ही लग रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—सम्प्रदायों के झगड़ में पड़ रहना ? और गुरुओं का परस्पर झगड़ रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज को समझा-नुकूल शिक्षा-न दना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज पर अपवित्रता और मूर्खता का फलफ बढात रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज के अनाथ बच्चों का निराधार विधवाओं का निस्सहाय माइयों का नष्ट भ्रष्ट होना ? उनक सिय अनाथालय गुरुकुल; विधवाश्रम आदि स्थापित नहीं करवाना ! यदि ये कार्य तुम्हारे नहीं हैं तो तुम्हें इस क विपरीत प्रयत्न क्यों नहीं करते हो ?

आ महात्माआ ।

तुमही लोगों की लापरवाही से समाज का अध पतन हुआ है । तुमही लोगों की अज्ञानता से समाज में आज अज्ञान हुआ है तुमही लोगों के मलीन विचारोंसे समाज में भी मलीन विचार प्रगट हुए हैं, तुमही लोगों की फूटस समाज में भी आज इमरा प्रपल प्रकाय दिखाई देता है । आ कुछ समाज के धर्म की दानि दा रही है इन मय का मुख्य कारण आपही लोग हैं । समाज और धर्म तुम्हारे ही आश्रित रहा हुआ है । इस लिए तुम्हें अपन कर्तव्य पदचानन चाहिए । सभी काय सभी

नियम, सभी प्रथाएँ हर समय में एक से लाभदायक नहीं हो सकती। समय समयमें उनमें परिवर्तन करनेकी आवश्यकता हुआ करती है। जिस समाज के मुखिया, संचालक, धर्मगुरु, ऐसा नहीं करते हैं वे अन्त में पड़ताते हैं, सब खो बैठते हैं।

आप लोग कहेंगे कि "हमें ये बातें मत कहिए, हमतो अपनी आत्मोन्नति कर रहे हैं, हमने इसी लिये चारीत्र लिया है।" महात्माओ! ये कहना आपका विन विचार का है जैसा आत्मोन्नति करना आप का कर्तव्य है वैसा समाजोन्नति समाज की भलाई चुराई की ओरभी ध्यान देना आप का कर्तव्य है। आत्मोन्नति और समाज का सुचारुरूपसे संचालन करते रहना इसी लिये आपका जन्म है। यदि ऐसा नहीं है तो धर्मोपदेश करनेकी क्या जरूरत है! चेला चेली मूंडने की क्या जरूरत है! एक ग्रामसे दूसरे ग्राम घूमते रहनेकी क्या जरूरत है! पुस्तक पन्ना आदि धर्मोपकरण रखने की क्या जरूरत है! आत्मोन्नतितो मौनव्रत धारण कर एकान्त में—बनों, पहाडों, जंगलों आदि में रहने से भी हो सकती है। सांप्रत समय में आप लोगों के पीछे कई प्रकार के—प्रापंचिक कार्य लगे हुए देखे जाते हैं फिर वे क्यों हैं? उन्हें भी छोड़कर रहिए। मगर साधुओ, यह सब तुम्हारी बहाने बाजी है—आत्मोन्नति का प्रायः टाँग है। तुम से न तो पूरी आत्मोन्नति बन आती है और न समाजोन्नति धर्मोन्नति ही। मैं इस बातको नहीं मानता। आत्मोन्नति का असली मार्ग तो जुदा ही है। क्या चारित्र [ साधु होकर ] लेकर परस्पर लड़ना लड़ना आत्मोन्नति है?

क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज की दुर्दशा का अपन नशों से देखते रहना ? क्या गुरुओं का यही—कार्य है कि—समाज की कुर्गियों का इतना ? क्या गुरुओं का यही कृत्य है कि—समाज सुधार के कर्मों में पाप बतलाना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—अपनी २ पूजा प्रतिष्ठा, श्लाघा करान में ही लग रहना ?—क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—सम्प्रदायों के झगड़ में पड़ रहना ? और गुरुओं का परस्पर लड़ा रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज को समुदा तुच्छ शिष्टा न दना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज पर अपवित्रता और मूल्यता का कलक चढ़ात रहना ? क्या गुरुओं का यही कार्य है कि—समाज के अनाथ बच्चों का निराधार विधवाओं का निस्तहाय माइयों को नष्ट अष्ट होनटना ? उनक मिय अनायालय, गुरुकुल, विधवाभ्रम आदि स्थापित नहीं करवाना ? यदि ये कार्य तुम्हारे नहीं हैं तो तुम इस क विपरीत प्रयत्न क्यों नहीं करत हो ?

ओ महात्माआ ।

तुमही लोगों की लापरवाही से समाज का अध पतन हुआ है । तुमही लोगों का अज्ञानता से समाज भी आज अमान हुआ है तुमहा लोगों क मलीन विचारोंसे समाज में भी मलीन विचार प्रगट हुए ह, तुमही लोगों की फूटस समाज में भी आज इमहा प्रपल प्रकाय दिखाई देता है । आ कुछ समाज क धम की हानि हो रही है इन सब का मुख्य कारण आपही लोग हैं । समाज और धम तुम्हारे ही आधित रहा हुआ है । इम लिए तुम्हें अपने कतव्य पहचानन चाहिए । सभी कार्य सभी

## साधुओंको चेतावनी ।

माननीय मुनिवरो ! चेत जाओ । आप किस नींद में सोये हो । जरा उठ कर तो देखो कि समयने कैसा पलटा खाया है क्या, क्या रंग बदला है—और वह आपको क्या कह रहा है ।

उठो, अपनी ओर, अपने धर्म को झलत देखो । समय पुकार पुकार कर कह रहा है कि—आप अपनी स्थिति को सुधारो अपना ज्ञान बल बढ़ाओ—समाज की कुर्गीतियाँ दूर कराओ । मुनि सम्मेलनादि भर कर बहुमत द्वारा अपने प्राचीन और अर्धाचीन दोनों प्रचार के आचार और विचारों में शीघ्र परिवर्तन कर दो । समयकी आवश्यकताओं को पहचानो अपने र नवदीक्षित शिष्यों को समयानुकूल भाषाएँ पढाओ । उन्हें इन प्रकार बली और कर्म वीर बना दो कि—वे गृहस्थों में ज्ञानादि गुण में कभी कम न रहे । वे विविध व्याकरण, न्याय, काव्य, कोष आदि साहित्य रचने लगे । सार्वजनिक पत्रों में खुल्लमखुल्ला अपने सर्वत्र विचार और धार्मिक विचार प्रगट करने लगे । हजारों जैन, अजैन विद्वानों के सम्मान पात्र देने, अपनी दवतृत्वता के चमत्कारिक बल से अजैनों को जैन बनावे और एक बार फिर संपूर्ण आर्यावर्त में सर्वत्र जैन जय पता का फहरावे ।

मेरे पूज्य गुरु देवो ! जागृत होओ, जागृत !!! आलस्य



क्या तुम उस, साधुको आहार मत दो, उसे बन्दना नमस्कार  
 मत करो ये साधु-साधु नहीं है वृ हमारा भावक है दूसरेसाधु  
 ओके पास मत जा, इस प्रकार कहत रहने का नाम आत्मो  
 भति है। क्या एकही परमात्मा के अनुयायी होकर भिन्न २  
 प्ररूपणा प्रवर्तिना रसना आत्मोभति है। क्या राग इष के  
 क्षमों में शत दिन पैस रहना आत्मोभति है। क्या क्रोध,  
 मान, माया, लोभ के स्तने का नाम आत्मोभति है। छाडदो  
 इन आत्मोभति के दोग को छाडदो या सही आत्मोभति कर  
 दिखायो या हमारी उक्त योजना पर ध्यान दो और समझ-  
 जुझल समाजोभति आत्मोभति दोनों करत रहा। इति।

समाज दिव्यी,  
 मुनि-परमानन्द जैन

मोड़ बैठे हो? क्या बात है कि आपका मुर्दा दिल चैतन्य नहीं होता? और आपमें परमात्मा वीर की शक्तियाँ उत्पन्न नहीं होती? आप 'वीर' के अनुयायि होकर कायर कैसे बने हो? कुछ तो अपने पिता की टेक रखो। और उसके नाम पर उसके शासन पर तन मन न्यौछावर कर दो। आज सभी समाजें तुम्हें मूर्ख कह रही हैं। आज सब नव शिक्षित तुम्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं? तुम्हारे अस्तित्व को ही नहीं चाहते हैं। क्या इस अधमान से तुम में कुछ जोश नहीं आता। और अपने स्थितियों को सुधारने को उठ खड़े नहीं होते। देखो तुम्हारा काम आज गृहस्थ वर्ग कर रहा है विचारे कितने ही नव शिक्षित नवयुक्त समाजोन्नति के लिए, समाज में विद्या प्रचार करने के लिए समाज की कुरीतियों को मिटाने के लिए, परमात्मा वीर के धर्म को सार्व भौम-राष्ट्र धर्म-बनाने के लिए उनके उच्च तत्वों उच्च विचारा का सर्व साधारण में प्रचार करने के लिए, रात दिन तन तोड़ परिश्रम कर रहे हैं। मगर हाय, तुम तुम्हारा कर्तव्य नहीं सम्हालते? तुम अपनी फर्ज को नहीं बजाते और उल्टे उनके कामों पर-सहायता करना तो दूर रहा-पानी फेरने के लिए तैयार रहते हो। हा! मैं तुम्हारी इस अधर्मता, कृतघ्नता, विचार मलीनता की कहीं तक प्रशंसा करूं।

देखो, यदि तुम सब उठ जाओ, समाजोन्नति के लिए काम बांधलो, और प्रत्येक मुनि इस बात की दृढ़ प्रतिज्ञा करलो और बहूत नहीं तो थोड़े समय के लिए ही—मोह, ममता, सांप्रदायिक कलह, आपस की फूट, निंदा, ईर्ष्यावाजी आदि

आज कल आप किस कौन में घिरा जमान हो । बतलाओ कि-आपन, आज तक समाज हित क लिए क्या २ कार्ये कि या है ? कितन अजनों का खैन रनाय है ? अपने अपने मक्तों क पास से कितना द्रव्य समाज हित रायों में खर्च कतवाया है, आपक उपदस्य से कहां २ पाठशाला बनाया लय बनाथ रखरु फट, पुस्तकालय, ग्रंथ प्रकाशन कार्यालय आदि २ स्थापित हाकर चल रह है ? फानसे २ ग्रंथ आपन निर्माण किसे है ? किस २ सार्वजनिक पर्वों में आपने समाजिक, तात्विक आध्यात्मिक २ अंतत्व प्रतिपादक लेखादि लिख है ? आपक साधुपद में समाजको कितना लाभ पहुंचा है ? आपक उन संकटों दिनों क व्याख्यानो से कितना देशोपकार-लोकप्रकार सामाज्यकार घर्मोद्धार हुआ है ? खैर, जान दीजिए-परापकार की बातें । अब आत्मोद्धार की तरफ आइए । बतलाइए-आपमें आत्म बल कितना है ? आपकी आत्मशक्तियां कहां तक विकसित हुई है ? आप अपन आत्म बलस क्या २ कर दिखला सकसे है ? क्या कोई साधुता क प्रमाण पत्र आपक पासमें है ? माफ २ बतला दीजिए, यहाँ अब सक्रम रखन का कोई कारण नहीं । अगर आप उपयुक्त दानों बातों से-शून्य है ता में साफ २ कहूँगा कि आप समाज पर भार रूप है, आपक साधुपद से समाज को कोई लाभ नहीं । आपको ओ समाज अन्न, बख देता २ उत उम की भूल है ।

मर मान्यवर आताष्या ! क्यों इस साधुपद  
 ( लना रह ) कर रह ता फणो लागप्रकार क

मोड़ घेंटे हो? क्या बात है कि आपको मुर्दा दिल चैतन्य नहीं होता? और आपमें परमात्मा वीर की शक्तियाँ उत्पन्न नहीं होती? आप 'वीर' के अनुयायि होकर कायर कैसे बने हो? कुछ तो अपने पिता की टेक रखो। और उसके नाम पर उसके शस्त्र पर तन मन न्याँछावर कर दो। आज सभी समाजें तुम्हें मूर्ख कह रही हैं। आज सब नव शिक्षित तुम्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं? तुम्हारे अस्तित्व को ही नहीं चाहते हैं। क्या इस अपमान से तुम में कुछ जोश नहीं आता। और अपनी स्थितियों को सुधारने को उठ खड़े नहीं होते। देखो तुम्हारा काम आज गृहस्थ वर्ग कर रहा है विचारे कितने ही नव शिक्षित नवयुक्त समाजोन्नति के लिए, समाज में विद्या प्रचार करने के लिए समाज की कुरीतियों को मिटाने के लिए, परमात्मा वीर के धर्म को सार्व भौम-राष्ट्र धर्म-बनाने के लिए उनके उच्च तत्वों उच्च विचारों का सर्व साधारण में प्रचार करने के लिए, रात दिन तन तोड़ परिश्रम कर रहे हैं। मगर हाँय, तुम तुम्हारा कर्तव्य नहीं सम्हालते? तुम अपनी फर्ज को नहीं बजाते और उल्टे उनके कामों पर-सहायता करना तो दूर रहा-पानी फेरने के लिए तैयार रहते हो। हा! मैं तुम्हारी इस अधर्मता कृतघ्नता, विचार मलीनता की कहां तक प्रशंसा करूं।

देखो, यदि तुम सब उठ जाओ, समाजोन्नति के लिए कमर बांधलो, और प्रत्येक मूर्ख इस बात की दृढ़ प्रतिज्ञा करलो और बहुत नहीं, तो थोड़े समय के लिए ही—मोह, ममता, सांप्रदायिक कलह, आपस की फूट, निंदा, ईर्ष्यावाजी आदि

को बलाजालि देदा तो मैं, नि संशय होकर परमात्मा बीर की साक्षी से कहता हू कि कुछ ही काल क अन्दर सब समाज सुधर जाय, सब दुःख मिट जाय जहां तहां उन्नति देवी के दर्शन होने लग । समाज की सब राक्षसी कुरीतियां दूर हो जाय—और सब समाजों आपका रूप पूर्वक अनुकराल करने लगे । तथा मेरे जैसे कई सतप्त हृदयोंका दुःख भी क्षीप्त मिट जाय और गत दिन मुक्त कंठ से आपका यशोगान करने लग । क्या, है आप में दया-अनुकम्पा का संसार ? अगर-है तो उठिए, देर न कीजिए और धीमे हमारा दुःख दूर करने के लिए सामाजोद्धार के लिए, और अपने शिर से कायरता अकर्मण्यता, निबलताका फलक मिटान के लिए तयार हूजिए । एक घार सबको यह दिखा दीजिए कि हम कैसा अच्छा काम कर रहे है क्या कोई हमारी बराबरी कर सकता है ? ”

महात्माओ, आप मेरे इन कटु, तीक्ष्ण शब्दों का सुन कर क्रोध न हूजिए; परिकु इन्हें हितावह समझने हुए आप नाइए । हम मेरी चेतावनी को आप अपने हृदय शायी बनाते हुए समाजोद्धार का पीढा शाय उठा लाजिए । क्योंकि अब यही आपकी प्रतिष्ठा स्थापना स्थिर रख सकेंगा । इति ॥

पुर लगत शिखा बचन, मनमें सोचहु आप ।

कइइ आपस भिन पिये मिटव न तन को वाप ॥

—सुनि परमानन्द जैन

## आनुपूर्वी पढनेकी रीति ।



१- जहांपर ' एक ' का अंक हो वहां, णमो अरिहंताणं,  
कहना चाहिए ।

२- जहांपर ' दो ' का अंक हो वहां " णमो सिद्धाणं "  
कहना चाहिए ।

३- जहांपर " तीन " का अंक हो वहां " णमो आये  
रियाणं " कहना चाहिए ।

४- जहांपर " चार " का अंक हो वहां " णमो उव-  
ज्जायाणं " कहना चाहिए ।

५- जहांपर ' पांच ' का अंक हो वहां " णमो लोए  
सच्च साहूणं " कहना चाहिए ।

## आनुपूर्वी गिननेका फल ।

चंचल मनको स्थिर करण, ठाणाङ्गसूत्र अनुसार । अनु-  
पूर्वी रचना करी आचार्य-करण उपकार ॥ शुद्ध वस्त्र धरी  
विवेक, दिन २ प्रति गणवी एक ॥ एम अनुपूर्वी जो गिणे, ते  
पांचसौ सागरना पापने हणे ॥ २ ॥

अनुपूर्वी गिणे जो कोय ।

छे मासी तपनो फल होये ॥

सन्देह मत आणो लिगार ।

निर्मल मने जपो नवकार ॥

( आचार्य कृत-ग्रंथसे )

को बलाज्वलि देदा तो मैं, नि संशय हाकर परमात्मा वीर की साथी से कहता हू कि कुछ ही काल क अन्दर सब समाज सुधर जाय, सब दुःख मिट जाय जहाँ तहाँ उन्नति देवी के दर्शन होने लगे । समाज की सब राक्षसी कुरीतियाँ दूर हो जाय—और सब समाजों आपका रूप पूर्वक अनुकरण करने लगे । तथा मर जैसे कई संतप्त हृदयोंका दुःख भी शीघ्र मिट जाय और रात दिन मुक्त कंठ से आपका यशोगान करने लग । क्या, है आप में दया, अनुकम्पा का संचार ? अगर है तो उठिए, देर न कीजिए और शीघ्र हमारा दुःख दूर करने के लिए सामाजोद्धार के लिए, और अपन शिर से कायरता अकर्मण्यता निबलताका कलक मिटाने के लिए तैयार हजिए । एक धार सबका यह दिखा दीजिए कि ' हम कैसा अच्छा काम कर रहे है क्या कोई हमारी बराबरी कर सकता है ? '

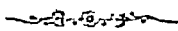
महात्माओं, आप मेरे इन कदु, तीक्ष्ण शब्दों को धुन कर क्रुद्ध न हजिए; परिरु इन्हें हितायह समझने हुए भय नाइए । हम मेरी शतावनी को आप अपन हृदय शायी बनाते हुए समाजोद्धार का पीढा शीघ्र उठा लाजिए । क्योंकि अब यही आपकी प्रतिष्ठा स्थापा स्थिर रख सकेगा । इति ॥

पुर लगत शिष्या पचन, मनमें सोचहु आप ।

कइइ आपध भिन पिये मिटत न तन का वाच ॥

—धुनि परमानन्द जैन

## आनुपूर्वी पढनेकी रीति ।



- १- जहाँपर ' एक ' का आंक हो वहाँ, णमो अरिहताणं, कहना चाहिए ।
- २- जहाँपर ' दो ' का आंक हो वहाँ " णमो सिद्धाणं " कहना चाहिए ।
- ३- जहाँपर " तीन " का आंक हो वहाँ " णमो आरि-  
रियाणं " कहना चाहिए ।
- ४- जहाँपर " चार " का आंक हो वहाँ " णमो उ-  
ज्जायाणं " कहना चाहिए ।
- ५- जहाँपर ' पांच ' का आंक हो वहाँ " णमो उ-  
सव्व साहूणं " कहना चाहिए ।

## आनुपूर्वी गिननेका फल ।

चंचल मनको स्थिर करण, टाणाङ्गसूत्र अनुसार । अनु-  
पूर्वी रचना करी आचार्य-करण उपकार ॥ शुद्ध वस्त्र धरी  
विवेक, दिन २ प्रति गणवी एक ॥ एम अनुपूर्वी गिणें, ते  
पांचसौ सागरना पापने हणो ॥ २ ॥

अनुपूर्वी गिणें जां कोय ।

ते मारी तपनो फल होय ॥

सन्देह मत आणो लिगार ।

निभले मने जपो नवकार ॥



को बलाजालि देदा तो मैं, नि संशय होकर परमात्मा धीर की साथी से कहता हूँ कि कुछ ही काल क अन्दर सब समाज सुधर जाय, सब दुःख मिट जाय जहाँ उहाँ उन्नति देवी के दर्शन होने लगे । समाज की सब राक्षसी कुरीतियाँ दूर हो जाय—और सब समाजों आपका, इस पूर्वक अनुकरण करने लगे । तथा मरे जैसे कई सतप्त हृदयोंका दुःख भी शीघ्र मिट जाय और रात दिन मुक्त कंठ से आपका यशोगान करने लग । क्या, है आप में दया अनुकम्पा का संचार ? अगर है तो उठिए, देर न कीजिए और शीघ्र हमारा दुःख दूर करने के लिए साम्राज्यद्वार के लिए, और अपने क्षिर सकार्यता अकर्मण्यता, निर्बलताका कलक मिटाने के लिए तैयार हूजिए । एक धार सबका यह दिखा दीजिए कि हम कैसा अच्छा काम कर रहे हैं क्या कोई हमारी धराधरी कर सकता है ? ”

महात्माओं, आप मरे इन कड़ु, तीक्ष्ण शब्दों का सुन कर क्रुद्ध न हूजिए; धरिऊ इन्हें हितबद्द समझते हुए अप नाइए । इस मरी चेतावनी को आप अपने हृदय शायी बनाते हुए समाजद्वार का पीठा शाय उठा लाजिए । क्योंकि अब यही आपकी प्रतिष्ठा स्थाया स्थिर रख सकेगा । इति ॥

धुरे लगत शिष्या यचन, मनमें सोचहु आप ।

कडइ औपय पिन पिये मिटत न तन को वाप ॥

—शुनि परमानन्द जैन

आनुपूर्वी [ ५ ]

आनुपूर्वी [ ६ ]

१	२	३	५	४
२	१	३	५	४
१	३	२	५	४
३	१	२	५	४
२	३	१	५	४
३	२	१	५	४

१	२	५	३	४
२	१	३	३	४
१	५	२	३	४
५	१	२	३	४
२	५	१	३	४
५	२	१	३	४

आनुपूर्वी [ ७ ]

आनुपूर्वी [ ८ ]

१	३	५	२	४
३	१	५	२	४
१	५	३	२	४
५	१	३	२	४
३	५	१	२	४
५	३	१	२	४

२	३	५	१	४
३	२	५	१	४
२	५	३	१	४
५	२	३	१	४
३	५	२	१	४
५	३	२	१	४

आनुपूर्वी ( १ )

१	२	३	४	५
२	१	३	४	५
१	३	२	४	५
३	१	२	४	५
२	३	१	४	५
३	२	१	४	५

आनुपूर्वी ( २ )

१	२	४	३	५
२	१	४	३	५
१	४	२	३	५
४	१	२	३	५
२	४	१	३	५
४	३	१	३	५

आनुपूर्वी [ ३ ]

१	३	४	२	५
३	१	४	२	५
१	४	३	२	५
४	१	३	२	५
३	४	१	२	५
४	३	१	२	५

आनुपूर्वी [ ४ ]

२	३	४	१	५
३	२	४	१	५
२	४	३	१	५
४	२	३	१	५
३	४	२	१	५
४	३	२	१	५

( ३७९ )

आनुपूर्वी ( १३ )

आनुपूर्वी ( १४ )

१	३	४	५	२
३	१	४	५	२
१	४	३	५	२
४	१	३	५	२
५	४	१	५	२
५	३	१	५	२

१	३	५	४	२
३	१	५	४	२
१	५	३	४	२
५	१	३	४	२
३	५	१	४	२
५	३	१	४	२

आनुपूर्वी [ १५ ]

आनुपूर्वी [ १६ ]

१	४	५	३	२
४	१	५	३	२
१	५	४	३	२
५	१	४	३	२
४	५	१	३	२
५	४	१	३	२

३	४	५	१	२
४	३	५	१	२
३	५	४	१	२
५	३	४	१	२
४	५	३	१	२
५	४	३	१	२

आनुपूर्वी ( ९ )

आनुपूर्वी ( १० )

१	२	४	५	३
२	१	४	५	३
१	४	२	५	३
४	१	२	५	३
२	४	१	५	३
४	२	१	५	३

१	२	५	४	३
२	१	५	४	३
१	५	२	४	३
५	१	२	४	३
२	५	१	४	३
५	०	१	४	३

आनुपूर्वी [ ११ ]

आनुपूर्वी [ १२ ]

१	४	५	२	३
४	१	५	२	३
२	५	४	२	३
५	१	४	२	३
४	५	१	२	३
५	४	१	२	३

२	४	५	१	३
४	२	५	१	३
२	५	४	१	३
५	२	४	१	३
४	५	२	१	३
५	४	२	१	३



आनुपूर्वी [ १७ ]

२	३	४	५	१
४	२	४	५	१
२	४	३	५	१
४	२	३	५	१
३	४	२	५	१
४	३	२	५	१

आनुपूर्वी [ १८ ]

२	३	५	४	१
३	२	५	४	१
२	५	३	४	१
५	२	३	४	१
३	५	२	४	१
५	३	०	४	१

आनुपूर्वी [ १९ ]

२	४	५	३	१
४	२	५	३	१
२	५	४	३	१
५	२	४	३	१
४	५	२	३	१
५	४	२	३	१

आनुपूर्वी [ २० ]

३	४	५	२	१
४	३	५	२	१
५	५	४	२	१
५	३	४	२	१
४	५	३	२	१
५	४	३	२	१

